श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीविट्ठलेशो जय

यदंघ्रिकंजविलसद्दलित्वं प्राश्रयेन्नमः

तं वितुल महं वंदे श्री [illegible] वल्लभतनूद्भवं

॥१॥

॥ श्रीगणेशाय नमः श्रीविट्ठलेशो जयति
यदंघ्रिकंजविलसद्दलित्वं प्राश्रयेन्नमः
तं वितुलमहं वंदे श्रीवल्लभतनूद्भवं ॥१॥
यं नाममालामास्थाय नवाब्धिमतरन्निजाः
तस्याहं संप्रवक्ष्यामि नाम्नामष्टोत्तरशतं
छंदोनुष्टुप् ऋषिकर्ता देवो गोपीजनप्रि
यः कामातो बीजमेकांतनिष्ठो गोपालन
ंदनः ३ शक्तिः श्रीराधिकाकांतो लीला
मेघातिसुंदरः सर्वेष्टफलसिध्यर्थे वि
नियोगः प्रकाशितः ४ श्रीवल्लभसुतः श्री
मान् श्रीकृष्णप्रेमपूरकः महालक्ष्मीगर्भ
पयः सिंधुतारागणाधिपः ५ श्रीमद्गोव
र्द्धनाधीशदर्शनात्यागकातरः श्रीवल्ल
करांभोजलालितश्रीमुखांबुजः ६ व्रज
वासीजनानंददायकः सकलापद्धत्पुं
डरीकविज्ञानालोरुणपंकेहालनः ७ ॥
जगदार्तिहरी दीनपालकः करुणानि
धिः पूजितावनिगीर्वाणपादुकस्त्वद्यु
तिप्रदः ८ श्रीलक्ष्मणनटोच्छिरस्मातः

कुलदीपकः गिरिधारिमुखांभोजमनस्कोवि
तुलेश्वरस्य गोकलेशपदांभोजमाध्वीको
न्मत्तषट्पदः विशुद्धीकृततद्भक्तिस्तन्नाम्ना
मृतपानकृत २० कुंडलाकानगच्छश्रीसं
डूहस्थापिताकृतिः तत्पादवितसत्कसौ
द्वीत्ततद्दर्शकुजः २१ विद्वज्जनोपमानेक
हलीविदांतपारगः नवचत्रिकप्रचारैककर्ता
रक्षान्नकारकः २२ अस्वधर्मनिराकर्त्ताःस्व
धर्मप्रतिपालकः मायावामनःपुजनिराक
रणभास्करः २३ सर्वेष्टसिद्धिदाताचकमनी
यकलेवरःसर्वेविद्याप्रविणश्चसर्वेसंसार
दुखहा २४ अतिगंभीरत्नात्पर्योनवनीत
प्रियःप्रियश्रीमद्वृंदावनाशक्तस्तच्छितप्रा
त्तिकामदः २५ सोमयागप्रतिष्ठातासोम
वंशोद्भवाश्रयः प्रवेदहास्ययुक्ताज्ञापवि
त्रीकृमानवः २६ पंचास्यःसुखसेव्यश्चसु
खराशिःप्रपंचकृत कालिंदीपुलिनावि
ष्टचित्तःपतितपावनः २७ वृजनाथप्रशा
रुपैकतश्रीगोकुलालयः श्रीकृष्णभोग
समयेगोजनमात्रजडय २८ जितास्विला
जगत्प्रापपंडितःश्रीकरान्वयः समानश्री
लहसितःपतितोद्धारकारकः २९ गुंजा
वलिलसद्ग्रीवोगोपिनाथोसहोदरः स्वलू
पलक्तिलानेगयशोशालिस्फुरदर्शकः २०
सेवार्थविग्रहैः कर्त्तासेवासमृतत्परः त्रि
षुविख्यातकीर्तिश्चविश्वधर्मप्रदर्शकः २१

स्वांगीकृतचतुर्वेगीश्चतुर्मार्गविशारदः श्रीभाग
वततत्वार्थज्ञातातत्ज्ञानपोषकः २२ बृहिमा
र्गोक्तधर्मादिप्रकाशनपरायणः श्रीवेतारङ्
यंकर्त्ता नामातिकृतमूतजः २३ तंगोजः
दुरुः पूज्यो नलकायांघ्रिसरोरुहः श्रीकर्ण
कजनवत्सपांगादत्तसेवकः २४ श्रवि
तमहिमाज्ञानकर्मनागोतिरिक्तदः प्रतिष्ठ
ह्माप्ती नटवानचः कल्याणकारणः २५ प्र
स्थापितवल्लवादैकपदः परमसुंदरः ति
स्लारिनतिलिंगारव्दिकांतिचतुरोविभुः
२६ श्रीरुक्मिणीपतिः श्रीदः कुलिनसवे
वल्लभः पद्मावतिप्राणनाथः सर्वलोकेक
मंडने २७ श्रीमत्पुराणपुरुषः प्राणसंतोष
कारकः स्तुविप्रसिंठ गोपीजा तत्पादसक्त
मानसः २८ लौकिकालौकिकाप्योदिदाता
कालात्मवल्लीवित्त् संसारसागरमग्नजी
वोठ्तिकृतिक्षमः २९ वल्लातंदमयः पूर्णः
कालिंदीवल्लभः प्रियः व्रजप्रियोव्रजास
कोहरिवक्त्राब्जसेवनः ३० श्रीमद्वाधाप
तिपादंभोजयुग्मावलंबनः सर्वस्वयं
नियंतावनगवृंदेभेवसुदः ३१ क श्रुति
स्मृतिपुराणोक्तिसर्वतावृत्तापवान यथा
मतिहिमेकाचरचितानाममालिका ३२ श्री
विठ्ठलेशकुलनाममालिकायेपठंतिजगति
तलेजनाः प्राप्नुवंतिरतिकुंजमंदये ३३ हृ
दयेध्यायेतयेतन्नामकौस्क ननूषणं मन

ःक्लतुल्यात्माहृदयतेसर्वंभूतले२४

त्त्वजन्मसुगापालापासनयक्कतपुरा

ज्ञाकृकौस्कनसारस्यज्ञातुंतत्त्वाधिकार

ण२५ नगीवलंबकाकेचित्केचिल्ल

क्ष्यावलंबकाः वयंतुविठ्ठलेशस्यदास

दासावलंबकाः २६ इतिश्रीरघुनाथ

जीविरचितनामकौस्कनास्वस्तोत्रसंपू

र्णं संवत् १९३० केमितीकोसमुदी१४

कृष्णाय नमः ॥ श्री गोपीजनवल्लभाय नमः ॥ अथ श्री
हरिराइजी कृत सिलापत्र ताकी टीका श्री गोपेश्वरजी कृ
ख्यते ॥ एक समय श्री हरिराइजी परदेस पधारे हुते
तब श्री गोपेश्वरजी घर सेवा में हुते श्री हरिराइजी बडे भा
श्री गोपेश्वरजी छोटे भाई सो श्री गोपेश्वरजी की बहू
बोहोत अनुकूल सेवा में तत्पर भगवद्भाव संबलि
त सो श्री बहूजी लीला विस्तारी । तब श्री गोपेश्वरजी
सेवा संबंध ते बहुत ही विरह भयो । सो दिन तीन
तो भोजन नाही कीयो । सो श्री बहूजी की लीला विस्तार
हरिराइजी महीना छ पहले जानी
विचारे जो श्री गोपेश्वरजी
विप्रयोग करि बोहोत दुख पावेंगे । ताते कछु सिला
पत्र पहले ते पठाये चहिये । श्री आचार्यजी महाप्र
भुन की कृपा ते जो कोई सिलापत्र वाचेगो । ताके स
कल दुःख निवृत होइगो । हृदय में भगवद्भाव होइ
गो । यह विचार सगरो सास्त्र पुराण श्री भागवत
सर्व को सिद्धांत संयुक्त सिलापत्र लिखिके एक पत्र नि
त्य श्री हरिराइजी अपने मनुष्य हाथ श्री गोपेश्वर
जी को पठावते सो श्री गोपेश्वरजी अपनी बैठक में
एक गवाख में धरि राखते बाचते नाही जानते जो
भाई श्री सेव्य हम कूं परबोहोत हैं सो सिला करत हैं
सो हम तो भगवत्सेवा करत हैं । और कछु जानत
नाही । यह बिचारिके एक गवाख में धरि राखते
ऐसे करत सिलापत्र ४१ पठाये । सो सब श्री गो
पेश्वरजी धरि राखते बाचते नाही । तब श्री हरिरा
इजी अपने मनुष्यन सो पूछे जो भाई श्री गोपेश्वरजी
पत्र बाचत हैं । तब मनुष्यनने बिनती करी जो म
हा[illegible] हम सों आपतो एक गवाख में धरि देत हैं ।
बा[illegible] नाही कुसल पत्र लिखिके हम दो[illegible]

२

रणह पाछै आपु बाचत होय ताकी ठीक नाही हमारे
गे तो बाचत नाही तब श्रीहरिराइजी बिचारे जो नाही
लेके हैं ॥ भ१ एक ताको लिखि पठायो सो ई बहुत है एक प
त्र बाचेगे तो सकल दुख निवर्त होइगो पाछें श्रीहरि
राइजी पत्र नाही लिखे पाछें बहुत दिन में श्रीगोपेश्वर
जी की बहूजी लीला विस्तारे सो श्रीगोपेश्वरजी को ब
हुत ही दुख भयो तीन दिन लों भोजन नाही कीयो
सगरे मिलि कें समुझाये हारे काहू की मानी नाही कहे
जो बहू के लेमे सो सेवा न होइगी घर छोडि कें बन में
जाइगो पाछें एक सेवक हरिजीवनदास सो श्रीहरि
राइजी को कृपापात्र श्रीगोपेश्वरजी हू हरिजीवनदास
पर बहुत कृपा करते सो उह वैष्णव श्रीगोपेश्वरजी के पा
स आय बहुत समझाये विनती करी सो श्रीगोपे
श्वरजी ने एक हू न मानी तब हरिजीवनदास ने कही
या समय श्रीहरिराइजी घर होते तो समझावते औ
र के बस की बात नाही है पाछें हरिजीवनदास ने
श्रीगोपेश्वरजी सों पूछी जो कोई पत्र श्रीहरिराइजी
के हु आये हैं तब श्रीगोपेश्वरजीने कही जो आगे तो
बहुत आवते गवाख में धरे हैं अब दस पाच दिन ते तो आव
ते नाही तब हरिजीवनदास ने गवाख में ते पत्र ४१ निक
रि कें श्रीगोपेश्वरजी के आगे धरे और विनती कीनी
जो महाराज एक पत्र बाचियेगो सही तब श्रीगोपेश्वर
जीने एक पत्र अपने श्रीहस्त में लीयो सो भगवद इच्छा
ते प्रथम पत्र हस्त में आयो तब श्रीगोपेश्वरजी उह पत्र
बाचत ही सगरो दुख दूरि होइगो भगवद भाव हृदय
में बढ्यो तब श्रीगोपेश्वरजी उठि कें हरिजीवनदास को
सब को अपने हृदय सों लगाइ कें कहे वैष्णव तू आ
यो तो हम यह श्रीहरिराइजी के पत्र बाचे ताकी
सगरो दुख गयो पाछें श्रीगोपेश्वरजी सिद्धाप

सो सब बांचे। पाछें श्रीगोपेश्वरजी नें हरिजीवनदास
कामें कह्यो जो तुम नित्य
जो यह सिक्षापत्र की टीका में करो मेंहराज

श्वरजी प्रसन्न होइकें स्नान कीयो। पाछें आप भोजन की
रो। सारो परिवार प्रसन्न भयो। पाछें हरिजीवनदासको
केआय पास श्रीगोपेश्वरजी भावमें मग्न होया। श्रीआचा
र्यजी श्रीगुसांईजी श्रीहरिरायजी को स्मरण करि नम
स्कार करि सिक्षापत्र की टीका करन लागे।। प्रथम
सिक्षापत्र को श्लोक कहत हैं। श्लो।। सदाछिप्रसन्नाहू
लौकिकं वैदिकं वापि कार्यं
सद्दर्शनः क्लिष्टमानसः। लौकिकं वैदिकं
कुर्वन्नास्थया।।१।। याको अर्थ।। अब श्रीहरिरायजी आपके सेवक
सिक्षा करत हैं जो लौकिक वैदिक कार्य के तथा लौकिक वैदिक कार्य के
रि मनको उद्वेग करिकें तथा जैसें जो प्रभुनो सदा
क्लेस करिकें श्रीप्रभुके दर्शनको जैसें जो प्रभु सदानंदरूप देखिकें
आनंदरूप हैं। सो जीवको सन्मुख क्लेस रूप देखिकें लौकिक संसार के कार्य सि
द्ध न होय जाय तातें लौकिक संसार के कार्य मनमें क्लेस न क
उदासी न होय जाय परंतु मनमें क्लेस नक
होय। अथवा विगरि जाय। परंतु अथवा विगार
स्यों तैसें ही वैदिक कार्य सिद्ध होय। अथवा विगरे तो क्लेस नाहीं करियें तो कियें
होय। तातें मनमें क्लेस नाहीं करियें। और प्रभुकी सेवा स
स्व मनमें तुष्ट करिकें जानियें। तब मनको प्रसन्नता राखि
वंधी कार्य हैं सो सिद्ध होय। तब मनको प्रसन्न ऐसे मनमें रा
खें जो कदाचित विगरे सेवा न बनें तो क्लेस मनमें श्रीठाकुरजी
यें यह पुष्टिमार्ग की रीति हैं। जैसें व्रजभक्त श्रीठाकुरजी
गौ चारनकों वनमें पधारते। तब विप्रयोग में व्रजभक्त
गान गावते। पाछें जब श्रीठाकुरजी संध्या समय
उनकों सुखदानार्थ घरमें पधारते। तब व्रजभ

१. आनंदसों दरसनसेवा करते तैसेंही पुष्टिमार्गमेंसेवासम
यसेवादर्सन करिके अनोसरमें श्रीठाकुरजीको स्वरू
पके श्रीहस्तके मुखारविंदको मनमें ध्यान करिये
जबसमय सेवाको होय तब अत्यंत आतुरतासों श्रीस्व
रूपफलात्मक पुरुषोत्तम तिनको दर्शन करिये पाछें लौ
किक कार्य वैदिक कार्य गृहस्थाश्रमको धर्म है तातें लौ
किक अपकीर्तिके भयतथा वैदिक मर्यादाके लीये आ
वश्य करिये परंतु लौकिक वैदिकमें मन आसक्ति न राखिये
मनतो श्रीठाकुरजीमें राखिये तातें मनमें लेके राखिके
दर्शन करिये प्रसन्नतासों करिये या प्रथमश्लोकमें
दरसनको प्रकास है सेवाको नाहीं कह्यो सो यातें जो स
बकोमंदिरकी सेवा न होयसके भावकरि मानसी सेवा
होय यह मर्यादा थे मंदिरमें छुवनाय अब आगें कह
करतहें। श्लोक॥ निरुद्धवचनतावाक्यं मायस्य कुसुदाहर
तू मनसा भाव्यं नित्यं लीलास्वबोधमागता: ॥
आपके वचनको निरोध करनो बोलनो नाहीं
यावत् कार्यार्थ होइ सोई बोलनो मुख्य सिद्धांत तो
यह है जो भगवत्संबंध विना सब्दथा ईन बोलनो
परंतु लौकिक वैदिक कार्य गृहस्थाश्रममें बोले विना
कार्य न चलै तो आवस्य होय सोई बोलनो काहेतें वा
नीको निग्रह होइ तो मुखरता राख्य न होइ औ भगव
द्भाव हृदयमें स्थिर होइ रहे बहुत बोलें ते भगवद्भा
व हृदयतें निकसि जात है वानी द्वारा यासी भगवद्धर्म
की महत्ता गति है तातें जब वानीको निरोध होइ तब म
नको धर्म पट्टे जो अनेक क्रियाने भटकत है सो मनमें
विचारिवे श्रीठाकुरजीकी अपार लीलाको अनेक प्रका
रकी है तातें नामसहित लगाइ दीजे काहेतें मनको
गमन पवनहूंतें अधिक है तातें मनको काटिहे पसे

परंतु रोके सो मन तो रहे नाहीं. तातें श्रीठाकुरजी
की लीलामें लगाइयें जन्माष्टमी अन्नकूट होरी हिंडो
ला आदि वरस दिनके उत्सव तिनकों अनेक लीला भा
वकरिकें पुष्टिमार्गकी रीतिसों मन लगाइयें तथा नि
त्यलीला प्रातःकालतें श्रीठाकुरजी श्रीनंदरायजीके य
जागतहैं वृजमें श्रीस्वामिनीजीके इहांहू जागतहैं न
थारें डिनामंगल भोग मंगला आरती सिंगार ग्वाल
पालन राजभोग उत्थापन भोग संध्या सैन पर्यंत रितु
अनुसार तथा सैन पीछेहू सुखमन होय त्यों मन लागतो
रासलीला मानादिक नरतस्थल विहार इत्यादिक
मनसों भावना करियें तथा श्रीआचार्यजीके कुल
श्रीगुसांईजीको स्वरूपको विचारि श्रीठाकुरजीको प्र
गट्यको अन्यथ लीलासामग्री वागावस्त्रको भाव
हार्द यह मनमें विचारिकें भावना करियें क्रमसहि
तें लीलाकों विचार करियें ताकरि भगवत्स्वावे सहि
अष्टप्रहर लीलाको स्मरण मनमें राखनो भावना
के दोय प्रकार हैं एक उत्तम साके मध्यम उत्तम प्रकार
यह जो भाव करि गुरुके पास आपु जाय स्नान करि
मुख होय प्रथम गुरुकी सेवा करिकें पाछे गुरुके सं
ग मंदिरमें जाय तहां गुरु जो आग्या पारें तथा विन
ती करि सेवा करे तो प्रभुको श्रम न होइ और स्थानु
रूप प्रभु वेगिही प्रसन्न होइ यह उत्तम प्रकार ज्ञान न
और मध्यम यह जो आपने घरमें प्रभुको पधरावें; तो
प्रभुता इयाल तहां पधारे हैं। परंतु प्रभुको श्रम होय सु
पुष्टिमार्गकी रीति नाहीं।। या क्रमसों सेवा करें। भ ग्य
और हू सिखावत हैं श्लोक।। सेवा पिका पिकी
निरूपने वचिं ना।। दैहिक क्रमसें निखितं प्रभुसे
यो ... र।। याको अर्थ।। अब कहत हैं जो सेव

हस्योंकरनों ओरकाहूयेंन
अपनेसरीरसोंसगरीसेवान
श्रीठाकुरजीकोश्रमहोनहोइतोसहाय
येंओरहूसोंकरावनों पुष्टिमारगीयवैस्नवहोय
याअपनेकुटंबमेंसमर्थनाभयोहोय तोसो
रावनों अवैस्नवसोंसेवासंबंधीकाहूनकरावनो
जहांलोंजितनीसेवा अपनीदेहसोंवनसोंकरने
यातस्करिकेंलोकदिखावेसनकरनों अपनीका
मेंश्रीठाकुरजीकीसेवाकरेंतोसरीरइंद्रियनसव
ठाकुरजीकेंसनमुखहोइ भगवदसंबंधतेंवहसुख
होइ तातेंआवस्य अपनेसरीरसोंनेमसहितभग
वत्सेवाकरनों यहनेमराखनों जोअपनीसेवाविन
लौकिकार्थवैदिककार्यखानपानन करनों मन
मेंविचारकरिलेनोंजोकें मनकोंसमझावनों जोजा
भांतिखानपानकोनेमहें प्रीतिसोंतेसीप्रीतिसों
सेवाजोवेस्नवकोमुख्यधर्महे यातेंमनकरिकें कर
नोंमहदासकोधर्महे सेवाविनाफेंसरहे ओरजो
किपवैस्विककार्यादि नेवाठारमनभटकतहेतहां
तेंमनकोंनिरोधकरिकेंसेवाकरें प्रथमतोमनको
निरोधराखे जोमनलोकिकवैदिकमेंनायतोभ
गवद्सेवामेंउद्वेगहोय तवसेवामेंतश्रद्धाघटि
य तातेंमनकोनिरोधसेवामेंआवस्यकहे तापीछे
इंद्रियनकोनिरोधकरनों सेवासंबंधीकार्यविनावो
लनोंनाहीं लौकिकवार्तानसुननादोषतसेवा
हैसभावहरभावरूपीरसनिरोधानेहोतहे तातेंमि
थ्यावानीकोनिरोधकरेंतेसेंहीमिथ्याक्रियाकोनि
रोधकरनों भगवत्सेवाकेसमयपें लौकिककार्यकछु
आयपरेंतोनकरनों जोसेवासंबंधीकार्यहोय तो

दिकें और कार्य करें तो उह कार्य सिद्ध न होइ लौकिक कार्य
सहेय, याप्रकार मनवानी क्रियानी नाकों लौकिक
वैदिक तें निरोध करि भगवत्सेवा करें। और वैदिक कर्म हू बहु
नहें लौकिक वैदिक सोय हू संसार में रहि कें न करें तो संसा
र में अपकीर्ति होय सेवा में प्रतिबंध होय तातें लौकिक
वैदिक कार्य हू लोगन के दिखायवे को। श्रीठाकुरजी
की सेवा सोंपी होय तिनकें धन तो समर्थ आसक्ति विना करें।
याप्रकार प्रभु को अंगीकार वस्त्र सामग्री सकल करि पाछें
अपने अर्थ तो लौकिक वैदिक में वरतावें। याप्रकार वैष्णव
सेवा करें तो प्रभु अनुभव करावें। अथ और हू कहे
हैं। श्लो०। यथोपकरणादीनां स्नानत द्विधीयता
भार्यादी अनुरागोपि सेवा हेतुक एव हि ॥१॥ या
अर्थ। अब कहत हैं जो पाकादिक सामग्री की रहे
वे और श्रीठाकुरजी की सेवा में सामग्री सिद्धि कर
ताथ। कहे तें स्त्री भगवत्सेवा में सहाय होय तो
भगवत्सेवा में सहाय होय तो भगवत्सेवा भली भां
ति सो होय यांभांति भगवत्सेवार्थ भार्या जो स्त्री ता
हू सें अनुराग राखनो। अपने विषयादिक के अर्थ
अनुराग सर्वथा न करनो ताको दृष्टांत कहत हैं म
हादेवजी की स्त्री सती हुती सो महादेवजी को वचन
नाही मान्यो। श्रीरामचंद्रजी की परीक्षा लीनी जान
कीजी को रूप धरि। सो बात महादेवजी नें जानी सो म
हादेव तो भगवद्भक्त भयो। सो वाही समय सती को
त्याग ही कीयो। पाछें सती नें दक्ष प्रजापति के मख में या
ली देह भस्म कीयो। पाछें हेमाचल पर्वत कें प्रगटी त
हां अनेक तपस्या कीनी। तब महादेवजी को मन सती
पर प्रसन्न न भयो। तब श्रीठाकुरजी नें महादेवजी सों कही
जो तुम इतनो मेरो वचन करो। पार्वती को अंगीकार
महादेवजी पार्वती को व्याहि कें अपने घर ल्या

रे तब पार्वतीजी ने महादेवजी सों भगवत्लीला पूछी
तब महादेव प्रसन्न भये तातें वे सब होइवे तो किं
विषय के अर्थ स्त्री पर प्रसन्न न होय भगवत्सेवार्थ
कानुराग बढ़ै जा प्रकार भगवत्सेवा भली भांति सों
होइ सोइ करनो या भांति सेवा हेतु लौकिक हू करिये
सो अब और हू कहत हैं ४ श्लोक ॥ प्रतिकूलेयथात्याग
प्रभुसंबंधिवस्तुनः धनेषुनिस्पृहस्सैव पयोगत्वेनर
[illegible] पया को अर्थ ॥ और जो स्त्री प्रतिकूल होय भगव
त्सेवा में प्रतिबंध करे तो वह स्त्री को त्याग ही करिये
वा स्त्री में अनुराग न करिये काहे तें प्रभु संबंधीन
होय ताको त्याग ही उचित है काहे तें प्रभुसंबंधवि
नाजो स्त्री होय सो सर्वथा भगवद्भाव को नाश करे
तातें लिलाकार भगवद्भाव में वाको मन लागे पुष्टि
मार्ग में श्री आचार्यजी के कुलद्वारा नाम निवेदन होय
मर्याद होय तो श्रीठाकुरजी के पधराइये सेवक होय मर्या
दा होइ तो श्रीठाकुरजी को पधराइये सेवक होय मर्या
दा न होय तो अपरसी सेवा कराइये प्रतिबंध करे तो सी
ही वाको त्याग करिये और धन में आसक्त न राखै निस्पृ
ही कीनो है धन की रक्षा करनो ही उत्तमोत्तम है सो
रथ [illegible] है याकाल में जीव को धीरज तको
छूटि जात है सो धन की रक्षा न करे तो धन सब छूटि जाय
पाछे जीव को धीरज न रहै तब धन के लीये बहुत दुःख पा
वे सो न करै धन की रक्षा आपने सुख अर्थ न करै यह जा
ने जो यह धन प्रभु को है सो प्रभु की सेवा अर्थ रक्षा क
रे जो हृदय में पूर्ण वैराग्य होय तो धन की रक्षा न करै
जो वैराग्य दृढ़ न होय तो भगवत्सेवार्थ जानि रक्षा क
रे और भगवत्सेव आदि में उह धन को लगावे तो
भगवदर्थ द्रव्य न लगावे तो लौकिक में लगावे ४ था
धन में आसक्त मन को करि के भगवत्स

हूं वस्त्र भूषणमें वैष्णवमें न लगावैं तो हू आसुरावेश
होय तातें धन करि दिन रहै धनकी रक्षा करि भगव
त्सेवा गुरुसेवा वैष्णवसेवामें विनियोग करें याभां
ति विवेक विचार करि वैष्णव रहेंनो भगवत्स्वरू
पमें बढै पण ब्रवचौरहूं कहत है श्लोक ॥ विवहा
दिषु कार्येषु वध्वासिनार्थमानसः भगवत्संगिसंगो
पि स्वप्रणापेरवात्तया ॥ याकौ अर्थ। ऊपर यह कहे जो
धनकौ लौकिकसैं न रक्ष्यौ सो विवाहादिक कार्यमें
धन खरचे विना कैसें चलें ताहां कहत है जो अपनो वि
वाह तथा पुत्रादिकको विवाह होय तो प्रभुसेवाकौ
विचार करै जो भगवत्सेवामें और मनुष्य होय तो भ
गवत्सेवा भली भांति सो होय यह विचारिकें जितनें
द्रव्य विवाहादिक कार्यमें लगावनो होय सो श्रीठा
कुरजीकी आज्ञा पायकें उतनें द्रव्य खरच करें याभांति प्र
भुकी आज्ञा पायकें दासभावसों पकें लौकिक वैदिक
कार्य करें और भगवदीयको संग करियें सो कछु लौकि
क वैदिककी चाहनासों स्वार्थके लीयें न करियें वैष्णव
से श्रावण कृष्णजो श्रीठाकुरजी है तिनकी वार्ता वरणार्थ
भगवदीयको संग न होय तो वह मुख होय जाय तातें भग
वदीयको संग अवश्यकही करनो निरपेक्ष भावसों अप
नी बडाई प्रतिष्ठा अर्थ भगवत्धर्म कछु न करनो है अप
होय आपनो धर्म जानि करनो अब चौरासे कहें लोक
क्रियोगानुभवं कुर्वन् सेवानवसरे पुनः मूर्तौ भगवतो दृ
ष्टिभाव्यातत्स्पर्शने ७ याकौ अर्थ। भगवत्सेवामें
क्रियोगात्मकलीलारसकौ अनुभव करियें जो सामग्री
धरियें ताकौ भाव विचारियें जो वस्त्रादिक धरियें ताकौ
भाव विचारियें जो वस्त्रादिक धरियें ताकौ भाव विचा
रियें तत्सेवासों पोहोंचि अनोसर करियें तब क्रियोगा

सनुरव

५ भवकरिये जैसेंव्रजभक्तनेयुगलगीतमेंकी
वारीभांतिविचारिये अवप्रभुकोनसीकुंजमें
कहांकौनभक्तनकेसंगाकरतहैं ताकोस्म
विकल्पहोय जोमेंबडोदुष्टहों तोम
नमांहीहोत तवयहश्लोकश्रीगुसांईजी
हैं ताकोभावविचारनो चित्तेनदुःशीवचसापिदु
ष्कायेनदुष्टक्रिययाबहुशः तावकेनदुष्टोभावेनि
दुष्टोममापराधः कतिधाविचार्य १ याभांतिदैन्य
करिवियोगानुभवकरिये जबसेवाकोसमयहोय
तबवे गिहीस्नानकरिअपरसमेंपुष्टिमार्गकीरीति
सोमंदिरमेंजायकेश्रीठाकुरजीकेश्रीमुखश्रीअंग
आनंदमयदर्शनकरिसकलविरहकोदूरिकरिये
भावसहितदर्शनकरिये जैसेंव्रजभक्तनंदरायजीके
घरआयकेश्रीठाकुरजीकोदर्शनकरतहैं ताभावको
स्मरणकरिये तोव्रजभक्तनकीकृपातेंयाहकोभा
वदानहोय अवश्लोकहतहैं श्लोक विवादि
ष्टिंचुकोर्येषु स्पर्शनेनैवभावेन सर्वास्तत्रैवतत्क्रिया
भावात्मतनुभावस्यभावेननान्यथा ८ याश्लोके
स्मरकोदर्शनप्रकारकहे ताभेनेत्रइंद्रियकोसुखभ
यो पाछेस्नानकरिसेवामेंसर्वइंद्रियकोविनियोग
होतहै याप्रकारकहतहैं प्रथमसंगरनातपाछेवि
पाछेश्रीठाकुरजीकोस्नानकरावे अंगवस्त्रकरिरि
तुअनुसारवागावस्त्रधरावे याभांतिसेवामेंभग
वदस्वरूपकोपरसभावसोंकरें जोहृदयशुद्धहोयतो
व्रजभक्तनकीभावनाकरिभावविचारे जोअपनेघ
रनेव्रजभक्तआभूषणवस्त्रविचितानारतेकेश्रीनंद
रायजीकेघरआतकालआयसेवाकरतहैं सोनूं
रावतहैं शृंगारादिककरतहैं जोसुदृहदनमें

प्रतई ताई राजाकी नाई भयमनमें राखे।

नौ सीतकाल नैयनो अपनो हाथ

सर्वात्मकभा
वसों श्रीठाकुरजी की सेवाकरते स्वरूपानंदको अनुभ
व होय ५। अब औरहू कहतहैं। श्लोक। हृदयस्यात्मसु
ख्यात्मनश्चाखिलसंभवे। स्वमूर्त्तावतिशुद्धायामाविर्भा
वं भवं हरि। ६। याकौ अर्थ। अब कहत हैं जो भगवत्सेवा
में अपने हृदय कौ इंद्रियकों अत्यंत शुद्ध राखे लौकि
कावेस विषयकी भावना करै तो लौकिक देह संबंधी
को दुखसुख मनमें राखै। लौकिक वे दिखदुःखसुख
है सो यह देहसंबंधी है। और भगवत्सेवा संबंधी दु
खसुख है सो आत्मसंबंधी जन्म जन्मको है। और श्रीठाकुरजी
की मूर्त्ति अतिशुद्ध है तातें लौकिक माया के गुण प्रभु विषें
कछु ने विचारे प्रभुको श्रीअंग कर पाद मुखोदरादिक सब के आ
नंदरूपात्मक हैं और शुद्ध मनकरिकें अनुभव योग्य हैं। का
म क्रोध मद लोभ मत्सर नाकरिकें रहित हैं। और सबै दुख
के हनोहैं परमानंद के दाता हैं। ऐसे श्रीठाकुरजी को अ
लौकिक गुणसंयुक्त मनमें भावना करिकें हीरनेत्र।

धि। अब औरहू कहत हैं। श्लो०
साधनसंपत्ति कारये त्यखिलं तो निजा न्वा। शुद्धवि

शि.प. ६६

धायहं स्थंपश्चातनत्रा बिसस्तयो। २ अथ को ये
ह संसारमें आसुरी पदार्थ हैं ओर दैवी पदार्थ हैं
दैवी में दोय प्रकार हैं। एक मर्यादा अरु पुष्टि सो तीन
भेद न्यारे न्यारे कहत हैं तीनो के भेद हृदय में राखे
अज्ञानवादि रस सुख न पावे। पुष्टि पदार्थ कहत हैं
न भगवद्सेवामें जो साधन संपति हो प्रथम अपनी ह
भगवद्सेवामें जो साधन संपति हो प्रथम अपनी
हजो भगवद्सेवामें लगी रहे तो दैवी जानिये जो भ
वामें आलस होय कदाचित कोई देस काल
ने करें तो रोगादिक बाधक करें तब जानिये जो आ
देह ओर दैवी मन होय तो आसुरी ही सेवा करत में प्र
अनुभव होय जो मन आसुरी होय तो से
वा करत में मन न थोभे कैसो किक में भटके। ताको स्वरूप
नन्द को अनुभव न होय। ओर देह संबंधी स्त्री पुत्रादि
धन देव भगवद्सेवामें विरोध करें तो आसुरी जानि
नोक में ममता जाको रचि होय तो मर्यादा जानिये
याही प्रकार द्रव्य जो भगवद्सेवामें विनियोग होय
तो दैवी जो व्यर्थ में भोग होत है ओर अपाड उठ। सो मर्यादा लै
व्यर्थ में जाय। चोरी जाय। दंड होय सो आसुरी जाने जो प
थ भगवद्सेवामें विनियोग होय तो दैवी जो व्यर्थ में ति
धन को शुद्ध जाने जो भगवद्सेवामें विनियोग न हो
ताको अशुद्ध जाने। या भांति जो प्रभु की सेवा संबंधी
पदार्थ हैं तिनको हृदय में धारन करें जो मेरे काम
के हैं। तब स्वयंभाव पर्स हृदय में प्रवेस करि स्वरू
को अनुभव करावे। तातें सेवासंबंधी न होय ता पद
र्थ का त्याग ही करिये। भगवद्भाव संबंधी पदार्थ सामग्री
इत्यादि को भाव हृदय में राखिके भगवद्सेवा करिये
ओर हंकार न हो। श्लो० इत्यादैन्येन सतत्त्विति

यं है मलौकिकं स्वयं प्रविश्य भावात्मानुभवं करायें तब
कं॥ ११ याको अर्थ॥ ऊपर कहे ता प्रकार सेवा करे और
दैन्य तो मन में होय नो श्री ठाकुर जी संतुष्ट न होय ताते न
भगवद्सेवा करि दैन्यता करि श्री ठाकुर जी को संतुष्ट क
रियें तब श्री ठाकुर जी प्रसन्न होय। काहे तें भगवान् स्व
दगुण पूर्ण ईश्वर के ईश्वर हैं। ताहू वस्तु की अपेक्षा नाहीं
है भक्त प्रीति दैन्यता प्रसन्न करिबे को उपाय है सो भ
गवदीय गायो है प्रीतम प्रीति ही तें पैयो। जद्यपि रूप गुण
शील सुघरता इन बातन न रिझैये॥ १॥ सनन्द कुल जन्म
कर्म शुभ लक्षण वेद पुराण पढैये। गोविन्द कहे स्नेह
बिना लोचन कहा नचैये॥ २॥ ताते भक्त दैन्यता करि जो
कछु प्रीति सों समर्पे सो प्रभु अंगीकार करें जैसे पद्मनाभ
दास छोला समर्पे सो प्रभु अंगीकार कीये तब प्रभु भ
क्त करि दैन्य संतुष्ट होय तब जीव पर कृपा करें तब अ
लौकिक रहे जो नित्य है सेवायोग्य ताकी सिद्धि करि
वाके हृदय में पधारे भावात्मक प्रभु तब आपने स्वरूप को
अनुभव करावें तब सगरो जैन लीलामय होवें कहूं
प्राणीमात्र में दुःखी न होय। तब पुष्टिमार्गीय फल सि
द्ध भयो॥ १२॥ अब और हू कहत हैं श्लोक। एवं विधं फ
ल नित्यं चिन्तयन् चेत्तसा सदा कुर्यात्तदा हरेः स्थल
स्यायां सेव सर्वथा॥ १२॥ याको अर्थ॥ ऐसे पुरुषोत्त
म फलात्मक तिनको चिन्तन चित्त में सदा सर्वकाल
में कीयो करे तो कबहू अन्य संबंध न होय जो नित्य
न करे तो अन्य संबंध होय तो ताकरि बुद्धि
बुद्धि जाय। ताते ऊपर कहे ताही प्रकार हैं ना
आतुरता संयुक्त चिन्तन करे और
भगवद् सेवा करे लौकिक पोहिस
पुष्ट्यर्थ सेवा न करे पुष्टिमार्गीय

प. वैस्नवकौ मुख्य धर्म यही है दासभाव सौं फलरूप सर्वोपरि
जानि सेवा करै अति आदर पूर्वक सदा यह नहि विचारै जो
अनुनादी सेवा करी ताकौ फल कहा भयो नित्य नेम सौं
अपनी देह कौ अनित्य जानि देह इन्द्री कौ सुख सब छो
डि के भाव सौं सेवा करै यह सर्वोपर सिद्धांत है १२ अब
और हू कहत हैं श्लो० साक्षात्परोक्षरूपत्वात्सेवा पूर्व
वित्तद्वयं यथा गायत्र्यत्यन्त भावः संयति तस्मिन
२ अथा साक्षात और परोक्ष दोउ समय के स्व
रूप संवलित भाव होय सेवा करै प्रथम सेवा समय सा
क्षात स्वरूप की सेवा करि संयोग रस कौ अनुभव करै अ
नोसर में परोक्ष कुंजन की लीला विचारि विचारि विप्रयो
ग स्वरूप कौ अनुभव करै जैसे ब्रजभक्त रासपंचाध्याय
में अपने घर ते श्री ठाकुर जी के पास आय स्वरूपानंद कौ
अनुभव कराये काहे तें प्रथम ही श्री ठाकुर जी स्वरूपा
नंद कौ अनुभव न करावते तौ अंतरध्यान में विप्रयोग
दुख भक्तन कौ बहुत न होतौ जैसे लौकिक में कोई धन
पावै और फेरि धन नष्ट होय तो वह बहुत मन में दुख
पावै जाके पास जन्म तें ही मूलते धन न होय सो दुख क
हां पावै ता भांति गोपीजन थोरो सो अनुभव संयोग
रस कौ अनुभव कीये पाछें श्री ठाकुर जी के अंतरध्यान
में विप्रयोग रस कौ अनुभव कीयौ पाछें श्री ठाकुर जी प्र
गट भये तब जल स्थल क्रीडा सिद्धि भई जैसे ही पुष्टि
मार्ग में सेवा है वैष्णव भगवत्सेवा में साक्षात् स्वरूपा
नंद कौ अनुभव करत हैं ता समय सेवा संबंधी संयोग
के कीर्तन करै और जब अनोसर होइ तब परोक्ष दि
सा जानि विप्रयोग के कीर्तन वे रागी तन गायक गीत
[illegible] गीत अति आतुर ता सों गान करै परोक्ष की
सेवा होय यसो सबकी सिद्धि करै या भांति संयोग विप्रयोग

विचारिसेवाकरेंतौयागेंभावकहें।सोप्रकार आगेंलो
कमेंकहतहैं।१३ श्लोक॥ तदुक्तंयथाभावः केवलोवि
रहात्मकः फलंतथैवचात्रापिफलताकेवलस्यहि
१४।याकोअर्थ।जैसेकहेंताप्रकारभगवत्सेवाजुन
ोंनकरेंसंयोगविप्रयोगात्मकदोउभावबेछिनहोय
करेंतोताकेउत्तरहरजोकेवलविरहात्मभावको
दानप्रभुकरें सोफलकहुपुष्टिमार्गमेंहै सर्वोपरहै।या
रूपांतरऔरफलकोईनाही।जातेंउतरहरभावबि
रहात्मकभावकोदानश्रीआचार्यजीरीति।तबसर्वफ
लकीसिद्धिहोयचुकी।विप्रयोगमेंलगोपदार्थप्र
रूपहीदीसें।तबभावरसेवासमयसंयोगमेंहृविया
ाहोयविकलहोय।प्रेमलनहसमयहजानिप्रभुमा
कोछोडिकरगारेयहसालातनविरहवनोनरकीलि
नासुकरविकलहोयजो प्रभुधूपमेंनागेपाउन
ायचरायवेकेसेजायगें।कोमलचरणहैं।नहारि
कानचलेजाय सेप्रभुविना केसेंकालविनाऊगी
भांतिकेदानकोटिविप्रयोगसमयहैं लोकिक
हेस्संबंधीभोगसवछुटिजाय तबजानियेजो प्रेमल
क्षणाभक्तिकीप्राप्तिभई यहसुखरसहै।१४ स्वबच्चे
हृकहतहैं।श्लोक॥ फलाशूयाफलंछलवदनदि
चित्यता।
१५।याकोअर्थ।

...नाही।सोभाववन्तभक्तहीजानतहैं

सिवादिककौ त्याग मांहै औरसेवागुनगांनकरैं तामेंकछु
लौकिकवैदिकफलकी आसानहीं अनेकप्रकारकी आस
रारखे ताकौं पुष्टिमारगी प्रभु ताकौ फलनहोय फलयहीमन
मेंजानै है जोश्रीकृष्णचंद्रके वदनकमलकोदर्शन काहूते
श्रीमहाप्रभुजीके मुखारविंदरूप श्रीआचार्यजी तातेंश्री
आचार्यजी केहृदय सन्मुख [illegible] स्वारखे सोभावह
सेवामें भाव तातें मुखारविंदको इसको नवारंवार करे यही
[illegible] हृदयमें जाने तातें श्रीकृष्णचंद्रके वदनकौ
छिन नसंयोगमें [illegible] वियोग अनुभव
करे [illegible] विप्रयोग भावात्मक फलसिद्धिभयो
तब श्रीकृष्णको वदनचंद्र [illegible] रखे तातें विरह है
सो [illegible] है और श्रीकृष्ण है सो [illegible] आत्मक रूप भा
ते [illegible] निसेवा [illegible]
[illegible] है और [illegible] अनन्यज्ञान संबंधो यत
[illegible] दिन वैखीते [illegible] रूपंतु प्रसिद्धं पुरुषोत्तमः
[illegible] श्रीकृष्ण [illegible] अनन्य भ
[illegible] भक्तियोग वई तहां कोई कहै जोपुराणमां
[illegible] है तहां प्रभुकी प्राप्ति ही
[illegible] ताको कहा कारन है
[illegible] है जो श्रीभागवतमें ज्ञानीनि
[illegible] है तिन ज्ञानीको स्वरूप
[illegible] मनताई [illegible] योग [illegible]
ती ज्ञानीके [illegible] है स्वठौर आत्मकी ताको आ
कहै तिनहीमें लय होत है उनको भक्तिरसकी प्राप्तिक
[illegible] है तातें ज्ञानीके आगे [illegible] स्वरूपको भावना
को और श्रीकृष्ण है सो [illegible] रूपको भावनाव
नौ श्रीकृष्ण [illegible] रसात्मक
[illegible] है सत्य और [illegible] को [illegible]

हैं ओर श्रीठाकुरजी परमानंदरूप प्रसिद्धि श्रीभागवतनी
तो में कहे हैं जो श्रीकृष्ण संपूर्ण पुरुषोत्तम हैं सो वेदशास्त्र
में सर्वत्र प्रसिद्ध हैं तातें एक श्रीकृष्णही को स्वतंत्र परब्र
पुरुषोत्तम मानने॥ ब्रह्मादि शिवादि भगवद्भक्त जान
नें स्वतंत्र एक श्रीकृष्णही को जानने॥ श्लोक॥ सर्व
वस्था पर तें कृष्ण के चरन पंकज॥ रोमन्तः॥ न सेवा स्वरूप
सूतेः प्रभुश्रीवल्लभाभिधः॥१७॥ याको अर्थ॥ यो अव को स्व
है जो तुम श्रीठाकुरजी की सेवा कर के कछु फल की वास
ना मन में राखत हो। काहे ते वेद में जितनी क्रिया कही
है ताको फल हू कहे हैं। ताकछु फल न होय तो क्रिया व्यर्थ
होय॥ यह वेदशास्त्र की मर्यादा है। यह संदेह होय नहीं
क्यों कहे हैं जो जा जीव को श्रीठाकुरजी संबंध जीव को भय
यो है ताकी प्रीति सों भगवत्सेवा के
विषे उह वे सब पुष्टिमार्ग की रीति सों भगवत्सेवा
न जानिया। तब उद्धव वाकर तमें साधन है श्रीकृष्णही
फल होय ता सिद्धि भये पाछे श्रीकृष्णही फल नाते
श्री रसेवा सिद्धि भये पाछे श्रीकृष्ण की प्राप्ति भई। ओर वेद
मा पुष्टिमार्ग में साधन की में फल की प्राप्ति भई॥ तब कर्म
भयो ताम में क्रिया न्यारी हैं। साधनरूप फलभयो तब कर्म
जो ताकी क्रिया नाश भई। ओर पुष्टिमार्ग में साधन है
में श्रीकृष्णसेवा सो श्रीकृष्ण की प्राप्ति होय। तब श्री
ठाकुरजी के मुखारविंदरूप श्रीआचार्यजी की संपूर्ण
कृपा होय तब ही यह जीव परन आदि पुष्टिमार्ग में
भाव करि सेवा में रुचि होय। श्रीआचार्यजी की कृपा वि
ना पुष्टिमार्ग में शरण के वह न होय यह सिद्धांत नि
श्चय जानने। सो श्रीआचार्यजी की एक कृपा को न
मारहे। सो उपाय आगे श्लोक में कहत हैं॥१९॥ श्लो
तदाश्रय सदा कार्यो मनोवाक्काय वृत्तिभिः स्व
कीय ता न दीय सुत द्वि जो मिलना पना॥१८॥ या
॥ अब श्री हरिरायजी कृपा करि सो उपाय कहत हैं जो

५ [illegible] नन्द [illegible] चे पूर्व मिले राखनी श्री आचार्य जी के आगमस्त
को आप स्वरूप [illegible] ने श्री आचार्य जी अनन्य परव को
नो हृदि के प्रसन्न होय और श्री आचार्य जी को श्री
[illegible] स्वरूप मे न होय तो कोटान को हि साधन करी
सररखे पर फल नहि दिन होय अनन्य सेवे धर्म ते नापन्न
र सो श्री गुसांई जी विज्ञप्ति में कहें हे अन्य सेवे धर्मा धावो
केश्र रामे दबाधते अन्य सेवे हे होय तो माया रीके
ने सेवा श्री आदरास्य समभजे वार की वाती मे प्रपि दिहे
जी नै कै नाये वे धर्मी धो नो उ प्रसन्न हु भयो अनन्य सेवे
[illegible] भजन हरि हर है और जो श्री आचार्य जी मह
[illegible] दुर्लभ होय और साधन यो रावति आव
[illegible] के प्रसिद्ध होय श्री आपन प्रकट वेदन को
[illegible] श्री आचार्य जी को हृदय आश्रय भया कव
[illegible] ते यनो श्री आचार्य जी के नाहीं यह भाव अनन्य घोरा
[illegible] पुष्टि [illegible] हिजो हृदय में जिन को हृदभाव
[illegible] श्री आचार्य जी को दृढ आश्रय
[illegible] यो हे श्री आचार्य जी प्रसन्न होय अपनो
[illegible] रावते हे मन हम सब चरन को रिप श्री आचा
[illegible] मानते हे [illegible] भगवदीय यो सतसंग जके
[illegible] जी [illegible] इतना दारे है तो इन को श्री
[illegible] की ह पत्री कि साचि दीयो है सो इन के
[illegible] श्री आचार्य जी विराजत हे तातें श्री
[illegible] जो भगवदीय से [illegible] मिलें तो ना
[illegible] श्रद्धा ने छिन ने गारी देत हे सो
[illegible] सो भगवदीय में और श्री आचा
[illegible] हि श्री [illegible] नोन्ह जी को पुष्टि मार्ग
[illegible] होय श्री आचार्य जी प्रसन्न होय
[illegible] कहो अपनी स्त्री पो जो गोप

नातर वैसे आवके उठाय लेजायगो। यह सुनतही
श्रीआचार्यजी को धिक्कार त्याग कीयो। कितनेक जन्मके
अंतराय भयो। तातें भगवदीयमें श्रीआचार्यजीमें भ
द्बुद्धि न राखें॥ १ दै यव स्वरूप कहत हैं। श्लोक॥ नदी
यथा पृथक् तद्बुधा न स्थाप्या विशेषतः। यथाहुनीभ्य
यपृथक् तद्बुधा न स्थाप्या विशेषतः॥ यथा श्री ॥ नदीय
र्को क्षिप्राणां यामति स्तथा॥ १९॥ या श्री श्री ॥ नदीय प्रसन्न
ये लौकिकबुद्धि न राखें। यह जानके नहीं प्रसन्न होयगो
होंगे। तब श्रीआचार्यजी प्रसन्न होय क्षमा करगे
सो लौकिक दृष्टांत कहत हैं। जैसे कामी पुरुष हो
इसो दूतीद्वारा परस्त्री को बुलावे सो काम तो परस्त्री सों
कोसिद्ध होय परंतु बीचमें दूतीप्रसन्न होय तो करे तो
मसिद्ध होय नातर नाहीं सिद्ध होय। तातें दूतीको प्रस
न रहे सोई कामी पुरुष करत हैं। तातें दूतीको अधिक
सिद्ध करता है। तापर अधिक सनेह होत है। जैसें ही
भगवद्भगवान्‌को मिले। तब ही यह जीवको कार्य सि
भगवान्‌को मिले। तब ही यह जीवको कार्य सि
सिद्ध करता है। तापर इन्नधिक भगवदीयके संगवि
ध होय परंतु भगवान् है विना भगवदीयके प्रसन्न होत है
नालमिले भगवदीयद्वारा भगवान प्रसन्न होत है
तातें भगवदीयमें भगवान्‌से बराबर बुद्धि राखे क
करें॥ २१ स्वरूप कहत हैं। श्लोक॥ धनगृह यथा
सो तथा भक्तस्थितिपि चेत् विनियोगं कहत हैं।
भौवाभविष्यति॥ २० पा श्री श्री ॥ स्वरूप कहत हैं जै
भगवदीयमें भाव भयो कहा जानिये। जैसें धनगृहस्थ
श्रीकृष्णकों समर्पत हैं। भावसहित भगवदसेवा करे
तैसें ही भावपूर्वक भगवदीयकी सेवा करिये। धन
हमनवचन क्रियाकरिये। जैसें जैसें श्रीकृष्णकों
विनियोग करिये। तैसें ही स्नेहसंयुक्त भगवदीय
नियोग करिये तो भगवान होयसो आगें कहत हैं
॥ नदीयां श्रीस्वनतुष्टा तुष्टः स्वलीनसंगा

प दीयास्तु निजाचार्यपदाम्बुजपरायणाः ॥२१॥ या [illegible] श्लो [illegible] अब
पर कहे हैं जैसे भाव पूर्वक धन ग्रहस्थी इष्टकों समर्पे तैसे ही भा
व सहित भगवदीयकों हू धन ग्रह समर्पे तहां कोउ कहे जो भ
गवान की सेवा तो आवस्यक है सो करी चाहिये और भगव
दीय की सेवा कीये तें कहा होत है या भांति कोई कहे तहां
कहत हैं जो भगवदीय की सेवा करि प्रसन्न करिये भग
वदीय संतुष्ट होइ तब भगवान हू संतुष्ट होइ जो भगव
दीय संतुष्ट न होइ तो भगवान कोइ प्रकार संतुष्ट न होइ
ऐसो जानि भगवदीय कों सब प्रकार संतुष्ट करनो ताक
रिकैं निश्चय भगवान संतुष्ट होइंगे तहां कोउ कहे जो त
दीय संतुष्ट न होय वे सब जानिकैं आपतें बनै सो सेवा क
रिये और वे सब कठिन आग्या करें सो आपतें बनै ना
ही तब वे सब संतुष्ट न होय तो भगवान हू संतुष्ट न होय
या भांति कोउ कहे है तहां कहत हैं जो जैसे राजा के बाल
क की सेवा करिये सो वह बालक तो ज्ञान न होइ प्रस
न्न होय तो बालक ऐसे बातें कहे सो आपतें न ब
नै सो राजा आपने मनमें जानै जो यह मेरी बालक की
बहुत सेवा करी है याको बनी तितनी करी है यह जा
निकै राजा प्रसन्न ही होय यह जानि आपतें बनै
तितनी वैष्णव की सेवा करिये तदीय न प्रसन्न होइं
गे तऊ कछू चिंता नाहीं भगवान प्रसन्न ही होइंगे और वे
सब कितनी प्रकार के हैं तहां कहत हैं जो ऐसे वैष्णव है
य तिन की सेवा करै एक श्री आचार्यजी के चरणारवि
दकी भक्ति में परायन होय और हृदय में यह तो कपट तो
दूसरो श्री आचार्यजी के सरन की काम ना होइ ऐसे भ
गवदीय की सेवा करें सत्संग करें तो जीव की अनन्य
ता श्री आचार्यजी में होय अब औरहू भगवदीय के ल
क्षण कहत हैं ॥२१॥ श्लोक ॥ अनन्यभजनानुष्ठा कामले

...वर्जिता। निरपेक्षा विरक्ता सर्वभूतहितेरता ॥ २१ ॥
...यार्थः। अब कहत हैं। जो ऐसे भगवदीय की सेवा के
...पहैं जो एक श्रीठाकुर जी सेवाही करि संतुष्ट होय और दे
...तर को भजन स्वप्न में हू नाहीं जानत हैं। तब श्रीठाकुर
...प्रसन्न होय। और काहू वस्तु की कामना नाहीं है ती
...लोक पर्यंत ब्रह्मानंद मोक्ष पर्यंत तुच्छ जाने हैं लौकि
...काम क्रोध मद मत्सरता विषय वासना नाहीं गंधव
...नहीं होय। और लोभ नहीं होय जो सगरो धर्म द्रव्य
...लीये वेचे काहे तें यह कलियुग में द्रव्य के रसिक
...र्य लौकिक सिद्ध होत है सोइ धर्म में जाको बहुत खो
...न होय सो भगवदीय जानिये। और निरपेक्ष भाव
...भगवद्सेवा करें कछु लौकिक वैदिक की काम
...ना मन में न राखे और मन करि विरक्त रहे स्त्री पुत्र कु
...स्वगृह देह संबंधी सगरी जगत में दृढ वैराग्य जाने
...काहू सों अपने स्वारथ के लीयें कछु जाचे नाहीं यह जानें
...तो श्रीठाकुर जी सर्व कार्य सिद्ध करेंगे ऐसो धर्म जो भगवद
सेवा ही करिवे को है। ऐसे सर्वभूत प्राणी मात्र में हित
राखें। काहू को बुरो सर्वथा न विचारें मन वच कर्म
करि सबको हित ही करें ऐसे भगवदीय को संग अह
...नस ही करावें। तिन की सेवा लेहु पूर्व कहे ॥ २२ ॥
अब और हू कहत हैं। श्लोक। निमेषार्द्धक्षण सेवा
कथादि विहितादृशा। एवं विधास्तदीयाश्च संगार
पि विशेषतः ॥ २३ ॥ याको अर्थ। निमेषार्द्ध और
कोउ क्षण ऐसे दिन सर्वे सो न करें आपने और वेल
वृथा रो भगवद्धर्म करत होय तो वाहू की बड़ाई करें
कहें धन्य है तुमको आपु को जो गपता न जाने जो सेव
हुत धर्म करत हूं यह जाने जो मेरे में तो भगवद्धर्म रचक
लाती है याभांति दैन्यता राखे, सबकी सेवा हू आदर

सि.प.
२१

रपूर्वककरे श्रीकृष्णकी कथा आदरपूर्वक वे सुनें क
ते भगवदसेवा कीयेते सर्वहू भगवदपरायण होय मू
श्रीकृष्णकी कथा सुनेते भगवदसेवामें रुचि उपजे ता
भगवदसेवाहू करनी और भगवदकथाहू अतिआसर
सुननी याभांति अपरकहि आये ऐसे भगवदीय सर्वगु
णपूर्ण होय तिनको संग आवस्यक नेमपूर्वक करे क
हू लौकिक होय न भगवदीय दिखावे तो उह दोषमन
में रंचकहू न लावे यह जाने जो इनमें दोष नाही है मा
हीको अपान करिके दोष दीसत है याभांति सुद्धमन
सो भगवदीयको संग करे उनकी सेवा करे भगवदीय
कहै तामें विस्वास राखिके मनमें स्नेहसंयुक्त करे याप्र
कार वैष्णव है तो श्रीआचार्यजी प्रसन्न होय यानंदह
नकरेगे २३ स्लो॰ सर्वथा सुद्धभावानां रक्षतां ना
रूपखुनां सर्वश्रीवल्लभाचार्य प्रसादेन भविष्यति २४
पा॰ अर्थ अपराजित नो प्रकार कहे सब सुद्धभावसो
करें भगवदसेवाहू सुद्धभावसो करें गुरुसेवाहू सुद्धभा
वसो करे श्रीठाकुरसेवाहू सुद्धभावसो श्रवनकरे सगरी
भगवदलीलामें सुद्धभाव राखे सर्वभगवदसामग्रीमें
शुद्धभाव राखे भगवदीय प्रसन्न होय कृपाकरे तो प्रभुहू
कृपाकरे तहां कोई कहे जो तुम इतने धर्म महाकठिन है यह
कलियुगके जीवसो कैसे बनि आवेगे जीव अतिवलकहू
अतिमाहकठिन तासो सिद्ध होत है याभांति संदेहकरें
तहां कहत है जो श्रीवल्लभाचार्यजी यह कलियुगके जी
वनपे कृपा करिके प्रगट है यह पुष्टिमार्गस्थ
प्रगट कीयो है सो श्रीमहाप्रभुजीकी कृपाते सगरे धर्म
कलियुगमें आवेगे जीवको तोसर्व ही कठिन है जीवको
अवकासहु है और श्रीआचार्यजी कृपाकरें तिनको
सुगम है तातें मनमें राखत श्रीआचार्यजी ॥

कमलको आश्रय दृढ राखे सर्वकार्य आश्रयहीतें निश्च
यसिद्ध होयगो याभांति श्रीहरिरायजी पतिज्ञा करिकें कहत
हैं जो एक श्रीआचार्यजी को आश्रय मनमें दृढ राखें ताही
करि सर्व सिद्धि होइगो निश्चय पुष्टिमार्गीय फल हैं सो
श्रीमहाप्रभुजी दान करेंगे याप्रकार प्रथम सिक्षापत्र को भा
व यथाबुद्धि अनुसार कह्यो २४ ॥ इति श्रीहरिरायजीके प्रथ
म सिक्षापत्र ताकी टीका श्रीगोपेश्वरजीकृत संपूर्ण ॥ १ अ
ब दूसरो सिक्षापत्र श्रीहरिरायजी पठावे हैं ताको व्याख्यान
श्रीगोपेश्वरजी करत हैं ऊपर प्रथम सिक्षापत्र को भाव
हृदयमें धारन करें तो श्रीआचार्यजी महाप्रभु वाके ऊपर
निश्चय कृपा करें पुष्टिमार्गमें श्रीकृष्ण फलात्मक रसरूप
दान करें तब श्रीकृष्ण को स्वरूप हृदयारूढ होय सो यह
दूसरे सिक्षापत्रमें कहत हैं जो ऐसो स्वरूप को अनुभ
व होय श्लोक ॥ यसोदोत्संगलालितं कल्पयंथित
वेणिकां मुक्ताफलसंतेडालो चरनं कुंडिलकुं नम्र १
पाठोंत्र अब कहत हैं श्रीयसोदोत्संगलालित यह
वेत्रमाधात्मकस्वरूप हैं वसुदेवदेवजीके इहां जो प्र
भुरूपसें प्रागट्य हैं और श्रीयसोदाजीके इहां जो स्वरूप प्र
गटे हैं सो विलखव्रजभक्तनकों आनंददानार्थ हैं सो श्री
यसोदोत्संगलालित जो रसात्मक सोई यह श्रीआचार्य
जीके पुष्टिमार्गमें सेवनीय हैं तामें सोय प्रकार है कल्प
कल्पमें द्वापर आवत हैं तब श्रीनंदयसोदा प्रगटत हैं त
ब श्रीठाकुरजी प्रगट होत हैं सो यसोदोत्संगलालित
पुष्टिमार्गीयमें सेव्य नाहीं हैं काहेतें कल्पकल्पमें क
वहू ऐसो आवनो होत है और सारस्वतकल्पमें जो स्वयं
प्रभु आप पधारे हैं जो विरहकी रूचा को वरदान दीये सो
सारस्वतकल्पके यसोदोत्संगलालित यह पुष्टिमार्ग
में सेव्य नाहीं है सो श्रीगुसांईजीके वचन हैं १

जानितेपरमंतरंगयसोदोतंसंगलालिता तस्त्याद्वितीयो
रासुरास्तानदेखुधा १ श्रीयसोदोतंसंगलालितविना
औरकौजानेनाकोआसुरजानियें सबे लीलासबेव
स्तुकेकारणरूपयसोदोतंसंगलालितहैं तिनकोश्रीय
सोदाजी अतिस्नेहसो उत्संगमें लीये लालनपालन
करतहै परमआनंदमेंमग्नहै ऐसो दाजी ऐसो मंगलरूप
प्रभुलोपायकेसो श्रीगुसांईजी मंगलग्रंथमें कहेहै मंगल
मिहश्रीमंदयसोदा नामसुकीतनमेंबहुचिरातसंगसुल
लितपालिनरूपं मंगलरूपको गोदमें यसोदाजीकेश्रा
पर मंगलरूपभई ऐसेस्वरूपकोध्यानकहतहै श्रीयसोदा
जीके आपहू मंगलरूपभई ऐसेस्वरूपको ध्यानकहतहै
श्रीयसोदाजीउछंगमेंपुत्रकोलेसुंदर घूघरवारेवार
हैं तिनके सवारिकेंवेणीगुहतहै अथवा श्रीयसोदा
जीचरनीमोद्रसेंप्रभुकोलेकेअनेकमेवामिठाईअरोगा
वतहै अनेकक्रिलोनासोंखिलावतहैं कुमारिकाजोघ
रमें मलतहै सो बेनीगुहतहै अथवाश्रुतिरूपाश्रीवृंदाव
नकीजीपद्माणिनाकोभावसोगुहेहैं अथवाप्रौढाकुरजवि
यास्वभावकहतहै श्रीयसोदाजीवृषभानकुमारीकोअ
पनेपास बैठाय दोउस्वरूपकी वेणीसुंदरगुहतहैं याभांति
अनेकभावहै श्रीमहाप्रभुजीकीकृपातें अनुभवहोत
है याभांतिकेवोसभायकै सुंदरभालपरमोतीकीलर
सोभादेतहै सो मानो नीलकमलके ऊपरवरावरि
जलबिंदुआयरहीहैं तथास्यामचंद्रमाकेऊपरत
रागनकीपंक्तिआयरहीहै सीतलमंदसुगंधवायुतें
कुंतलजोअलकैसोचलायमानहै सो परम अद्भुत
सोभादेतहैं मानो मुखकमलके मकरंदवसहायअ
लिजाभमरकेपुत्र छोटेछोटेपांतिकीपंक्तिआयपा
नकरतहै तथामुखचंद्रमापरअलकसोसर्पकेबच्चे

आयेहैं यामोतिनासिखातेनखपर्यंतश्रृंगारकोभा
हितहस्यमें विचारो॥आयव औरहूं कहतहें॥स्लोक॥ मु
क्ताकलावलीभालप्रांताकर्णविभूषितः कस्तूरी
कंचुकभालभूषातिसुंदरा॥भूयाकोस्तुभे टीकाः
कीलरभालतें रेककणतोइंदरीधरेहे
हेयवककीपंक्तिपरमसोभाहेन सु
कस्तुरीकोतिलकभालपरविराजमान
गुसाईजीके भालपरसुनसि
कोतिलक हेताते श्रीचंद्राव
भावसंबंधीतिलककस्तूरीकोपीत
हे॥ औरश्रीमुख्यस्वामिनीअपनेभाव
को भावात्मकहेयाते है
का॥ विलसत्कपोलद्वयचित्रनः
लद्युतिमंडिता॥भ्याको श्ये
श्रीरसमें जो देहारवकुमकुम स्वामिनीगरागसो कपो
चित्रि सोटाउकपोलमें कमलपत्रपरमसो
स्वामिनीजीकेमनो
कोहे॥का कमलपत्रजवव्याहहोतहे तबही
औरश्रीस्वामिनीजीअपनोमनोरथकु
हो
कुजी जो
साजीश्री
तन
रनहें जोह
चित्रकालको तबश्रीठा
सोरव का
मनोरथपूरणकरनहें

नीजीके कपोलपर कमलपत्र स्याने हृदसों सवा
रिके अपने आइदकों मनोरथ करत हैं तो निरख्यदीभां
तिहमकोदीयो करो आवस्थके अनुसार दिन इलहमेरो
कुसरवनेया याभांति अनेकली लागो यूककरि पाछुश्री
ठाकुरजीको गोद हेके श्रीस्वामिनीजी श्रीयासो हृदलोपास
ना सबके कहनहे तो यहतुमारो पुत्र स्वामि चंचलवेसें
इहतनाटी सोकोइकोंआइ राखेहे । यह ठोरतो यारी
मननाही लागत तो तोंपि लायलारेहे तवश्री
यसोदाजी श्रीस्वामिनीजीके कृपा प्रसन्न होय श्रीप
कुरजीको अपनी उछंगमें लेतहें विधनासोंयेपराप
सारियहप्रार्थना करतहें तो वृषभान कुमारी तेमेरोपुत्र
कोव्याहहोय यहीमें मांगतिहों या छूसे बामिलाइयो
स्वामिनीजीकी गोद भरिदेत हें याभांति श्रीठाकुरजी
कपोलचित्रनहें और शोक श्रुतिजो काणमें कुंडलप
असो भायमानहे सो कुंडलश्रुति चंचलहे सोकवहू
मकराछन कुंडल धरतहें कवहूं मकराछत कुंडल धरत हें
सेनवराछनमें स्वकीयभक्तको मनोरथ मोराछतमें परव
यभक्तको मनोरथ सो कुंडलकी कांति गंडस्थलपर
लव्कनाहे सोकों विकोदें दर्पनकी छविकोंहरतहें
नीलमणिकी कांति लजपावतहे अब और हू कु
नेहे २ श्लो० चिवुकांतलसधन्य भूषसो ननले
वेनः नयन गात विलसमासि छे हुसुशोभनथय
श्लो० सुंदरा चिवुकपर हीराको भूषणसो हन
सो परमउज्वल श्री चंद्रावलीजीको भावहे सो मधुर
कबीटीका मे चिलारके पिवतानहें सो श्रीस्वामिनी
धरामृतको पान करतरसके आछिवाते मुखक
ते अधरामृत स्रवतहें सो चिवुकपर आवतहें सो
चंद्रावलीजी आस्वादन करतहें याभावते चिवु

ाविराजत हैं नैनन के मध्यमें अंजन आकार रसहीसो
तहें।सो नयनन के बांकटाक्ष हैं सो हिये भक्तनकुं रूपरस
तहें।तामें व्रजभक्त मोहित होयकें अपनो गृहका
जभूलिजात हैं काहेतें नेत्र अति कुटिल हैं।अतिच
लतहें।अतिचपल घूमतो यस्थान हैं अनेक भावसों
मेंहें।सोश्रीगुसांईजी ललितत्रिभंगी ग्रंथमें वर्णन
कीयेंहें।रसहिसाके भक्तनकों स्केनेत्रदी धारारस
पानकरावत हैं।श्री स्वामिनीके कविहारकों ऋणारनेत्रद
।रसपानकरावतहें।श्रीएश्रीयसोदाजीमसिविंदुका
ग्रोमर हीरे हैं जोभर पुनके काहूकी दृष्टिन लागे तामि
नविंदुका परमसोहत हैं।सबके मनको हरत हैं।ॐ।गोक
ओरहूकहत हैं।श्लोक॥ लालमिसअघधारसम्बंधस्ण
तानबोधके बालनभावादिसलेनरसबोधनतनप
राःभयावो त्र्यो।योएनम अधरनेरसम्भवतहैं।सोश्री
यसोदाजी तायह जानत हैं।जो बालकके रसाहरस अघ
तहें।सोश्रीयसोदाजी हैं यह जानत हैं सुखकु सुंदनव
तहें।नवअधरामृतकी बालकलीलाको आर
रहोनहीं काहेतें पुष्टिलीलामें अधरामृतपानलि
ताश्रीगोकार न होय तोर श्रीठाकुरजीनो नित्य
तामें सबको श्रीगोकार करावनके लीला पधारे
श्रीयसोदाजी व गोपीजनकों तथा श्रीनंद
जीकों अधरामृत केसे प्रावत होय तातें बालभाव
रतहें सखानकों गवालमंडलमें कूटरवदा
व्रजभक्तनको तो तातें अधरामृतनीका
पशुपक्षीकों वेणुद्वारा सेधरसतसबनको
नहत हैं।अनेपवित्र धनाही होत हैं बालक
श्रीस्वामिनीजीको अधरामृतपान करावैं
श्रीयसोदाजीसों कहिके श्रीठाकुर
नैं श्रीयसोदाजी

७. धराइकै लेजात हैं। तो तुमारे पुत्र को खिलाइलावैं नवस
नको उं यह ज्ञान नहीं। जो बालक को खिलावन को लेजा
नहीं। काहू को विषमबुद्धि नाही होत एकांत में लेजाय
गुप्त रस की रीति प्रार्थना करत हैं श्रीठाकुरजी रसदान मे
तत्पर हैं। याभांति समस्त भक्तन के मनोरथ सिद्धि करत है
अथवा श्रीहस्त कहत हैं। सो मुखांबुज निज गुप्त
वेसन परायणा भांति पदार्थ खगानि क्रियासक्ति वि
बोधक है। या के अ श्रीठाकुरजी सुरपालन में
पोढे हैं अपने अंगुष्ट को बारंबार मुख में प्रवेस करत
हैं ताको यह जनावत हैं जो चरणारविंद में कोटान
कोटि भक्तन के मन लागि रहे हैं तिन भक्तन के मन में
यह तापस्य ने वकाप्रलयोरहत है जो हमको अधरामृत
को पान बहुत भयो है सबको न भोग्य है सो भक्तन
की आरति प्रभु सहि नाहीं सकत तातें बालभाव सों
को ज्ञान नाहीं याभांति चरणारविंद के भक्त को अ
धरामृत रस को पान करावत हैं अथवा प्रभु यह विचा
रत हैं जो मेरे चरणारविंद में ऐसो कहा रस है जो हमा
रे भक्त चरणारविंद को पूजत हैं ध्यान धरत हैं सो रस
को मैं हूं तादृश बालभाव सों आपु हूं चरणारविंद
के रस को आस्वादन करत हैं अथवा के वह श्रीहस्त के
अंगुष्ठ मुख में मेलत हैं ताको अंतर गृह यातें है बहु
त श्रीठाकुरजी के पास आइ है तिनको आपु श्रीहस्त सों
पकरि अपने मुखारविंद में धारन करत हैं सो वह एका
त में जन भक्तन को बाहिर निकासि रमण करि पाछे प
रि मुखारविंद में धरि लेत हैं लोगन के दिखाइबे में बा
लक अंगुष्ट चूसत हैं स्वामिनी आदिकों अनेक रमण
बंधनादिक क्रिया को बोधन करत हैं याभांति श्री
ठाकुरजी का जेसो श्रीठाकुरजी को अधिकार है ताको

हीरसपानकरावतहैं।प्रियव्यऔरकहतहैं।सोकाहेसी
रत्नतुलाकल्पलताविभूषनोंनिदर्शनरसस्य
मनिमाला।तिसोहनं।७।याके।अथश्रीदासोलगी
तीकीमालाताकोनामकहंठश्रीपरमसोभादेतहै
हीकेपासरखवाईहैमनिकाऔरमणिमालाग्रंथ
करिआपनेभक्तनकोयहजनायोजोमैंतुमकोअह
निसमैंराखतहौं।जुनाकीमालाधारणतथाम
मयअनेकभक्तनकेभावात्मकहै।तातेंप्रभुप्रेमतें
कीरिहै।७।अवचौथेकहतहैं।सोकहा।त्रयस्थल
रवछचक्रवेष्याद्युभयंग।सुलभफलस्वरूपसाले
लतोहरा।८।ध्यान।अथचौथेउरस्थलकेऊपरहै
कौनखवचनरवापरमसोभादेतहै।सोश्रीयसोदाजी
अपनेपुत्रकीरक्षाअथधारतहै।सो।रक्षाभक्त
अनेकलीलामोघनकरावतहैंनखदानरास
हारलीलामेंहोतहैं।सोबघनखाउदोहै।ताको
अभिप्राययहहैजोकिअनेकभक्तनकोहृदयउदोहै
कोमलश्रीठाकुरजीकोंआपनेवसकरनोहैं।सोवे
बाहैदोअपनेहृदयमेंधारियहजनायोजोमैंहूंत्रिभ
सोयाभांतिभक्तनकेमनसूधोकरिभक्तनकोअ
हृदयमेंराखतहैं।तथाअनेकभक्तनकेघरश्रीठाकुर
तबदासपरारखवारीचाहिये।तबनखते
सं हिदैविकनासिंघजीप्रगटकरिकै
ऊपरखवारीरा।खिभक्तनकेसंगानिर्भयतासोंली
लाविहारलीलाकरतहै।तातेंपोरीपरसिंघहै।सो
एस्लीलासंबंधीहै।तातेंश्रीठाकुरजीनखस्वरूप
कीरे याभांतिसगारेआभूषणाव्रज
हैं।तातेंश्रीठाकुरजी
सोपासराखेहैं।जोव

कृष्णहोयतातेंजोनत्कालश्रीठाकुरजीप्रगटहोतहैंतातेपु
ष्टिमार्गमेंशृंगारकरवेकोक्रमनदीहणातेंहोय श्रीरणपाके
ईनाहींयामेंतिलकोवधनरखामनुधरेहें तानरखभूषणके
मालसुकोफलश्रीरखवरलेकेमणीकासुनहें गूथीश्रैसी
मुरलीमनोहरऊपरविराजमानहें सोसबवर्णनकोश्री
स्वामिनीजीकोभावमुक्तासोश्रीचंद्रावलीजीकेभावसों
श्रीठाकुरजीअपनेहृदयमेंधारनकीयेहें श्रवश्रीअंग
हमहैंतोश्लो० ॥ ॥ वाहुमध्यलसद्रत्नजटितेमोदसुंदर
परायुक्तेलसल्लयकरयोमनभूषणार्थया० श्रीसुंद
रवाहुमेंवाजूबंदरतनजटितहें तिनमेंमुक्ताफलजडाऊ
होऊभुजनमेंशोभादेतहैं सोवामभुजामेंश्रीस्वामि
नीजीकोभावात्मकरतनभुजामेंश्रीचंद्रावलीजीके
भावसोश्रीरपाटकेगुछामेंपरोयाश्रैसेछोटेरत्नके
सोऊकरमेंकंकनपरमशोभादेतहैं ॥ श्रवश्रीअंगकह
तहैंश्लो० ॥ ॥ रत्नांगुलिलसद्रत्नजटितोत्तममुद्रिकं
किंकिणीपरमुच्छालितिर्त्याजितकटिस्थलः ॥१०॥ या
ख्याश्रीहस्तकीहस्तांगुलीसोदसोमेंरत्नजटि
तजडाऊमुद्रिकासोहतहें परम उत्तमसोदसमुद्रिकाको
अभिप्राययहहेंजोदसप्रकारकेभक्तनकेभावात्मक
हैंजारसकेजोभक्तहैं तिनकोताहीश्रीगुरीसोनखदान
करिपरमसुखदेतहैं ॥ श्रीकटिस्थलविषेपाटकेगुछा
मेंपरोईश्रैसीजोकिंकिणी ताकीश्रनेकलीताकेसुंद
रमधुरस्वनकीकनासोकटिमेंवाधीहें सोभक्तनकीकि
किंनीकेनादकोश्रनेकलीलाकोस्मरणहोतहैं ॥ श्र
वश्रीअंगकहतहैं श्लो० ॥ ॥ सनूपुरपदन्यासध्वनिमो
हितगोपिकाः हिंदोरनरवाविधुजोत्स्नाजितनिसाप
ति ॥११॥ या० ॥ श्री चरणकमलमेंनूपुरपरमसुंदरधा
रणकीयेहें सोनूपुरकीधुनिसुनिकेंश्रनेकगोपीजन

ओर बाललीलाकों स्वरूप दिखावत
सन्तकरावत है सो श्रीनवनीतप्रियाजी
कु. प्रगट दर्शन देत हैं स्यान
गोजान नखचंद्र के आ
चंद्रमा ल नहीं होत है चंद्रमा के भीतर ऐसे नखचंद्र
कन के हृदय में रहत हैं तिनके हृदय में प्रकास होय
हालहरनौं नखचंद्रनें अपने ज्योतिके प्रकास
चंद्रमा।१।सूर्य।२।दर्पन।३।मनि।४।स्वा।हिमके
यासों जीते हैं। ओर हृदयमें नखचंद्र हैं तासों वाम च
रविके मैं नख पुष्टिभक्तनके हृदयको तिमर दूरि क
ओर हृदन चरणकन खमयो है भक्तनके तिमरकों दू
फ. रहैं या भांति नासिखांत नखपर्यंत स्वरूप वर्णन
रो है।२। अब ओर हू कहत हैं श्लोक॥ स्वरूप प्रतिबिंबे
दृष्ट्वा हास्यमुखांबुजः पंकोगराबरुचिर सदा मुग्ध
रोमणि।२। याको अर्थ॥ ऊपर कहे ऐसे सुंदर बाल
रूपकी लीला श्रीठाकुरजी करत हैं अपनो प्रतिबिं
ब है मणिजटित अंगनमें देखि पकरनको हेत
प्रतिबिंब हस्तमें नाही आवत नव मुखमें हास्य होत
कव है मणिजटित खंभ हैं ता हां अपनो प्रतिबिंब दे
बारंबार किलकिके हसत हैं व्रजकी रज एवी गये
गिरदी है सो परम सोभा देत है मुग्धलौ किलकव
कीनाई अनेक लीला करत हैं परंतु मुग्धसिरोम
हैं माने कछू ही नाही जानत हैं या भांति व्रजभक्त
सुख देत हैं।२। अब ओर कहत हैं श्लोक॥ स्व
नान्य ज्ञान रहित सर्व लीला विचक्षण॥ कंदर्पकोटि
वर्णा मान नीमान दर्पहा।१। याको अर्थ॥ सर्व
गनको यह दीसे जो केवल बालक ही जानत हैं
कु ओर लीलाको नाही जानत परम मुग्ध हैं मात्र

चरनयसोदाजीनंदरायजीरोहिनीजीआदिदैगोपगो
पीसबकोंकेवलबालकहीजानतहैं औरअनेरागव
जभक्तहैं सोयहजानतहैं जोसबकेलीलामेंपरमचतु
रहैं कहाभयोमात्रचरणकेआगेमुग्धताजनावतहैं
तोव्रजभक्तयहभावजानतहैं औरकोटिकोटिकंदर्प
जिनकीसोभादेखिलज्याकोपावतहैं ऐसेलावण्य
जिनकेआंगप्रत्यंगपरमसोभायमानहैं मानिनीजोश्री
स्वामिनीजीमानकोहरतहैं यहविलक्षणरीतिहैं जोरा
सकालावच्छिन्नसपारीलीलाकोंअनुभवकरावतहैं
सोश्रीगुसांईजीपालनामेंकहेहैं मानिनीमानहरणं
श्रीयशोदाजीकेआगेपालनामेंकूदतहैं ताहीसम
यमेंमानिनीजोश्रीस्वामिनीजीकोंमानहरतहैं ऐसे
विरुद्धधर्माश्रयअलौकिकबालकहैं॥१३॥ श्लो॰ ॥ ख
गोपिकागृहचौरकृतसंकेतगोपनः॥ परमानंदसंदो
हसंदोहदुःखविवर्जितः॥१५॥ याको अर्थ ॥ स्वजोअप
नीगोपिकाश्रीस्वामिनीजीतिनकोगूढभावहैं ति
नकेघरचोरीकरिसंकेतकरतहैं पाछेऔरगोपीज
नकेआगेस्वामिनीजीकोंसंकेतदुरावतहैं जोयह
नजानेंतोआछो॥ अथवासमस्तगोपीजनकेघरश्री
ठाकुरजीगूढभावसोंछिपिकेंपधारतहैं दूधदहीमा
खनसगरीसामग्रीआरोगिकेंपाछेंजहगोपीआव
तहैं तबउनकोंएकांतमेंसंकेतकरतहैं पाछेंकोईगो
पआवतहै अथवामात्रचरणयसोदाजीकेआगेउ
हसंकेतगोपनकरतहैं तथासमस्तभजनकेसंगसंके
तकरतहैं एकाकभक्तकेआगेसंकेतगोपराखतहैं
यहजानतहैं जोहमहीकोंश्रीठाकुरजीमिलतहैं और
कोनाहीयाभांतिभ्रमनकरतहैं अथवासमस्तभक्त
केमध्यमेंश्रीस्वामिनीजीबैठीहैं तबश्रीठाकुरजीसैन

मेंश्रीस्वामिनीजीकोगूढभावसोंवजावतहैं।तोश्रोरकोई
नजानेयाभांतिजतावतहैं।सोपहलानीठौरश्रावे।जहाँ
संकेतहै।तवश्रीस्वामिनीजीकछुवहानेतेंघरकोनाम
लेकछुमिसतेंश्रीठाकुरजीकेपासपधारतहैं।सोछैंश्र
नेकभांतिलीलाकरिपाछेंसवसखीनकेश्रागेंरसली
लागोप्यकरतहैं।परमश्रानंदरूपहैं।तातेंसमस्तभक्तन
कोंपरमानंदकोंदानकरतहैं।श्रोरस्वकालमेंयें
दुखकरिकेंरहितहैं।४४।यहश्रोरहूकहतहैं।सो
ससमस्तदुःखितानांप्रपंचसुखिनामपि।स्यानिधिसु
खभावरवैयथाचेधिकारकः॥४५॥कोश्रर्थ।लौकि
कप्रपंचकेश्रनेकप्रकारकेदुखसोंकोसंयोगमोहसुहम
रताश्रादिमायासंवंधीतिनसवनकेपोखनहारहैं
श्रविद्यारूपश्रनादिनी।ताकेंश्रीठाकुरजीमारिकेंसंस
रमनकीश्रविद्यादूरिकीनीकाहेतें।भक्तनकोंसाम
र्थश्रविद्यादूरिकरनकोंनाहीहतो।तातेंश्रीठाकुरजीश्र
पनेभक्तनकेश्रर्थव्रजमेंश्रवतारधारेहैं।तातेंसवन
कीश्रविद्यादूरिकरिश्रनेकलीलारसकोंश्रनुभव
करायपरमसुखदीये।दुखनकोनासकीयोकाहेतें
स्यानिधिहैं।भक्तदुखपावेंसोसहिनाहीसकतहैं।सो
जनमेंस्वतसुगधभावकोंश्रंगीकारकीयोहै।मानोवछु
जानतहीनाहीकाहेतें।जातेंभक्तनोंप्रयश्रपालहोय
तोवालस्वभावछुटिजायकाहेतें।श्रवरनासफुरतोयह
तातेंजोसगरेजगतकेपोषनकर्तायेहें।इनकोंऐसोभावकरी
धरेहुश्रात्मस्वरूपवहुरिखिलौनाकहांहेंउँ।सगरोश्रीयमु
नाजीकोहै।याभांतिस्नेहछूटेनोपुष्टिभक्तकीप्राप्तिनहीं
ये।तातेंश्रीठाकुरजीमुग्धलौकिकवालककीनाईलीला
करतहैं।भूखेहोतहैं।तवस्तनकरिकेंहठकरिकेंमातासों
भोजनमांगतहैं।तातेंभक्तनपरकृपाकरिकेंलीलामुग्ध

भावकोधारन श्रीठाकुरजीकीरे मुग्धभावमेंयोरीवस्तुसोंसं
तुष्टहोतहें जो ईश्वरतासहितप्रभुमागेंतोभक्तसोंदीयोनाहीं
जाय जेसेंराजाबलिसोंतीनपेंडधरतीमागीहें सोराजाब
लिसोंदीनीनगई ताते मुग्धभावहोय व्रजभक्तनकोसु
खदेतहें ओर अपने व्रजभक्तजो अंगीकृतहें तिनकेबा
ध्यहें दूरणोकरतहें सो श्रीभागवतमेंकहेहें कोईव्रजभक्त
कहतहें ओरमटुकतोरीवो कोईकहतहें मथानीतोरीको
ईकहतहें पादुकाल्यावो तुमकोहमभाखनदेंगी कोउ
कहतहें नाचोतव श्रीठाकुरजीसबकोककहो करतहें जे
प्रकार व्रजभक्तसुखपावतहें सोई श्रीठाकुरजीकरत
हें १५ अब ओरहूकहतहें श्लोक प्रपंचेनासनाख्ये
यनिरोधकलितत्परः बालभावग्रहपरक्रीडादिलक्षित
हरा १६ याकोअर्थ श्रीठाकुरजी अपनेनिजभक्तन
केप्रपंचलोकिकयहांसनकेमनहें नहोंतेछुडायआ
पमें लगावतहें तातें व्रजभक्तनकेघर श्रीठाकुरजीचोरी
करनकोपधारतहें व्रजभक्तनकोमन दूधदहीमाखन
कीचोरीकरी तबव्रजभक्तनकेमनमें श्रीठाकुरजीको
ध्यानभयो जो अबचोरीकरनकोप्रभुआवतहोंइंगे
ओरवेनुनादकरि सबभक्तनकोमनहरिलीनो ताकरिप
तिपुत्रगृहादिदेहसंबंधी सबभक्त भूलिजातहें ओरअप
वअविद्यारूपपूतनाकोमारिकें समस्तभक्तनकीअवि
द्यादूरिकीनी ओरअपनेभक्तनकेनिरोधकरनमेंतत्प
रहें इंद्रयाग व्रजवासीकरतहें तेसोइंद्रकोयज्ञछुडायो
गिरिराजकीपूजाकरायआपुसगरीइंद्रियवेंसामग्री
अंगीकारकीनी संयोगात्मक सगरीलीलाकरीबा
हरकीसगरीइंद्रियनकोनिरोधकीरो ओरवनांतर
हृसांतरकीलीलाकरी मनइंद्रियकोनिरोधकीरो
जेसें रासपंचाध्याईमें प्रथममुरलीवजायघरतेंव्र

भगवान को दुलायिस नवती। सर्वांग विसम्यका खिवाहिर
को सारी इन्द्री सुक्रिपा छुट्टे तस्थान ते रोस्कें वेतन,
एमेसमाधके मीतसी इन्द्री सुख पिय न सुख सै विग
जे याश्रितास्मयोग विप्रया तान लनको रन्ध्र पवनता
नकौ निरोध सिद्धि कीनो जेरवाल नाककै सिमकी।
हृदय मान निकरूप ध्यात है ताको गपसुन्है जो
पूर्ण देह गापाविहू सयासे वाहि है निद्रैप देयस्त।
वाको तालनन्हि ब कार की विनसु दिन होय दा
सकहै क्रिया सोनि चुने नमन नै पसरी दिन्ता
वापसविने नटीमा दसात गमकस्न है नासनदे
के सम्मनाश्य है ताको नहीं ने [illegible]
[illegible]

नकेहृदयमेंस्थानरहोय जेसेमनोरथहोय नाहीकाये
मंश्रीठाकुरजीतत्परहैं ओरवातजानतहीनाहीअप
नेनिजभक्तनकेहृदयकेअभिप्रायविनाकछुजानही
मनमेंनाहीराखत काहेतें जसेश्रीयसोदाजीकेघ
रपधारतहैं सोवेभक्तव्रजभक्तनकेसुखहेतनाथेतपुष्टि
मारगमेंप्रभुभक्ताधीनहैं अन्यज्ञानवारिरहितहैं ॥ १७
अबश्रीरहूकहतहैं श्लोकः सेवनीयसावचीनेविप
रीतिगतिक्रियो गूढलीलापरोभक्तगूढभावरसात्म
कः ॥ १८ याकोअर्थ भक्तनकेसंगगूढलीलापरायणहैं
गूढलीलासोरासलीला तामेंअनेकप्रकारकेरासहैं
गोपीविचविचमाधो तथाअष्टसखाभवंती तथाभक्त
भक्तप्रतियाभांतिअनेकरासलीलामानअनेकभांति
कोविहारअनेकप्रकारसोजलक्रियाअनेकभांतिको
वनमेंश्रीवृंदावनमेंसोनिकुंजकीकहेओरव्रजभक्त
नकेघरबारस्वरूपतेछिपेरहोयअनेकलीलातथा
रयाम्किमेगाइदुहावनमेंअनेकलीलासमुद्रकोपार
नाही तातेगूढलीलापरायणकरेंगूढभावहैजि
नकेभावकीकाहूकीखवरिनाही श्रीठाकुरजीकेभा
वकीकाहूकोखवरिनाही गोपीजनकेभावकीका
हूकोखवरिनाही रसात्मकश्रीठाकुरजीरसात्मकव्र
जभक्तसोंरसरूपअनेकभांतिकीलीलाकरतहैं ते
मेरसात्मकूयसोदात्मगलावितहैं सोश्रीहरिरा
इजीश्रीगोपेश्वरजीकोपत्रमेलिखेहैं जोश्रीयेप्रभुन
कीसेवाअपनेतेसावधानहोयकेकर्तव्यहैं को
हेतें प्रभुकीविपरीतिगतिहै विपरीतिक्रियाहैं एक
भांतिमेंप्रसन्नहोय एकक्षणमेंक्रोधकरें तातेंको
विक्षेमनन राखिये प्रभुमेंमनराखिये जोमति
कछुअप्रसन्नहोय याभांतिभयसंयुक्त भगवत्सेवा

कह्यो ।।१५।। अब श्लोक १६ कहत हैं ।। श्लो० ।। श्रीमदाचार्यरूप
याति श्रुति स्वयं हे हरिः ।। एवं विध सदा हृद्यो योगिन पार
शि यथा ।।१६।। याको अर्थ ।। अब श्रीहरिराइजी कहत हैं जो
रसिक व्रजभक्तन के भावात्मक स्वरूप अपने गृह में विराज
त हैं सो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की कृपा तें कछु अपनो
प्रेम स्नेह भक्ति औरु कछु साधन को बल मति जानीयो
रसात्मक भावात्मक प्रभु की सेवा अपने कहा करि
वे योग्य हैं । परंतु श्रीआचार्यजी की कानि तें कछु पाप शुध
रसें विराजत हैं । या प्रकार को भाव अपुने मन में सदा
जानतो । केसे हैं प्रभु योगिजन के ध्यान में नाहीं आवत
अनेक जन्म लों अनेक योग साधन करत हैं । तिन को
हजारन में हू दरसन दुर्लभ हैं सो प्रभु श्रीआचार्यजी म
प्रभु की कृपा तें साक्षात् अपने गृह में विराजत हैं य
अपने मन में सदा विचार करी सावधान तें सेवा करि
मति कहूं अपराध परे तो प्रभु अप्रसन्न होय जायगो
अब श्लोक १७ कहत हैं ।। श्लो० ।। चिंतनीयो नव सर्व
यां सर्वथा धिया ।। यतो निरोधसंसिद्धिस्तथ्या हार्दय
त ।।१७।। याको अर्थ ।। अब श्रीहरिराइजी कहत हैं
सुयो दो न्सूं लालित भावात्मक सेवा समय मन
सेवा करनो अवचित हैं । पाछे अनोसर होय तब
हियाय ताभांति हृदय में चिंतन करनो ।। सूदी
से हसो जाभांति सेवा सर्वथा अपनो धर्म जा
ना ताही भांति अनोसर में सर्वथा चिंतन क
निरोध सिद्ध होइगो । जैसें व्रजभक्तन को निरो
भयो । संयोग वियोग एवं कों अनुभवत तसे
मय संयोग की भावना । अनोसर में विप्रयोग

हरिणग्रंथवीसश्लोकको कियेहैं ताभावके अनुसारश्रीह
रिरायजीयहसिक्षापत्रमेंनिरोधपुष्टिमारगीयजीवनको
ताभांति सिद्धहोय सोप्रकारसबकहतहैं तातेंनिरोध
श्रीभागवतदसमस्कंधहै तामेंहीयहसबोपरनिरोधप्र
कारकहे ॥२०॥ इति श्रीहरिरायजीकृत द्वितीयसिक्षापत्र
ताकीटीका श्रीगोपेश्वरजीकृत संपूर्णम् २ ॥ अब
ऊपरकहे जो सेवाहूकरोगे तथाअनोसरमें चिंतनहूकरो
गे परंतु दुःसंगमिलै तबएकक्षणमेंसगरे धर्मकोनास
होयजाय जन्मजन्मको भावदुःसंगतेएकक्षणमेंजा
तरहतहै तातेंयापत्रमेंदुःसंगतेंबचेंसो निरूपणकरत
हैं श्लोक ॥ निधिप्राप्तकुलस्तेषु दुःसंगादिकतस्सदा त्य
क्तापिलोकसंकोप्यथावर्तिजलादिभि ॥१॥ याकोअर्थ
अबश्रीहरिरायजीकहतहैं जोनिधिप्राप्तहोय ताकी
रक्षाकर्तव्यहै जैसेंकाहूकोंधनकोढूंड्यो मिल्यो सोगृहद्र
व्यकीरक्षाजतनन करैतोद्रव्यकोचोरलेजाय तैसे
हीयहभगवद्भावरूपनिधि श्रीआचार्यजीकीकृपा
तेप्राप्तभईहै तानिधिकीदुःसंगतेरक्षाआवस्यकरी
कर्तव्यहै तामें दुःसंगअनेकप्रकारकोहै लौकिकवि
षयव्यादितथाअन्यमारगीयकोसंग तथादेहसंब
धीकुटुंबलौकिकवैदिककर्मपरइन सबनतेमननिको
सिंधुमेंराखोनहीं कहतहैं जोगृहस्थाधर्ममेंरहनो
लौकिकवैदिककार्यविनाकैसेंबनें तहांकहतहैं
जोभगवत्सेवापुष्टिमारगीयधर्मतोअपनेमनतें
स्नेहपूर्वककरै लौकिकवैदिकलोकनकेदिखाइबेकौ
लीलेकरै सेवासमयसेवाछोड़िनकरै सेवामेंलौकि
कवोसबोचनकरै जैसेंदामोदरदाससंभलवारश्रीद्वारि
कानाथजीकीसेवाकरते सोजलअपनेहाथकूंपतेभ
रिलावते तबदामोदरदासकेससुरनेकही जोतुमजल

मरत्हो।सोहमको वेहोनलज्यो आवनहें।तातेंतुमजल
लेडीपासभरावौ।तबदामोदरदासनेकही।अबयेसें
हीकरो।पाछेंअपनीस्त्रीसोंकहे।जोचलोजललावे
तबस्त्रीभगवदीयहुती।तत्कालकलसालेदोऊजने
चले जलभरिकेंसुसरकी हाटआगेहोइकैनिकसे
तबसुसरआयदामोदरदासकेपायनपर्यो।कह्योमे
चूक्यो।तेंतुमकोंकह्यो।अबतुमहीजलभरो स्त्रीज
नसेमतिभरावो।तबदामोदरदासनेंकह्यो।कालि
तेंनभरावेंगे।याभांतिभगवदसेवामेंलोकसंकोच
सर्वथानाहीकर्तव्यहे छोटीबडीसेवासबभावपू
र्वकप्रेमसोंकरनी।याभांतिदुःसंगकोजाननो।भग
वद्भावहेसोतोअग्निरूपहे।ओरदुःसंगहे सोज
लभगवद्भावकोनासकेंतोहे।१।अबओरहूकह
तहैं।श्लोक।।वन्हिभगवद्भावस्सत्संगर्भविथ्यान
।नासयत्संसृतिपद्मपात्रंवाहिनोजलं।२
कोअर्थ।भगवद्भावहेसो अग्निरूपहे।सोसत्सं
गसें अग्निमेकाष्ठपरेंतो ओरहूअग्नि
टिप्पन तेसेंहीभगवद्भावसत्संगपायकेंबढ
टहोय।ओरभगवद्भावअग्निमेंदुःसंगरूपीजलतें भो
नासहोय।जेसेंथोरीसीअग्निहोयतापेंजलकेंनीडा
रेंतबअग्निकोनासहोय।तहांतोकिचमेंरहेफिन
चलेनाहीतोकहाकरेदुःसंगरूपीजलसत्संगरू
अग्निराखें।जेसेंअग्निकोंसाहातजलकोसंबंध
तोअग्निकोनासहोय।ओरएकपात्रमेंजलधा
केऊपरधरेतोजलकोनासहोय।भगवद्
अग्निकोसंबंधसत्संगरूपकाष्टतेबढायेंताय
संगजलकोपात्रमेंधरि।अपनेहृदयमेंस्थाप
चारकरिदुःसंगकोजरायदेइ।तबहीबचे।

०.प.

गोंवडेक्केभगवदीयदुःसंगानेगिरेहें तातेंदुःसंगतेसदाडरपतरहें अववआरहूकहतहें श्लोक जन्तवलोकि
कंधार्मसालात्प्रेलनेनतु मूलतोनास्ययेद्भावंजथा
वैश्वानरंजलं ३ याकोअर्थ यहसंसारमेंलौकिकदु
ःसंगहें सोजलकोपात्रविनासाक्षात्‌भगवत्स्वरूप
अग्निमेंनाहींडारनों जोसालातडारतोवैश्वानरजोअ
ग्निकोमूलतेनासहोय जैसेंजडभरथसगारेलौकि
कछोडिभगवत्‌भजनकोवनमेंगये तहांहरनीज
लपीवनआई सोसिंहनादतेगर्भनेवचागिरे सो
भरथकोस्याआश्रयहीदुःसंगमिल्यो भगवत्‌भज
नसवभूलिगये एकहिरनीकेपीछेंतीनजन्मकोअं
तरायभयो असोदुःसंगवाधकहें तथाश्रीनंदरायजी
अपनेपुत्रकीसवाकरतहुते सोअंविकापूजनगये
सोश्रीठाकुरजीनसहितसकें तहांसुदर्शनसर्पआयके
नंदरायजीकोग्रसलीये तवश्रीठाकुरजीनेछोडाये
तातेदुःसंगअन्यसंबंधासिद्धिभक्तहें तिनकोवाध
कहें जोसाधनभक्तकोलगे तामेकहाकहनो तातें
दुःसंगकोमहजानतनो जोहमारस्वभावकोनास
हीकरेगो याप्रकारसत्संगतेरत्नाकरेजअववआरहूक
हतहें श्लोक अतःसदैवमेतव्यंलौकिकासक्ति
तोजनोदुःसंगभयतःकृत्वानासनीयनचान्यथा
४ याकोअर्थ अववश्रीहरिरायजीकहतहें जोलौ
किकासक्तिरूपहें दुःसंगतेसदाडरपतेहीरहनो
यहजानजोजवलौकिकासक्तिहोइगी तवमेंसत्सं
गकरिलेउंगो ताहीसमयदुःसंगमिल्यो ताहीस
मयतत्काललौकिकासक्तिहोय भगवद्भावको
नासहीहोयगो तातेंदुःसंगमिलेपहलेंहीतसत्सं
गकीयाकरे तवदुःसंगवाधकनकरे ताकोदृष्टांत

कहत हैं। जो जीव के पीछें काल फिरत हैं। तो पहले ते स्म
रण भजन करि राखे तो पीछें अंतकाल समय कों खबा
धान करे। जो जानें अब तो लौकिक करि लेहु। पीछें भ
गवत्स्मरण करुंगो। ताकों काल आवे। सो एक क्षण मे
खाय जाय। तब वा समय कछु भगवद्धर्म न बने तैसे
ही पहले ते सत्संग हू न करे। औ भगवत्सेवा स्मरण हू क
रे। सो जब लौकिक दुःसंग आवे। तब सत्संग के प्रतापते
बच जायगो। और दूसरो उपाय सत्संग बिना दुःसंग ते
बचिबेको नाहीं है। यह निश्चय जाननो। अब और हू
कहत हैं। श्लोक। सतां परोक्ष सत्संग जात भावा वि
भाव्यतां न छिद्रं च वचो नैव माननीयं सतां क्वचित्॥
प। याको अर्थ॥ अब रूप कहे जो सत्संग कों दुःसं
ग न बाधा करेगो। तहां कोई कहे जो सत्संग तो होय घ
री बनेगो। पाछें सेवा स्मरण लौकिक वैदिक कार्य हू
सब करतो रहियो। तब दुःसंग ते कोन प्रकार बचेगो।
या भांति कोई कहे तहां कहत हैं। जो नित्य नेम करि जे
सें भगवत्सेवा स्मरण करे तैसें ही नित्य नेम करिके स
त्संग एक घरी दोय घरी बने तितनो ही करे। पाछें जब
सत्संग के परोक्ष में जो जो वार्ता मार्ग को सिद्धांत सत्सं
ग में भयो होय। ताको स्मरण करि अपने धर्म को देखे
जो श्री आचार्यजी श्री गुसांईजी ने या भांति कहे हैं
और में कहा करत हूं। जो विरोध होय ताके त्याग में मन
करे। या प्रकार करे है। सो कारण को मन में करे। या भांति मन
कों जाकों भगवद्धर्म में लगाय राखेंगो। सो दुःसंग ते ब
चेगो। जो जो वार्ता भगवदीयन के मुख सों सुनिये। ता में नि
श्चय दृढ विश्वास करि वह वार्ता की भावना मन में करि
ले वसन ठिकाने आवे। जैसें गाय वन तें चरि आवत हैं। पा
कें घर आय उह फेरि बैठि कें चर्वन करिबो करि लेत हैं।

सबैसबकोसंगकेंपहोय॥ तासमय भगवद्धर्मकोंत्रव
णकेंपाछेंसत्संगकेपरोक्षमेंअपनेहृदयमेंमनकरिकें
भावनासोंरसकोआस्वादनकरें॥ सत्संगतेविरुद्धव
नजितनेहें॥ तिनकोविचारिधर्मअधर्मकोविचारम
नमेंराखें॥ औरसत्संगतेविरुद्धवचननकहेंजामेंस
त्संगछूटिजाय॥ ऐसोनकरेंकवहूं॥ यअर्थकोयहकहतहें
श्लोक॥ भिरतस्यापिदुःसंगोजातोहरिणजातिना॥ केवलं
कलिदोषाभिःभूताअपिजनाःछन्ना॥ १॥ ॥ दु
संगातेमनमेंभयराखें॥ अपनोकालजानें॥ काहेतेंदुःसं
दोषहोयतौहरिजोभगवानसोदूरिजातरहतहें॥ सो
श्रीआचार्यजीमहाप्रभुसंन्यासनिर्णयग्रंथमेंकहतहें
विषयाक्रांतदेहस्यःभावेसःसर्वथाहरिः॥ इहदुःसंग
दोषकरिदेहविषयाक्रांतभई॥ तादेहमेंभगवदावेस
निश्चयनहोय॥ तातेंदुःसंगदोषमहावाधकहें॥ औरज
गतमेंभूतप्राणीजाहेंसोसहजहीदोषकरिभरयोहें
काहेतेंयहकलिकालमहाकठिनहें॥ अपनेमनकों
विश्वासनकरें॥ जोमेंवहुतसमझतहों मेरोदृढज्ञानवै
राग्यहें मेरोमनतोमेरेवसहें यहनजानें॥ जासमयदुस
गमिलेगो॥ तासमयज्ञानवैराग्यविवेकधैर्यएकक्षण
मेंसवजातरहेगो॥ तातेंअपनेमनकोइंद्रीकोंदेहको
कलिकेदोषरूपहीजानें॥ औरयहजानेंजोसत्संगके
प्रतापतेंमेंवचतहूं॥ सोजासमयदुसंगमिलेगो ताही
समयमेंगिरूंगो॥ ऐसोज्ञानमनमेंजोराखें यहकलियु
गनेंसगरेप्राणीमात्रकीबुद्धिहरिलीनीहे कलिकोदोष
सबकोलग्योहे॥ ६॥ अब औरहकहतहें॥ श्लोक॥ सत्संग
नितैनिवभवितव्यंविशेषतः॥ अथवासर्वतोमोनंतं
द्भावेविधियतां॥ ७॥ या॥ कोअर्थ॥ ऐसोजोदुसंगदो
षसर्वधर्मकोनासकरें तिनतेंन्यारोयहजीवरहें

तवहीभगवद्भावविशेषहोय।ओरउपायकोईनाहींहैंत
हांकोईकहैजोदुःसंगप्रबलहोय।अपनेवसनहोय।
अपनेघरकेपडोसमेंहोय।तथाकहूंजीवकाहोय।तहां
दुःसंगहोय।अथवाअपनेकुटुंबमेंहोय।अपनेगेह
दुःसंगनिवारननहोय।ओरजीवकातथाघरमेंरहे
बिनातोबनेनाहीं।ओरदुःसंगप्रबलहोयतो।तहां
कहाकरें।तहांश्रीहरिरायजीकहतहैं।जोमुख्यतोयही
हैजोअपनेसमुझावनेअपनेउपायतेदुःसंगछूटत
होयतोछुडाईये।अथवाआपछोडिकेओरठोरनि
र्वाहकीजे।ओरजोअपनेकाहूभांतिदुःसंगछूटेनो
तहांमोनहोयरहिये।बोलियेनाहीं।जहांअपनेक
घोनहोय।महांअपनेमनकोभावभगवद्धर्मकी
वार्ताकथनकेहिये।उनतेमनन्यारोराखिये।काहे
तेंजाकोभगवद्धर्मसुनिवेकीश्रद्धानहोय।तिन
केआगेभगवद्धर्मसर्वथानकहिये।वाहेतेंभगवत्
नमेंभगवद्धर्ममेंभेदनाहीहे।एकहीपदारथहै।ता
तेंभागवतनको।अतिक्रमहोनतहोय।यहविचारदुःसंग
प्रबलहोय।तहांवादनकरिये।मोनरहिये।मनमें
हरिसरनकीभावनाकरिये।श्रीआचार्यजीमहाप्रभु
जीविवेकधैर्याश्रयग्रंथमेंकहेहैं।दुःखहानौतथापापे
भयेकामाद्यपूरने।अशक्येवासुशक्येवासर्वथासर
णंहरिः।याभांतिहरिस्मरणकीभावनामनमेंकरि
चुपहोयरहिये।७।अबवेओरहूकहतहैं।श्लोक
वदत्सुनपथावाक्यमाचार्यवचनाजना।संसृ
ष्टेकोपापितत्संगोदुष्टसंजनन।।टयाको।अप
नेकोईकहैजोदुःसंग।अथवाविरोधभगवद्धर्म
किन्कोकाहिये।तहांश्रीहरिरायजीकहतहैं।जो
वल्लभाचार्यजीकेवचननतेंसिद्धांतनतेंअन्यथाव

सवैस्रव को संगा के परिहोय । ता समय भगवद्धर्म कौं प्रव
गा करें । पाछें सत्संग के परोक्ष में अपने हृदय में मन करि कें
भावना सों रस को आस्वादन करें । सत्संग ते विरुद्ध वच
न जितने हैं । तिनकों विचारि धर्म अधर्म को विचार म
न में राखें । और सत्संग ते विरुद्ध वचनन कहें तो मैं स
त्संग छूटि जाय । ऐसो न करें कबहू । या वचनामृत कहत हैं ।
श्लो० ॥ निरतस्यापि दुःसंगो जातो हरिणजातिना । केवलं
कलिदोषाश्च भूतान्यपि जनाः स्मृताः ॥ या० ॥ अ० ॥ दु
संगतें मन में भय राखें । अपनो काल जानें । काहेतें दुःसं
ग दोष होय तो हरि जो भगवान सो दूरि जात रहत हैं सो
श्री आचार्य जी महाप्रभु संन्यास निर्णय ग्रंथ में कहे हैं
विषयाक्रान्तदेहस्य आवेशः सर्वथा हरि । नहि दुःसंग
दोष करि देह विषयाक्रान्त भई । ता देह में भगवदावेश
निश्चय न होय । तातें दुःसंग दोष महाबाधक है और ज
गत में मृत प्राणी जो हैं सो सहज ही में दोष करि भर्यो है
काहेतें यह कलिकाल महाकठिन है । अपने मन हू को
विश्वास न करें । जो मैं बहुत समझत हों मेरो दृढ़ ज्ञान वै
राग्य है मेरो मन तो मेरे वस है यह न जानें । जा समय दुःस
ग मिलेगो । ता समय ज्ञान वैराग्य विवेक धैर्य एकहू ॥
मैं सब जात रहेगो । तातें अपने मन को इंद्रीकों देहको
कलि के दोष रूप ही जानें । और यह जानें जो सत्संग के
प्रताप तें मैं बच्यो हूं । सो जा समय दुःसंग मिलेगो ता ही
समय में गिरूंगो । ऐसो ज्ञान मन में जो राखे यह कलियु
ग नें सगरे प्राणीमात्र की बुद्धि हरि लीनी है कलि को दोष
सब को लग्यो है । इस्र व और हू कहत हैं । श्लो० ॥ सत्संग
नितैं निव भवितव्यं विशेषतः । अथवा सर्वतो मौनं त
दृशा वै विधिपता ७ या० ॥ अ० ॥ ऐसो जो दुःसंग दे
ख सब धर्म को नाश करै तिनतें न्यारो यह जीव रहे ।

तवहीभगवद्भावविशेषहोय॥औरउपायकोईनाहीहैंत
हांकोईकहेजोदुःसंगप्रबलहोय॥अपनेवसनहोय॥
अपनेघरकेपडोसमेंहोय॥तथाकहूजीवकाहोय॥तहां
दुःसंगहोय॥अथवाअपनेकुटंबमेंहोय॥अपनेदेह
दुःसंगनिवारननहोय॥औरजीवकातथाघरमेंरहे
बिनातोबनेनाही॥औरदुःसंगप्रबलहोयतो॥तहां
कहाकरें॥तहांश्रीहरिरायजीकहतहैं॥जोमुखतोयही
हैजोअपनेसमुझावतेअपनेउपायतेदुःसंगछूटत
होयतोछुडाईये॥अथवाआपछुडिकेऔरठौरनि
र्वाहकीरीत॥औरजोअपनेकाहूभांतिदुःसंगछूटेतो
तहांमौनह्वैरहिये बोलियेनाही॥जहांअपनेक
योंनहोय॥जहांअपनेमनकोभावभगवद्धर्मकी
वार्ताकबहूनकहिये॥उनतेमनन्यारोराखिये॥काहे
तेंजाकोभगवद्धर्मसुनिवेकीश्रद्धानहोय॥तिन
केआगेभगवद्धर्मसर्वथानकहिये॥काहेतेंभगवा
नमेंभगवद्धर्ममेंभेदनाहीहै॥एकहीपदारथहै॥ता
तेंभगवदीनकोअतिक्रमहोतहोय॥यहविचारदुःसंग
प्रबलहोय॥तहांवादनकरिये मौनरहिये मनमेंह
रिसरनकीभावनाकरिये॥श्रीआचार्यजीमहाप्रभु
जीविवेकधैर्याश्रयग्रंथमेंकहेहैं॥दुःखहानौतथापापभ
येकामाद्यपूरनो॥असक्येवासुसक्येवासर्वथासरणं
हरिः॥याभांतिहरिसरणकीभावनामनमेंकरिके
चुपह्वैरहिये॥७॥अबवचौरहकेकहतहैं॥श्लोक॥
वेदत्यन्यथावा॥कोमायायेवचेनाजना॥संस्
प्रेरकोवापितत्संगोदुःसंगजन॥८॥याको॥अप
वकोईकहेजोदुःसंगअथवाविरोधभगवद्धर्म
किनकोकहिये॥तहांश्रीहरिरायजीकहतहैं॥जो
वल्लभाचार्यजीकेवचननेंसिद्धांतनेअन्यथाव

प. नवाहें॥ताकेवचनअन्यथाकेजाननें श्रीआचार्यजी
नेविरोधधर्ममेंबोधकेंपरलोकें॥अन्यमार्गकीरीति
करेंतिनकोदृष्टकरिमनमेंजानेंजोयाकेवचन
मानेतेमेरोसर्वधर्मकोनासहोयजायगो॥तातेंअ
न्यमारगीयकेपासनबेठियें॥अन्यसंबंधहोयजाय
अन्यमार्गकोधर्मनसुनियें॥अन्यमार्गकीक्रियाकछु
नकरियें॥सोगोविंददुवेकीवार्तामेंप्रसिद्धहै॥एकसम
यगोविंददुवेमीरावाईकेघरगए॥तहांमीरावाईनेंआ
दरसनमानकरिगोविंददुवेकोराखे॥सोमीरावाईभग
वद्भक्तहुती॥परंतुश्रीआचार्यजीकेपुष्टिमार्गमेंनहु
ती॥मर्यादामार्गमेंहुती॥सोयहबातश्रीगुसांईजीनें
सुनीजोगोविंददुवेमीरावाईकेघरहें॥तबश्रीगुसांई
जीएकश्लोकलिखें॥भगवन्मद्रूपपरागपुष्टोनहिसु
लितरेमरणविना॥इतराश्रयणंगजराजधुनोनहि
सममधुरखीकुरुते॥यहलिखिकेंएकव्रजवासीकोदी
ये॥जोगोविंददुवेकोदीजो॥सोव्रजवासीनेंगोविंददुवे
कोदीयो॥सोगोविंददुवेवांचतहीउठिआए॥तातेंयह
पुष्टिमार्गहेसोऐसोहे॥श्रीगुसांईजीगोविंददुवेसोंक
हीसोहाथीकीअसवारीकरिअबगदहाकीअसवा
रीकोमनभयोहे॥ऐसोभावराखिपुष्टिमार्गतेंअन्य
मार्गचलावेताकोऐसेंजाननों॥जोदुष्टसंगहेतत्का
लताकोत्यागकरनों॥न॥अवओरहूकहतहेंश्री
पदवृक्षकरतीनित्यवास्तव्यजनेनिरपेक्षसा
लंकारेसत्संगसाधरंगनरोटी॥याकोअर्थ॥ऊपरकहे
जोअन्यमारगीयकोसंगनकरें॥तहांकोउकहेंजोकि
नकोसंगकरें॥तहांकहतहें॥जोएकश्रीवल्लभकुलके
कोभावात्मकव्रजपतिनिकटमें॥नित्यप्रतिनोतनप्रीत
होय॥औरअवतारआदिमेंनहोय॥ऐसोअनन्यभावना

कोहोय॥ और एक श्रीकृष्णहीके चरणारविंदकी भक्तिहु
रावे यही वोध करे॥ और हृदयमें यही वासना रहे जो श्री
कृष्णके चरणकमलमें प्रीतिही होय॥ और दूसरो प्रयो
जन मनमें न होय निरपेक्ष होय॥ काहूकी अपेक्षा न रा
खें यह मनमें जानें जो एक श्रीकृष्णही सेवक नाहें औ
र कोऊ नाहीं काहूको भगवद्धर्म दिखाय॥ अपनी प्रति
ष्ठा अर्थ लोभ भय अर्थ भगवद्धर्म न करत होय॥ और सा
त्विक होय॥ छल कपट काम क्रोध मद मत्सर रहित इन्द्
धर्ममें न होय॥ ताको संग करें जे सो धर्म न होय देखें सो भ
गवदीयको संग करें॥ श्लोक॥ एवं निश्चित्य सर्वेषु धी
मत्स्वधर्मेषु वा पुनः॥ मदन्येषु प्रसन्नेषु कर्तव्यः संगति
होयः॥१४॥ याको अर्थ॥ सर्वथा औरते निश्चिंत होय॥ लौ
किक वैदिक और देहसंबंधी अनेक उपाधि ग्रहकाज
ते मनकरि निश्चिंत होय॥ भगवत्परायण होय॥ एतन्मा
र्गीय पुष्टिमार्गीय वैष्णवको अपनो जानें॥ जो श्री
चार्यजीके शरण आये हैं॥ हम श्री आचार्यजीके शर
णा हैं ये वैष्णव हमारे संबंधी हैं॥ ऐसो स्नेह भावप
होय॥ तिनको सत्संग करनो नहीं॥ अन्यमार्गीय जो
रहे तिनसों जाको भयो जतन न होय॥ महत्कुल उनमें
लौकिक जन न होय॥ सो साक्षात वहु भवकृत संशय सगए
मैं एक श्रीकृष्णहीकी सेवा एक श्रीकृष्णहीको आश्र
इनहीको सत्संग मन वचन क्रिया करिकें करें
श्व श्रीआचार्यजीके अंगीकृत पुष्टिमार्गीय नाम
औरन मर्यादा सेवा श्रीकृष्णमें जाकी रति होय॥ के
भगवदीयको निश्चय यही सत्संग करनो वहीं॥ ऐ
रहकृत हैं॥ श्लोक॥ श्रीमदाचार्यचरणौ मानि स
तत्स्वतः॥ ततएव ब्रजकीयानां सिद्धकार्येस्य सर्व
र्था॥ याको अर्थ॥ श्रीआचार्यजीके च

३

...मातें इहां करसस्वास्थ होय मनवचनकरि
श्री आचार्यजी के चरणकमलमें जाकी बुद्धि है ति
नकरनो । जो श्रीसर्वोत्तमजी की टीका श्री गोकु
लनाथजी करी है तहां लिखे हैं । पद्मनाभदास सरीखे भ
गवदीय कोटिक विरला । ऐसे भगवदीय के हृदयमें श्री
आचार्यजी महाप्रभु नित्य विराजमान हैं तिनके सं
ग सों सकल कार्य सिद्ध होय भी जो कपराई ताको सर्व
था ही को संबंध होय तोउ ही भी जे तेसेही भगवदीय
को सत्संग तें भगवदीय होय । ऐसे स्वकीय भगवदी
य मिलने बहुत दुर्लभ हैं । औ सन हानाई ऐसे स्वकी
य भगवदीय को संग न होय तहां तोई कार्य सिद्धि न
होय । ताते भगवद् से वा तु मरन करिणे ऐसे भगव
दीय के मिलिवे को नापरा हि रे तो श्री आचार्य
जी कृपा करि के निश्चय मिलावें तब श्रद्धा पूर्वक सेवा
होय उनको संग मन लगाई के करिये जब वे भगवदीय
प्रसन्न होय कृपा करि पुष्टिमार्ग को प्रकार लीला भा
व बतावें तब सर्व कार्य निश्चय सिद्ध होय ताही तें श्री
आचार्यजी महाप्रभुन वल्लभ ग्रंथ में आप निरूपन की
ते है । निवेदन नु स्मर्तव्यं सर्वथा ताद्रसे जने निवेदन
को स्मरण ताद्रसी वैष्णव सों मिलिवे करि तो मारग
में स्फुरे होय । ताते सत्संग ही अवश्य कर्तव्य है १ अब
और एक कहत हैं । श्लोक ॥ अवैष्णवत्वेन तथा न दूरु
अपि जीवेषु दोषवस्थें । तथा नास्माभ्यवस्तुषु १२
श्लोक ॥ अवक कहत हैं वे सब अवैष्णव के संजानि
... सो कछु न कहत है जो यह श्री आचार्यजी ने पुष्टि
मारग प्रगट कीनो है श्री गुसांईजी प्रकास कीनो है सो न
... लीमें नाम कहे हैं पुष्टिमार्ग प्रवर्तकायनमः यह
आचार्यजी को नाम है पुष्टिमार्ग प्रकासकायनम

यह श्रीगुसांईजी के नाम॥ जो कोई पुष्टिमार्ग की रीति सों विरु
द्ध आचरण करे॥ ताकों अवैस्नव जानिये॥ जो कोई पुष्टिमा
र्ग की रीति हीं॥ ता प्रमान आचरन हैं॥ तिनकों वैस्नव जानि
ये॥ काहेतें शुद्ध जीवसों अशुद्ध क्रिया वने है सो जीवनी
न प्रकार के हैं जगंतमें हैं॥ सो पुष्टि प्रवाह मर्यादा ग्रंथमें
श्री आचार्यजी महाप्रभुन कहे हैं॥ इच्छामात्रेन मनसा प्रवा
ह सृष्टिवान् हरिः॥ वचसा वेदमार्गे हि पुष्टिः कायेन निश्चयः
श्रीठाकुरजी इच्छा करिकें मनतें सृष्टि प्रगट करी है॥ सो प्र
वाही सृष्टि है॥ वाकों मनवत दूं भगवद्धर्म में नाहीं ल
गें॥ सदा दुष्ट आचरण ही करें और वेदवचन करिकें श्रीठाकुर
जी सृष्टि प्रगट करी है॥ सो वेद कर्म में लागी मर्यादा धर्म
में आसक्त है॥ और श्रीठाकुरजी अपनी काया तें सृष्टि
प्रगट करी है सो वेद कर्म में लागी॥ सो पुष्टि जीव हैं॥ उनसों
भगवद्सेवा ही वने॥ या प्रकार तीन प्रकार के जीव हैं॥ तो
तातें जो जीव दोष करिकें भरयो है॥ प्रवाही है॥ तैसें ही
दुष्ट आचरण करत हैं॥ ताकों अवैस्नव ही जाननो॥ १२॥ अ
वश्य करि कहत हैं श्लोक॥ श्रीकृष्ण श्रीमदाचार्य
तथा श्रीविठ्ठलेश्वर॥ तथा लीलास्थ सामग्री नैनतें
प्रकाशन:॥ १३॥ याको अर्थ॥ अब श्रीहरिरायजी पु
ष्टिमार्गीय जीवनकों सिद्धांत करत हैं॥ जो अहर्भाव अह
निस मनमें राखियें॥ अलौकिक पदारथ में लौकिक बु
द्धि आवै तो वाकों सर्वस्व नाश होय॥ सो कहत हैं॥ एक
श्रीकृष्ण और श्रीवल्लभाचार्यजी और श्रीविठ्ठलनाथ
जी तथा लीला सामग्री में व्रजभक्त आदि श्रीआचा
र्यजी के पुष्टिमार्ग में सेवा सामग्री अत्र अलौकिक जा
ननी॥ श्रीकृष्ण साक्षात् फलात्मक भावात्मक रसात्म
क श्रीयशोदोत्संग लालित सर्वांगसुंदर व्रजभक्त
सर्वस्व जीवनधन॥ सो ई श्रीकृष्ण अपने देवी जीवनके

प. उद्धारार्थ श्री आचार्यजी महाप्रभुजी कों रूप प्रगटे सो विशे-
४ ष लौकिक रूप सों अलौकिक मार्ग प्रगट कीनो सो ई
श्री आचार्यजी आपनो दूसरो रूप श्री गुसांईजी को धारन
करि पुष्टिमार्ग को प्रकट कीनो जो श्री [illegible] बनाये
सो सगरी लीला सामग्री अलौकिक जाननी श्री [illegible]
अलौकिक श्री नंदरायजी यसोदाजी आदि सब अलौ-
किक बाल लीला [illegible] में मग्न हैं [illegible] अलौ-
किक [illegible] भाव में मग्न हैं ता पीछे अनेक प्रकार [illegible]
[illegible] कुमारिका मुख्य श्री [illegible] जी [illegible]
[illegible] इनके पृथक अनेक [illegible] ये सब अलौकिक
श्री गिरिराज [illegible] आदि पशु पक्षी [illegible] गुल्म ल-
ता [illegible] औषधी निकुंज आदि ये सब लीला सामग्री आभू-
षण वस्त्र आदिक सब अलौकिक [illegible] श्री आचा-
र्यजी श्री गुसांईजी के पुष्टिमार्ग में सेवा प्रकार [illegible]
[illegible] के [illegible] सेवा के प्रकार सामग्री [illegible] भूष-
ण वस्त्र सिंहासन खंड पाट पिछवाई निज मंदिर म-
[illegible] तिबारी डोल तिबारी रसोई घर पानघर फूल-
घर सामग्री भंडार चौक सेवक [illegible] आदि [illegible]
सारी सेवा सं[illegible] पदारथ अलौकिक जानिये इनको
[illegible] पदारथ अलौकिक जानिये इनको भाव
सब जानिये [illegible] लौकिक बुद्धि करे तो महा अपरा-
ध होय [illegible] पुष्टिमार्ग [illegible] करि [illegible]
[illegible] मन में [illegible] सो आगे [illegible] मन [illegible] है [illegible] य
[illegible] पुष्टि [illegible] नाहिं [illegible] ने [illegible]
[illegible] दुख [illegible] को [illegible] को
[illegible] सेवा सामग्री [illegible] अलौकिक ता-
[illegible] मन [illegible] सों कहत हैं [illegible] ग्रंथ [illegible] का
[illegible] सो सुनी [illegible] भांति को [illegible] तहां श्री हरिरायजी

रिवे तुमसों कहत हैं जो यह स्वरूप को अपने चित्त में स्थि
र न करियो सदा काल है को ऐसे काल में भक्ति ऐसे लोकिक
मति जान लियो और यह भाव कहा है के आगे मतिवर हियो
तुमारे चंगी हम नाको शुद्ध हृदय यह से है दृढ़ श्री आ
चार्य जी श्री गुसांई जी के चरण कमल में विश्वास है है
तिनसों मिलिके अलौकिक पदार्थ को विचार करनो
है और विमुखजन नाको लौकिक बुद्धि है तिन प्रति
कहत हैं अलौकिक पदार्थ को नाय कहियो तहां के
कहें जो समुझे नाहीं नाहू के भाव कहिये तो तिहमानें
तुमके से न कहिये नाको कारण कहा या भांति का है
के है नहाव सूरत है श्लोक॥ सो मुख्य बोधन ने व्रजना
थ ने वाक्य धर्म न: एको पि देवस्य दृढ़: सर्व नाम इति ध्रुव
१५ पायाको अर्थ॥ और स्वरूप अलौकिक प्रकार है सो न
कहनो या पुष्टि मार्ग में भगवदीय बिना अन्य है तिन
को कहियें तो अपनो धर्म जाय॥ और के आगे अपने स्व
रूप कहन के प्रकार प्रयोग स्थाय वने नो ज्ञान स्वरूप
को प्रकार कहियें जियें अलौकिक ना [illegible] प्रकास
न करियो काहे ते अपने हृदय को धर्म बाहिर प्रकास
करें तो वा धर्म रस जात है हृदय में प्रभु जानत है
ताते मुख्य धर्म है सो बाहर प्रकास सर्वथा ही न करनो
काहे ते पवित्र यह अर्थ सो जीव में दृढ़ है॥ जो लौकिक
बुद्धि अलौकिक में सो यह स्वधर्म को निश्चय ही नास

सं.प. करतहैं सो अलौकिक पदारथसों लौकिकवुधिसवव
२५ कोईकोहातनको छिमेंवोई स्वकीयमें लौकिकवुद्धिहो:
[illegible]प्रभुकीलीलामेंदेखेगो सगरीवस्तुलीलामेंदेखेगो
नाकीलौकिकक्रिया पूर्वहृदयनेंाहीं नातेयहएकदोष
महाप्रभुनमें सिद्धिस्था है जो लौकिकवुद्धिसों दि
क्रमेहैं तिनको सर्वधर्मको नासहै कछु अनुभवनाहीं
[illegible]याप्रकारप्रभुमारगमेंरहैं तिनको श्रीआचार्यजी
[illegible]नेभावउत्पन्नहोय स्वरूपानंदको अनुभवहो
[illegible]सो आश्रमाभिरेवं लिखिनें निरपेतो स्वमा
[illegible]हेन सर्वथा छिनें धीयनाय हरोगन [illegible]
[illegible] एवंश्रीहरिरईजी आपने [illegible] श्रीगोपेश्वरजी
[illegible]नेनीयासिद्धांतपत्रसंप्रणेकरतहैं तामेंकहतहैं जो
[illegible]पत्रमें हमतुमको लिखेहैं सो तुमयहमतिजो
[illegible]प्रभुसों काहूके संवंधकरिकें लिखेहैं अथवा कछु
[illegible]कोक्षाकी भावनामनमें लाऊ नाहीं है तुम
[illegible]निरपेक्ष भावसों लिखे
[illegible]में अलौकिकभावहोयसो धर्ममें विराजतहैं सेवासों
[illegible] याते लिखेहैं तातेंजो तुमारेचित्तमें आनंदको अनुभव
[illegible]तो प्रकारके हैं सो यह चित्तमें चेतो वहु
[illegible]विजाप्रपदारथहैं काहूके आगेप्रकासक
[illegible]ोगपदारथहैं नाहीं यहमारगश्री आचार्यज
[illegible]प्रभुजीकोहै सो भावात्मकगोप्यहै नातेंस्नेह
[illegible]ते छिनमें यह भावको धारनकरोगेजी
[illegible]
[illegible]
[illegible] ३ अवऊपरकहेसतं
[illegible]संगको मिथ्या भावहैं ताके हृदयमें भगवानप
[illegible]भगवान श्रीप्रभुके मेहैं विरुद्धधर्माश्रयहैं

तिनकेस्वरूपकोंज्ञाननहोय॥सोस्वरूपअवआगेंसिद्धं॥
पूर्वकनिरूपणकरतहैं॥श्लोकः॥प्रथमोधर्मोश्रुतौप्रोक्तः॥
तथाभागवतेपिच॥अप्राकृतास्वरूपेषु निर्धभिन्ना॥
रूपकं॥टीकाकोअर्थ॥प्रभुजोश्रीकृष्णहैं॥तिनकेधर्महैं
सोश्रुतिमेंसगरेविलासकरिकेकहेहैं॥औरश्रीभाग
वतमेंहूप्रभुकेधर्मसवकहेहैं॥सोश्रुतिकेश्रीभागव
तकेदोउवचनप्रमानजाननें॥जिनकेहृदयमेंश्रुति
केवचनश्रीभागवतकेवचनप्रमाननाहीहैं सो
जीवकोंआसुरमाननें॥जिनकेहृदयमेंश्रुतिकेवच
नऔरश्रीभागवतकेवचनप्रमानहैं तिनकोंसुद्ध
जीवदैवीजाननें॥सोश्रुतिहैंभगवानकेस्वरूपकोंअ
प्राकृतकहेहैं॥सोअप्राकृतऔरप्राकृतमेंयहअंतरहै
हैं प्राकृतहैंसोसवत्रिगुणात्मकहैं ओरअप्रा
कृतहैंसोमायाकेगुणकोप्रवेसजामेंनाहींहै
कामक्रोध
सोसवकालपायकेनिरहैं
नाहींहें॥सोमायाजन्यहैं॥मायाहूतगुणकाम
सोमहाप्रलयमेंलयहोतहैं॥तातेप्रभुकोस्वरूपअप्र
ाकृतजाननों॥यहअप्राकृतस्वरूपप्रभुकोजान्योजायतौजानि
जाय॥तातेंअप्राकृतस्वरूपप्रभुकोजानेंकृपाहोय
॥जवप्रभुकेस्वरूपमेंऔरनामसेदृढनेहहोय
ठाकुरजीकेस्वरूपकीसेवाकरेंविनाग्यानजाय॥औरश्रीठाकु
रजीकेदरसनविनाग्याननजाय॥औरश्रीठाकुरजीकेनाम
जीकेनामश्रीठाकुरजीकीलीलासंबंधीकीर्तन
ज्ञानरह्योजाय॥सवजानियें॥जोश्रीठाकुरजीकेस्वरूपमें
रूपमेंनेहभयेंश्रीठाकुरजीसंवंधीधर्मसवसारीरे
मनमेंदृढतवपारहैंतवजानियेंयहज्ञानवकरों
प्रभुकीसो॥१॥सवऔरहूकहतहैंसो॥ वात
सवरूपत्वस्वाधारत्वमुख्यको॥आपदालग्न
साधर्मोयाश्रुतिहूपितत॥२॥याकोअर्थ॥औ

सि.प.
२६

तिसौं श्रीभागवत प्रभुकौ स्वरूप तत्स्वरूप निरूपिया कहत
जोजो श्रीठाकुरजी चाहै सो स्वरूपकोधरिलेइ अपने
भक्तनके सुख देत हे सो श्रीभागवत मे प्रसिद्धि वा
है तब हरनाकुसने प्रह्लादको दुख दीय
तब प्रभु नरसिंहरूप धरिके हरनाकुसको मारि प्रहला
दकी रक्षा करिलीनी श्रीयसोदा रानीको सुख बालभा
व तिनकों बालक होय पलना मे झूलत है और व्र
भक्तनकों पतिभाव है तातें उनको रातिदान मानम
पन्न है करत है एक को भाव छिन्न सब लीलाकतें
का है ते सबके आधाररूप सुख श्रीलक्ष्मीकांत
पं तो स्वतंत्र यथा वतें सर्वसामर्थ्ययुक्त है सर्वव्यापक
है सबके धारक श्रीलक्ष्मीजी की सत्ता है और सबतें न्यारे है
यही विरुद्धधर्माश्रय जो सब मे है और सबतें न्यारे या
भांति वेद पुराण स्मृति श्रीभागवत मे गायो जिनको स्व
रूप जो लिख्यो निरूपण कियो है सो श्रुति ओर कहत है
लोकि ॥ सो स्वयं ब्रह्म भगवान गायो श्रीभागवत तथा ते
य स्वरूप वे सेवन मर्यादा पुष्टि भेदसों ॥ यथा केद्यर्म
पुष्टि निके सो श्रीभागवत मे यह भावको स्वरूप कह
त है एक भाव तो मर्यादा रूप नाके है प्रभुको आपके सब
को आधार रूप सो मर्यादा भक्त ये जाति भक्तन
को है श्रुति नेति नेति करत है ब्रह्मा शिव शेष्यादि
के स्वयं भाव सो भजन करत है सो मर्यादा भक्त है दो
प्रभुके अंतरंग भक्त है सो तिनके भाव सो भजन करत
है जैसे व्रजभक्त ये पुष्टि भक्त है सो श्रीठाकुर
जी एक ही है भक्तनके भावकरि न्यारे न्यारे है सो श्रीभा
गवत मे कहे है जब अक्रूरजी श्रीठाकुरजी को मधुपुरी मे
पधराय के लेगये है तब ही गोपीजन को जैसो भाव हतो ताको तैसो
ई दरसन भयो कंसको वैर भाव हतो तातें काल रूप प्रभुको

देखे। गोपीजनपरमतत्वदेखे। मथुरास्थभक्तस्त्रीजनपरम
कोमलसुकुमारबालकरूपदेखे। जहां जैसो भक्तको भाव
तहां श्रीठाकुरजी ताहीभावसों विराजत हैं। मर्यादाभक्त
ऐश्वर्यभावसों आराधनकरत हैं। यह ज्ञान नहीं। प्रभुको
मुखप्राप्त नाहीं। कोटिब्रह्मांडकेकर्ता पालनकरे संहा
र करें। तिनकों हम कहा देहिंगे। प्रभु हमारी रक्षा करत हैं।
यह भाव तिनके। सो प्रभु कछु मांगत नाहीं। और पुष्टिम
क्त हैं। नंदयसोदा व्रजभक्त आदि इनको स्नेह भाव है जो
स्वरूपमें भूखे होइंगे। सीत उष्ण लागत है। तहां श्रीठा
कुरजी मांगिके अंगीकार करत हैं। सो श्रीभागवतमें भ
क्तिहीं निरूपण हैं। ऐश्वर्यभावमें मर्यादारीत है। स्नेहभा
वमें पुष्टिरीति है। या भांति स्वरूपमें न्यारे न्यारे रसको
अनुभव है। सो दोऊ मार्ग प्रसिद्ध हैं। अब वक्ष्यमाण कहत
हैं श्लोक॥ सर्वेपि विभिद्यन्ते इति श्रीमत्प्रभोर्वचः। अतो
पुष्टिमार्गीय अंतरंग विशेषण॥४॥ याको अर्थ सर्वमें
व्यापी हैं भगवान सो सास्त्रपुराण श्रीभागवत कहत हैं
और श्रीसुबोधनीजी आदि ग्रंथनमें श्रीआचार्यजी महाप्र
भु सर्वव्यापक प्रभुकों कहे हैं। परंतु अंतरंग पुष्टिमार्गीय
भक्तनको भाव सर्वोपरि है। काहेतें। जो ज्ञानी हैं तथा मर्यादा
मार्गीय भक्त हैं। सो सर्वव्यापक भगवानकों जानि भजन कर
त हैं। तिनको स्वरूपानंदको अनुभव नाहीं हैं। केवल मु
क्तिके अधिकारी हैं। और पुष्टिमार्गीय भक्त हैं। सो सर्वोप
रि हैं। श्रीठाकुरजीके अंतरंगी सदा सेवा श्रृंगार भोग आ
दि करी स्वरूपानंदको अनुभव करत हैं। तिनतें एक क्ष
ण श्रीठाकुरजी न्यारे नाहीं रहत हैं। यह पुष्टिभक्त विशेष
करि सर्वोपर हैं॥४॥ अब वक्ष्यमाण कहत हैं श्लोक॥ विरहे
मन्यच स्वसुखाय चिंतायते प्रभोः कुमार एवाली हृ
जे मात्रपदेकगा॥ याको अर्थ। प्रभुको स्वरूप प्रभु विर

द्धधर्माश्रय है। यह प्रकार मन जानके अवश्य हृदय में क
रनो। वे सब को मुख्य धर्म यह है जो प्रभु को विरुद्ध धर्माश्र
य जाने। काहेतें जहां तांई प्रभु की लीला में असंभावना
विपरीत भावना होय सो भक्ति बीज को नाश करै। ताको
प्रकार कहत हैं जो प्रभु की लीला में संदेह आवै ता देसा
ह लीला में कछु खोटी सी प्रभु की होय अरु गुन को वी
चार जैसो सांसारीन को रस जाय। और होय अवगुन ही ग
है याभांति असंभावना रहे यह न जाने जो प्रभु विरुद्ध
धर्माश्रय है याही सो करे। और अनेक भांति की विपरीत
भावना उठे जो प्रभु भक्तन के लीये सब पास रन की योग्या
नाहि लीला सों तो सैन्य प्रभु धारण करत हैं याभांति प्रभु
की लीला में होय बुद्धि आवै सो विपरीत भावना। सो यह
असंभावना और विपरीत भावना जाय जब श्रीठाकुरजी
को विरुद्ध धर्माश्रय जाने यह प्रभु सब विचार वे सब को
करत हैं प्रभु आप पांच बरस के पसकुं दूर श्रीयसो
दाजी सा तें यशोदा के अंक में बिराजत हैं और प्रभु नंदकोस
बडी लीला को भाव भक्त करावत हैं प्रभु की सगरी लीला
रहत हैं ऐसो अविरुद्ध है जैसे प्रभु आनंदरूप हैं तैसे ही प्र
भु की लीला हू नित्य है अनेक वर्णन करत हैं। सो श्री
भागवत में जो ऐसो भाव रहे जो आख्यान तथैवास्त
नु वाचो विहतानि। यासों श्री श्रीभागवत में नि
त्य लीला कही है जो कुमार लीला ब्रज में राखि के पौगं
ड लीला कही है और क्रय की लीला भीर को मारंज हतु दै जे प्रति
वाक्यान। मनुष्य को बालपनो गयो पीछे फिरि बालप
नो किशोर को दिन न आवे और श्रीठाकुरजी की का
ल लीला नित्य है बाल स्वरूप स्याम किशोर लीला करत
है। यह विरुद्ध धर्माश्रय प्रभु को जानने। ताही तें श्रीभा
गवत में श्रीशुकदेवजी कहे हैं जो कुमार लीला राखे दूसरी

लीलाकीरि॥ यास्लोककोव्याख्यानश्रीआचार्यजीमहा
प्रभुश्रीसुबोधनीजीनिवंधसमार्थविवेचनकरिकीरि
हैं॥ कोभावजहतुहैजो॥ औरनित्यलीलाठाकुरसंपाद
नकीरित॥ ताहीभांतिपुष्टिमार्गमेंश्रीआचार्यजीमहाप्र
भुसेवाप्रगटकीरि॥ वरषकेवरसउत्सवजन्माष्टमीदानरास
होरीफूलमंडली हिंडोरासबनित्यलीलाकोअनु
भवसाक्षात्होतहैं याभावतें वैष्णवनित्यलीलाको
मेंरगाजोनिस्मरणभजनकरो॥ अबऔरहूकहतहैं
स्लोक॥ वृजराजकुमारत्वंकुमारीचाभावपूरितोगता
रसप्रभासतत्रगूढार्थविन:सर्वेतावत्॥ अथाकोअर्थ
तातेंवृजराजकुमारप्रभुयातेंहैंजोकुमारीजोसोरहलगा
रअरुमिश्रकुमारिकापांचपांचवरषकीहोयतिनकेभावनी
यभावनामेंपांचवरसकेप्रभुहैं॥ काहेतेंरससास्त्रमें
यहकहेहैं जोजैसोभावस्त्रीकोहोय तैसोईपतिहोइ
तवरसविशेषहोय॥ तातेंकुमारीकेभावनीयबालस्व
पकीभावनाप्रभुमेंकरतहैं॥ तातेंकुमारीकोप्रभुकुमा
रूपसोंभावकीवृद्धिकरतहैं॥ औरग्यारहवरषकीली
लावृजमेंकराहैं॥ तामेंबाललीलातेंपोगंडकिसोर
सवहीकरतहैं॥ कुमारिकानेंगूढभावसोंकात्यायनीको
अर्चनकीयो॥ गूढभावतेंछिपायकें यातेंकीयो॥ जोहमा
रेभावकोंनंदरायजसोदाजीआदिवृजमेंकोउनजा
नेंकाहेतेंगूढभावप्रगटभयेतेंरसजातरहतहै॥ तातेंस
वसोंछिपायकात्यायनीकोअर्चनकुमारिकानकीयो
ताकरिकेंश्रीठाकुरजीकोअपनेवस्यकीयो॥ कुमारीको
गूढभावप्रभुजानिचीरहरणकरिसंयोगरसदानकरिये
तोविलम्बदेहसंपादनकरवायो॥ पाछेंवरसदिवसलौंविल
म्बकरिकेंहीरे॥ वरसदिनपीछेजोसरदरितुमेंरासकरितुम
रमनोरथपूरणकरेगो॥ सोरासमेंग्यारहवरषकेकुमा

जेसोजेसोमनोरथकुमारीनको
नकिसोरवयकोधारिकें
तो सोसवपूरनकीए॥ याभांतिगूढभावसोकात्यायनी
श्रवनकरिप्रभुकोवसकीए॥कुमारिका॥७॥अबश्री
कहतहैं॥श्लो॥ एतद्द्वयं मिश्ररूपकुमारकेकोरह
र॥ व्या॥ मग्नप्रियितथेवाक्तियतोगोप्य॥कुमारिका॥८॥
॥टी॥ याभांतिदोयवाक्यहैं॥ दोयप्रकारकोभावहै
या॥ कोश्र॥ श्रीभागवतके वाक्य तें कु
श्रुतिवाक्यनें ऐश्वर्यभाव सो केवलकुमाररूप
मारसो मिश्रितरूपदोयरूपप्रभुके॥ यद्यपिप्रभुकी स्थिति
हरिकुमारिकाके भावकरिहैं॥ यद्यपि प्रभुकी
सगरे॥ परंतुगोप्यकुमारिकाके पासही रसरूपप्रभुहैं कुमा
रिकाके भावविनारसरूप प्रभुहैं नहीं॥ नाहींहैं॥ काहेतें भा
वात्मकरसरूपप्रभु पात्रविना रसहै नाहीं ता
तें भावरूपपात्र कुमारिकाहै॥ तातें कुमारिकाके पास
भावात्मकप्रभुहैं॥ ...और कहतहैं॥ श्लो॥ एवं
सतीरसेरूपरासक्रीडादिकरि रूपिणां॥ विरुद्धधर्माश्र
यत्वबोधायेवहियुज्यते॥ टी॥ या॥ व्या॥ ...॥ अबकहै
तेहैं जो रसात्मकप्रभु कुमारिकाके ही पासहैं सो रासली
ला मेंवर्नन है॥ जो वेणुप्रवेजायश्रीठाकुरजी सगरेव
जभक्तनकोरसदानकीयो तबसबनको सो भगवद्भाव
रूप कुमारिकागुणातीत तिनको मदनभयो तब
श्रीठाकुरजी एक गुणातीत कुमारिकाको लेकेपधा
पाछें वनहूको सो भगवद्भावभयो तबवहां तें तरध्यान
यह गुणातीतभक्तके हृदयमें पधारे जो प्रभु हृ
न हे॥ यता केवल गुणातीत दसमी अवस्था भक्तनकी
नाथ सोजब गुणातीतकुमारिकाने बाहर सगा
भुको मदहोवे नाहीं तब प्रभु खायके गिरी सो
वेदो ॐ भुजासों ऊठायो है तब उहभक्तबोली ह
रमण प्रेष्ठ क्वासि क्वासि महाभुज: दास्यास्ते कृप

सखेदृशीनसंनिधि।तुमपासनो होउठायमहाप्रभुरन
कीनी तोअवदृशीनदेहु।पाछेसगरेभक्तनयाहदेरिघुलिन
मेंगुनगानगायपाछेंनिःसाधनहोयरुदनकीयो।तवप्र
भुजनहोकेभीतरतेंवाहिरआयेनातेंकुमारीकेपासही
प्रभुहें औरस्वरूपआपकेऐश्वर्यधर्मवारेकेंयाभांतिवि
रुद्धधर्मवारेहें सोऐश्वर्यकोवोधकीयो।सोवेस्वरूपकोज्ञा
नयहरूपजानोचाहियेदोस्वरूपश्रीगुसांईजीनहेंलोक
हुमेंहि।पुष्टिमारगीयनदेवेंजातेतुमगोपीनगोविंदामहा
प्रभुआपदेवनिरूपनते।१९।याकोअर्थनहींकोईवहे
गोकुमारिकापुष्टिमारगीयहें यहबुद्धिकरिकेंजाननो
कुमारिकाकेधर्मजनवावे।तवजानियेंपुष्टिमारगीय
धर्मआयो।ऐसोदृढ्हेमपुष्टिमारगहे।तातेंयहगोंस
कुमारिकाकेभावकीभावनामनमेंकरनी उनकीदास
कीरीतेंकुमारिकाकीकृपातेंभावजवहृदयारूढहो
इगो।तवप्रभुकोअनुभवहोइगो।यहबुद्धिमेंनिश्चयस
सिकुमारिकाकेभावकीभावनामनमेंकरनी।सोश्रीआच
र्यजीकेपुष्टिमारगमेंजनहीकेभावकीसेवाहोयंयहजा
नीरीतिसोंसेवाकरियें।श्रीआचार्यजीश्रीगुसांईजी
केचरणकमलकोआश्रयकरिकेंजनकेभावसहीपि
ताप्रभुकोजानिरोगीतगोविंदमेंमानादिकविह
रजयदेवनेंकुमारिकाकेभावकीलीलावरनानने।
याप्रकारप्रभुकुमारिकाकेवसहें।याप्रकारवृजभ
क्तसंगरसपरवसहें।सोरसकेग्रंथअनेकहें।तामेंगी
तगोविंदआदिमेंसवकहेहे।सोकुमारिकाकीजो
याप्रकारमनमेंजानिभावनाकरनी।२०।अवश्री
कहतहेंलोक।अन्यथानहिवदनंतादृसंयुक्तने
यं।अन्यतुपुष्टिमारगीयदिकृतगुणसमयता।२१।य
अर्थ।नहींआयजीवकेवचनसत्यजानने।कहेतें

प्र॰ रिकागोडदेसके स्यारो नंदरायजी सो केसवेंदे नाथे
सो वे पुष्टिमार्गीय हूते। तातें प्रभु की सेवा में लागी
न वे नंदरायजी के सर्कोना हीं दियो कुमारिका की वहु
त सराहना करी पुत्र के सेवार्थ घर में राखे सो श्री नंदराइ
जी के पुत्र वडे वडे ना हूते नंदराइजी के रत्न हू की सराहना
करत हैं सो नंदरायजी कुमारिकान की सराहना करत हैं
तातें कुमारिका को सेह भाव नंदरायजी सों अधिक है तातें
श्री ठाकुरजी कुमारिका के वस हैं एसो पुष्टिमार्ग सर्वो
परि है तामें श्री कृष्ण भगवान प्रकट होके सदा विराजत हैं
सो पुष्टिमार्ग में प्रभु विरुद्ध धर्माश्रय स्वरूप सों विराजत हैं
अब आगे श्लोक में विरुद्ध धर्माश्रय को भाव प्रकास की
वर्णन करत हैं श्लोक रसमार्गीयधर्मा सुतेनाथ
व्याविद्धरणि वार्ता रसिकभई नास्वर्वृसा स्वरूपः सदा
१२ याको अर्थ रसमार्ग की रीति में मर्यादा में विरोध है
और पुष्टि में विरोध नाहीं पुष्टि में विलक्षण रीति है सो
कहत हैं श्री रामचंद्रजी [illegible] में धर्म स्थापन की री
ति है तातें येकपत्नीव्रत और श्री कृष्णावतार में समस्त
व्रजभक्त गोपि भार्या सो रमण हू धर्म को स्थापन हू और
रलीला में जहां रसमार्ग रससास्त्र वर्णन है तहां धर्म
मार्ग में विरोध है काहे तें रससास्त्र में परकिया में रुचि
न भाव है सो जहां परकिया स्मरण भयो तहां धर्म स्थाप
न नाहीं और जहां धर्म स्थापन सास्त्र में वर्णन है त
हां परस्त्री को मन न के स्मरण विचारतो दोष है य
ह मर्यादा मार्ग की रीति है और पुष्टिमार्ग में श्री ठाकु
रजी विराजत हैं सो सगरे धर्म हू को स्थापन करत हैं और
समस्त व्रजभक्तन सों रससास्त्रोक्त रमण हू करत हैं यह
विलक्षणता है यह विरुद्ध धर्माश्रय और पुष्टिमार्ग
में श्री ठाकुरजी बालक है पलना झूलत हैं और परम

रसिकननके मुकटमणि ॥ श्रीहरिरायके षोडसग्रंथके रा
क्कारतावांछित है ॥ अपनेवसई कोटानकोटि भांतिके
साधनकौ करो ॥ अन्तादिसिवादिग्रंथादि कोटानकोटि
बरसतेसाधनकरनेहै ॥ फववृक्षस्त्रोनहोतहैं ॥ वेदनेन
नेनकरतहै ॥ का केवसप्रभुनाही ॥ औरभक्तनकेवसस
दाहैं थीयसो हाजी भक्तिमार्गविवाधेहै व्रजभक्तनकेस
दाआधीनहैं भगवान इनहैं सोअंकरत अन्यथाजानत
नाही ॥ यहवार्ताथधर्मोअियजानने ॥ अवऔरककहत
हैं श्लोक ॥ अभीतः सर्वथाभीतः सोपेक्षी निरपेक्षकः
चतुरोपिमहत्सुखः सर्वज्ञोपयतोवचः ॥ ९ ॥ याकोअ
र्थ प्रभुकैसेहै अभीतहैं भयकरिकेरहितहैं काहेते
कालकेकालहैं ॥ चक्रभृकुटीविलासतेकोटानको
टिब्रह्मांडकोसंहारकरें ॥ भृकुटीविलासतेकोटानकोटिब्र
ह्मांडकोकरें नासहूकरें ॥ सगरेदेवताडरपतरहतहैं तिन
कोभयकोलेसनाहीं है ॥ औरभयसंयुतहैं सोश्रीठकु
रजीव्रजमाटीखाई तदश्रीजसोदाजीलकुटीलेकेंडरप
वनहै जोमाटीकोखायेंतदश्रीठकुरजीडरकेरिके
नेत्रमेंनेमलभारिके कहतहै मेंयामेंमाटीनाहीखाइ
यामांतिभक्तसोंडरपतहैं ॥ औरव्रजभक्तनसोंडरपत
हैं जोयेअप्रसन्नहोय केवहुमानमतिकरें ऐसेप्र
भुहैं ॥ औरप्रभुकोकोई वस्तुकीअपेक्षानाहीहै अक्ष
रब्रह्मसारिखोघरहै ॥ लक्ष्मीसारिखीरानी ॥ कौस्तुभ
मणिश्याभूषणहयाहि स्वअलौकिकपदारथतिन
कोकहाअपेक्षाहै मायासारिखीदासी सर्वरकहाए
मैंसिद्धिको ॥ ऐसेनिरपेक्षीहै ॥ औरभक्तनकीरंचकहू
वस्तुहोयताकीलेवेकीअपेक्षाहै ब्रजमेंयसोदाजी
तथाव्रजभक्तनसोंनवनीतआदिदेखिकेलेत ॥ आदि
केअंगीकारकरतहैं ॥ औरप्रभुचतुरसिरोमनिहैं को

५. हिन्नं लोकमेंजोकोईभयोहा तैनायेते तिनकोइंद्र
॥ हृगाकीत्रियाभन कोभावसबकोजानतहैं श्रोभ
क्तनकेश्रापेमहाप्रुग्धहैंवालकहैंभक्तहैंतहैंसोइ
श्रारोगानहैं श्रा पकछुजाननहींनाहीं श्रोरसर्वज्ञ
हैं सर्वठौरव्यापकहैं सगरीसत्ताप्रभुकीहै तिनतेत्र
यलोकमेंकछुदूरहैनाहीं भक्तनकेश्रागेश्रापकोकछु
ननाहींहैवत्तनमैंहाजानहैं केकृष्णकोहेव्हे देख
नतीहरूदनकरतहैं श्रेसेविरुद्धधर्माश्रयप्रभुहैं
॥ श्रबश्रोरहूकहतहैं श्लोक श्रात्मारामोप्यगो
पीनांसर्वदारतिवर्द्धनः॥ पूर्णकामोपिकामानांघरी
णोदीनभावनः॥ ४ ॥ याकोश्रर्थ प्रभुसदाश्रात्मारा
महैं श्रपनीश्रात्मामेंरमतहैं बाहिरनाहीं श्रोरगोपी
जनकेसंगनित्यरमणकरिनित्यनौतनकामकीवृद्धि
करतहैं श्रोरप्रभुपूर्णकामहैंसाक्षातमन्मथकेमन्मथ
हैं तिनकोकामनकोभावकहुहै तदहकामनेपूर्णहैं सकल
स्थिति श्रावतहैं तनकेमध्येतेहुंनदिहरस्त्राधीनहैं
यसखीकोमेंश्रधीनश्रपनदतहैंदीननाकारहि
तहैं इंद्रकेईश्वरहो त्रिलोकीजिनकोनमस्कारतहै
सोदीनताकरकेश्रेसेभक्तनसोंकहतहैंजोमैंतुम्ह
राहूं तुमबिनामेंश्रोरकोनाहींजाननमोपरम्पपारावे
याभांतिश्रीनेकहैनाकेवचनकहतहैं यह विरुद्धधर्मा
श्रयजाननौ॥ ४ ॥ श्रबश्रोरहूकहतहैं श्लोक स्वप्रका
शोप्यप्रकाशोवाहिष्टोनः स्थितःसदा॥ श्रस्वतंत्रःस्वतं
त्रोपिसमर्थोपिनतथापिच॥ ५॥ याको श्रर्थ प्रभुश्र
पनोप्रकाशसगरीत्रिलोकीमेंकरेहैं श्रोरजाकोप्रका
शतेजश्रभिमानभयो तिनकोतत्कालनाशकरिश्र
पनोहीप्रकासराखेहैं श्रोरभक्तनकेश्रागेश्रपनोप्रका
शजानतहीनाहीं भक्तकहैसोईहोइ भक्तकहैसोईश्राप

रैं बाहिर स्थित हैं। सदा सर्व व्रजभक्तन के संग आने
लीला करत हैं। और सर्व प्राणीमात्र के अंतःकरन
स्थित हैं सदा। और प्रभु सदा स्वतंत्र हैं मन आवै ते
लीला करत हैं अपनी इच्छा तें काहू के वस में नाहीं कर
रहैं। भक्तन के वस हैं व्रजभक्त कहत हैं इहां बैठो तहां बै
ठत हैं। भक्तन के आगें स्वतंत्रता की बात नाहीं करत भक्त
के मनोरथानुसार प्रभु कारज करत हैं। सर्व सामर्थ्ययुक्त
प्रभु हैं। कर्तुं अकर्तुं अन्यथाकर्तुं सर्वसामर्थ्यवान हैं
भक्तन के आगें अपने सामर्थ्य करि रहित हैं। जो रसमें व्रज
भक्त जेमन में आवैं तहां ले जात हैं। अपने मनोरथ करत
हैं या भांति प्रभु को स्वरूप है ॥१५॥ अब और हू कहत हैं
श्लोक ॥ एवं हि पुष्टिमार्गीय विरुद्धसर्वगुणालये। हरौ
कृपालुं सततं शरणं भावयेद्धरिं ॥१६॥ याको अर्थ ॥ अ
ब श्री हरिराइजी कहत हैं। जो या प्रकार विरुद्धगुणन के
धर जो काहू तें जान्यो जाय नाहीं। ऐसे प्रभु रसात्मक भावा
त्मक यह पुष्टिमार्ग में विराजत हैं। साक्षात् श्री कृष्ण
फलात्मक परमकृपालु भक्तन पर सोऊ पाव हैं। तातें
ऐसे श्रीकृष्ण की संतत जो निरंतर अहर्निश शरण जे
सो मन क्रम वचन करि सर्वभाव सों शरण रहि के अप
ने हृदय में शरण की भावना निरंतर राखिये। तब श्री
कृष्ण तो परम उदार हैं कृपालु हैं। स्याकरि कृपा करेंगे
सो श्री आचार्यजी महाप्रभुन नें रत्न ग्रंथ में कहे हैं
तस्मात्सर्वात्मना नित्यं श्रीकृष्णः शरणं मम। तथा
विवेकधैर्याश्रय में हू सब को बासु सर्वथा स
तां हरिः ॥ इत्यादि ठौर ठौर श्री आचार्यजी श्री गुसांई
जी कहे हैं। तातें शरण की भावना हृदय में करनी यहै स्व
रूप को महामंत्र सर्व सिद्धि करनो जानि स्मरण अष्टप्र
हर करिये। सो विज्ञप्ति में श्री गुसांईजी कहे हैं। यदनंत

१ यातें श्रीकृष्णः शरणं ममाऽत्र तन्मयवाक्ति नैश्चिंत मोहि के
पालोकिक को प्रतिबंध नाहीं तातें श्रीकृष्ण जो परम स्वरूप
न हैं तिनकी भावना अपने हृदय में मन वचन क
रि पर मनमें धरनो यह निश्चय सिद्धांत है १६ अब श्लोक
कहत हैं श्लोक असाधनः साधनं वा न साधुः साधुरे
वा शरणादेव निर्विघ्नं फलं प्राप्नोति संशयः १७ या
श्लोक अब श्रीहरिरायजी कहत हैं जो कोई जीव में
एकहू साधन नाहीं है और कोई जीव अनेक प्रकार के
साधन करत हैं कोई जीव साधु हैं परम सुशील हैं का
म क्रोध मद मत्सर ना रहित हैं और कोई जीव असाध
हैं काम क्रोध मद मत्सर न रहित हैं अनेक दोष सों भ
र्यो है और एक चीजात हैं व नाम मनुष्य ब्राह्मण क्षत्री वैश
शूद्र चांडाल पर्यंत पशु पक्षी आदि सब कोई
होहु जो श्रीठाकुरजी की सरण है तिनको निश्चय फ
लकी प्राप्ति होयगी यामें संदेह नाहीं प्रभु की सरण
यह सर्वोपरि धर्म है सरण प्रभु की भयो सो जीव सर्व
धर्म कारि चुक्यो और अनेक साधन करत हैं सरण
द प्रभु को नाहीं आयो तहां ताई फल की प्राप्ति नाहीं
है तातें प्रभु की सरणागति सों सारा फल सिद्ध होयगो नि
श्चय यह सिद्धांत भयो अब और हू कहत हैं सो भ
क्तिमार्गे साधनं च फले शरणमेव हि सर्वधर्मपरित्या
गो स्वतंत्रे चैव फलं दिनतं १८ या श्लोक को अब श्री
हरिरायजी कहत हैं जो भक्तिमार्ग में साधन हू श्रीकृष्ण
की सरण यह साधन फल न्यारो नाहीं साधन हू फल
प है तातें सरण ही ह्वै रूप फल है सो भगवान गीताजी में
कहे हैं सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रजेत या श्लो
क पर श्रीगुसांईजी न्यारी टीका स्वतंत्र कीनी है तामें स
रण ही की भावना मुख्य करि निरूपण कीनी है एक श्री

लकौं आश्रय न जाजीव सें भयो। तहां संसारे धर्म सिद्धि भयो।
तिसर्वते मुख्य फलरूप श्रीहरिकौ आश्रय है यह भाव है
तो नित्य आश्रय शरण करत भये है। या भांति निरूपण की ए
१८ अथ श्लोक टीका हत है। श्लोक।। सरो है शरणं ताऽ हापु
स्वयोगात: कृपाचेन्नाइसानाहि तदोन वास्कं भवेत्
र्दयालोयं पूर्वो। श्रीहरि साक्षवताऽहिसासे प्रसिद्धिस
रणासिद्धि होय श्रीआचार्यजी विपरोक्षमें श्रीआचा
र्यजीद्वारा सरणासिद्धि होय। श्रीआचार्यजीके ग्रंथ
वचनामृतद्वारा सरणा होय। तथा श्रीहरिके मार्ग
स्थ दिसामें तो प्रसिद्धि सरणा होय। परोक्ष दिसामें म
हापुरुष भगवदीयसों मिलिकें सरणको विचारके
हैं। सो यह पुष्टिमार्गकी रीति है। तबा समयसा हातस
णा। सो नासमें भगवदीयसों मिलिकें सरणकी भा
वना करै। काहेतें ताइसी भगवदीयकी कृपातें तो ही
भगवदीयद्वार सरणासिद्धि होय। यामें संयोग वियोग
होऽप्रकारको सरणासिद्ध होत हैं। संयोगमें तो संयोगप
णा प्रसिद्धि ही है। सरणापर सकरत ही हैं तुलसी
नित्य समर्पन ही है। यह स्वाहात सरणा भयो।। अथ
करिश्रेतः करणामें सरणा भगवदीयसों मिलिकें भ
वदीयद्वारा होय।१९।। अथ श्लोक है टीका हत है। श्लोक
वामप्यनुपारोलतद्धतेवेचनेः स्वत: तस्मात्मि
मार्गेस्थितोभवतिसर्वथा।।२०।। याको अर्थ।। अप
हैं संयोगमें सात्नात प्रसिद्धि सरणासिद्ध होय।। श्री
चार्यजीके परोक्षमें श्रीआचार्यजीविलवनाम्
श्राश सरणासिद्धि होय। जो श्रीआचार्यजी पुष्टि
प्राटकीरीहै। तिनमें स्थित होय सर्वथा तत्व
सिद्धि होय। काहेतें श्रीहरिके परोक्षमें श्रीय
श्रीगुसांईजी वल्लभकुल तिनके परोक्षमें पर

रेतथाआपु भोजन करें पोटे नवउनके वचनकी भावना
करें सगरे ग्रंथनको भाव कहे सुनें उनके पुष्टिमार्गकी
रीतिमें स्थित होइके सरणकी भावना सर्वथा करें तो नि
श्चय सरण सिद्ध होय ॥२०॥ अब आगे कहत हैं श्लोक ॥
संसारीणां सदा दुष्टसंगिनामल्पमेधसां ॥ बहिर्मुखानां
मर्तानकुतो मार्गे स्थितिर्भवेत् ॥२१॥ याको अर्थ ॥ अब
ऊपर कहे साक्षात सरण परोक्ष दसामें श्री आचार्यजी
द्वारा सरण सिद्ध होय श्री आचार्यजीके परोक्षमें उनके
ग्रंथ वचनामृत द्वारा भगवदीयसों मिलिके पुष्टिमार्ग
में स्थिति होय के याको विचार परंतु दुःसंग होय तो स
रणकी योग्यता क्षणमें जात है काहेतें संसारी जीव हैं
सो सदातें दुष्टसंगी हैं तातें दुष्टके संगतें निश्चय दुष्टता हो
य तातें संसारासक्त जो जीव हैं तिनको संग कबहू नाहीं
कर्तव्य है तहां कहत हैं जो वह मुख्य वैसें जानिये लौकि
कमें विषयादिकमें तन मन धनकों उन्मत्त रहे हैं वह प्र
हरतें अधिक चावै यह है भगवद्धर्ममें मन ही न लगे
अभिमान अहंकार मनमें बहु न रहें ऐसें संसारी जीव
नके हृदयमें यह पुष्टिमार्गकी वह स्थिति न होय ऐसे ब
हिर्मुख होय तो संग करे तो पुष्टिमार्गतें नष्ट होइ ता
तें संसारी जीव वह मुखको संग छोडि भगवदीयको सं
ग करि सरणकी भावना करे ॥२१॥ अब आगे कहत हैं
श्लोक ॥ तस्थे श्रीमदाचार्यचरणाम्बुरुहाश्रयः सदा
विधेयस्तेनैव सकलसिद्धिस्याति ॥२२॥ याको अर्थ ॥ जो
कदाचित् वल्लभकुल तथा तादृसी भगवदीयको संग
न होय और कछु ग्रंथवानीमें अभिनिवेस न होय तो
कहा करें तहां कहत हैं दुःसंग वह मुखको संग छो
डि अपने तें जितनी सेवा बनि आवे सो करे और अ
पने हृदयमें श्री आचार्यजी महाप्रभुको आश्रय दृढ

वं श्रीमहाप्रभुजीके चरनकमलकी भावना मनमें
रे नित्यनेमका स्थिरपूरर मन लगाइवे कूं येताके
र्वक मनोरथ सिद्धि निश्चय होइगो काहेतें श्री आचा
जी महाप्रभु अलौकिक अग्निरूप हैं सो जो वे स्वयं महा
भुजीके सरणागत आश्रयके श्री आचार्यजी के चरणकमल
कोसदा मन लगाइकें आश्रय सिथल न करें काहेतें भगा
वदीयके संगतें आश्रय वेगि सिद्धि वाही होत पर जो नि
के सिथल न होय जो भगवदीयको संग होइ सो तब ही सि
आश्रय करूं सो ऐसें न विचारें भगवदीय कूहा जानिये
वव मिले तहां ताईं आश्रयकी रीति बिना इ बुद्धि होय जो
य तातें मन तें आश्रय न छूटे या भांति सिथल न होय
मों होनहार है सो होइगी जैसो रच्यो है तैसो होइगो क
हाक सं यह सिथल भाव मनमें न करें जैसें तैसें अपने
मनकों रखिके श्री आचार्यजी के चरणकमलमें लगा
वें सो श्री आचार्यजी विवेकधैर्याश्रय ग्रंथमें वर्णनकी
ऐहैं अपूरणापि कर्तव्यं स्वसामर्थ्य भावनात ६
तिवेचनातु इच्छा है तो लौकिक सुख चाहत है भ
भावद सब धर्म आदिकों तन सिथल ही है तातें मन
कों सिथल कीयो भगवद्धर्म तें न होइ दूरि रहे नाय इ
चाहत है तातें जद्यपि आसुर है इच्छा है तो अपने मन
में असुरकी भावना न करें यह जानें जो यह स्नेहके मु
ख्यधर्म है यह ही जो प्रभुको हृदय नको रखो साथको यह
धर्म है सेवा करनी जहां श्रवणा सो भगवद्कथा सुन
नी सुखसो भगवन्नाम लेनो रह में आलस न राख
तत्काल उठनो भगवद्धर्म में यह जाननो आजुके
सो करि लेहुं कालि कहा जानिये कहा होइ या भांति
तानवे रागी मनको हृदय इच्छा है स्को भगवद्ध
में लगाइ सिथलता मनमें न राखें या भांति श्रीमह

य॰ रे तथा आप भोजन करें पोढें न व उनके वचनकी भावना
करें सगरे ग्रंथनकों भावना सेवुनें ॥ उनमें पुष्टिमार्गकी
री तिमें स्थित होय कें सरणकी भावना सर्वथा करे तो नि
श्चय सरणसिद्ध होय ॥ २० ॥ अब आगे कहत हैं ॥ श्लोक ॥
संसारीणां सदा दुष्टसंगेनाभक्तदोषतः ॥ बहिर्मुखानां
सतां न कुतो मार्गस्थितिर्भवेत् ॥ २१ ॥ याको अर्थ ॥ अब
ऊपर कहे सो साक्षात सरणपरोक्ष दिसामें श्री आचार्यजी
द्वारा सरणसिद्धि होय श्री आचार्यजीके परोक्षमें उनके
ग्रंथ वचनामृत द्वारा भगवदीयसों मिलिकें पुष्टिमार्ग
में स्थिति होयकें सरणविचार ॥ परंतु दुःसंग होय तो स
रणकी योग्यता में जात है ॥ काहेतें संसारी जीव हैं
सो स्वतः दुष्ट ही हैं ॥ तातें दुष्टके संगतें निश्चय दुष्टता हो
य ॥ तातें संसारासक्त जीव हैं ॥ तिनको संग करनो नाही
कर्तव्य है ॥ तहां कहत हैं जो बहिर्मुख वैसें जानि लोकि
कमें विषयासक्तिमें तनमनधनकी उन्मत्तता रहे बहुप्र
हरतो दिन आवेश रहे भगवद्धर्ममें मन ही न लगे
अभिमान अहंकार मनमें बहुत रहे ॥ ऐसे संसारी जीव
सबके हृदयमें यह पुष्टिमार्गकी दृढ स्थिति न होय ॥ ऐसे ब
हिर्मुख होय तो संग करे तो पुष्टिमार्गतें नष्ट होइ ता
तें संसारी जीव बहिर्मुखको संग छांडि भगवदीयको सं
ग करि सरणकी भावना करे ॥ २१ ॥ अब आगे कहत हैं
श्लोक ॥ अनन्ये श्रीमदाचार्य चरणाम्बुरुहाश्रयः सदा
विधेयस्तेनैव सकलसिद्धिर्भविष्यति ॥ २२ ॥ याको अर्थ ॥ जो
कदाचित् वल्लभकुल तथा तादृसी भगवदीयको संग
न होय ॥ और कछु ग्रंथवार्तामें अभिनिवेस न होय तो
कहा करे ॥ तहां कहत हैं ॥ दुःसंग बहिर्मुखको संग छो
डि अपने निजतनी सेवा बनि आवे सो करे ॥ और अ
पने हृदयमें श्री आचार्यजी महाप्रभुको आश्रय दृढ

रखें श्रीमहाप्रभुजी के चरनकमल की भावना मन में
करे नित्यनेम को आश्रय पर मन लगाइवे ते या
सकल मनोरथ सिद्धि निश्चय होयगो काहे ते श्री आचा
र्यजी महाप्रभु अलौकिक अग्निरूप हैं सो जो कोई श्रीमहा
प्रभुजी की सरण आयके श्रीआचार्यजी के चरणकमल
को सदा मन लगाइके आश्रय सिथिल न करे काहे ते भग
वदीय के साथ तें आश्रय की सिद्धि वाही होत परन्तु जो नि
वेदि सिथिल न होय जो भगवदीय को संग होयगो तब ही सि
आश्रय करेगो ऐसे न विचारे भगवदीय कृपा नाहिं
कब मिले तहां तांई आश्रय को विना दुःख होयगो
य तातें मन ते आश्रय न छोड़े या भांति सिथिल न होय
जो हेतु न हारे सो होयगो जैसो देख्यो है तैसो होयगो क
हा करूं यह सिथिल भाव मन में न करे जो सतसंग फल
मन को रोके श्रीआचार्यजी के चरणारविन्द में लगा
वे सो श्रीआचार्यजी विवेकधैर्याश्रय ग्रन्थ में वर्णन की
ए हैं अशक्ये हरिरेवास्ति सर्वमाशक्ये भावनात् इ
ति विवेकनात् ... है लौकिक पुरुषार्थ ... भ
गवद्धर्म ... सिथिल ... तातें मन
को सिथिल ... भगवद्धर्म न होइ ...
... तातें यद्यपि ... उत्पन्न मन
में ... की भावना करे ...
... प्रभु ...
धर्म है सेवा करनी ... भगवद्धर्म ...
नी ... देह ...
... भगवद्धर्म ...
सो ... या भांति
... भगवद्धर्म
में लगाइ सिथिलता मन में न राखे या ... महाप्र

भुजीकोआश्रयकरें २७ अबश्लोककहतहैं लोकमार्ग
स्मार्तगतिकाचेत्यवचिंतात्तिमक्षविलोकिकलेसस
वंधोहर्यैगीहृत्तनलूणं २८ यामेंश्येअववैस्नवकेल
क्षणकहतहैंजोराकअपनेप्रभुश्रीकृष्णतिनहीगतिजा
नेयोसर्वत्रनाश्रयनकरें यहवैस्नवकोमुरवधर्महैसोल
वजानिये अवलौकिक जेसकोसंवधहोयतवमनमें
चिंताकरिपीडितनहोय काहेतेहरिआपनेजनकोलो
किकलेसअनेकप्रकारकोदेतहैं तवयहजीवअप
नोधर्मनछोडेहरिसरणकरें मनमेंचिंतानहोययह
अंगीकारवैस्नवकेलक्षणजैसैविठ्ठलदासश्रीगुसांई
जीकेसेवकनारायनदासकेपासचाकरीकरतेतवना
रायनदासनेविठ्ठलदासकोएकपरगनेपरपठायोते
हां कछुरकमसालेतव नारायनदासनेविठ्ठलदासको
वंदीषानेमेंदीयो नित्यमारतेसोविठ्ठलदासकीपी
ठकीरवालउधरगई ऐसोदुरवपायो परंतुयहनाहीकही
जोमैंवैस्नवहों पाछेंश्रीगुसांईजीपधारेतवविठ्ठलदा
सदर्शनकोंआयो तवश्रीगुसांईजीपूछेजोतेरीयहदसा
कौनेंकीनी तवविठ्ठलदासनेकहीदेहकोदंडहै सोभुगतेहु
हैं तवश्रीगुसांईजीनारायनदाससोंकहीजोयाभांति
मारतेहो जीवपरदयाइनाहीआईताते वैस्नवकोह
रिलीलासदेनहै पालिदेखनाथे सोश्रीआचार्यजी
महाप्रभुविवेकधैर्याश्रयग्रंथमेंआश्रयकेलक्षण
कहे जोइननेदुखमेंहरिसरनराखे येहिकपरलोके
चसर्वथासरणंहरिः दुखहानौतथापापेभयकामाद्य
पूरणे भक्तद्रोहेभक्त्यभावेभक्तैश्चातिक्रमेकृते असक्ये
वासुसक्येवासर्वथाशरणं हरि इत्यादिवचनकोविचा
रिजिननालौकिकवैदिकदेहसंवंधीदुखहोय तोमें
चिंतातुरहोयनहीं एकअपनेप्रभुहीकीसरणरहे य

अंगीकृत वैस्नवके न लगा हैं। अब औरहू कहत हैं। लौ
किकतोके स्वास्थ्य मिति श्री मदाचार्य वचनामृतानां त
दीय स्वामि हार्द्दे तोषः कार्यस्तु तेन हि। २५। या को
श्री श्री श्री आचार्य जी महाप्रभु नवरत्न ग्रंथ में वच
नामृत कहे हैं। लौकिक स्वास्थ्य तथा वैदिक स्तु न कर्त्तव्य
ता इति वचनात् अपने जन हैं तिनको भगवान लौ
किक वैदिक में स्थिति नाहीं करत हैं तहां छुडावत हैं। नें
क अपनो ही आश्रय सिद्धि करत हैं। तब तदीय जो हैं भ
गवदीय सो स्वामी के हृदय को अभिप्राय को चिंतन क
रत हैं जो लौकिक वैदिक कार्य प्रभु नाहीं सिद्ध कीयो। सो प्रभु
भली करी लौकिक सिद्ध होतो तो मैं तो लौकिक कार्य के
आवेस में प्रभु को भूलि जातो जो वैदिक कार्य सिद्ध हो
तो में वैदिक कार्य के आवेस में प्रभु को भूलि जातो ता
तें प्रभु करी सो बहुत भली करी। या भांति स्वामी के हृद
य के अभिप्राय को मन में भावना करिकें तोष करि म
न प्रसन्न राखें। ताको तदीय कहिये। २४। अब औरहू क
हत हैं लौ। अन्यथा तो हि लौकिकलोके रोनानतरः क्रिय
ताश्चिन्त वाधतस्तु न कर्तव्यो धुपहासी नय प्रसादना
त्। २६। या श्लोक को अर्थ करत हैं जो श्री ठाकुरजी लौ
किक वैदिक कार्य न सिद्ध करें तहां भगवदीय मन में
संताप करें लौ सन करें प्रसन्न रहें। या तें लौकिक वै
दिक कार्य न करें तो गृहस्थाश्रम पहके से चले याम
तो कोई संदेह करें तहां कहत हैं जो लौकिक वैदिक
कार्य में मन लगायो तातें प्रभु कार्य सिद्धि न कीयो
सो भली भई अब लौकिक वैदिक कार्य में मन नाहीं ल
खूगो वेन वाहररूपतें लोगन को दिखा
इवे के लिये कछु रनो.
हसे वा संबंधी लौ

ऐसें अपने मनकों खेंचलेय या भांति लौकिकमें है अ
पनो धर्म वाकौं न जनावें लौकिक वैदिक क्रियालो
गनमें जनावें या प्रकार भगवद् आश्रय करें तो प्रभु
प्रसन्न रहें ॥ २६ ॥ अब श्लोक २७ कहत हैं ॥ श्लो ॥ दुःखदु
संगज चान्यं लौकिकाभिनिवेशात् सत्संगाभावजं च ।
पितया मार्गे स्थितेरपि ॥ २७ ॥ या [illegible] घ [illegible] लौकिककौ
आवेस करावें ऐसो जो दुःसंग तिनकौं संग दुःख
पजानिरें वाकौ कष्ट सौं कबहू न करिये यह मनकी
टक हैं जैसें प्रह्लादजी भगवद्भक्त हे सो अपने प्र
भुकौं स्मरण करें तहां पिता ही प्रतिबंध भयो सो प्रह
लादकौं वाहा नही समझायो तब प्रह्लादने न माने
तब उन प्रह्लादकौं बहुत दुःख दीयो जो न भगवान्
कौ स्मरण मति करें तब प्रह्लाद अपनो मरनो सगरो
दुःख सह्यो परंतु भगवदाश्रय न छोडे तब प्रभु प्र
सन्न होयकें प्रह्लादकी रक्षा कीनी हरन्यकस्यप
कौं मारे तैसें ही वैष्णवकौं दुःसंग होय सो तो लौकि
क कार्यमें लगावें ताकौं संग दुःखरूप जानि त्याग ही
करें सत्संग करें तो भगवद्धर्ममें लगावें ताहीकौ
सत्संग करें जो कदाचित् संगकौ अभाव होय न मिलै
तो अपने पुष्टिमार्गकी रीति सेवा स्मरण न छोडे दु
संगकौं दुःखरूप जानि सबतें न्यारो वैठे श्रीआचार्य
श्रीगुसांईजीको आश्रय मनमें दृढ करिकें मार्गकी री
ति न छोडे नित्य नेमसों सेवा स्मरण करें यह सिद्ध
की मनमें राखनो ॥ २७ ॥ अब श्लोक २८ कहत हैं श्लो
तत्प्रभुपादाब्जकृपया सर्वथा मम । न दीयानो
संगेन [illegible]णाद्दूरी भविष्यति ॥ २८ ॥ या [illegible] त
भुजो श्रीआचार्यजी पुष्टिमार्गीय जितने जीव
शरण्यारोहे तिन सबनके प्रभु श्रीआचार्यजी म

प्रभु सों ऐसे श्रीमहाप्रभुजी के पदकमल की कृपा तें
सर्वथा तदीय को संग होय। भगवत्सेवा स्मरण सब
अनिश्चावे। सुष्टिमार्ग को सिद्धांत स्फुरण होय। ता
तें श्रीमहाप्रभुजी के चरणकमल की कृपा तें साद
सी भगवदीय को संग होय। जहां ताई सी भगवदी
य के संग होय। तिनके संग तें श्रीमहाप्रभुजी
करुणाई दूरि न रहे सो चोरासी वार्तानि में प्रसिद्धि
है। जब श्रीआचार्यजी महाप्रभु आपुख्यामोह ली
हरि रखाई कासी में। तब एक वैष्णव कासी ते भग
वाननदास वैष्णव के पास आय के सब समाचार क
हो। तब भगवाननदास ने कही जो को श्रम भयो है श्रीमहा
प्रभुजी ऐसी कबहूं न करें। तब उन वैष्णव ने कही मैं आप
नी आंखिन सों देखि के आवत हों। तब भगवाननदास मंदि
र के किवाड खोलि के वैष्णव को दरसन कराये आप पुं
ठ पोथी बांचत हो। तब उह वैष्णव के मन को संदेह गयो।
ता तें ताद्रसी वैष्णव ते श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी रंच
मात्र न्यारे नाहीं रहत हैं। ऐसे भगवदीय को संग अवस्य
करें। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु हृदय में पधारें भग
वदीय को संग ऐसो है। ऐसे वचन कहत हो। श्लो
क। तेजु ये मद्भतिमनः खिन्नं भवति नित्यशः। पदा प्र
भुः कृपापूर्णः कृपां विदधाति दैन्यतः। २। याको अर्थ
यह श्रीहरिरायजी कहत हैं जो ऐसे भगवदीय याति
दुर्लभ है। मिलने में सबते परदा। मोकों नाहीं मिलत ता
तें मन में दुःख के दर्द को पावत हो। सो तो अमन में दैन्यता
नाहीं आवत जो मन में अति दैन्यता आवें तो श्रीआचा
र्यजी महाप्रभु कृपा करें ता तें मोको भगवदीय को सं
ग नाहीं यह दुःख है ता तें श्री आर दैन्यता ना
खनी है ता तें श्रीआचार्यजी की शरण

सि.प. श्रीभगवदीयको संग होय तैसें ही जब श्री आचार्यजी
३५ श्रीप्रभुकी कृपा होय तब दृष्टि पिन वैन न्यतें न दैन्यताह
य जैसें भगवदीय के संगतें प्रभु कृपा करि हृदयस्था
रु होय तैसें ही श्रीमत तें दैन्यादि सिद्धि भये ते प्रभु हृदयमें
स्था हैं प्रसन्न होय सो श्री आचार्यजी महाप्रभु श्री
सुबोधनीमें कहे हैं जो प्रभु प्रसन्न करिवेको एक दै
न्यता ही परम साधन है सो त्रिविधनामावलीमें
नचाध्याईके प्रसंग पर नाम कहे हैं दीनहृत्परपालि
रूपाय नमः सगरे साधन व्रजभक्त कीये श्रीठाकुरजी
की लीला करी गुनगान कीयें पाछें निःसाधन होय
रुदन कीयो तब श्रीठाकुरजी प्रगट भये तातें दैन्यता
बडो पदार्थ है तब श्री आचार्यजी की पूर्णकृपा हो
य तब दैन्यता आवे अब जा प्रकार दैन्यतादि सि
द्धि धर्म हृदयमें स्थापक होय सो उपाय कहे हैं श्लोकमें
कहत हैं श्लोक तदाचार्यचरणौ तावनुपस्था
पयिष्यति अस्माकं तु गति नान्या श्रीकृष्णः शरणं
मम ॥ ३१ ॥ याको अर्थ अब कहत हैं यह जीव जब श्री
आचार्यजी के चरणकमलमें मन क्रम वचन करि
आसक्त होय तब दैन्यतादि सगरे धर्म हृदयमें स्था
पन होय यह सर्वोपरि उपाय है और कोई नाहीं कारे
तें तब जीव श्रीआचार्यजी को शरण आय मन वच
न क्रम करि श्री आचार्यजी के पदकमलको आश्रय
कीयो तब श्री आचार्यजी तो कृपानिधि हैं दैवी जीव
नपर कृपाकरनार्थ उद्धारार्थ प्रगटे हैं सो भक्तिकी सर्व
आर्तिको दूरि करेंगे सो श्री सर्वोत्तम ग्रंथमें श्री गुसां
ईंजी श्री आचार्यजीके नाम कहे हैं स्मृतिमात्रार्तिना
शनाय नमः श्री आचार्यजी को स्मरण करनमात्र ही
सर्व आर्तिको प्रभु दूर करे तातें श्री आचार्यजी की कृपातें

है न्यनाश्रादिसगरे धर्म कूस्य मैं आवै। [illegible]
कहूं साधन नाही हैं। एव श्री [illegible]
ही गोनि हैं। सो श्री गुसांईजी [illegible]
नातचरणों श्री [illegible]
न्यूसै हि कैपारलो [illegible] श्री गुसांईजी [illegible]
मोरे तान कृपा श्री [illegible] प्रभु जी श्री [illegible]
[illegible]

५ जी कहत हैं जो श्रीकृष्ण के दोय स्वरूप हैं क्रियात्मक भा
वात्मक स्वरूप मथुरा तें वसुदेवजी ले आये सो क्रिया
त्मक स्वरूप और श्रीयसोदाजी के घर प्रगटे सो भावात्म
क सो भावात्मक श्रीकृष्ण की दोय लीला बाललील
और किसोर लीला बाललीला श्रीगोकुल में किसो
र लीला श्रीवृंदावन में तातें बाललीला के भाव तें
सेवा करें किसोर लीला के भाव को स्मरण करें सो
श्रीगुसांईजी कहत हैं श्लोक सदा सर्वात्मना सेव्यो
भगवान् गोकुलेश्वरः स्मर्तव्यो गोपिकावृंदैः क्रीडन्
वृंदावने स्थितः इत्यादि वचन के अनुसार बाल
लीला श्रीनवनीतप्रियाजी के स्वरूप में रासादि
लीला श्रीगोवर्द्धननाथजी के स्वरूप सों सो विप्र
योगात्मक स्वरूप श्रीस्वामिनीजी के हृदय में र
त हैं सो जब श्रीस्वामिनीजी के भाव हैं तिनकी भाव
ना करें जो श्रीस्वामिनीजी प्रभुन कों कौन भांति लडा
वत हैं कौन भांति गुनगान करत हैं प्रभु के संग कौ
न भांति लीला करत हैं यह भावना करे तो श्रीस्वा
मिनीजी कृपानिधि हैं प्रसन्न होय भाव को दान क
रे तब भावात्मक प्रभु को अनुभव होय और उपाय
नाहीं काहे तें श्रीकृष्ण के हृदय में सर्वस्व श्रीस्वामि
नी ही स्थित हैं और कछु श्रीस्वामिनी बिना श्रीकृ
ष्ण जानत ही नाहीं ता तें श्रीस्वामिनीजी को आ
श्रय करि श्रीस्वामिनीजी विरह करत हैं तिनकी भाव
ना भावात्मक हरि की करें तब श्रीस्वामिनीजी कृपा क
रें प्रसन्न होय तब प्रभु अपनो अनुभव जतावें १
[illegible]वचार है कहत हैं श्लो० अस्माकं मतिमार्गे
न तदाप्यवो निरुद्धाः अतस्यी तत्र जावो स्मिन्मा
र्गे नैवाप्युज्यते २ या को अर्थ यह विप्रयोग भाव

ावाग्रिमें आपमें तो नाहीं हैं। काहेतें यह भावात्मक
ग्रितो दास्यधर्म दैन्यता होय। तिनके हृदय में होय
सो दास्यधर्म हू अतिकठिन महादुःखमें भये हैं। और दैन्य
ता अतिदुःखनमें भये हैं। सो कहत हैं। श्रीस्वामिनीजी के सु
ख चाहें आपनो सुख न चाहें। सो दास। जैसे परमानं
ददास की वार्ता में है। जो श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी मे
ननको पधारे। ताही समय व्यापारी को द्रव्य गयो हतो
सो आयो। तब परमानंददास व्यापारी को बोलन नाहीं
दीयो। श्रीआचार्यजी को श्रमन करिवे दीयो। जैसे सो दास्य
धर्म कठिन है। और दैन्य को प्रकार रासपंचाध्याई में प्र
सिद्ध है। जैसे अंतर्धान समय भगवानने श्रीहू रूपकी
लीला हू कीयो। गुनगान कीयो। तापीछें निःसाधन
दैन्यता कीयो प्रगट भई। सो मेरे में दास धर्म हू नाहीं है
और निःसाधनता दैन्यता नाहीं है। तातें भावाग्नि
श्री यह श्रीआचार्यजी के पुष्टिमार्ग है
ति हृदय में है। तो शीतल भाव करकें करनो
ना में तो यह दीन है। विरह में कि तें दि
जैसें कुंभनदासजी एक हरसन के विरह में
कि सुनाहे विनु देखे या भांति चातुरता होय तब उ
मार्ग के भावको अनुभव होय। या रस को और है को
तहां श्लोक॥ ताप भाव पर हैं ते प्रकाश। सबे दा
दैन्येन स्वयादीन बंधुः प्रादुर्भवत्यसौ। अ याव
वी॥ अब जा प्रकार दैन्य न होय। सो उपाय कहे
पहले तो हृदय में ताप होय। तो सगरो जन्म वि
पुष्टिमार्ग में साक्षात पुरुषोत्तम विराजत हैं ति
अनुभव कछु न भयो। मेरे में कछु धर्म नाहीं। ऐ
अनुविषय के ताप हृदय में होय। सो ताप सर्व
ताको इ ए किर ना हीं। काहेतें अनेक जन्म के प
हृदय में भरि रह्यो है।
के मानसिक

क्रोधमदमछरता करि हृदयमलीन जीवको है सो जि
वनतापाग्नि प्रगट होय तब सगरे दोषनको नास होय
तापीछे दैन्यता आवे काहे ते दैन्यता मुख्य धर्म है सो
सुद्ध हृदय होय तब दैन्यता आवे तब देहकी औ
हिसा होय जाय खानपान देह संबंधी सुख सब छूटि
जाय या भांति हृदयमें प्रभुको प्रकास होय काहे ते
हीनबंधु यह श्रीठाकुरजीको नाम है सो जीवको
दैन्यता होय तब प्रभुको स्थान आवे सो श्रीभाग
वतमें ठौर ठौर निरूपण है द्रौपदीको दैन्य भयो
तब प्रभुको रूप जगत्र गजेंद्रको दैन्यता भई तब
प्रभु पधारे रासपंचाध्यायीमें भक्तनको दैन्यता जब
भई या भांति इति गोप्यः प्रगायंत्यः प्रलपंत्यश्च चि
त्रयाधा रुरुदुः सुस्वरं राजन् कृष्णदर्शनलालसा
या भावकी सिद्ध भई तापीछे तासामाविरभूच्छौरि
स्मयमानमुखांबुजः पीतांबरधरः स्रग्वी साक्षा
न्मन्मथमन्मथः या भांति प्रभु पधारे ताते अभि
मान अहंकारते प्रभु दूरि हैं और दैन्यता प्रगट है
ताते दैन्यता होय ताके हृदयमें प्रभु प्रगट होय
अपने आनंदको अनुभव सर्वथा करावे प्रथम
ताप होय तापीछे दैन्य होय तहां कोई कहे दैन्य
ताको नभांति होय सो उपाय आगे श्लोकमें कहत है
३ श्लो तद्दैन्यं स्यात् स्वामिनीनां तापभावबि
भावनात् तद्दूषणे भवेद्देव नान्यथा चरणाश्रया
तू ध्या अ चव दैन्यता सिद्ध तो श्रीस्वा
मिनीजी हैं श्रीस्वामिनीजी जब कृपा करैं तब ता
प भावकी भावना होय ताप भावकी भावना है व्र
ज भक्तनकी रीति सों करनी सेवाके संयोगमें व्र
नी सेवा सो पोहोंचि अनोसरमें पहरीति सों करनी

तो अपने मनकी कल्पनासों विप्रयोगकी भाव
ना करनी श्रीस्वामिनीजीके चरणकमलको आ
श्रय करि जा प्रकार श्रीस्वामिनीजी विप्रयोगकी भा
वना करत हैं। वेणुगीत युगलगीतनमें भावको वर्ण
न है। ता भावकी भावना करें श्रीस्वामिनीजीको स्व
रूप तापात्मक जानें। या भांति श्रीस्वामिनीजीके भा
वकी भावना करें श्रीस्वामिनीजीके चरणको आश्रय
केसें सिद्ध होय सो आगें श्लोकमें कहत हैं। श्लोक ॥
तदाश्रयस्य सिद्धिस्तु तद्भावापरिनिष्ठया। तन्निष्ठा
मनस्तु नाइक नदीयजनसेवया॥५॥ याको अर्थ। श्री
स्वामिनीजीके चरणकमलको आश्रय या भांति करें
श्रीस्वामिनीजीके भावरूप श्रीआचार्यजी हैं। तातें श्री
आचार्यजीके चरणकमल हैं सो श्रीस्वामिनीजीके जा
नने। या भावसों श्रीआचार्यजीके चरणकमलको आ
श्रय करनो। ताकरि भावरूप विप्रयोगको दान होइ
गो। सो श्रीआचार्यजीके चरणकमलको आश्रय
कब होय। जब श्रीआचार्यजीके वचनामृत श्रीसु
बोधिनीजी आदि छोटे बडे ग्रंथको भाव तामें निष्ठा
होय। तब श्रीआचार्यजीके स्वरूपको ज्ञान होय
तापीछें श्रीआचार्यजीके चरणकमलमें भाव होय
तब चरनकमलको आश्रय होय। सो श्रीआचार्य
जीके वचनामृत ग्रंथमें निष्ठा न्यव होय। जब पुष्टिमा
र्गीय भगवदीयकी सेवा करिये। भगवदीय कृपाव
रिकें तावें। तब ही जान्यो जाय। तातें भगवदीय
की सेवा आवश्यक ही मन क्रम वचन करि कर्तव्य
हैं। तिनकी कृपातें सर्व सिद्ध होइगो। ५। अब ग्यारह
कहत हैं। श्लोक॥ तदीयानुग्रहेभोपि भवेत्सु: श्रीभगव
सेवना। अथवा दैन्यभावेन धनत्व

६ ॥ या श्लोकमें परकहेहै भगवदीयकी सेवातें सिद्धि होय
सो पुष्टिमार्गीय भगवदीय अतिही दुर्लभ है ॥ सो जेहा
ताई पुष्टिमार्गीय भगवदीय न मिलें तहां ताई नित्य श्री
भागवत श्रीसुबोधनीजी को सेवन नित्य नेम करि
कै यो सुन्यो करें तब भगवदीय मिलेंगे ॥ तब सगरोमा
वचनावेगे ॥ तहां ताई आप ही श्री भागवत बांचें ॥ जो
श्री भागवत श्री सुबोधनीजी में अभ्यास न होय ॥ सा
न न होय तो दैन्य होइकें निरंतर हरिजी भगवान स
वे दुःखके हर्ता तिनको स्मरण करें ॥ निरंतर दैन्य भाव
सों जब हरिको स्मरण जीव करेगो ॥ तब श्री ठाकुरजी दु
ख नाही सहि सकेगे कृपा करि पुष्टिमार्गीय भगवदीय
को संग मिलावेगे ॥ तिनके संग ते सर्वकार्य सिद्ध होइगो
६ ॥ अब आगे कहत हैं श्लोक ॥ अष्टाक्षर महामंत्रो व
क्तव्य: इति निश्चय: ॥ सर्वदा सर्वभावेन तेन सर्वं भवि
ष्यति ॥ ७ ॥ या श्लोक में अब श्री हरिरायजी कहत हैं जो
जीव तो स्वभाव करि दुष्ट हैं जो कछु न बनि आवे तो अष्टा
क्षर को महामंत्र जानि अष्टप्रहर श्रीकृष्ण: शरणं मम:
यह कह्यो करे काहेते यह श्री आचार्यजी महाप्रभु नैं स
पुराण शास्त्र श्री भागवत में ते सार रस निश्चय करि प्र
गट कीयो है सो या ते दैवी जीवन के अर्थ ॥ ताते सर्वका
ल में अष्टाक्षर को जप कबहू भूले नांही सर्वभाव करि
अष्टाक्षर को जप जो करेगो ॥ तिनके सर्वकार्य निश्चय
सिद्ध होइगो ॥ ७ ॥ अब आगे कहत हैं श्लोक ॥ अस्माकं
न्यूनतो यासी म्मिलते यदि मन्त्राहि ॥ एतावती हरि:
करे: पूरयिष्यति तामपि ॥ ८ ॥ या श्लोक में [illegible] अब कप
रके है ता भावात्म विप्रयोगात्मक प्रभु [illegible] लभ है
ताते जीव आपनेको न्यूनता तुच्छ माने या भांति प्रभु
के मिलिवेको जतन करें ॥ तब श्रीकृष्ण सर्वदुःखके हर्ता

हरि हैं। सो सगरो मनोरथ पूरण करेंगे। सो जीवन तो स्व
भाव करि दुष्ट ही हैं। परंतु अपने पै को उन अन्यथा ज्ञान
करि के मानत हैं। ताही ते प्रभु अपनो अनुभव नाहीं जु
नावत काहे ते श्री भागवत में पिंगला सारिखी जाकी
महा दुष्ट क्रिया सो अपने पै को तुच्छ मान्यो या भांति पिं
गला वचन। संसारकूपे पतितं विषयैर्मुषितेक्षणं
ग्रस्तं कालाहिनात्मानं कोन्यस्त्रातुमधीश्वरः। या भां
ति अपनो दोष स्फुर्यो। तब दीन भाव होय प्रभु की
प्रार्थना करी। तब प्रभु कृपा ही करी। तैसे ही पुरुरवा
की कथा श्री भागवत में कही है। पीछे अपनो दोष
स्फुर्यो। श्लोक। पुंश्चल्यापहृतं चित्तं को न्वन्यो मोच
यितुं प्रभुः। आत्मारामेश्वरमृते भगवन्तमधोक्षजं।।
या पै ही अर्थ।। या प्रकार जब अपनो दोष पुरुरवा
को स्फुर्यो। तब प्रभु कृपा करी। सो यह जीवन कों श्री
आचार्यजी दिखरावत आये हैं। यह तो दैन्य मार्ग ही है।
या मार्ग में जहां तांई दैन्य न आवे तहां तांई फलसिद्धि
नाहीं है। सो अपने को उत्तम जाने तहां तांई दैन्य न आ
वे। ताते अपने को न्यून तुच्छ जानि के प्रभु के मिलिवे को
मनन करे। तो प्रभु दुःख को नाश ही करें। हरि सब दुःख
के हर्ता। श्री मस्तंबाकार मनोरथ निश्चय पूर्ण कर
गे। याके उपर श्री हरिरायजी कहत हैं। श्लोक। भगवद्दैन्य वार्ता
व्य तो भो मनसि सर्वथा।। अस्मिन्मार्गे तथैवाति न्य
व फल संनिधिः दैण्यात्। अपने को न्यून तुच्छ मा
नै और लोभ सहित मन में भाव सो सर्वथा करें। सो श्री
गुसांईजी विज्ञप्ति में कहे हैं। दर्शन विहीनस्य दीय
स्य नु जीवनं। अर्थ में कुछ स्पष्ट नाथ दुर्भाग्या न वेश्यः
श्री गुसांईजी कहत हैं जो हे नाथ तुम्हारे दर्शन बिना
जो कोई तुम्हारे क्लेश जे हैं ये जीवत हैं। सो अय पुष्ट

प्र. ८ मारगीय वैस्नव तुमारे कहाये ओर तुमारे दरसन बिना
जो जीवत हैं सो वृथा जीवत हैं वे बडे अभागे हैं या भां
ति अपने कों महा अभागी स वे साधन करी हीन महादु
ष्टजानि मन में लोभ करें हे नाथ अब मेरी कोन दसा
होइगी महाप्रभुजी द्वारा तुमारे सरन आयो हूं मो मन
को धर्म नाही या भांति नित्य करें सर्वथा वारंवार दि
हकार उद्वेग सास लेइ काहेते यह श्री आचार्यजी म
हाप्रभु के पुष्टि मार्ग में जाके हृदय में जितनी आर्ति ति
तनो ही फल सिद्ध जाकों अत्यंत विरह ताको तत्का
ल सिद्धि जाको विरह नाही ताके फल सिद्धि की ढील
जाको थोरो विरह ताको थोरो फल या भांति विप्रयो
ग की जाको जैसी आर्ति तिन को तैसो फल सिद्धि जै
से रासलीला में जैसो जाको भाव तैसो है ताको रसदा
न आदि पसुपक्षी व्रजभक्त अपने भाव अनुसार अनु
भव तैसे ही पुष्टि मारगीय वैस्नव कों जैसी आर्ति तैसो
ही फल श्री कृस्नरस को अनुभव करावे ॥ ९ ॥ अब आगे
[illegible] है नहीं सो [illegible] यथा कार्य चिंता तैथो विवहारो हि
लौकिके आपकीर्ति भयात् तेन बुद्धि से थिल सभवात्
१० ॥ या [illegible] ॥ अब श्री हरिराइजी कहत हैं जो वि
प्रयोग आर्ति को स्मरण तब होय जब लौकिक वै
दिक कार्य छूटे सो संसार में रहि के सब छूटे नाहीं
जो लौकिक वैदिक कार्य छोडे तो लोक में लोक में अ
पकीर्ति होय लोग बुरा कहे तब अपने मन में लोभ हो
य क्रोध नाम सह होइ तो बुद्धि अपने मारग में सिथि
ल होय जाय ताते लौकिक नकी आपकीर्ति की भय ते
वस्तु थोरो सो लौकिक वैदिक कार्य करे जामें आपनो ध
र्म [illegible] रहे मन ओर हारादिक न मन लगावे दाय
वाय घरी वारे यह सिद्धांत भयो १०३ ॥ श्री ॥ [illegible]

॥श्रीकृष्ण॥ सिक्षापत्र नामकी टीका श्रीगोपेश्वरजी कृत
वे रागें॥५॥ यवकृपस्कै तापभाव मनमें राखिके लिख
यामाहीं दुःख देख्या तिनसौं होय तासैं दीपकको च
नुभव होय॥ तामें लौकिक जो सबाधक हैं लौकिक कृ
त्यमें या भांति राग न राखै तौ दुःख न होय भगवद्धर्म
हैं सो स्पष्ट कहत हैं॥ श्लोक॥ सहायस्तदा तनुनो हि
भुजः सुहृद्वधूर्या मर्यगाम्यसुखबन्धनाख्ययेताम
वंसजा॥६॥ याको अर्थ॥ अब श्रीहरिरायजी कहत हैं
जो संसारके दुःखकों सब कारि मनमें दुःख पावै तौ प्रभु बा
लक हैं श्रीयसोदाजीके पुत्र हैं द्विभुज और रंग
छोटे छोटे हैं मुखारविन्दमें नेत्र अंजन हैं तिनसें श्रीलल
को स्मरण करनो हैं और श्रीकृष्ण बड़े हैं जिनको भी
थे वंस जो सबनतें ऊंचो यदुवंस जो चंद्रवंस सबनें श्रेष्ठ
तथा वल्लभकुल सबनतें श्रेष्ठ पृथ्वीपर तीन कुल श्रेष्ठ प्र
सिद्ध हैं और अवतार अनेक हैं तिनमें तीन श्रेष्ठ त्रेता
में दसरथजीके घर श्रीरामचंद्रजी तिनको रघुकुल
द्वापरमें श्रीकृष्ण सो यदुकुल कलियुगमें श्रीआचा
र्यजी तें वल्लभकुल ए सब मंत्र पुष्टि वल्लभनंदन स्वार्थ हैं
हैं तातें हमारे कुवंसमें श्रीहरिरायजी बालभावसों सेव
नीय हैं तहां लौकिक जो मनमें कछु होय तौ श्री
ठाकुरजी अप्रसन्न होय ना यतौ आपनो धर्म जानत हैं
तातें श्रीवल्लभ प्रसन्न रहैं। सो ईके लेख हैं॥१॥ श्लोक॥ ग्र
इत्यादि समाचार। श्रुतानुविद्याथिना। लक्ष्य लिखत
किंचित्समाधानाय चेतस। याको अर्थ॥ अब श्री
रायजीके छोटे भाई श्रीगोपेश्वरजी तिनकी वह दीक्ष
गोपेश्वरजीके अनुकूल हती॥ सो ऊपरवर्णन करे हैं
हीं त्रय श्रीहरिरायजी सिक्षापत्र लिखे हैं। सो अब श्री
हरिरायजी भाई श्रीगोपेश्वरजीको समाधान होय

भांतिलिखतहैं तो तुमारे ग्रहभंगको समा
ने सो सुनतहीं औ सो दुःख भयो मानो हमारे
सघो रिके परयो औ सो दूरि ह्वै गयो सो दुःख
खे तुमारे मनमें दुःख है तदर्थ हम कछु सास्त्र
न पत्र लिखत हैं तिनको बांचिकें हृदयमें
कें चित्तको समाधान करियो काहे तें या सम
तुमारे पास होते तो आछो सो भगवदिच्छा तो
मनमें दुःख जितनो भयो सो पत्रमें कहां तांइ
मानो विधाता घोरि दीयो या मैं जो लिखी जो
सो दुःखमें तब आपने पुष्टिमारगीय धर्मको स
होय तब जानिये जो श्रीआचार्यजीकी प्रणाली
हम समाधान लिखत हैं जो भगवदिच्छाको ग्र
रनो आपने मूलधर्म हृदयमें प्रभुको स्मरण प्रभु
वे सो जा प्रकार मनतें बाहर न जाय सो करनो है
[illegible] बांचिकें चित्तको समाधान करीयो या पत्रमें
क [illegible] भगवद्धर्म वर्णन है जा
सो पुष्टिमारगीय है भगवदिच्छा विचार सो सब
नो है तातें आपनो चित्त लगाय पत्र बांचि चित्तको स
धान करियो २ श्लो॰ सर्वेश्वरश्च सर्वज्ञः [illegible]
[illegible] समर्थो [illegible] जीव [illegible]
[illegible] भगवत्स्वरूप कहत हैं और जीवको
[illegible] कहत हैं सो यातें जो प्रभुकी इच्छाको जीवके
जानें श्री [illegible] हैं सो सर्वेश्वर ईश्वरके ईश्वर हैं ईश्वर या
[illegible] मन आवे सो करें कोउ ब्रह्मादिक शिवादिक
इच्छा [illegible] कोई श्री [illegible] की आज्ञाकों टारवेकों सामर्थ
नाहीं है [illegible] के सारिवेको एक पुत्रके भावना
यन नाम तिनि [illegible] दीयो औ ऐसे सर्वेकरणसामर्थ है
तातें सर्वेश्वर श्रीकृष्ण हैं और [illegible] में सर्वेकें हृदय

जानत हैं तथा कोटान कोटि ब्रह्माण्डमें सर्वत्र व्यापक श्रीठा
कुरही सर्वज्ञ तो हैं सबके जानत हैं इनतें कछु छिप्यो ना
हीं हैं और करुणावंत हैं ऐसे ईश्वर हैं सो काहू के दुःखसु
खके अजानत होइगे सो नाहीं परम करुणाके निधि हैं
अपने भक्तनके एक हू दुःख नाहीं सहि सकत और सब धर्मी
हु समर्थ हैं अब जीवको स्वरूप कहत हैं जीव के सो ई अस
मर्थ हैं यह जीव को कीयो कछु नाहीं हीन हैं यह अपनो
स्वरूप न जानत हैं सो सगरो अज्ञान ही जाननो। अपने प्रभु
को भूल्यो है माया करिके सो हीन है हृदय में ज्ञान शून्य
है तातें अपनो सामर्थ्य जानत नाहीं हैं सो नाहीं हैं अज्ञा
नी हैं सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु बालबोध में कहे हैं जो
जीव स्वभाव करि दुष्ट है। यह निश्चय है प्रभु गुननिधि हैं
जीव दोषनिधि है यह निश्चय मनमें जाननो ॥३॥ अब
और हू कहत हैं सो कहा तत्त्व त्रिविधा लोक में सकल
दुःखनिदान मूल तैं कृपा ग्रही नाना नाना पाकर तें फ
लतें यु याको यश्री और श्रीठाकुरजी की इच्छा तीन प्रका
र की है एक तो यही सृष्टि को लौकिक में पुष्टि सृष्टि
को भाव रसवाम मर्यादा सृष्टि को दम साधन सब गुण
या भांति प्रभु की इच्छा तीन प्रकार की है ॥१॥ मूल ॥२॥ वि
र ॥३॥ तातें यह श्रीआचार्यजी महाप्रभु के सब धी स्व
छि है सो पुष्टिमार्गीय है तिनको तो निश्चय भगवा
न को मन रखाई है सो यह एक जन्य है जो कार्य होय
सो एक प्रभुही कीयो। वही तो नंददास अपराध्यो चाह
ये और कर्ममार्गीय है सो याभांति कहत हैं जैसो क
र्म करेगो तैसो फल पावेगो। वे एक कर्महीको फल क
हत हैं अब ही माया करि जानत हैं। जो माया ही सगरे
कार्य करत है॥

वेक तो प्रभु है या भांति जान्यो चहिये अन्यथा श्री फ
ल को न जानन तो नेक कर्म करि फल होइगो कोई साधन
करि फल की सिद्धि होइगी सो सर्वथा अपि या भांति फल के
चिंतन न करनो अब तीन प्रकार की सृष्टि तीन प्रका
र की भगवद् इच्छा मानत हैं सो श्री गोकुलनाथ कहत हैं श्
प्रवाह एव स्य नियम स्तु शुद्धः स एव विचारितः मर्या
दया अहीनां शु प्रवर्तयति कर्म ... पुष्टौ प्रवा
ही सृष्टि लोकिक ही विचार राख्यो है काहे ते प्रवाही सृष्टि
के जीव न्यारे हैं देह न्यारी तैसें ही क्रिया हू न्यारी है सो पु
ष्टि प्रवाह मर्यादा ग्रंथ में श्री आचार्य जी महाप्रभु कहे
हैं जीव देह कृतीनां च भिन्नत्वं नित्यता श्रुते इति
वाक्यात् तातें प्रवाही सदा भ्रमही में रहै भक्ति मार्ग में क
बहू आवै नाही और मर्यादा को ग्रहण करत हैं सो
जीव कर्म में प्रवर्तत हैं काहे ते वर्ने कर्म आद्य है न चे
सा विरमा गैही इति वाक्यात् या भांति वर्म में कहे हैं आ
दृश्य प्रयत्न निस्वर्गतपरा न चे नेक साधन सो फल
मुख्य बताये हैं सह ज्ञान मर्यादी को नाही है जो आठ
कर्म करै तो स्वर्ग लोक में जात हैं तहां सुख भोग के जब
पुण्य क्षीन होत हैं तब फेर यह संसार में गिरत हैं प्रभु
की प्राप्ति नाही है सो कर्म मार्गीय स्वर्गादिक को फल जान
त हैं या भांति मर्यादा सृष्टि वेद इच्छा मानत हैं या भांति
प्रवाही और मर्यादी सृष्टि को प्रकार कहे हैं अब पुष्टि
सृष्टि को कहत है सो श्री गोकुलेश कहत हैं श्री
स्वरूपेणावतरणेनाणुसन सर्व ... न हि ...
हि व्यापक रूपकोऽतः ... जो पुष्टि
सृष्टि केवल भगवद् स्वरूप को ... कर रूप है तें
भगवद् स्वरूप की सेवार्थ पुष्टि सृष्टि करी है भगवान
भगवद् स्वरूप सेवार्थं तत्सृष्टिर्नान्यथा भवेत् इति वच

आनि

नान। तातें पुष्टिसृष्टि यह मनमें विचारें जो प्रभु अपने स्वरूपबलतें स्वतः आपुही करेंगे। यह चिंता नाही करनी है। काहेतें प्रभु तो सारे व्यापक हैं। सर्वठौर प्रभु हीं हैं तहां चिंता काहे की करनी। श्रीकृष्ण ही को कीयो सब ठौर है तैसें। और श्रीकृष्ण कैसे हैं। कृपाल हैं। अपने भक्तनपर सदा कृपा ही करत आये हैं। और कृपा करेंगे। या भांति प्रभुको चिंतन करनो। और श्रीकृष्ण कैसे हैं विभु हैं। सर्व सामर्थ्ययुक्त हैं। काहूको दियो ऐश्वर्य नाही है। ब्रह्मादिक शिवादिक इंद्रादि देवता हैं। तिनको भगवान ऐश्वर्य दियो है। तातें देवता फल दीयो चाहें तो प्रभुकी आज्ञा लेंहें तहां। स्वतः सामर्थ्य देवतामें नाही है। तैसें श्रीकृष्ण नाहीं हैं। आपुही सर्वसामर्थ्ययुक्त हैं। सो श्रीगुसांईजी विद्वन्मंडन में कहे हैं। कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुं समर्थ ईश्वर सामर्थ्यं प्रत्यक्षं प्रत्यक्षत्वात् प्रत्यक्षेणैवत्यं संशयः इति वचनात्। या भांति कर्तुं अकर्तुं अन्यथा कर्तुं प्रभु सर्वसमर्थ हैं ता तैंतो किंकर्तव्य कछु अपने को चिंता नाहीं करनी है प्रभु आपुही तें सब करेंगे प्रभु सर्वसामर्थ्ययुक्त हैं। ऐसें श्रीआचार्यजी कहत हैं। श्लोक ॥ निवृत्तेयत्प निश्चयः सर्वतो या चकरणानि विधिः। यदि जीवस्वभावेन निवेदनं स्वतः। साधैर्य। ॥ और श्रीकृष्ण निश्चय है ताके निवेदनतें हैं। अपने स्वकीयको अनिष्ट निश्चय ही करेगो काहेतें करनो निधिले। तहां कोई पूर्वपक्ष करे जो भगवान तो समदर्शी हैं सब प्राणीमात्र पर सादृशी दृष्टि हैं भगवान विश्वंभर सर्वको भरनपोषण करत हैं। सो तुम कहत हो अपने स्वकीय पर वहुत कृपा करेंगे सो और पर न करेंगे। या भांति कोई संदेह करे तहां कहत हैं। जो संसारजनको प्रभु आनंददान नाही हैं। तासों भक्तनको अधिक आनंददान करत हैं। सो निरोधलक्षणमें श्रीआचार्यजी

रिलय० ९२—

सहा प्रभुक्त है सर्वानंद मयस्यापि कृपाने
सर्वे वो आनंद रातो हैं छपानंद सुख भये हैं
तन ही में है सो श्री भागवत में नन्द सखे
दुर्वासा प्रति कहे हैं श्लोक ॥ अहं भक्त परा
धीनो ह्यस्वतंत्र इव द्विज। साधुभिर्ग्रस्त हृदयो भक्तैर्भक्त
इति वचनात् भगवान भक्तन के वस है
नाहीं भक्तन के अर्थ अवतार प्रभु लेत हैं
स्वकीयको अनिष्ट वे गिही दूरि करेंगे कस
यह जीव को स्वभाव है जो ऐसे दुःख क्लेश में
ही रहता चिंतातुर होत है तो यह स्वभाव निव
वे नहीं एक प्रभु ही समर्थ हैं और दूसरो को इन
७ बेद श्री ईश्वर नहीं है सो अनिष्ट मेव सर्व
को दूरि करतो हि इष्टानिष्ट विवेको हि जीव बु
जो यन्तो हृदयान्तः भगवदनिष्ट को प्रभु
है कहे है प्रभु सर्वज्ञ हैं दूरि करिवे में वलवत हैं
आपु ही दूरि करेंगे जैसे प्रह्लाद जी को हराक्कुस
ने दुःख दीयो तो ही पिरि प्रथम नाहीं जानत
ते परंतु सब की परीक्षा लेनी थी प्रभु प्रथम नाहीं
है जब प्रह्लाद जी को बहुत दुःख दे वेही हिरण्यकश्यप
दीयो और प्रह्लाद को भगवद् आश्रय छूटे नाहीं
तब प्रभु प्रगट होय अनिष्ट दूरि कीयो हिरण्यकश्यप
नखों सों मारि के और प्रभु भगवद् आश्रय भक्तन को
दूरि करेंगे परंतु जीव बुद्धि तें इष्टानिष्ट को विवेक जा
न्यो नाहीं जात है सो मैं भगवद् भक्त होय के अन्याश्रय
करत हैं लोकिक वैदिक चिंता करत हैं भगवान तो जो
करत हैं सो भली ही करत हैं मेरे भाग्य तो बहुत हैं सो
प्रभु थोरे ही में निवेरेंगे सो पर प्रभु व्यग्र की

ायहइंडभयो।।याभांतिधीरजनीवबुद्धितेनाहीरहतहैं।तातें
दुखपावतहैं।।अबऔरहूकहतहैं।।श्लोक।।इन्द्रियाग्र
हीतानांमनूनांभ्रमसंभवात।अतएवाहिसंसारंमन्यंते
सुरूपीणां।।तेथाकोलश्रेयचवजीवप्रभुकेस्वरूपकोजा
निकेंमेंसामर्थनाहीहै।काहेतें।अविद्यारूपभ्रममेंचारसें
रीकरतनेहीहै।ताभ्रमकोजीवपारिनाहीसकत।यद्यपिस
वेजानतहैं।जोकामायाकप्रभुसोंइहसंबंधीपदार्थअवस्था
नेन्यारोहै।तामायाकरिकें।कालकाहूकोछूड्यानाहीयह
ज्ञानहूमनमेंआवतहै।परंतुनकूअहंताममताजीवकी
नाहीछूटतहैं।कामक्रोधमदमत्सरछूटता।लौकिकदुखसुख
परीचिंताग्रसितरहतहैं।तातेंसंसारकोसुखरूपहैसबै
धीजोसुरूपकैनाहीकेंसुखरूपमानिरह्यौहै।तनकूअ
संसारतेंछूड़ावेहीगो।।सोकोनप्रकारसों।आगेलोकवु
मेंकहतहैं।टीका।श्लोक।।वासनाइकरग्रामसमाक्रौडं
चिंत।यितेवसत्तकिंधस्तत्रिवनंयतवलानाम।।१८
सोग्रंथ।।जद्यपिजीवसंसारकोसुखरूपमानिरह्यौ
नहाप्रभुअपनेभक्तजनकोयाभांतिछुड़ावत
द्रव्यमेंमनहोयतौद्रव्यकोनासप्रभुकरें।जोकहूं
नहोयतौस्त्रीकोनासकरें।जोपुत्रमेंमनरहेंतौ
कोनासकरें।।याभांतिभक्तकोमनजहांलौकिकमें
जोसोप्रभुदूरिकरतहैं।जबपरंतुजीवस्वभावतें
भांतिकेंदुखपावतहैं।।परंतुप्रभुदूरिकरतनाहींहैं
किकहतहैं।जेसंधारतानेवाकेंहै।यह
नवकेंलीलासपकोएकविवेकोदीरतहैं
जानतजोयहकालकेकाटेगो।।

परंतु प्रभु को स्नेह भक्त पर हैं कृपा करि संसार तें छोडावनो
है ॥ तातें संसार सुख में लागत नाहीं हित ॥ ९ ॥ अब और दृ
कहत हैं ॥ श्लो ॥ यथा कूर्दे तितिवालस्य माता संसारि
ण तथा ॥ त्रैनरक्षव हि सर्वेश ~~रक्षमज~~ रमोचक ॥ १ ॥ या
को अर्थ ॥ पिता स्नेह करि सपेतें निवर्त करत हैं ॥ तब बा
लक कश्य रोवन करि रुदन करत हैं जो मेरो खिलोना लेन
नाहीं देत ॥ तैसें ही यह संसारी जीव पर प्रभु अपनी परम
कृपा करी संसार मन हैं ता हीं वस्तु को हरि लेत हैं तब
यह मन में चाहें ताम्र मतो करि दुख पावत है प्रभु को गु
ण अवज्ञा न करि कै नाहीं मानत ॥ जो प्रभु कृपा करी संसा
र तें छुडायो और प्रभु तो सर्वेश्वर हैं ॥ श्री हरि स्व अपने भक्त को
अवगत जानि संसार सो चन करत हैं जैसें पुराणन में
कथा हैं जो नारद जी को मन ब्याह करिवे को भयो सो र
राजा की बेटी को स्वयंवर हतो ॥ तहां सगरे देस देस के
राजा आये सो नारद के मन में भयो जो मैं वहां तब नार
द विचारयो जो राजा की बेटी जा पर प्रसन्न होय माल
पहरावे ता सों व्याह होइगो ॥ सो या समय तो सुंदर रूप
चहिये ॥ जो राजा की बेटी रीझै ॥ तातें सबतें सुंदर भग
वान हैं ॥ उनको रूप लाऊं ॥ तब नारद जी भगवान पास आ
ये ॥ प्रभु बहुत सन्माधान करी ॥ पूछे जो नारद जी कहो
कौन से तुम आए हो ॥ मेरो भलो होय सो करियो ॥ अपनो रू
प देहु ॥ तो राजा की बेटी ब्याहि लाऊं ॥ तब प्रभु मुसिकाय
के कह्यो ॥ जो तुम्हारो भलो होइगो सो मैं करूंगो ॥ तुम
जाऊ मैं दीयो ॥ तब नारद तो माया के भ्रम तें प्रभु के वि
चवन समुझत नाहीं ॥ तहां स्वयंवर में नारद गये
सो श्री ठाकुर जी ने मर्कट को बहुत बुरो टेढो मुख
दियो ॥ और नारद जी जाने जो भगवान को रूप पायो
सो बारंबार नहात हैं कन्या जाय ता सन्मुख आय वै

है सगरे लोग हसे जो कहूं देखो मुख को दिखायो सो नार
दजी तो न नारी का भ्रम वसत पाछे प्रभु राजा को रूप क
रि श्रीसकन्या ने माला पहराई तब प्रभु ले गए तब ना
रद निरास भए तब काहू ने कही नारदजी अपनो मुख
तो देखो सो नारदजी दर्पन में मुख देख्यो सो बानर को
देखो तब बहुत क्रोध भगवान पर कीयो जो मेरी है
सी जगत में कराई पाछे प्रभु समझायो तब ज्ञान नार
जी को भयो अथ नारदजी तपस्या करत हते सो काम
देव तपस्या में भंग करिवे को सहाय सहित गयो सो
नारदजी को मोहन भयो कामदेव हार मानि के फिर ग
यो सो अभिमान प्रभु नारद को या भांति दूरि कीयो
या भांति प्रभु अपने भक्तन कूं संसार ते न्यारो करि
छुडावत है ऐसे श्री हरि है ।। अब और हू कहत
हे स्लोक ।। इत्येव दृश्यते नाम नथाविध मितः अभ
: संसार वैरी धरनी पतिरो यत्र रूपयतु ॥१॥ या का
अर्थ ऐसे कहत है जो प्रभु को रूप है सो संसार छुडाव
त है ब्रजभक्त श्री कृष्णचंद्र को लालित त्रिभंग स्व
रूप देखि ले जब तें धन पति पुत्र घर सब मन ते मन छांडि
के प्रभु को भजे ऐसो रूप है और नाम करिके अनाम
व्याधि अनेक भक्तन को संसार छुटे है और विधि जो
प्रभु की सेवा करत है तिनह के सब संसार दूरि होय
है तथा प्रभु ली ला अनेक विधि की करत है ताको
जो कोउ स्मरण करे तिन हू कूं सकल संसार दुःख
दूरि जाय और स्मृति श्रीकृष्ण कूं मन हू में यह कहत
है जो भक्तन को संसार जाय मेरपास आवे भक्तको
भलो होय यही प्रभु विचारत है तातें धरनी सब संबं
ध संहरनी जो पृथ्वी पति रो प जो भगवान को नाम दः
है है

५॰ रीहैं तहां संसार भक्तनको होय तहां आप सब छांडिकें
श्रीकृष्णको स्वरूप नाम लीला आदिक मनकरि भक्तको
संसार दूरि करि भलो होय सो ई करत हैं ॥ १२ ॥ अब श्री
रहस्य कहत हैं ॥ श्लो ॥ मन्यरमहेवय आनाः स्थलवि
सातिकारणं संसारसुत स्थल लेतकयस्थापयश्री
॥ १३ ॥ या ॥ श्लो ॥ अर्थ ॥ यह जीवके हृदयमें अनेक जन्मको
भ्रम है सो गयसतो कासें समर्पणमें कहे हैं जो अन
न्त कालको भ्रम यह जीवके हृदयमें आयरहो है तातें
ते अविद्या करिकें श्रीकृष्णको भूलिगयो है तातें
यह संसारको कामजानि यामें मनको लगायो है
संसारमें देह संबंधी सुख दुःखको उत्तम मानत है सो
श्रीकृष्ण संसारको संबंध राखत है ते हाहे तहां स
पर्श होय तहां अविद्याको न भांति है तैसें संसा
र अविद्या रूप तमके सूर्यरूप प्रभु संसार भक्त
नको कैसें राखत हैं ते जीव तो संसार संबंधी सुख विचा
रत हैं जो अब यह कार्य करूं तामें मेरे देह संबंधीकूं
दुःख पावें और मैं सुख पाऊं और प्रभु यह विचारत
हैं जो अब यामें याको मन है सो हरि लेउं तो याके मन
छूटिकें मेरो आश्रय करे या भांति श्रीकृष्ण भक्तनको सं
सार हरत हैं ॥ १३ ॥ अब और हू कहत हैं ॥ श्लो ॥ एवं त्वदीये
मनसि निधेयः स्वप्रभोर्गुणः स्वस्मिन्नपि विनिश्चया
त्प्रभोरंगीकृतं निधाय ॥ १४ ॥ या ॥ श्लो ॥ अर्थ ॥ या भांति तदीय
जो पुष्टिमार्गीय भगवदीय हैं सो अपने मनमें प्रभु
के गुण धरें सो ऊपरते दिखाइबेके लीएं जो प्रभुके गु
ण धरे सो ऊपरते दिखाइबेके लीए जो प्रभु करत हैं
सो भली करत हैं और भीतरते मन करि दुःख पावें ऐ
सें न करें अपने मनमें निश्चय यह धारणा करें जो अ
पने श्री अंगीकृत भक्तनके प्रभु रक्षक ही हैं वह आश्रयो

दुखआयें तो अपने स्वकीय को दंड प्रभु देत है जैसे स्त्री क
छु मर्यादाते और भांति चलै तो पति दंड देहै रीति सों च
लावै तिसें ही प्रभु अपने भक्तन के दोष देंं तिन के हरि
करिवे में अर्थ दंड देत हैं ॥ सो श्रीगुसांईजी विज्ञप्तमें कहे
हैं श्लोक ॥ दंड्यत्वकीयतामत्वेत्यवे चैह मेवना ॥ स्वसा
मुखीयतां मत्वा यत्र कुत्र पराकरा ॥ इति वचनात् अ
पने सुखीय को प्रभु दंड दीयो ॥ सो अनुग्रह हम जानि म
नमें सुखी हैं ताते जहां जहां हम ते अपराध परे तहां तहां
सुख न हम को दंड दे नोउ चित हैं या बात में हम मनमें सु
खी हैं या भांति भाव राय अपने प्रभु को अनुग्रह जाने
ग्रह दुख है अनुग्रह रूप जानि प्रभु के गुण अपने हृदय
में धरे का है ते प्रभु पर दोष धरत हैं ॥ सो वह मुख है जन
को पुष्टिमार्ग में अंगीकार नाही है ॥ ताते निश्चय मन
वचन काय करि यह जाने तो श्री ठाकुरजी अंगीकृत
निज भक्तन को रक्षक हैं ॥ १ ॥ अथ अवश्योरहु वह नहीं लो
के अनन्यास्मदाचार्यैः केवलं लक्षणं लोकसा
धनं तथा देहे ह ॥ सु न कर्माणि ॥ २ ॥ पुत्र या के अर्थ अ
व रूप कहे जो भक्त के रक्षक प्रभु है सो दुःख ऐसो देत है
जो भांति भक्त सुखी यह लोक परलोक में पावे सो
कैसे नाही करत या भांति कों इतने ही कहत हैं
नो यह जीव स्वभाव करि दुष्ट है जो लौकिक कार्य में
सुख पावे तो तन हीं ईमन की आसक्ति लगि जाय जो
वैदिक कार्य में सुख पावे तो तन ही आसक्त होय जाय फे
र यतें प्रभु को आश्रय जात रहे तो भक्ति को नाश
होय ॥ ताते श्री ठाकुरजी लौकिक वैदिक कार्य की सि
द्धि नाहीं ॥ तब दुःख पाय के उह कार्य में मन न दे
कर केवल प्रभु ही को आश्रय करे ॥ सो श्री आचार्य
महाप्रभु आरोवसन के लक्षण श्री सुबोधनी जी

सि.प. निबंधमेंकहेहैं जोकोईजीवहोउ ब्राह्मण
४५ गृहस्थी आदिप्रभुकीसरनआवें ताकोप्रभु
हैंतेछुडायअंगीकारकरतहैं औरश्रीनवरत्न
हमारेआचार्यजोश्रीवल्लभाचार्यजी वर्णनक
जोलोकवेदमेंस्थितिप्रभुभक्तनकोनकरेसं
रनेछोडायकेअपनोदासयहविचारिकेहरिको
आश्रयकरनो यहसिद्धांतसर्वोपर १५ इति श्री
ह. सिद्धांतपत्रनोटीका श्री पे
ई चक्रपरसिद्धांतपत्रमेंकहेहैंजोलौकिकवैदिकप्र
नासिद्धकरेंतोप्रभुकोगुणहीमनमेंधरेंजोप्रभुभ
करतहैं सोयहधीरजकबहोय तबभगवदीयकोसं
गकरिभगवत्स्मरणभजनकरे सोप्रकारआगेसि
द्धांतपत्रमेंकहतहैंश्लोक सदाश्रीगोकुलाधीशःस्म
नेयःसर्वथाजनैः तदीयैर्मिलितैः सर्वदोषचिंतावि
वर्जितैः १ याकोअर्थ पुष्टिमार्गीयभक्तजोजनहैंति
नकोसर्वथायहीधर्महै जोसदाश्रीगोकुलाधीशको
स्मरणकरें अबश्रीठाकुरजीकेअनेकनामहैं तामें
श्रीगोकुलाधीशकोस्मरणक्योंकहे सोयातेंजोगो
नोगायंतिनकेकुलकेरक्षक यहकहियहजनायोजो
निःसाधनअबलाजनगायजो निःसाधनहैं तिनके
प्रभुरक्षकहैं तैसेहीजीवजन निःसाधनहोय गोकु
लाधीशकोस्मरणभजनकरें तबप्रभुदयालहैं
सोयहप्रभुग्रहणकरेंहिंगे सोनिःसाधनभावसोंभजन
स्मरणकरवे तबतदीयभगवदीयमिलेतबहृदय
मेंअनेकप्रकारकेदोषहैं काम क्रोध मद मत्सर तालौ
किवैदिकचिंतादूरिहोय विनाभगवदीयके
संगकेनाहींभगवद्धर्मकरेपरंतुमनतेंदोषचिंता
दूरिनजाय जैसेरासपंचाध्यायीमेंसबभक्तनकौमद

भयो। तहां एक मुख्य भक्तकों मद भयो। तब श्री ठाकुर
जी एक भक्तको ले पधारे। तब सगरे भक्तनकों अपने मद
की खबरि नाहीं प्रभु परदोषबुद्धि भई जो हम मदकों छोड
गये या भांति सगरे भक्त प्रभुकों खोजिवेकों चले पा
छें एक भक्तको हू मद भयो। तब प्रभु वहांते अंतर्ध्यान
भये पाछें ढूंढत ढूंढत सब भक्त तहां आय पहुंचे जो तु
म्हारेकों श्रीठाकुरजी छोड गये। तब उनकों अपने दोष
को ज्ञान हतो सो कहा जो मैं मद कीयो। ताकरि प्रभु अं
तर्ध्यान भये यह सुनत ही उनके संगतें सगरे भक्तनकों
ज्ञान भयो अपनो दोष पुरो जो हम हूकों मद भयो तातें
प्रभु छोडि गये या भांति श्रीआचार्यजी श्रीसुबोधनीजी
में निरूपण कीये हैं तातें भगवदीयके संग बिना दोष नि
ताकों नास न होय। तातें भगवदीयसों मिलिवेकों स्मरण
प्रभुको करें सो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने ग्रंथ में क
हे हैं निरुद्ध नेतु स्मर्तव्यः सर्वेषां नान्यौ इति वचनात
भगवदीयके संगतें सर्व दोष चिंताको नास होय प्रभु
वेगि ही कृपा करें यह सिद्धांत मन में जानें। अब के ओर ह
वे कहत हैं। लौकिकन लौकिक मति कायो भगवद्भाव
बाधिका। लौकिक वैदिक चापि स्वयं साधन चिंता प्रभु
रयाकाश्रय। लौकिक बुद्धि अलौकिक पदार्थ नक
रनो भगवद्भाव में बाधक है प्रभु की लीला में श्री वल्ल
भकुल में भगवदीयन में सेवा सो मर्यादा जुगल श्री यमुनाजी
श्रीगिरिराज आदि वस्तुन ता भाव देवाला ग्रंथ कीयो
न श्रीभागवत रूपादिक में लौकिक मति न करनी।
सगरी प्रभु संबंधी जानि भय संयुक्त सेवा स्मरण करे
लौकिक बुद्धि आदि नो अलौकिक भाव के मैं बाधक
है या और लौकिक वैदिक कार्य की चिंता मन में न
रखे।

वैदिक प्रभु आपुही पवैंको लिये हो और वल्ल
लौकिक वैदिक कार्य के अपने भगवदीय से
नताव्रत है जो तुम लोग कावेद की चिंता मति करौ
तुमारे अर्थ करत हैं तुम सुखेन प्रभु की सेवास्म
करौ तातें प्रभु तो लौकिक आपुही ने सिद्ध करेगो
और सब करत हैं ॥ श्लो॰ ॥ इत्थंनी मीदृशः काल
नि वृत्ते समागमे ॥ यथा कथंचित्त्रि [illegible] मनस्थापन
योपद्राजयो ॥ ३ ॥ याको अ॰ ॥ श्रीवल्लभ हरिरायजी कह
तहैं या कलिकाल में जो मिलत है सो प्राणि कृत मिलत हैं के
हैं ने भगवदीय को संग तो दुर्लभ है सो तो वे मिला ही
लन हैं और जो मिलत हैं सो लौकिक की कामना औ
हि स्वार्थ लीये मिलत नहीं आपने भले लोग संग भलौ
क्रियाहीन हैं भी न रहि अनेक प्रकार की लौकिक वा
नौ सनाभरी हैं तिनके संग ते फल सिद्धि न होय औसो
संग यह कलि में मिलत है तातें यथा कथंचि जितने
द्रमें लगावे प्रभु में प्रीति बढी वे के नीर बहुत लोगन
सो मिलै तामें और भगवद्धर्म घटै सो न करें जितनो
हैं तितनेही वीरता करि प्रभु के चरणारविंद में मनको
स्थापै ॥ या श्रीवच्चो रहि कहत हैं ॥ श्लो॰ ॥ सेवया वम
न स्थाप्य न साधकं नैयवहि गार्हस्थ्य स्थापितं वाहे पि
प्रयत्नः त्रियतो दुर्न ॥ ४ ॥ याको अ॰ ॥ श्री ठाकुरजी
की सेवा आदि भगवद्धर्म में मनको स्थापन करै
और भगवद्धर्म में अपने मन को स्थापन करै औ
भगवद् सेवा के सगरे वस्तु को संग्रह जाने जो वस्तु
कुमन आवे अथवा बाधक होय ताको राखे जो सेवा
में यह गृहस्थाश्रम है भगवद् सेवार्थ ही जाने और

विवाहादिक कों प्रयत्न भगवत्सेवार्थ ही करें सो काहेते
जो ग्रहस्थाश्रम विना भगवत्सेवा भली भांति सों न होय
सो तातें सेवनार्थ ही करें सो नवमस्कंध श्रीभागवत भगर्वा में
न दुर्वासा प्रति कहे हैं श्लोक ॥ मत्सेवया प्रतीतं च सालो
क्यादि चतुष्टयं नेच्छंति सेवया पूर्णाः कुतोन्यत्कालविद्रुतं
॥ इति वचनात् ॥ जो भक्त श्रीभगवत्सेवा सों प्रतीत हैं ते
चतुष्टमुक्ति है जे तिनको नाहीं चाहत है ऐसे सेवा क
रिके पूर्ण हैं तिनकों कालकृत बाधक करेगो या भां
ति भगवत्सेवार्थ ग्रहस्थाश्रम विवाहादिक कार्य स
ब करें ॥ त्यागें अब और हू कहत हैं श्लोक ॥ न सर्वे त्याग
सो भोगो लक्ष्मीयानां कश्चिन्मनः तथापि विदेवे योगो नि
वार्यः सर्वेव हि ॥ भाषा याकौ अर्थ ॥ लक्ष्मीयत्न हैं सो अ
पने भोग के लिये स्त्री को न जाने भगवत्सेवार्थ जाने
तथा भोग करैं सो काम की निवृत्ति के अर्थ तथा फेर भगवद
भक्त होय यह कामना करि वियकरि या भांति संगरी है
श्री यथ भगवत्सेवा में लगावें ॥ प्रभु आगें अब और हूं क
हत हैं श्लोक ॥ भावो त्र साधनं मार्गे प्रमेयं भगवान् हि
सः ॥ प्रमाणं च स्वसेवा हि सैव च फलं पुनः ॥ १ ॥ याको
अर्थ यह पुष्टिमार्ग में संगरी सेवा की रीति है सो साधन
रूप दीसत है परंतु संगरी भावरूप है काहेते याको कारन
कहा जो फलरूप है साधनरूप दीसे तो तहां कारन है जो
फल तो प्रभु अपने प्रमेय बल ही राखे जे वचादि गत
वरे हैं ॥ यह निश्चय नाहीं जो इतने दिन में फल होय
और जीवस्वभाव करि फल की मन में वांछा रहत है तातें
सेवा साधनरूप दीसत है ॥ जो सेवा ही को फलरूप जानत
है ताको फलरूप है ॥ तातें श्रीकृष्ण की सेवा है सो प्रमान
रूप जाने फलरूप जाने ॥ प्रमाणं जे कोई जानि हू रूप से
वा करत हैं तिनको साधनरूप भगवत्से

नायरूपयहजानतहैं जोहमैंतौप्रभुसेवारीरहैं सोप्रभु
प्रमेयबलतेहीरहै मेरोमेरहाथोगपनाहैं याभांतिश्रमे
यफलरूपजानिकेभगवत्सेवाकरतहैं तिनकोफलरू
पहै जाभगतकेहृदयमेंजैसोभाव है तिनकोतैसीप्राप्ति
हैइ याश्लोकश्रीआगेकहतहैं श्लो॥ ॥ तस्मात्सर्व
मंरक्षेनिधिरूपस्तुसर्वथा ॥ रानछिद्र तत्सर्वेज्ञात्वाशालो
निवेदयेत् ७ या॥श्लो॥ याभांतिअपनेभावकीरक्षा
सर्वथाश्रीरतिकरि प्रभुकेस्वरूपकीरक्षासर्वथारतिकरिको
हैतेऊपरबड़ीआर्तिहै जोकालकठिनहै रंचदुःखा
होइतोअपनेप्रभुमेंतेवाछुलताछूटिजाय तथाभग
वत्सेवातेदूसरेसाधनमेंमनलागैतो सेवामेंशिथि
लताहोयजाय तातेंअपनेभावकोनिधिरूपजानिलौ
किकवैदिककार्यअनेकदुःसंगातेरक्षाकरिलेहि सो
रक्षाकौनप्रकारकरें सोआगेकहतहैं जोभगवत्सेवा
मेंस्त्रीप्रतिबंधकरेतोवाहूकोत्यागकरिये स्त्रीकोभा
वनगिनिये त्यागहीकरिये औरजोभगवत्सेवामें
मातापिताप्रतिबंधकरै याभांतिदेहसंबंधी तथादेस
मेंराजादिककोप्रतिबंधहोय सोज्ञानकरिविचारिवि
चारिछोडे एकबारनछूटे तोक्रमक्रमसोंसबछोडेअ
पनेभावकीरक्षाकरिलेहि औरपुष्टिमार्गकीसेवास
र्वोपरजोनिःसाधनकोभावनिधिरूपजानिगोप्यराखे
याभांतिरहें ताकोश्रीमहाप्रभुजीकीकृपातेवेगिअ
नुभवहोय ७ इ श्री रि इ कृ स म ला
तं को का श्री पे र ह सं गां ७ अब
कृपाकहेताप्रकारकरिभगवत्सेवाकरिभावसहि
तकरें परंतुमनमेंदृढविश्वासराखे सोतोसर्वसिद्धि
होय सोअबआगेकहतहैं श्लो॥ ऐहिकेपारलौ
केच सर्वसामर्थ्यसंयुक्त सर्वगोकुलाधीशचिंत

यः सदा हृदि स्थाप्यो ॥ अब श्रीहरिरायजी कहत हैं जो
गोकुलाधीशकों अपने हृदय में सदा चिंतन करें । ओर सेवा
करें तामें यह चिंता बाधक है । एक तो यह जो कि न कार्य
मेरो कैसें सिद्ध होइगो । ओर मेरो लौकिक कौन भांति सों
सिद्ध होइगो । मैं तो भगवत्सेवा परत हों लौकिक में निर्वा
ह कैसे होइगो । ओर मेरो अलौकिक परलोक कैसें सुधरे
गो । यह दोय चिंता है ताको त्याग करें । यह स्तान मन में रा
खें । जो प्रभु सर्वसिद्धि करिवे में सामर्थ्ययुक्त हैं । प्रभु लौ
किक हू सिद्ध करेंगे । काहेतें श्रीगोकुलाधीश हैं सो सर्वसा
मर्थ्यवान हें । यह विश्वास दृढ मन में करि सुमरन करें ॥
स्मरणं सपूर्वक करें ॥ आगें अब श्लोक कहत हैं । लौ
का विश्वास सततं कर्तव्यो भक्तैरेव विधास्यति । स्वरीय
देव तत्रापि दोषस्य स्फूर्तीयनो भवेत् ॥ ४ ॥ याको अर्थ ॥ अब क
हत हैं जो दृढ विश्वास मन में राखे । यह मुख्य विश्वास
ही भाव है । काहेतें विश्वास दृढ होय तो भगवद्धर्म थो
रह्ये बनि आवे तो वाको कल्याण होय । ओर लोगन
को देखादेखी भगवद्धर्म बहुत करें । मन में विश्वा
न होय तो सो धर्म में फल सिद्धि नाहीं है । सो श्री आचा
र्यजी महाप्रभु विवेकधैर्याश्रय ग्रंथ में कहे हैं । अब स्ता
चातको भाव्यो प्रार्थनस्येतितिक्षया । जब हनुमानजी
सीताजी की सुधि लेनको लंका में गये हैं तब रावनके
पाउजारि अनेक राक्षसनको मारे तब इंद्रजीतको
रावनने पठायो सो इंद्रजीतने ब्रह्मास्त्र चलायो प
लैतो इंद्रजीतने बोहोत उपाय कीयो परंतु हनुमा
नजी पकरे न जाय तब पाछें इंद्रजीतने ब्रह्मास्त्र बं
धके पकरि लीने कीनी । तब हनुमानजी ब्रह्मास्त्रके वचन
मान्य करनार्थ ब्रह्मास्त्र में बंध

एसो अबलवंत वानर कि तिनने कराहू सनको मोसो सोय
ब्रह्मास्त्र के तागा में के सें बांध्यो याभांति रावनको अवि
श्वास भयो तब ब्रह्मास्त्र के ऊपर लोहकी सांकर सों
बांध्यो तब ब्रह्मास्त्र आपुही छूटि गयो तब हनुमान
जी मोटे भरे सो तब सगरी सांकर टूटि गई सो टूटि के न्या
री जाय परी पाछें लंका सगरी जरायो अविश्वासतें ब्रह्मा
स्त्र नष्ट भयो और चातक है सो एक खग है तिनकूं एको वि
श्वास राखत है और जल ही पृथ्वी ऊपर नाहीं मानत
तो विश्वासतें घन जड है तोऊ वाको मनोरथ पूरन
करत है तातें सबको मुख्य विश्वास चाहिये को
हूं नेम विश्वास है सो आसुर धर्म है विश्वास है सो भागव
त धर्म है तातें दृढ विश्वास है सो जाके हृदय में होय ताकें
सर्व फल प्राप्ति होय कल्यान होय और अपने दोषकों
बार बार विचारि अपनपे को दोषरूप जाने दोषकी स्फु
र्त्ति करि मनमें दोषकी भावना करे काहेतें अपनो दो
ष है ताको विचारे तो मनमें दीनता आवे जो मैं महा
दोषवंत हों सो परमप्रभु केसें कृपा करेंगे याभांति दोष
की स्फुर्त्ति होय तो प्रभुकी परम कृपा अपने मनमें जानि
ये सो भगवदीय गाए हैं साधो हों पतितनको राजा हों
पतितनको नायक हों पतितनको ईस याभांति अप
ने कों सबनमें दोष जाने तब जानिये जो दोषकी स्फु
र्त्ति भई तब दैन्यता होय सो तब प्रभु कृपा करें २ आ
गे अब और हू कहत हैं श्लो [illegible] आर्ति फलं साधनं च दु
[illegible] सेगा [illegible] अतः सदानदात्तैवस्थीयतां तत्कृपायु
तै [illegible] आर्ति प्रभुके मिलिवेकी है सो साध
न है आर्ति समान कोई नाहीं और फल हू आर्ति है हृदय
में आर्ति होय तो भगवत्सेवा सुमरन सब होय और
प्रभु कृपा करें अनुभव करावें ता पाछें और दूसरी आर

ती होय। ज्यों ज्यों आर्ति बढें त्यों त्यों अधिक अनुभव आधि
क प्रभु कृपा करें ता तें आर्ति है सोई व्रजाधिपति के संगमके
रास्वे में कारण है। सदा विप्रयोग आर्ति करिके करत औ
र्तिरूप होइ जाइ तब प्रभु कृपा करें जैसें अग्नि के संबंध ते
नवनीत द्रवीभूत होय। सो निरोधलक्षण में श्री आ
चार्यजी महाप्रभु कहे हैं। जैसे रामानानुजनानंद हृदयाह
पायुक्त यदा सेवता। तदा सर्वसदानंदे हृदिस्थो निर्गतव
हिः स्त्रविक्लेषां संयुक्त प्रभुजी बके हे खातु बहुकृपायु
त होय। सो हृदय में ते बाहिर पधारें स्वसनन्दे हैं। ताते
आर्ति ही पुष्टिमार्ग में साधन है आर्ति ही फल है। गव
विप्रयोग में तद्रूप होइ जाय। तब प्रभु कृपा करें। आश्रा
गैश्रवक्रोरहकृ हत है। सो कालो न्याश्रय महानेव
बाधकाभी यतो तत्तः रहतो नेव सच्चेतो विमुखे वि
धास्यति। अथ याकौ अर्थ। आश्रवक पर कहे जो विप्रयो
गश्राधेस्वकरो आर्ति ही साधन फलतरा उहे तहोन्हे
न्याश्रय बाधक है। सगरी आर्ति कों हरि करो। सगरो
धर्म अन्याश्रय नोस्मक स्तहें। ताते अन्याश्रयते
सदा डरपत रहनों। सो ई रीति स्मृतोमें कहे हैं। स्लोक
नानादेवनमस्कारो नान्यदेवनिरीक्षणं। नान्यप्रसा
दमाहें न्तानं सयनन्ने वृजेनत्। शह इत्यादि स्मृतिवच
न विचारि अन्यदेवकों देखनें है नाहीं नमस्कारादि
प्रसाद कछु न लेइ और अन्यदेवको आश्रय करें ताप
वहमुख जानियें। अपने मनमें वाकों वे पारी न्यारा
हीकरें अपने भावकी रक्षा यें काहे ते। विमुखको ए
लक्षण है सबंध ते दुख बुद्धि उपजे। सो श्रीगुसांईजी वि
मुख्य कहे हैं। स्लोक। अहं कुरंगी दृगंगी सगीनागी
कृता श्रय अन्य संबंध गंधोप्या पीके धरामे बाधने
प्रवर्द भक्तौ अन्य संबंध यया मां तिवा

हमुख जीवकों संग छोडि अपने भावकी रक्षा करे यह
निश्चय सिद्धांत है भाग्यागे अब और हू कहत हैं स्नो
तदीयेषु सदा स्थेयं सद्भावेन च सर्वथा। तएव भक्तिमार्ग
स्य सहायत्वे निरूपिता। भाग्या० अर्थ भगवदीय के सं
ग रहे तो वह सुखता न होय। अन्याश्रय हू न होय सुद्
ध भाव है प्रभु में बढे। तदीय के संग सर्वथा सुद्ध भाव सों क
यह प्रभु मिलन के अर्थ करे। अरु और खटकु श्रीविट्ठलेश
कचार ज्ञानानरा ये कहे ते जो यह भक्तिमार्ग में सहाय ते
भक्ति बढे प्रभु कृपा करें। ताते तदीय को संग करे सो श्री
भागवत प्रथम स्कंध में सो न कवा क्षण तुल्याम लवेना
पि न स्वर्गं न पुनर्भवं। भगवत्संगि संगस्य मर्त्यानां किमुता
शिषः। भगवदीय को संग एक क्षण होइ ता सुख समा
न स्वर्ग अपवर्ग मोक्ष नाही है ऐसो सत्संग है और एका
दश स्कंध में श्री भगवान उद्धव जी प्रति कहे है लोक
निरोधयति मां योगेन सांख्यं धर्म उद्धवः न स्वाध्याय त
पस्त्यागो नेष्टापूर्तं न दक्षिणा। व्रतानि यज्ञश्छंदांसि ती
र्थानि नियमा यमाः। यथावरुंधे सत्संगः सर्वसंगापहो
हि मां। सत्संगेन हि दैतेया यातुधाना खगा मृगाः। गं
धर्वाप्सरसो नागाः सिद्धाश्चारण गुह्यकाः। याको अर्थ
श्री भगवान उद्धव जी प्रति कहे है जो मोको सत्संग वस
करत अरु नाही योग तथा सांख्य तथा धर्म तप त्याग
व्रत नियम यज्ञ तीर्थ इत्यादि मोको वस नाही करत
है और सत्संग के प्रभाव ते दैत्य राक्षस खग मृग गंध
र्व अपछरा नाग सिद्ध चारण मनुष्य को पहोचन रत्यो
नाते सुद्ध भाव सो भगवदीय को संग करे तो पुष्टिमार्ग
में भगवदीय को संग करे तो पुष्टिमार्ग में भगवदीय
के सहाय ते भक्ति बढे सो चौरासी वार्ता में प्रसिद्ध व
र्णन है यादवेन्द्रदास के आसीनो रत्नखंगते माधोरा

कों भक्ति भई। सो। अब और हू कहत हैं। श्लोक।। अ
भावेतु तदीयानां प्रसंगोपि सुदुर्लभः। अतोपि साधना
भावाद्धि सुखं तिष्ठति सन्ततः॥ टीका॥ अथ॥ अब श्री हरिरा
इजी कहत हैं। जो हमको तो तदीय भगवदीयको प्रसंग तो
म्हाइ दुर्लभ होन लगो है। भगवदीय नाहीं मिलत एक
तो यह दुःख है। और दूसरे चित्तकरि साधनसुमरण भा
वना कछु भगवद्धर्म नाहीं बनत है। तातें भगवदीयके
संगको अभाव है। और एक तो चित्त भगवद्धर्ममें नाहीं
लागत ताकरिकें हमकुं यह हृदयमें होत है। यह दोय उ
पाय हैं प्रसन्न करिवेको एक तो भगवदीयके संगतें प्र
भुमें मन लगे। तथा संग न होइ तो चित्त अपने स्वरूप भग
वत्लीलामें लगि रहे तो प्रभु कृपा करें। भगवदीयको
अभाव होय। और मनकरि साधनको अभाव होय
तहांऊ हम सुखता होइ सो हमको बनी है। अब कहत
हैं या भांति श्री हरिरायजी दैन्यता वरनत हैं। जीवनके अ
र्थ। आगें अब और हू कहत हैं। श्लोक।। ततो हि भग
वान् स्वकार्यार्थ विरहस्थं व्रजपालोपि चलितस्ते
न मेहं स्थितं मनः॥७॥ टीका॥ अथ॥ एक भगवदीय हमारे
पास हते। भगवान्दाससों अपने कार्यार्थ विरहस्थको
गयो। और श्री व्रजपालजी श्री गुसांईजी सोहू परदेसकु
गये सो ताकरिकें मनमें दुःखित है मेरो मन कैसेहू न मार
गो। और तउनको अपने पास राखि सके। तातें सबसों खिन्न
मनकरि बहुत दुःख पावत है॥७॥ आगें अब और हू
कहत हैं। श्लोक।। मयि यद्यपि नास्त्येव किंचित्कृपया प्र
भुरीक्षित तदपि स्वीय साधनाभावतो गतः॥ टीका॥ अ
भगवदीय मेरे पास न पधारे सो मैं जानत हों।। जो मेरे
स्नेह होतो तो तुमारो संग और भगवत्से घरहीमें
हैं सो काहेको छुटतो। काहेतें मेरे हृदयमें

परंतु तऊ राव का नुपालिकृ पा कोवल नहीं तो मो पर प्रसन्न हें सो मैं
जद्यपि समे हें नाही हो मेरे लौकिक वैदिक कार्य हु नाही
बनत ता तें गृहस्थाधर्म के कामना को अभाव है सो हुना
ही बनत सो अब मैं सब ओर तें निःसाधन हो आगें श्री
व ओर हु कहत हैं श्लो ॥ एतादृशेर्थे सर्वात्मना हरिस्सरण
मम: ऐहिक पारलौकिकेषु निश्चितानं तरावन ॥ यो याको
यु ॥ तासों निःसाधन जो मैं सो मेरे हरिस्सरण एक राहिम
न मैं विचार के हरिस्सरण ही गति मेरे हैं सो श्री आचा
र्यजी महाप्रभु विवेक धैर्याश्रय मैं कहत हैं जो मन मे रा
हिके आश्रय करे ऐहि लौकिक पारलौकिके च सर्वथा शरणं
हरिः यह लौकिक वैदिक न सिद्धि होइ आवे तो हरिस्सर
ण सर्वदा याकरि तांकरि सर्व सिद्धि होइगी ताते मैं हरिस्सरण
करि सर्व ओर तें निश्चिंत हों अब प्रभु करि लेहिंगे सो
श्री आचार्यजी महाप्रभु सर्व ओर तें श्रीकृष्णाश्रय ग्रंथ
मैं कहत हैं शरणस्थ समुद्धारं कृष्णं विज्ञापयाम्यहं जो स
रणस्थ भक्त हैं तिनको उद्धार प्रभु निश्चय करेंगे साधन
बिन अथवा नवे ॥ सो भगवद्गीता में कहत हैं भगवा
न नें ॥ सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ॥ अहं त्वा
सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥ इति वचनात् इत्या
दि वचन को अभाव जानि हरिस्सरण ही कीयो है ता
तें या लोक संबंधी कार्य तथा परलोक के ऊ ओर तें नि
श्चिंत हों ॥ टीका ॥ आगें अब ओर हु कहत हैं श्लो ॥ कृपाचि
क्षिन्नैवेत्यानुद्वागपो न च भवाद्दशा ॥ नदाकोवद
त्विन स्यापराद्धि पुनर्भवेत् ॥ १० ॥ याको अर्थ ॥ अब श्री
हरिरायजी कहत हैं जो हम तो भगवदीय के संग बिना
एको हु उपाय नाहीं है ओर जीवन को तो कदाचित् कबहु
भगवदीय मिलत हैं तब ऊनके भाग्य में भगवल्ली
ला भावरूप सेवा स्वरूप पुष्टिमार्ग के रस को अनुभव

भापमेंनाहीलिय्योहै।तातेंसत्संगमेंहूजीवनकोमन
हीनाहीलागतहै।कोहेतें।अवहीपुनरागमनबहु
तजन्मसंसारमेंलेनोहै।बहुतअंतरायहै।यहकहिकें
श्रीहरिरायजीयहजतायो।जोपहलेतोसत्संगभगवदी
यकोदुर्लभहै।तऊअबकेंभाग्यतेंसत्संगजोकदाचितमिल
तहै।तबजीवकोमनतनाहीलागत।तातेंजानियेंपूर्वसत्सं
गमेंनलग्यो।तातेंकोयहजानियें।अवहीयाजीवकेंभगव
मेंअनुभवनाहीलिय्योहै।अवहीयहजीवसंसारमें
बहुतभ्रमेगो।अनेकजन्मकोंअंतरायजाननों।१०
औआगेंअवश्रीरहुकहतहैं।श्लोक॥ क्रियाचिन्त्यमहा
चिन्तासमुद्राहृदिवर्तनो।स्थितेपिस्वीरसिप्राणना
थेचितेविभेदनः[illegible]याकोअर्थ।अबश्रीहरिरायजीक
हतहें।जोजीवकोस्वभावतथाजीवकीक्रियादेखिकेंमे
रेमनमेंचिंताबहुतहोतहै।सोमेंअपनेमनकीचिंता
कहांताईलिखों।चिंताकोसमुद्रमेरेहृदयमेंभर्योहै
यहकहिकेंयहजतायो।जोअपारचिंताहृदयमेंसमुद्र
तभरीहै।सोआगेंसेंकहांताईलिखों।सोचिंतादूरिक
रिवेकेलीयेंमेरोसामर्थ्यनाहीं।[illegible]मेरेमनकीहोतीतो
करतो।तातेंएकमानोंभरोसोहै।जोमेरेमाथेंप्रभु
प्राननाथविराजतहैं।श्रीआचार्यजीमहाप्रभुन
कीकृपातेंसोनाथमेरेचित्तकोंसांतिकरेंगे।यहबल
मोकोहै।तथाइसराचार्यचरणकहतहैं।चिंताकरिकेंमेरे
माथेंमेंप्राणआयरहेहैं।एसीचिंताहृदयमेंसमुद्रवतहै।त
हांश्रीठाकुरजीमेरेप्राणकेनाथहैं।सोप्राणकीरक्षाप्रभुक
रिवेकेंलीयेंमेंदुःखचिंताकोसमुद्रहृदयमेंरमण्योहै
सोअभहींसांतिकरेंगे।याभांतिश्रीहरिरायजीविप्रयो
गकोअनुभवकरतकरतअपनेहृदयमेंनमायतहै।
यगाते

प. २

अनुभव होइ सो अनुभव कौन प्रकार की है सो आगे श्री
हरिरायजी वर्णन करत हैं वे वक्ता स्वामिनीस्वरूप को अ
नुभव ११ [illegible]
[illegible] ८ अब
और हू कहत हैं जो ऊपर के पत्र में है न पत्रा करि निसाध
न होइ जो अनुभव कौन प्रकार होइ सो आगे कहत हैं
स्लो॰ [illegible] वस्था निजप्रभृतिस्य स्वरूपं द्रक्ष्यति: वह्व
इ स्विवनी तव कृत लावण्यानन [illegible] अब क
हत हैं जो श्री हरिरायजी को विप्रयोग अनुभव भयो है सो श्री
कृष्णजी के स्वरूप को अनुभव करि विरह करत हैं जो
श्रीकृष्ण हमारे [illegible] को वावहू स्पर्शन है होइगो मे
रमति पालि कहूं जो व्रजभक्तन के भाव भावित होइ अ
पनपो रहां न से ध्यान भूलि गयो है अपनो स्वरूप अ
लौकिक व्रजभक्त स्वामिनी रूप सो भाव हृदय में है अ
त्यंत विरह ते हमीनको भावना हृदय में राखें निके
स्यो तातें आपने पति कहे त्यां ब्रह्मसंबंध को सुम
न करि जो श्री आचार्यजी द्वारा ब्रह्मसंबंध भयो है तुल
सी चरणारविंद रूप स्वरूपी है यह भाव तें श्री ठाकुरजी
हमारे पति हैं सो श्रीकृष्ण के स्व हैं सो सिखावत न स्वपर्य
त व्रजभक्त अनुभव करत हैं तैसे ही श्री हरिरायजी अ
नुभव करि श्री वृंदावन में स्थिति स्वरूपतिनको वर्ण
न करत हैं सो कहा है जो व्रजभक्तन की भावना किसो
र स्वरूपा स्वामिनी हैं तातें श्री हरिरायजी हू स्वामिनी भाव भा
वित हैं तातें किसोर स्वरूप को वर्णन करत हैं श्रीकृष्ण
के सहू सो रक्तपल्लव के गुच्छा करि के नाम मुकुट सवारि
माथे पाधरे हैं ताको अभिप्राय यह है जो मुकुट को
श्रृंगार है सो स्वामिनीजी के रस [illegible] है तातें मुकु
ट धरे सो अब कहां न कव कहो सो वे तिहारे सनर

स्मदान करो। श्रौर नील कुंतल स्याम रासी श्रलकावली
मुखारविंद के ऊपर श्राय रही हैं। ऐसे श्री कृष्ण कुंवर हृदय सदन
रहुगो।२१। याको अर्थ श्रौर हू कहत हैं। स्लो०॥ भ्रूधनुःसे
धिरप कस्तूरी चित्रकं चित्तं। इंदीवर दलाद्‌घे विशाल
नयनद्वयं।२२। याको अर्थ। भ्रकुटी धनुष की नाईं तामें हारस
रूप कस्तूरी को तिलक तथा कपोलन में कमल पत्र
श्रौर धनुष बान लें हरसन हमारे मन को कवे मारें गश्रौ
र कमल के पत्र वत के नेत्र हैं ऊंचे अति विशाल ताकरि
हरसन हे हमारे ताप कब हरेंगे।२३। श्रागें श्रव श्रौर हू कह
तहैं। स्लो०॥ मौक्तिकाभरणालं विभ्रुन संसरसाधरं
श्रीरेखा कंठ विलसत् कंठाभरण भूषितं।२४। याको अर्थ
श्री वेसरि को मुक्ता तें वो परम सोभायमान उज्वल सोभा
श्रहण अधर रस रूप पर श्राय रह्यो है सो मानो स्वामि
नीजी को भाव निर्विकार अधरामृत रस को पान करत हैं
कंठ मोति न रेखा है। ताकरि सात्वक राजसी तामसी तीन
प्रकार के भक्तन की स्थिति है। अथवा त्रिलोकी मोहित हो
तहैं श्रौर श्री कंठ में कंठाभरण कंठसरी श्रादि सोहत हैं
ऐसे श्री कृष्ण जी कब हमको दरसन देहुगे।२५। श्रागे श्रव
श्रौर हू कहत हैं। स्लो०॥ प्रफुल्ल मल्ल युगल चिबुका
भरणा युतं। सो वर्णस्स मणि कुंडल भाल विराजि
तेषु सा कर्णं।२६। सो ऊ गंडस्थल प्रफुल्लित हैं। सो युग
ल गोल तामें वर्णन हैं। वर रूप कुंवरनो मद गोंड जैसें पंक
वे रसें कुचो चम्यो रे तैसें ऊहां प्रफुल्ल कपोल रस में स्वा
मिनी के रसा स्पर्श चुंवनादि ऐसे कपोल श्रौर चिबु
क भूषण। सो श्री चंद्रावली जी को भाव स्वामिनी
अधरामृत को अनुभव करत हैं। रस के आधिक्य तें
अधर तें श्रवे। सो श्री चंद्रावली जी अनुभव करें सो श्री म
धुराष्टक की टीका में वर्णन है। ऐसो चिबुक विराजत हैं

सोनेकेछोटेमनिकाकीमालासोकंठमेंविराजतहैंएसे
श्रीकृष्णजीकेवस्त्रसनदेहुंगो ४ आगेअवओरकहतहैं
श्री … रस्थूलजलसमस्वच्छवक्षवैयाश्रवाहुंरत्नेयुक्त
हितस्थूलमुक्तामालाचिनोहे … या … श्री … अस्थूल
… उज्वलवघनखावक्षलसतहैं सोप्रसिद्धितोयहस्त्र
थेहैं जो श्रीयसोदाजीबालककीरक्षार्थधराएहैंतथा
श्रीस्वामिनीजीकेनखक्षतऊपरभावसहितधरेहैंर
त्नकरियुहितनवरत्नयुक्तबडडीमालावेजयंतीमा
लानाकोकहतहैं सोसमस्तभक्तनकेभावसोविराज
तहैं औरबडेबडेमोतिनकीमालाउरपरविराज
तहैं एसेश्रीकृष्णकेवस्त्रसनदेहुंगो ५ आगेअवओ
रहूकहतहैं श्री … सुवर्णसूत्रश्रीसमतास्थूलमाला
तिसुंदरगुंजाफलमहन्मालालसत्कुसुमांतरैंया
… च्य … सोनेकीकृतिमनिकासीकाटीएसेदानेओ
रमणिकीखडीमालागुथीपरमसुंदरपहरेहैंगुंजाला
लखेतसुंदरगुथेतामेंचतुर्थस्वामिनीयूथपतिकेभा
वसोंपहरेहैं मोहनमालासोऊरजोघोटताईपहरेहै
एसेश्रीकृष्णवस्त्रसनदेहुंगो ६ आगेअवओरकहै
तहैं श्री … अनेकरत्नजटितकरकंकनभूषितबाहुम
… लसत्सोनिर्मितग्रथितांगद ७ या … श्र … अने
करत्नकरिजटितएसेकंकनदोऊहस्तमेंपहरेहैंश्री
रखेकभुजानमेंश्रंगदजो … सोनेकेविराजत
हैं एसेश्रीकृष्णवस्त्रसनदेहुंगो ७ आगेअवओर
हूकहतहैं श्री … अनेकपुष्पतुलसीवनमालाति
लाछिनैं विचित्रवर्णविलसत्कटिवासोविराज
ते ८ या … श्री … अनेकप्रकारकेपुष्पतुलसीवनमा
लाति … विचित्रसहितग्रथितएसीवनमाला
तवनमालाविराजतहैं यामेंसगरेव्रजभक्तनके

भावसों धरे हैं कटि वास काछनी पचरंग की अति वि
चित्र कटि पर विराजत है। प्रभु सहित चतुर्थ यूथपति
के भावसों ॥ ऐसे श्री कृष्णचंद्र स्वरूप नें हुगो ॥ यात्र्यागें अ
ब श्रोर रहे कहत हैं। सो॰॥ कटि भाव ज्ञापकानि किंकि
नीरवि सो भितं। पदद्वयगतस्वर्ण मणि नूपुर मंडितं
॥ याको अर्थ॥ कटि में किंकिनी के रवसो हुक्त है नार
वकरि जटित कनकौ नूपुर रमणिक सोभा
सौ सबचन्न रावत है। होय चरण कमल की चाल
परम सुंदर है तामें मणि जडि सुवर्ण के नूपुर सोहत
है ऐसे श्री कृष्णचंद्र स्वरूप नें हुगो ॥ आगें अब श्रो
र कहत हैं। सो॰॥ नखचंद्र प्रकासेक प्रकाशित नो
गत्रयं पीताम्बरात प्रियं चलद्वंद्व सुंदरा॥ १॥ या
को अर्थ॥ नखचंद्र के प्रकासकरि तीनों भक्तको प्र
कास करत हैं। तीनों भक्तसो आकास पाताल भूलो
क तीनो लोकमें भक्त जे है तिनके हृदयमें प्रका
स करत है और के हृदयमें नखचंद्र प्रकास नाही करत है सो
भक्त के से है एक श्री ठाकुरजी के चरणारविंद ही को आश्र
य कीये है तिनके हृदयमें नखचंद्र प्रकास करत हैं न
था यह ललित त्रिभंगी स्वरूप श्री वृंदावन में स्थित है
तिनके अनुभवे व्रजभक्त है। सो राजसी तामसी सा
त्वकी त्रिगुण भक्तके हृदय में एन नखचंद्र प्रकास करत है
और पीताम्बर ओढे है। सो व्रजभक्त स्वामिनी की उत्तरी
भावसों धारन कीए है सो उत्तरीय के दो अग्र चलनं द्वय
गं धवयाऽपि चलायमान है॥ २॥ आगें अब श्रोर रहे क
हत हैं। श्लो॰॥ मदघूर्णित सिरोभेदं चलन्मकर कुंडलं
तत्पीत नयनानंद नितांत रतिसप्रदा॥ ३॥ याको अर्थ॥
मस्तक के दोऊ ओर सुंदर श्रवणमें मकराकृत कुंडल
हैं सो सांख्य योगको स्वरूप है। ऐसे श्री कृष्ण तिनके करत

श्री.पु. हैं॥ताकरिकैव्रजभक्तनकेनैननकौपरमआनंददेतहैं
१३ रतिरसकोअनुभवभक्तनकौकरावतहैं॥१०॥याप्र
वेअपहूंकहतहैं॥श्लो॥का॥नितेवविनिर्वृत्वतीसानु
भवत्वोस्तुपां॥विहरंगविशेषण॥रासलीलापरायणं
॥१॥याकौअर्थ॥नितेवविनिजोव्रजभक्तनकेवृंदमेंप्र
भुविराजमानहैं॥सोभक्तनकौरसानुभवकराइवेमें
परमचंचलहैं॥सोयातेजोरासकातावछंदसमस्त
व्रजभक्तन्हेसंगविहारकरतहैं॥रासादिकलीलाकर
नमेंभक्तप्रभुपरमचतुरहैं॥११॥आगेस्वरूपकहत
हैं॥श्लो॥का॥त्रिभंगललितंवेणुकलितंभुजयोरपिवृं
दावनेकृपल्लितंवल्लितंस्वजनैःसह॥१२॥याकौअर्थ
याभांतित्रिभंगस्वरूपकास्तोकभुजानसोंवेणुना
दकरतहैं॥सोयहश्रीवृंदावनकेफलात्मकस्वरूपस
दा॥श्रीवृंदावनमेंविराजमानहैं॥अपनेस्वजनव्रजभक्त
नकरिकैवेष्टितहैंयाभांतिस्वरूपकोलीलासहितहैंप
शुभोकोप्रकटरसनहेतुगो॥१३॥आगेस्वरूपकह
तहैं॥श्लो॥का॥वादयन्मुरलिकांमोहयंतेमनःसतांज
गजडंप्रकुर्वंतंरोधयंतंनभश्चरान्॥१४॥याकौअर्थसुंद
रसमस्तसुरनकौमुरलिकाबजायकेसमस्तभक्तनकेम
नकौमोहतहैं॥पशुपक्षीचेतन्यहैं॥सोजडवनएकह
करसनकरिवेनुनादअमृतरसकोपानकरतहैं
औरवृक्षलादिपर्वतनदीजडहैं॥सोचैतन्यहोयमधुधा
रावहतहैं॥गायआदिपशुजोअन्नभक्षनकरतहैंनाहीं
१४॥आगेस्वरूपकहतहैं॥श्लो॥का॥पशूणांपतृणं
चैवमौनंसंपादनंतदा॥तरूणांमंतरानंदमधुधारेक
वर्षकं॥१५॥याकौअर्थ॥पशुपक्षीवेनुनादसुनिकेचंच
लताछोडिमौनहोयकेरसपानकरतहैं॥येआधिदैविक
श्रीवृंदावनकेमुनीहैं॥पुष्टिलीलासंबंधीरहतहैं

मधुकी धारा वरखत हैं ॥ सो अंतःकरण में भगवदीय के ज
व भगवत्स्वरूप को अनुभव थाय तब यानंद रसमें पुल
कावली देह में होय ॥ सो श्री वृंदावन के वृक्ष हैं सो प
रम भगवदीय हैं ॥ सो वे तुनां हारस अमृत को हृदय में
अनुभव करि कें अंतःकरण ते आनंद पाय मधुधारा
श्रवत हैं ॥ ५ ॥ आगें अब श्री हरि कहत हैं ॥ श्लोक ॥ हर
ते व्रजभूतापदस्यावनतस्तथा ॥ यमुनानीरपाते
क जलक्रीडाकृतिप्रियं ॥ ६ ॥ याको अर्थ ॥ या भांति रास
दिक लीला व्रजभूमि के तापको हरत हैं ॥ तथा व्रज के
भूत जो प्राणी सबके तापको हरत हैं ॥ अथवा व्रज में अपने
चरणारविंद स्थापन करि के गोरी गुल्म लता औषधी
आदि इनके तापको हरत हैं ॥ अथवा व्रज में सबके ऊपर
चरणचिन्ह स्थापन करि यह जतावत हैं जो कोई इ
नको आश्रय करैगो ॥ तिनको ताप दूरि होइगो ॥ ऐसे
श्री वृक्षमो कों वरदान देत हैं ॥ या भांति रास लीला
अनेक विधि सों भक्तन सहित श्रमजल भयो तब श्री
ठाकुरजी जाने जो यह भक्तन सहित श्रमजलयुत रस करि है
यो ॥ ताते विचारे जो यह रसके पात्र श्री यमुनाजी हैं यह जा
नि भक्तन सहित श्री यमुनाजी में पधारे सो अपनी प्रि
या स्वामिनीजी संयुक्त जल क्रीडा करन लागे या भांति
श्री यमुनाजी कों पात्र जानि सगरे रसदान की यों ज
ल क्रीडा करि श्रम को निवारन भयो ॥ ऐसे श्री वृक्षमो
कों वरदान देइ सो रहे ॥ आगें अब मोरहू कहत हैं
श्लोक ॥ रसात्मके रसात्मस्व भक्तस्य समत्वितं ॥ नि
जसुख संवेद्य माहात्म्यं लगलं ॥ ७ ॥ या ॥ अ
रसात्मके स्वात्म ऐसे रसात्मक व्रजभक्त तिनको करा
वत हैं ॥ लगण ताण में अधिक अधिक रसदान प्रभु कर
त हैं ॥ ताकरि भक्त को भाव बढ़त ॥ ये

प॰ धिकप्रगटहोतहैं ॥ ऐसेप्रभुरसदानकर्ता श्रीकृष्णकव
हरसमनहेतुगो ॥ २७ ॥ आगेअबओरहूकहतहैं ॥ श्लोक ॥
विरहाख्यायत्सर्वे निजलीलानुभावक ॥ साकारानंद
रूपेण व्रजभक्तहृदिस्थित ॥ २८ ॥ या॰ को॰ अ॰ ॥ ऐसेभावा
त्मकरसात्मक श्रीकृष्णसो केवलशुद्धविरहकरि नव
अपनीनिजलीलाकोअनुभवकरावे ॥ सोजोवसा
रेदिनरात्रि केवलविप्रयोगआर्त्तिकरिशुद्धहृदयहो
य ॥ तबहीनिजलीलाको अनुभवहोय ॥ सोनिजभक्त
स्वामिनीजीहैं तिनकैं विप्रयोगहै ॥ तिनहीकोंय
हानिजलीलाको अनुभवहै ॥ ऐसेभावात्मकश्री
कृष्णसो व्रजभक्तनकेहृदयमें साकारआनंदरूपस
वेलीलासंयुक्तविराजतहैं ॥ काहेतेंरसकोअनुभाव
हैजोपात्रविनारहैनाहीं ॥ सोरसात्मकसाकारआ
नंदरूपश्रीकृष्णतारसकेपात्रव्रजभक्तहैं तातेंव्रज
भक्तनकेहृदयमेंरात्रिदिवसस्थिररहतहैं ॥ २८ ॥ आगे
अबओरहूकहतहैं ॥ श्लो॰ ॥ एवंदिहृल्लासततस्था
पनीयानिजेहृदि ॥ सेवाभावेप्रेमभावेनपरागवि
निवृत्तके ॥ २९ ॥ या॰ को॰ अ॰ ॥ ऐसेश्रीकृष्णचंद्रकेदरस
नकीइच्छामनमेंजाकैहोइ ॥ सोनिरंतरअपनेहृदयमें
यहस्वरूपकोध्यानकरिस्थितिकरै ॥ तहांकोईकहैजो
तुमारेहृदयमेंतो ऐसेप्रभुस्थितहैं ध्यानकरितुमहृ
दयमेंस्थितिकीरहें ॥ याभांतिकोईकहै सोनहीं श्रीह
रिरायजीकहतहैं ॥ जोमेरेहृदयमेंप्रेमकोअभावहै
मेरेमेंप्रेमनाहीहै ॥ औरयहस्वरूपतोप्रेमकरिधार
नकरिबेहोय ॥ औररमाकोतो ऐसेश्रीकृष्णकेचरनक
मलकीरजजोपरागसोअत्यंतदुर्लभहै ॥ तामेंमतो
चरणकमलकीपरागाकरिकेरहतहै ॥ तहांकोईक
हैजोतुमारेमें प्रेमतोहीसत्तहै ॥ स्वरूपकोवर्णन

कीरिहैं प्रभुमेंआसक्तिहूहैं।भावहूहैं।प्रभुमेंयासक्तिहैं पुष्टिमा
र्गकीसगरीरीतिहैं।तापरमाणरूपलेनहैं।तुमकोंकहावा
धकहैं याभांतिकोईकहैं तहांकहतहैं श्लो०॥ननःसे
वानिराधिकागेहहैहिकवाधिका।आसक्तिःसेवमार्गे
स्मिनगृहस्थस्यबाधकारिका॥२०॥यादोश्लो० अर्थ श्रीह
रिरायजीकहतहैं जोहमकोंलौकिकआसक्तिहैं गृहदेहसंबंधी
सोयहभावरूपभावनमेंबाधकहैकाहेतें देहसंबंधीहरतो
मेंलौकिकमेंदिकअनेककार्यनाआसक्तिमनमेंरहतहै
सोबाधकहैं औरयहजेअपनेपुष्टिमार्गमेंआसक्तहैं सोप
रमधर्महैं।सोजाकीआसक्तिप्रभुमेंहै।सोगृहस्थगृहमेंके
मेंस्वास्थ्यरहेगो।गृहमेंस्वास्थ्यजाकोमनहै।सो यहपुष्टि
मार्गमेंकौनभांतिस्वास्थ्यरहेगो।यहकहिवेयहैन
ताएजोजाकीआसक्तिप्रभुमेंहैं।तासोंदेहसंबंधीलौ
किककैदिकक्रियाभलीभांतिसोंनबनेगी॥२१॥आ
गेअबऔरहूकहतहैं श्लो०॥परितापोस्यतस्मात्त
वेविस्मृतिकोरकः।सर्वव्यसनंतत्प्रपंचस्मृतिना
शनं॥२२॥याकोअर्थ। ऊपरकहेंताभांतिप्रभुमेंआस
क्तहोय।तवप्रभुव्यापकरिआसक्तिदानकरें सोतवविप्र
योगहोयसोविप्रयोगभयो तवजानियेप्रभुसंबंध
विनादेहसंबंधीसर्वकार्यकीविस्मृतिहोय तवविप्र
योगभयो तापाछेंप्रभुमेंव्यसनहोइ सोप्रभुविरहसो
नेजाय।एकाकरलागपूरासमानजाय गृहव्यसनको
स्वरूपानाव्यसनकरिकेप्रपंचकीस्फूर्तिनाशनहोइ
मैंकेवलप्रभुपरतन्मयताहोय॥२३॥आगेअबऔरहू
कहतहैं श्लो०॥ एवंविधस्तुनिविधोभावोनिःसाध
नोमतः॥स्वतोऽद्भुतहै मोलोकेनतत्प्राप्तिर्भजनानं
दं॥२२॥याकोअर्थ।याभांतिभावजवमनवचनकर्म
न
करितीनोप्रकारभावसिद्धहोइ

प. जाय सो या भांति नि साधन हे तो या लोक में बहुत दु
१ ख भये हैं निरंतर स्मरण भजन जो श्री कृष्ण की सेवा कीये क
रे तब नि साधन होइ २२ अथागे आचार्य श्री रसखान कहत हैं लि
ख्या है के करणा या कृष्ण भावात्मा स्वतथा विधं मति
मद्भाव संबंधात्मा प्रीति वेदयन्‌ २३ अथा के आचार्य य
ह लिखे हैं विधिपूर्वक भाव सिद्धि होइ तब श्री कृष्ण भावात्म
क प्रभु की कृपा होइ तथा श्री कृष्ण भावात्मक प्रभु की
कृपा होइ तथा श्री कृष्ण भावात्मा के आश्रय सुखारवि
द स्वरूप श्री आचार्य जी महाप्रभु की कृपा होय तब भाव
सिद्ध होइ भाव सिद्ध भयो कैसे जानिये श्री कृष्ण स्वरू
प मांति वैंन में यह भाव सिद्धि रहै जो पेइ सो कहत श्री
कृष्ण भावात्मक स्वरूप ति हैं यह मन तें … क्रम को भाव है
इत … सिद्ध होइ यह वेद के वचन हैं तहां को अर्थ हे श्री
कृष्ण के स्वरूप में प्रति भाव के से होइ सो उपाय आगिले
श्लोक में कहत हैं श्लो० प्रमेय बल तो नान्य साधनं
… भाव तो यतः सर्वे प्रवर्तन्ते निजाचार्य पदाश्र
यः २४ अथा के आगे यह भाव श्री कृष्ण स्वरूप में प्रति भा
व यह जीव के साधन ते न होइ यह श्री कृष्ण प्रमेय बल
ते भाव को दान करें तब ही भाव होइ श्री कृष्ण प्रमेय
बल वश … करें सो उपाय कहत हैं जो पुष्टिमार्ग
की रीति सों तन मन धन सों प्रीति सहित सेवा करें अ
पने श्री कृष्ण आचार्य जी के चरण कमल को आश्रय
करे तब श्री आचार्य जी महाप्रभु भावदान प्रमेय ब
ल तें करे तातें मार्ग रीति सों सेवा श्री वल्लभाचार्य जी
के चरण कमल को आश्रय यह मन निश्चय लगाइ
के तब यह सिद्धांत सर्वोपर है २५ अथागे आचार्य
जी रूप कहत हैं श्लो० ॥ तदा भावेन वै भावि फल
… सेत्स्यय: अंत रावा स्मदीशो तु ग्रंथश्री वल्ल

भावके॥२५॥ याको अर्थ ऊपर कहे भांति श्री आचार्यजी
महाप्रभु भाव दान करें तब भावात्मक रसमें तद्रूप होय
जाय सो तब यह पुष्टिमारगीय फलकी प्राप्ति होय। निश्च
य से संशय नाही॥ सो हमारे श्री गुसांईजी वल्लभाष्टकमें क
हे हैं॥२५॥ अब आगे कहत हैं॥ श्लोक॥ स्वामिन् श्रीवल्ल
भैत्यन्तस्फुरदिव मुखी रीति नरान्यपो न वक्त्रेनेति गुरुत्वा
यो निश्चया॥२६॥ याको अर्थ॥ श्रीवल्लभाष्टकको सप्तमश्लो
क॥ स्वामिन् श्रीवल्लभाग्रे क्षणमपि भवतः सन्निधाने कृ
पातः प्राणेश कृष्णाधिप वरवदन दिदृक्षार्तितापो जन्येषु
यत्सद्भावामामेव्यु चिन्तनरसिकेष्वनुव्याख्यानहृद्य
प्यस्मिन् मुखेऽद्य भवत नरसुरैन्यन्त छिन्नसंततता॥ इत्यादि
वचनका। यह वचनके अनुसार आश्रय यह पुष्टिमा
र्गमें नेष्ठा होय तब सगरी लीलाको अनुभव होय। सो
आश्रय और मार्गमें नेष्ठा कौन प्रकार होय॥२६॥ आगे
अब कहत हैं॥ श्लोक॥ मार्गनिष्ठानवबोधे किंतु ता
दृग्गुरूदितैष्पुरुक्तिर्निवार्यानि निष्कलो ह्यनुवादतः
२७॥ याको अर्थ॥ अब कहत हैं जो पुष्टिमार्गमें नेष्ठा वि
ना गुरुके बोध कीए बिना न होय जब गुरु प्रसन्न होय कृ
पा करिके बोध करें जब यह जीवको दृढ विश्वास गुरुके व
चनमें होय विश्वास करिवे वारे गुरु वचनको अर्थ
सहित भावना करे। अपने मनसों अन्यभावना न होय
तो ताहू सी विश्वासनसों मिलिके गुरुके वचनको अनु
वाद करिवे वारे अनुवाद भावना करे तो वचनमें अनु
मार रहे तो कृपा करिके आगे अब और कहत हैं श्लो
अनुवाद्यं न बोधात् किंतु मूलकुमार्गतः अथापि

रचूपायाश्रय पुष्टि
र्धे न कल्प

नांवकारन दरे जेसें मूल काम

प. प्रभुसुबोधनीजीनिबंधादिभावविचारैं तरहैश्रीमहाप्र
भुजीकीकृपातेश्रीसुबोधनीजीमेंजानोजाय सोश्री
आचार्यजीमहाप्रभुकृपाकरकरजवहद चरणारवि
दकोआश्रयहोय तातेश्रीआचार्यजीमहाप्रभुके
चरणकमलकोदृढआश्रयकरश्रीसुबोधनीजीनि
बंधमेंजानकमसोंभावरैं ताभांतिअपनेहृदयमेंभाव
नाकरैंसेवाकरैं रवाआगेग्रवश्रोहंकरनहींसो
एताहरैनुगुरुनाववगात्यादिखिलजननोआश्रिनपच
निजाचायानेमसनंदमयाभजेतारखीयाकोकृप
याभांतिगुरुकीआज्ञप्रमानअनुगान्यकलतानिरि
लकोसुवसबहै ३ श्रीआचार्यजीमहाप्रभुअपनो
आश्रयनिश्चयकरिरहिंयामेंसंदेहनाहींकाहेतेंश्री
आचार्यजीमहाप्रभुकोमनमेंआश्रयकरिगुरुआ
ज्ञाप्रमानबर्ततेतकश्रीआचार्यजीमहाप्रभुअ
नुग्रहकरिआश्रयअपनोदेहि सदाआनंदरूपश्रीआ
चार्यजीमहाप्रभुहैं यहभावसोंभजनकरैं यारलौकि
कवैदिकमेंयानंदतुष्टहै सदानाहीं लोककमेवि
षयादिकसुखतोकालकर्मलगोरहिसुखसोप
राधीनभयेसंसारमेंपरेदुखीहोइ श्रोश्रीआचार्य
जीमहाप्रभुसदाएवआनंदरूपहैं सोश्रीगुसांई
जीसर्वोत्तममेंकहेहैं श्रीआचार्यजीमहाप्रभुनकोना
म आनंदायनमः परमानंदायनमः इत्यादिवचन
केभावसोंजाननो श्रोश्रीआचार्यजीकीनामाव
लीमेंनामहैं आनंदायनमः मूर्तायनमः यहश्रीआ
चार्यजीकोस्वरूपहै सोमूर्तिवंतआनंदमयहै सदा
एकरसयाभांतिभावसंप्रेमसहितभजनकरैंतहांक
हेकहैजोश्रीआचार्यजीमहाप्रभुजीकेपरपुष्टि
मार्गमेंहैं सोसगरेजीवश्रीआचार्यजीमहाप्रभु

कोआश्रयकरिभजनसेवाकरतहैं औरअनुभवहै भाव
सोंभजनकरोसोकहौं याभांतिकोइकहै सोनहोंभ
जनहै॥श्लोक॥भजनंभावरूपस्यभावेनैवोपपद्यते
चेतस्तत्प्रवणंसेवाभावेनैवोपपद्यते सततावनिरू
पिता॥२॥याकोअर्थ॥श्रवणकरतहैजोभजनसोसे
वाभावसोंकरें कहितें भावबिनाओरमानसीफल
रूपनहोय॥तातेंतनुजावित्तजाभावसोंकरैतवमान
सीफलरूपसिद्धिहोइ॥सोश्रीआचार्यजीमहाप्रभुसि
द्धांतमुक्तावलीग्रंथमेंकहेहैं॥कृष्णसेवासदाकार्यामा
नसीसापरामता॥श्रीकृष्णकीसेवाकरो॥तिनकी
मानसीसेवासिद्धहोइ कौनभांति॥चेतस्तत्प्रवणंसे
वातत्सिद्ध्यैतनुवित्तजा॥जैसेनदीकोप्रवाहसमुद्रहि
वसराकरसरकतें॥ताभांतिअहर्निशपहरचित्तनमेंमानसी
तिनकीसाधनकरोतनुजावित्तजाकरिभावक
रितवहीसिद्धहोइ॥तनुजावित्तजाहूभावसहितम
नलगाइकेंकरें॥तवहीवनें॥तबभावसिद्धहोइया
भांतिश्रीआचार्यजीमहाप्रभुनिरूपणकीयेहें॥७॥
मानसीसेवासिद्धभईहोय॥तिनकेलक्षणकहाकेसेंजा
नियें सोआगिलेश्लोकमेंकहतहैं॥श्लोक॥तस्यानु
विस्मृतिर्भूयाज्जगतःसर्वथाध्रुवा॥तद्भावेमानसी
तसेवनान्नैवसिद्धिरितिः॥२॥याकोअर्थ॥तनुजावित्तजा
सेवामनलगाइकेकरेसदा॥तबसगरोजगतदेहसंबं
धीपदार्थकीविस्मृतिमनमेंसबभूलिजाय॥मानसी
सेवाकोयहीभावहैं॥जोसगरेजगतकोभुलावेसर्वथा
यहनिश्चयजाननो॥अपनीदेहानुसंधानकोंभूलि
जाय॥खानपाननिद्रादियाभांतिभावाविष्टहोयम
नकेंसेवाकरिस्वरूपानंदकोअनुभवकरें॥तवजा
नियेजोभावरूपमानसीसेवासिद्धभई॥

प॰ तुजावितजासेवाहोतेदुखीभएहैं तोमानसीकहानिसि
द्धहोइ तनुजावितजासेवामेंवाधककहनहैं सोक
हनहैं श्लो॰ तद्वाधकानींद्रियाणिविषयालौकिका
मता प्रतिवंधस्तयोद्वेगोभोगोप्पत्रेवलौकिकः ॥ अस्या
र्थो अर्थो तनुजावितजासेवामनलगाइकेंकरेंतोमेंद
सोइंद्रीवाधकहैं काहेतैं इंद्रीकेदेवताहैं तिनकोवि
षयप्रियहै सोभगवत्सेवामेंइंद्रीवाधककरतहैंसो
कोनभांतिसेवाकरतमेंविषयादिककीवुद्धिहोइलौ
किकवुद्धितोयहजोसेवातोनित्यहीकरतहैं घरकोलौ
किककार्यहूकरनोहैं भूषहूवहुतहैं याभांतिवुद्धिमलौ
किकमानिहोइ तवसेवामेंतेमनकोउद्वेगहोइ सोजि
मेंवनेतैसेवेगिकरिस्त्रनोपरकरावैं तवश्रीठाकु
रजीतोमनकीलौकिकवुद्धिजानें सोसेवामेंप्रति
वंधकरेंएसोलौकिकवैदिककार्यतथाविषयादि
ककेकार्यमनमेंप्रेरेंजोसेवामेंप्रतिवंधहोइ मनउ
द्वेगतेंप्रतिवंधहोइ तवभगवत्सेयाहैंहते तनुजावि
तजाननवनेपाछेंखानपानादिविषयभोगमेंमनवे
लें पाछेविषयादिकरें पीछेंलौकिकहोइजा
इ सोसेवाफलमेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकहेहैंउ
द्वेगप्रतिवंधोवाभोगोवास्यानुवाधकइत्यादिवच
नसोंजाननो जोइंद्रीकोविषयमेंमनहोइताकरि
प्रथमउद्वेगपाछेंप्रतिवंधपीछेंभोगपीछेंवेवलौ
किकनहींकोइकहेंजोइंद्रियकोविषयवुद्धिसेवामेंक्यो
होतहै नहींबाधककहतहैं श्लो॰ दृष्टान्तमहलएवा
पिक्षयभाविनमलगें असत्संगासर्वथाहीभाववाध
कइष्यते अस्यार्थः अवकहतहैंजोइंद्रियादिम
नमेंदुर्वुद्धिविषयायातहोतहैं एकतोदुष्टप्रानीकी
सनाकेअन्नतोकोभक्षनकरें अथवादुष्टस्त्रियाके

रिकृन काविभरतावंरीं तथा असमर्पितखाइ तथा अ
सत्तवइमुखको संगकरी ये तीनो सर्वथा ही बाधककरे
निश्चय सो न्यारे त्यागि ह्रतु है ॥ दुष्टसंग बहुत बाधक
है सो पद्मपुराण में कहे हैं ॥ अवैष्णवानामन्नं च पाति
तानां तथैव च । अनर्पितं तथा विष्णोः स्वमांससदृशं भ
वेत् ॥ पथ्य निवेद्य पयो मुक्तेहरये परमात्मने पूतंति पुन
रत्नस्पृर्शेर्वै सार्वतीर्थमा गा । इति वचनात् ॥ अवैष्णव को
अन्न होइ तथा पतित चांडाल इतने लोगों ॥ धोबी नीच
को अन्न तथा असमर्पित अन्न यह मांस सम है यातें
ऐसो अन्न खाते इंद्री बुद्धि सब नष्ट होय जाय ॥ अरु भु
वन होइ तथा असमर्पित अन्न को खाय तो पितर
सहित नर्क में जाय तातें श्राद्ध इत्यादिको अन्न सो न
रांतें आर ठैकु पुराण में कहे हैं ॥ अनपेक्षितगोविंदा यो
भुंक्ते धर्मवर्जितः ॥ श्वानविष्ठा समं चान्नं नीरं तु सुर
या समं ॥ इति वचनात् ॥ गोविंदजो श्रीकृष्ण को अर्प
विना असमर्पित जे अन्न पान है सो ते सकल धर्म क
रि रहित है उ सो अन्न पान के विष्टा समान है ॥ तहां
है रो अरु है निश्चय सो दुष्ट संग ते असमर्पित अन्न
खाइ तातें यह तीनो बाधक हैं ॥ एक तो दुष्ट को अन्न तथा
असमर्पित तथा असत्य गतौ ॥ अरु दुष्ट संग यामें चि
त्त संबंध है ॥ तातें हूं इंद्री सब बहिर्मुख होइ जाय वि
षय के ध्यान में तत्पर होइ तातें वैष्णव होइ मन में वि
चार राखे जो दुष्ट को अन्न असमर्पित अन्न संबंध
कबहूं न करे ॥ १४ ॥ त्याग अब आगे कहत हैं ॥ श्लो ॥
तस्मात्त्यक्त्वा दुष्टसंगं हत्वा स्वाचार्य संश्रयेत् नवीयज
नसमगोस्थित्वा मार्गे तथा गुरौ ॥ २४ ॥ याको अर्थ ॥ अब
कहत हैं जो दुष्ट के संग को त्याग करो क्यों है तो दुष्ट के
संग ते बुद्धि विकार असमर्पित इत्यादि दुष्ट के संग ते खाइ

शि.प. सेन्याश्रयह दुष्टकेसंगतेहोइ तातेंदोषकोमू
५८ गकोत्यागकरे औरश्री आचार्यजीमहाप्रभुके
चरणकोआश्रयकरे औरपुष्टिमारगीयकीरीतिप्र
मैंस्थितिहोइ गुरुकहेताप्रमानक्रियासर्वकरे
पाचोप्रकारसेयुक्त करे प्रथमतोदुष्टकेसंगको
ग १ औरश्री आचार्यजीमहाप्रभुकेचरणकमल
आश्रयहोइ गो तीसरे भगवदीयकोसंग सोश्री
चार्यजीमहाप्रभुकीकृपातेंमिलै पुष्टिमार्गमेंस्थित
३ भगवदीयकेसंगतेंगुरुकहेताप्रकारसेवाअपने
तेंक्रिया तननाही यहपांचप्रकारभगवदीयकेलक्षणके
नेंयहहै ३४ आगेंचवचारहवइन्हैंम्लो ह
विषयवैराग्यपरितोषविभायवा सदानंद सदानंद
पूर्णपातेंसदाभजेत् २५ आ च विषयमेंवैराग्य
होइ तवहीसर्वधर्मवनिआवे सोश्रीआचार्यजीम
हाप्रभुसंन्यासनिर्णयमेंकहेहैं विषयाक्रांतदेहानां
नावेशःसर्वथाहरेः इतिवचनातें जाजीवकेहृदयमें
विषयकोज्ञान होइ है हमेंविषयकीकामनाहोइ
ताकेहृदयमेंहरिजोभगवानकोआवेशसर्वथानहोइ
तातेंविषयादिदेहसंबंधीकार्यवैराग्यहोइ औरमनमें
संतोषहोइ यथालाभसंतुष्टजोभगवदिच्छातेंआइ
प्राप्तहोइ ताहीमेंसंतोषहोइ जवविषयादिकमें
वैराग्यहोइ तवहीसंतोषहोइ औरलौकिकवैदि
कदेहसंबंधीकीचिंताछोडिसदाआनंदमेंरहै
जोयह हृदयमेंसंतोषहोइ तवहृदयमेंआनंदप्रा
प्ते चिंतानहोइ तवभगवद्धर्ममेंमनलागे ताही
तेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुनवरत्नग्रंथमेंकहेहैं चिं
ताकापिनकार्यानिवेदितात्मभिःकदापि निवे
दिनभक्तहैं सोचिंतानकरै सदाआनंदमेंरहै

नवसदाआनंदरूपजो श्रीकृष्णरूपफल है श्रीवृंदावनमें व्र
जभक्तसंयुक्त वेष्टितफलरूप तिनकी सेवा करें सदा सर्वो
परि फलप्राप्ति होय ॥ ५ ॥ इति श्री हरिरायजी कृत सिद्धां
पत्र ताकी टीका श्रीगोपेश्वरजी कृत संपूर्णं ॥ ६ ॥ अथ
स्ववश्यारूपफल है जो विषयमें वैराग्यकरि यथालाभ
संतोषकरि प्रसन्नतासों सुहृदयते भगवत्सेवा करे
तो फलप्राप्ति होय ॥ सो श्रीकृष्ण फलस्वरूप हैं के जब
विचार करें तब ही वे कृष्णके मनकी अभिप्राय ताको
जानिवेको जीवसामर्थ्य नाही है को न भांति कहा पू
ल है ॥ सो आगे सिद्धा फलमें कहत हैं श्लोक ॥ कोवे
त्ति कृष्णाभिप्रियः स्वजने मतो ख्यानर्पित ह्य
रति निजानंदर्शिना दिधुना ॥ ९ ॥ याको अर्थ ॥ अब श्रीकृष्ण
के अभिप्राय जानिवे में वेदहू सामर्थ्य नाही हैं नेनने
न पुकारत हैं अपि भगवान्की श्वासते प्रगट हैं भग
वद्स्वरूप वेद हू है ॥ सो श्रीकृष्णके अभिप्राय जानिवे
में नाही सामर्थ्य है ॥ तो श्री आपनी मैं सुबुद्धि ते कहा जा
नूंगो ॥ तऊ श्री आचार्यजी महाप्रभुकी कृपा ते कछु
में आपनी मति अनुसार कहत हों ॥ काहेते वेद हैं से
प्रभुके वंदीजन हैं ॥ सदा गुनगावत हैं या ईश्वरता
को माहात्म्य कहत हैं ॥ औ रसमें तो श्रीकृष्णको जनदास
हों ॥ तातें प्रभुकी कृपा सो परहों ॥ तातें कछु आपनी म
ति अनुसार कहत हों ॥ श्रीकृष्ण आनंदरूप हैं ॥ सो आप
ने आनंदरजवननिधि जो पुष्टिमार्गीय निजसेवक हैं तिन
को अनुभव करायवेकी इच्छा करत हैं ॥ तो फल तें भक्त
को प्रभु आनंद सिद्धि को विचारत हैं ॥ तब उन भक्तको
श्रीकृष्णके दर्शनकी आर्ति होत है ॥ तब उन भक्त की
रति जो प्रीति सर्व ओरते छुटि कै श्रीकृष्णके दर्शन
में होत है ॥ तातें यह जाननो जो श्रीकृष्ण आनंद दान

प. कोविचारेसेवककौ॥तिनसोंअपनेदरसनकीआर्तिसिद्धक
६ रावें॥तहसेवककेहृदयमेंतापहोय॥जोमेंकबश्रीकृस्नको
दरसनकरुंगो॥वाहीमेंसुमरनकीर्तनसेवाकरवेजानै
ताकौभगवद्धर्मरूपवेमेंप्रीतिहो॥प्रभुकेदरसनवि
नारह्योनजाइ॥२॥आगेंअबओरहूकेहतहें॥श्लो॥२॥सं
सारभावरागायलौकिकार्तितथापुनः॥सदाभावायव
स्यार्तिर्हरिस्तानिरयकृति॥३॥या॥टी॥अर्थ॥अबकहत
हें जोयहसंसारदेहसंबंधीजितनोपदार्थहै तिनमें
अनुरागकोअभावहोइ॥तिनमेंतेरागकोअभाव
होइ सोऊश्रीकृस्नकीकृपातेंलौकिकसंसारतेंजब
छूटे जबश्रीकृस्नकरुणाकरें॥ओरलौकिककार्यकी
आर्तिछूटे॥सोऊश्रीकृस्नकीकृपातेंओरमदकोअभाव
होइ अभिमाननहोइ जोमेंहीसबकेकर्ता॥पेश्रीकृस्न
कीकृपातेंहोइ॥ओरअपनेसरीरकीआर्तिदुखसुख
खानपानकीआर्तिनहोइयेहूश्रीकृस्नकीकृपातेंजो
निर्ये॥२॥आगें अबओरहूकहतहें॥श्लो॥२॥संगाभा
वायबंधार्तिर्हेन्यार्तिर्हेत्यसिद्धये॥सदाभावायभग
वान्साधनार्तिर्हातिहि॥४॥या॥टी॥अ॥सं॥संगकोअ
भावहोइ॥भगवदीयकोसंगनहोइ॥तऊबंधुजोदेह
संबंधीकुटंबकीआर्तिनहोइ सुतहोअपनेहृदयते
सोनउपजे जोयेदेहसंबंधीनकहासंबंध है॥मेरेश्री
[illegible]संबंधीभगवानहैं॥कापतोउन्नसोंहै॥याभांतिस
त्संगविनाहीसुतबंधुआर्तिनहोइ॥यहश्रीकृस्न
कीकृपासत्संगविनासबठौरकीआर्तिकरतहेंवे
मनमेंरातानेछूटे॥वे.भगवत्कृपातेंछूटें॥ओरदेसार्ति
जोअपनेघरकेसमेतकुटंबतथाकुम्भघरमित्रतथाआप
नहाराहतनेहोइ॥सोदेशहूकोदुःखसुखनहोइ मनमेंआ
र्तिनहोइ सोश्रीकृस्नकीकृपातेंओरदैन्यतानेसिद्धहो

इसोकेश्रीकृष्णकीपरमकृपातेजाननो।।काहेतेंप्रभुप्रसन्न क
रिवेकोदैन्यताहीसाधनहैसोश्री आचार्यजीमहाप्रभु
श्रीसुबोधिनीजीमेंलिखेहैं आचार्यचरणोक्तं दैन्यंत्वेतो
साधनंदैन्यतारूपसाधनतेंप्रभुप्रसन्नहोइ।सोदैन्य
ताश्रीकृष्णकीकृपातेंप्रिदहोतहै।औरमोहकोअभाव
होइ एवंश्रीकृष्णविनाऔरकूनमाहू होइ।औरश्रीगुणप
तिमित्रधनदेहघरलोककपरलोककमेंयाकूमोहन
होइ येह श्रीकृष्णकीकृपातेंहोइ।औरभगवानकेमि
लिवेकेसाधनभगवत्सेवाश्रवणकीर्तनजपपाठमें
मनहुतोदिपुष्टिमार्गकीरीतितेंसाधवेंनसोकश्रापश्री
भगवानकृपाकरिकेदानदेकरावेंतवहीवनिआवें
२ आगेंअवश्रीकृष्णसतंसश्लोक।।प्रारब्धभोजना
र्थंवापरीक्षार्थंकिंतु वा नु निर्वाहार्थं तथा वेदसाध्या
योनिश्चयकृतिःधारयेन्मातिप्रहानेपिपरानंदहायनःस
माश्रयेत्सर्वोमनयोदृढ्त्वाचार्यसमाश्रयो।प.आ.कौ.अर्थ
परवेदनाप्रकारलौकिकआलौकिकराय भगवत्संबंधकी
आर्तिश्रीकृष्णजवकृपाकरिदानकरेंतापाछेंश्रीकृष्णचे
रूपपरमानंदरसात्मकस्वरूपकोदानकरेंजहांताई इतनी
आर्तिसिद्धिनभईहोइनहोताईपरमानंदकोदाननिश्च
यनहोइ सोयाकेसाधनमेंजीवकेहाथकछूनाहीहै
श्रीकृष्णहीसर्वसिद्धिकरिपाछेंपुष्टिमार्गकोपरमफलप
रमानंदरसप्रभुदानकरतहैं तहांकोउकहेजोयहआश्र
यतुमकाहेतेंकहेंजोसर्वश्रीकृष्णहीकरतहैंसोतहां
श्रीहरिरायजीकहतहैंजोयहआश्रयमेंआपनीयुक्ति
तेनाहीकहोहे।मेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकेचरणक
मलकोदृढ़आश्रयकीयोहेंताकरिकें महाप्रभुकीकृ
पाकरिअपनोअभिप्रायजनायो।सोअभिप्रायसहित
मेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकेचरणकमलकोदृढआश्र

१· य अपने भक्तन में करि यह आश्रय निरूपण कीयो है यह कृ
ष्ण अपने भक्तन को यह जतावे जो श्री आचार्य जी महाप्र
भु के चरणकमल को दृढ आश्रय करेगो तिनको श्री ठाकुर
जी अपनो आश्रय देके अपनो परमानंद को दान करे
ताते मुख्य श्री आचार्य जी महाप्रभु के चरणकमल को आ
श्रय करनो यह है। पु आगे और वचन कहत हैं। श्लोक। स्व
तः कृष्णसमानंदो निजानंदो प्रदास्यति। मलाश्रयवस्था
नं सर्वैश्वातकः पतिव्रत १ या टीका। श्रीकृष्ण
हैं स्वतः आपु ही सदानंद रूप हैं परम दयाल हैं
सो सब प्राणीमात्र को आनंद ही देत हैं दास श्रीकृष्ण सो
अपने दास को आनंददान करें सो उचित ही है दास
परतो और अधिक दान कृपा करिके देहिंगे यह निश्चय
श्रीकृष्ण को भरोसो है श्रीकृष्ण के नाम ते सगरो कार्य सि
द्ध होइ यह श्री भागवत द्वादश स्कंध में श्री शुकदेव जी
कहे हैं। श्लोक। कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महा
न्गुणः। कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तबंधः परं व्रजेत्। इति
वचनात्। जद्यपि कलियुग दोषवंत दोषरूप है तऊ श्रीकृष्ण
नाम ते संसार दुःख ते छूटि जाय भक्ति प्राप्ति होइ सो भ
गवदीय गाए हैं। रा[?] वि[?]ग[?] करि है कृष्णनाम स
हाइ अधम तारन आनि अपनी मरत कै नरक ला
य।१। अधम अगिनत धारे सो कहा नेरो भार को न उ
द्धि अपने निज करि सबको निस्तार रानेक द्धोर्वु
रभरो सो बसत जाके गाव सो कैसो ममता छाडि दें
जीवन नाव को नाम २ विरध विविध विलाइ गोकरि
हरि निधरि है लाज तो पैगह्यो थर निगम आगमवं
कनकि तवे काज। धरासे प्रभु को नाम दयाल है तहां प्र
भु दया करि अपने भक्तन को आनंद दे हैं सो कहा
कहनो तहां दृष्टांत कहत हैं जो चात्र कपली वत्

र विस्वास करि रहै है काहे ते चात्रकपक्षी जड को स्मर
ण करत है सो मेघ वाको मनोरथ पूरन करत है तो
श्रीकृष्ण तो परमआनंदरूप है स्यो करि सब करे गो
हृया गे सब चोरहू छूटत है सो लौकिका लौकिका ते र
ण ते परमानंद चिंतन ना तू यथा न गतायेद्गागी निकेम
यत्न मनु प्रभु यथा अर्थ लौकिक आर्तिवादि है संबंधी सं
सार की आर्ति करि विरह पावे तो हो प्रभु को चिंता न होइ प्र
भु अर्थ जब यह जीव आर्ति करे तब प्रभु को चिंता होइ ता
ते लौकिकानि विषय को सर्वथा हीनादि करतव्य है प्रभु
की आर्ति विप्रयोग करे सो ऊपर कहे जैसे चात्रकपक्षी
रात्रि दिवस स्वात के जल को लीये रटत है तैसे ही पुष्टि
मार्गीय ले सब रात्रि दिवस विप्रयोग एक प्रभु को क
रे परमानंदरूप भगवान के गुण विचारि लिखा रित्र
पने दोष विचारि विचारि चिंतन करे तब प्रभु के हृ
दय में स्या आवे सो निरोध लक्षण ग्रंथ में श्री आचा
र्यजी महाप्रभु कहे हैं लोकेरपमानानुजनानन्दस्थाहमप्र
भु को यस्माभवेत आपने जन को जब विप्रयोग होय स
प्रभु देखत है तब प्रभु कृपा करत है तब अभिमान
देखत है तब दंड देत है सो श्रीभागवत रासपंचाध्या
ई में वर्णन है जो व्रजभक्तन के गर्व भयो तब अंतर
ध्यान प्रभु भये पाछे भक्तन को अत्यंत लोक रा विरह
देखे तब श्रीठाकुरजी कृपा करि प्रगट भये तैसे ही
यह पुष्टिमार्ग में व्रजभक्तन के भाव करि मन में लोक रा
होइ तब प्रभु कृपा करे तातें लौकिकानि छोडि प्र
भु को विरह करि परमानंद को चिंतन करे तो प्रभु कृ
पा करे न होइ स्वांत देत है ता के राग होय सो तिनको औ
षधी को खात है तो रोग जाय तब वे जैसे यथा तथापि औष
ध बहुत तिक्त करूई है सो रोगी प्रीति सो खात है तो

सेंही जाकौं संसाररूप काम क्रोध मद मत्सरनादि दुख
रूप रोग सहस्र मज्ञान भयो है सो रोग निवर्त्त करणार्थ प्र
भुकौ विप्रयोगरूप औषध खवाइ तव प्रभु कृपा करि
संसार रोग दुख मिटि जाइ तातें विप्रयोग प्रभु में होय त
बही प्रभु प्रसन्न होइ अव आगें कहत हैं श्लोक॥
अहितं निजभक्तानां विदधाति हरिर्नहि। समस्ता
नां सखा स्वीयभक्तानां न कथं भवेत्॥ याको अर्थ
श्रीहरि के सें हें अपने निज भक्तन कौं अहित जो बुरा
कबहून करें सदा हित ही करेंगे सो महाभारथ में भी
आप कृपा ही करी जैसें नंदराइजी श्री अंबिका पूजन गए
अन्याश्रय कीयो ता करि सुदर्शन सर्प नें ग्रसि लीये
ये पाछें प्रभु कें निज भक्त हैं नंदरायजी तातें कृपा
करि सुदर्शन सर्प तें छुडाए तैसें ही पुष्टिमार्गीय
भगवदीय को कछु दोष निवर्त्त करनार्थ दुख प्र
र हितौ मन में चिंता नाहीं करत्तव्य है पाछें प्रभु हित
ही करेंगे काहे तें समस्त जीव के पालन कर्ता सखा भ
ए हें सो अपने भक्त के ऊपर कृपा करें या में कहा आ
श्चर्य है निश्चय अपने भक्त के ऊपर कृपा करत आए
हें सो अब हू कृपा करेंगे या भांति पुष्टिमार्गीय वैष्ण
व प्रभु के गुण विचारि स्मरण भजन करो यह सिद्ध
भयो ॥८॥ इति श्री हरिरायजी के कृत ग्रंथ [illegible]
टी [illegible] श्री [illegible] पत्र [illegible] कृत संपूर्ण ॥१०॥ अब ऊपर
कहि आए जो प्रभु अपने भक्तन कौं बुरो कबहून क
रे हित ही करेंगे परंतु भक्तिमार्ग की रीति कौं नहि जा
नत लोग वर्णन करत हैं जो या भांति भक्त रहे तो
सर्वदा सर्वभाव करि हेतु भए ते प्रसन्न होंय श्रीमदा चा
र्यचरणस्याप्यतानन्यमनेः ॥ श्लोक ॥ अब
भगवद्भक्त के लक्षण कहत हैं सर्वदा सर्व काल में

ारसर्वभावमेंकरिवें भूत जो प्राणी हैं तिनकों सर्वथा हि
हीकरनौ प्राणीमात्रकों सुखहीदेनों मनकरि वचनक
रि क्रियाकरि द्रव्यादिककरि जितनो अपनेसें सामर्थ्य होइ॥
वनिआवै तहांताई जीवमात्रकों हितकरनों। स्यारा रवनी
एक यह भक्तजनके लक्षण। औ श्रीमहाचार्यजी श्रीवल्ल
भाचार्यजी अपने आचार्यके चरणकमलमें अपने मन
की स्थितिकरनी। एकतो आचार्यजी के चरणकमलकों
दृढ आश्रयकरनों॥ सो अपने मनसों तन्मय ना होइ के
रनों मन वचन काय सर्वप्रकार श्रीआचार्यजी महाप्रभु
के चरणकमलमेंही मनराखो। यासों अंगव और है कहत
हें॥ श्लोक॥ ततएवकृतार्थेस्यान्निश्चयः क्रियतां हृदि
श्रौ सुखं विनिश्चिय मन्तव्य रुसामर्वा हिस्था। भूयालो अ
थे॥ कुपरवहें जो प्राणीमात्र उपकारस्यारखें। औरश्रीआचा
र्यजी महाप्रभुके चरणकमलसें अपनो मनराखें सांह
नार्थरूपहै निश्चय। वाप्रभगवदीयहै। तातें हृदयमेंप
हृदीउ क्रिया विचारि निश्चय करनों। प्राणीमात्रपरदया
औरश्रीआचार्यजी महाप्रभुनके चरणकमलकों आपर
यहनिश्चय यह तार्य है। ग्रंथ यह सिद्धान्त वेदसास्त्र गीता
भागवतमें प्रमान हैं। तासें विश्वास न होइ सुतांको नि
रूत्र सुरही जाननों। अग्रां श्रव कयो है कहत हैं लो
श्रीकृष्ण सर्वेश्वराय: सर्व सतीतास मन्वितः भगवा
यस्थापी सर्वतः पुरुषोत्तम नंद याको अ थे॥ श्रीकृ
फलात्मक तिनको स्मरण सदा करनों। लीलास
भक्तनसहित सुमरनकरि काहेतें स्वात्मक श्रीकृ
रूजभक्तनके संग स्वरूपहै लीलाकरत श्रीघ
सुमरनकरि तातें कि भक्तके हृदयमें स्व
तमास्थिति है काहेतें यह रीति हैं जाको आ
... कि यके हृदयमें संसारमें यातें औ

भुकोसुमिरन करें तो प्रभु ताको नव पि है तहूं भक्त के हृ
दय में लीला सहित प्रभु स्थित है ॥ अब च्यारु वारत है
श्लो ॥ गुनगानं तथा दुःखभावनं दैन्यमेव च ॥ तथा त्या
गः सिद्धहेतवः क्रमेण तच्चतुष्टयं ॥ या ॥ व्या० ॥ श्री प्रभु
रनी लीला को गुनगान करें ॥ १ ॥ विप्रयोग दुःख की
भावना करे ॥ २ ॥ दैन्यता करे ॥ ३ ॥ ता करि सब लौकिक
वैदिक त्याग करे ॥ ४ ॥ यह च्यार्यो क्रम आवश्यक ही करि
काहे ते जो प्रथम गुनगान ही करे ता करि के जितने
दोष है ॥ तिन को भस्म होइ जाय सुद्ध हृदय होइ त
व अपने दोष पुरे अपने को तुच्छ जाने प्रभु को सर्वो
पर जाने तब दुःख हृदय में होय ॥ जो मैं तो कछू साधन
नाही कर्यो मेरो अंगीकार प्रभु कैसे करेंगे या भांति वि
चारिके निःसाधनता की भावना मन में होइ ॥ तब दैन्य
ता होइ ॥ तब कछू प्रभु बिना और सुहाइ नहीं ॥ पाछे लौ
किक वैदिक सर्व त्याग होइ यह चतुष्ट प्रकार करे ता
को पुष्टिमार्गीय फल होइ प्रथम साधन ए च्यार करे
पाछे ये ई च्यार फल रूप सिद्ध होइ सो आगे श्लोक में क
हत हैं ॥ श्लो ॥ गुनगानं भागवतार्थ सेवया दुःखभा
वनं ॥ दैन्य भावना दैन्यं त्यागो विरह भावना ॥ पूर्वा
को च ॥ या ॥ क्रम पर गुनगान सो साधन रूप ता करि सर्वदा
सुद्धि होइ ॥ और फल रूप गुनगान भगवान के रस ना
थे ॥ जैसे व्रजभक्त वेणुगीत युगलगीत गायके निवाह क
रत हैं ॥ तैसे ही वैष्णव सेवा के अनोसर में गुन गावत हैं
ता के समय प्रभु की सेवा को होइ ॥ यह दुःख की भाव
ना होइ ॥ यह गुनगान तैसे ताको दुःख मन में होइ ॥ ताक
रि निःसाधनता सिद्ध होइ ॥ कितनी हूँ सेवा करे परंतु
मन में यही दुःख है ॥ जो जन्म सगरो वृथा ही गयो क
छु भाव सों सेवा न बनी ॥ यह दैन्यता सिद्ध होइ ॥ या भांति

दैन्यताकी भावना करत करत सर्व देह संबंधी पदार्थ में त्या
ग उत्पन्न होय अरु तब विप्र सुदृढ विप्रयोग विरह की भाव
ना होय अरु सर्वोपरि मुख्य फल पाछें सर्व लीला को अनुभव
होय सो यह चतुर्विध प्रकार फल प्राप्ति होय आप आगें श्रव
और हू कहत हैं लोके चतुष्टयं सिद्ध्यति यस्मिन्नात्मदैवे
हितं लिंदस्य मूलं सत्संगस्तदभावेन सिध्यति ॥ १ ॥ या
को अर्थ आपु कहें यह चतुर्विध प्रकार जाको सिद्ध होय
ताको और साधन की अपेक्षा कछू नाहीं याते श्रव
णादि गान करे और भगवद्सेवा करि दुःख की भाव
ना करे दैन्यता होय भावना करे सर्वत्याग करि विप्र
योग विरह की भावना करे ए इह साधन परमफल रूप
है सिद्धि भए पाछें दूसरे साधन की अपेक्षा नाहीं है सो
यह चतुर्विध पदारथ फल सत्संग ते सिद्ध होय सबको मू
ल सत्संग है सो श्री भागवत में कह्यो है प्रथम स्कंध
सौनक वाक्य तुलयाम लवेनापि न स्वर्गं न पुनर्भवं
भगवत्संगिसंगस्य मर्त्यानां किमुताशिषः ॥ एक लव
भगवदीय को संग होय ता सुख के समान स्वर्गलोक
तथा अपवर्ग सुख मोक्ष पर्यंत न लघु तुच्छ हैं और एका
दस स्कंध में भगवान उद्धवजी प्रति कहे हैं निरोधयति
मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो ने
ष्टापूर्तं न दक्षिणा ॥ व्रतानि यज्ञश्छंदांसि तीर्थानि नियमा
यमाः ॥ यथावरुंधे सत्संगः सर्वसंगापहो हि माम् ॥ २ ॥
सत्संगेन हि दैतेया यातुधाना खगा मृगा गंधर्वाप्सर
सो नागाः सिद्धाश्चारणगुह्यका ॥ ३ ॥ इत्यादि वचना
त् भगवान कहे हैं हे उद्धव मोको सांख्य धर्म स्वाध्याय
तप त्याग याग व्रत छंद तीर्थ नियम यम इत्यादिक मोको
वस नाहीं करत हैं और सत्संग करि जीव मोको वस क

...पाराहसलदागमना गंधर्वे श्रीपुरसिद्ध्यासामनुभव
...हू नाथै भीख्यात तें सर्वसाधनको मूलमंतंगाहो सतेंमा
...नतहू प्रभावहृदयाद् दृढ होय भावकी सिद्ध होइ ताते म
...नदी यके सत्संग ल्यहीकरो यहसिद्धि तमयाद
...ति श्री [illegible] ता श्री [illegible] पे [illegible]
...हू त [illegible] १ [illegible] कार चतुष्प्रकार साधन
कहो सो ईफल [illegible] गान सकृष्णै ता करि भावस
सेवा [illegible] की भावना पाछे हैन्यता की भावना
यह चतुष्टस्वों पर [illegible] यह चतुष्ट सिद्ध भयो पाछे को
नभातिश्र [illegible] भवहो [illegible] उहजीवको है सो
[illegible] लिहा पत्र मे कहत है सो [illegible] भावनीय पदाचि
नस्वामिनीजल्पे मुहूं ताप क्लेशार्थं मार्ग श्रीमद
[illegible] तः [illegible] पुष्टिमार्गीय भगवदीय था
भांति भावना चित मे धरे श्रीकृष्णके वियोग मे श्री
स्वामिनीजी कौन प्रकार वार वार जल्पना करत हैं सो
भाव की भावना करे सो प्रेमामृत मे कहे हैं [illegible]
कृष्ण विरहात् ध्यायंति प्रियसंगमं मनावाप्य निरा
शा य जल्पती है मुहुर्मुहुः श्री स्वामिनीजी श्रीकृष्ण
के मिलन अर्थ विप्रयोग करि वार वार जल्पना करत
[illegible] भाव की भावना करे सो प्रेमामृत मे कहे हैं [illegible]
कृष्ण विरहात् ध्यायंति प्रियसंगमं मनावा[illegible]
निराशा य जल्पती है मुहुर्मुहुः श्री स्वामिनीजी श्री
[illegible] मिलन के अर्थ विप्रयोग करि वार वार जल्प
नादि करत है यह भाव सर्वोपरि है तातें यह पुष्टिमार्ग
[illegible] है का है ते ताप क्लेश श्री स्वामिनीजी
श्री आचार्यजी महाप्रभु ने ताते इनको प्राकट्य
पुष्टिमार्ग है तापक्लेश आदि यताहीतें तापक्लेश श्री
है यह मार्ग को फल सिद्धि है ताते विरह को

मिनीजीप्रकारभावनासहित अनुभवकरतहैं स
भावकीभावनाकरतहि श्रीस्वामिनीजीजाभांतिव
रतहैं सोआगेकहतहैं॥ श्लो॥ रक्षनेरहि गोपी
गोकुलानंददायक॥ गोविंदगोपवनिताप्राणाधिपत
यानिधेरक्षणावेहि॥ अर्थ॥ अबश्रीस्वामिनीजीकहत
हैंगोपीजनकेईसहमकोदरसनदेहो काहेतेतुम
गोपीजनकेईशराजाहौ तातेंराजाअपनीप्रजाको
दुःखनदेहि सुखदीजतहै यहसमाचारहै तिसेहीहमभी
हमहैं तुमारीप्रजाहो तातेंहमकोदरसनदेहुदुखदू
रिकरो ओरतुमगायनकेकुलतिनकेआनंददाता
होसोगायहू तुमारेदरसनबिनाबहुतव्याकुलहैं
तातेंगायनकोदरसनदेहु तथावनमेगाउचरावे
गायनकोआनंददीजो॥ अबवेणीपथा॥ हमकोआ
नंददेहु काहेतेंगोविंदहो॥ जैसेंइंद्रहो इंद्रभाग
राजकवहनहो तेसेहीतुमव्रजभक्तनकोसुखदेहु
काहेतेंगोपवनिताकेप्राणकेअधिपतितुमारेद
रसनकेमिलतेंगोपवनिताजीवतहैं॥ श्रीकृ
कृपानिधिहमकोवेगिहीदरसनदेहु यांभांतिस्वामि
नीजीलासहितप्रभुकेनामलेविलापकरतहैं ना
मपांचमश्लो॥ आगें अबओरहू कहतहैं श्लोक॥ गो
पालपालितनिजव्रजरजनरंजन सुखाम्बुधे परमानं
दनंदहितचिरोत्संगलालितनाथयावो॥ अर्थ॥ हेगोपा
लतुमगायनकेपालनेहो ओरयहव्रजतुमारोहै तिन
सबनकोपालनकरिसगरेव्रजकेसुखदाताहो तुमसु
खकेसमुद्रहो यहव्रजनिजजोतुमारोनामहै रंजन॥
शुभपद्य॥ आपगोपालकचैतन्यसबनकोसुखदाता
॥ ऐसेसुखकेसमुद्रहमकोदरसनदेहु॥ तुमपरमा
हैं

ना०प० रक्षनपालनकरतहो ॥ ऐसेश्रीकृष्णहमकोंवरदानदेहु
४ गोनाम ॥ ३ ॥ भगवो ॥ ३ ॥ श्लो० ॥ सृष्टानंदनिजानंदसमुद्र
यमदायक: ॥ दामोदरस्याद्यदिननाथस्यापराधा
या ॥ हे श्रीकृष्ण तुम सदाही आनंदरूपहो यजमें
समुदायजीवमात्रकेआनंददाताहो औरयसोदाज
नेदामउदरसोंवाधेहै ॥ ऐसेभक्तनकेवसहो ह्याकृ
तुस्वारोरुद्रस्यआइभीजिरयोहै औरदीनानाथहो
जोआर्तिदीनहोइभक्तहै जिनकेकोइनाहीहैतिन
केतुमहो औरस्यापरदहो सर्वपरतुमारीस्याहैतो
हे श्रीकृष्णस्या ॥ रिहमकोंवरदानदेहु नाम ॥ ५ ॥ भ ॥
७ ॥ श्रीगोपिकावल्लभरूपकहनहै ॥ श्लो० ॥ पुरुषोत्तमसर्व
गारुचिरश्रीहरिता ॥ अनंगरूपपरमप्रियगोपवधू
पते ॥ ॥ हे पुरुषोत्तमसबनेपरे ॥ ऐसेसर्व
परसेतुमारेरुचिरहै सुंदरसांगिगकोंदरसनदे
नहारेहो नेनखगारहतहै सोभगवदीयमारगमें
रामानया ॥ रूपहरिमें नाथकृष्णागोवर्द्धनश्रीगोव
र्द्धनअंगस्पर्शप्रातितिराखिनेनमनरहतनहिंतद्रिया
सोतिसर्वांगरुचिरहै औरप्रेमकरिपूरितहो सर्वांगमें
प्रेमरसभरिरह्योहै योंधिदेवकअनंगरूपपरमसुंद
रहो गोपीजनकोतुमपरमप्रियहो तुमकोंगोपीज
नपरमप्रियहै गोपवधूकेपतितुमहीहो औरगोप
वधूके गोपकैसेहै जैसेभूज्योअन्नसोखेतमें
डारेतोउपजेनाही ताते बीजकेकामभुजोअन्न
नआवे देखिवेकोंअन्नहै तैसेहीगोपहै तिन
कीवधूनकेपतितुमहीहो ऐसेश्रीहरिहमको
वरदानदेहु नाम ॥ ६ ॥ भगवान ॥ ६ ॥ श्रीगोवर्द्धन
रूपकहनहै ॥ श्लो० ॥ व्रजकेअवलंबनतुमहीहोसग
रेव्रजकोंतुमारोआश्रयहै ॥ एकतुमहीकोजानत

हैं। औरतुम्हारेकेसवडेलेवेकुटिलहैंमानोमधुप
पंक्तिआइरहीहैं। औरकलानिधिहो। हृदयमेंमोद
सकलतिनकोइतनोप्रतापहै। औरतुमतोकल
निधिसमुद्रहो। सोकहातोइतुमारोप्रतापगुन
वरनेंकोइसामर्थनाहीं। अपनेश्रीयुक्तिभक्तनको
विरहव्यातिकेहरनवारेव्रजभक्तनकेमनहृदये
मेंतन्मय। अपनोसुंदरमुखश्रीअगाहिवोइतथा
अनेकलीलाकरिसमस्तव्रजभक्तनकेमनकेहर
नमेंपरायनहो। ऐसेश्रीहस्तहमकोंश्रवरसनदेहु
ना। भावार्थ। प्रबोधआगेयवश्रोरदृढहनहैं। सो
मनोविनोदभावाधुभावायहृदयास्थितिवंचली
कृतचित्तस्वभावाहे। तितरूपभता। याकोअर्थ। व्र
जभक्तनकेमनकोविनोदजोआनंदकेदानतुमही
करिव्रजभक्तआनंदपावतहैं। औरभावकेसमुद्रहो
ताभावसोभजेसोईसिद्धिकोइभावकेसमुद्रहो। आपके
भावकोपारनपावे। सगरिभावनगनमेंसोसोतुम्हारो
कन्याकातुमभावकेसमुद्रहो। औरभावहीकरिभक्तनके
हृदयमेंस्थितिविराजतहैं। जोभक्तकेहृदयमेंजोभावत
होतोईरीतिसोंविराजतहो। जोकहोतोइभावनाहीनहोत
इभावनाहीनहोतोएककुल्यवस्तुकीसिद्धिनाहीभाव
हीभक्तकेहृदयमेंस्थितहो। औरअपनेभक्तनकेचि
तमेंचंचलताअलायमानकनाहीं। आपहूवंचलहो
भक्तकोआसनकाजगदकेकरतेहो। इतोनहोतेचिंत
कोचलाइवेंअपनेमेंलगावतहो। भावकोस्थिरीग
मेहो। जैसेपानमेंथोरोजलहो। इतोडोलायमान
होतहै। औरपात्रमेंभरोरसहोतोहोइतोडोलेनाहीं
सोतुमभावरसकरिभरेहो। तातेंसमस्तभक्तनकेमन

से.प.
५५

पनैमरिरह्योहैं॥ ऐसेश्रीकृस्नमोकोकबेरसनदेहु
नाम॥३१॥भेगो॥१॥ श्रागेश्रबश्रोरहूकहतहैं॥ श्लो
क॥ नमस्तुभ्यमसहाद्दुग्धपानकृतपरमानंद: नवनीत
लिप्तमुखम्योविंदुगाथसदृया॥ कोश्रर्थ॥ श्रपन्न
पनैविलिभगतिनमैनमस्तुभ्यंहैं॥ श्रापकहुतानराख
नवाहीं॥ नामकहेहैंसोइकरीप्रभुको॥ प्रथियलोभ
श्रीकृस्नलालश्याविनहीस्तुपमानाकहुमानतहीना
हीश्रारसदाइदुग्धपानमेंतत्पर मनकरिहलालाण
मेंश्रीयसोदाजीकेस्तनकेदुग्धपानमेंतत्पर मनकरि
हैयातलालनमेंश्रीयसोदाजीकेदुग्धपानकरतहैं॥ मन
दुलाहीमेंहैं॥ मुखमेंनवनीतलिपटिरह्योहैंनाकरि
परमसदुन्दरसोभादेतहैं॥ दधकीबिंदुश्रधरपरलागीहै
ताकरिपरमश्रद्भुतसोभादेतहैं॥ ताकरिश्रधरसोभायमा
नहै॥ ऐसेश्रीकृस्नहमकोकबेरसनदेहुगो॥ नाम॥३२॥भ
गो॥ श्रागेश्रबश्रोरहूकहतहैं॥ श्लो॥ श्री॥ यलकावृतवद
नमदनाधिकसुंदर॥ कपोलविलसद्गागकस्तुरीतिल
को॥ चित॥ थी॥ या॥ कोश्रर्थ॥ सुंदरश्रलकनकरिश्रावृतऐसे
वदनकमलसोभायमानहै॥ श्रोरसबगोपीश्रंगमद
नजोकामदेवतेहूश्रधिकसुंदरहैं॥ कोटिकामवारनेयह
सुंदरतापरकरियि॥ दोऊकपोलनपरकमलपत्रलता
लखुमकरादिरागसोसवारेहै॥ श्रोरकस्तुरीकोतिल
कभालमेंविराजमानहै॥ ऐसेश्रीकृस्नहमकोखब
रसनदेहुगो॥ नाम॥३०॥भेगो॥ श्रागेश्रबश्रोरहूक
हतहैं॥ श्लो॥ सिंजननूपुरसोभाढ्यंनखभूखण
भूखित॥ सघोषमस्नसुकटिविलसत्क्षुद्रघंटिका
१४॥ पाणौ॥ श्रर्थ॥ दोऊचरणकमलमेंखूणनूपुरसो
सोभाकरियाद्ययेलोसोभाश्रीयलोकमेंनाहींदसो
नखपरनखभूखणनखावलीविराजतहैं॥ सोको

हि चंद्र सूर्य्य की कांति लजावत हैं और सहस्र कटि पर सु
दुंघरुओं विलास करत हैं सो वारंवार सुंदर होत हैं
ऐसे श्री कृष्ण हमको कब दरसन देहुगे ॥ नाम ॥ ४ ॥ अभ
रणे ॥ १ ॥ अब और रूप कहत हैं श्लोक ॥ राजद्धृदयवैयाघ्र
नखभूषणसोभिता ॥ कंजलोचनलोलालविसाला
क्षविलक्षणा ॥ १ ॥ याको अर्थ ॥ हृदय के ऊपर वाघ के नख
स्वर्ण में जटित करि नखभूषण श्रीयसोदाजी पहरा
ए हैं जो मेरे पुत्र को काहू की दृष्टि न लगे सो वक्षस्थल
में नखभूषण सोभित हैं नैन कमल समान अति लोल
चंचल हैं जैसें कमल सीतल हैं तापहारक हैं तैसें ही
श्री ठाकुरजी के नेत्र कमल संसार भक्तन के हृदय के ता
पहारक हैं और नेत्रन करि के भक्तन को रस दान
करत हैं संकेत सूचन करत हैं ताकूं लोल चंचल हैं
और नेत्र कमल अत बडे बिसाल हैं कर्णायमान अ
क्षि विलक्षण हैं जाकी उपमा काहूसों कही न जाय ।
अनिर्वचनीय हैं ऐसे श्री कृष्ण हमको कब दरसन
देहुगे नाम ॥ ४६ ॥ नाम ॥ १ ॥ आगें अब और रूप कहत हैं
श्लोक ॥ दीनैकशरणः स्वीयसर्वसामर्थ्यसंयुतः ॥ स्वज
राजसुत स्वीयजननी कंठभूषण ॥ १ ॥ याको अर्थ ॥
दीन हो निज भक्तन के शरणीय हैं अपने स्वीय भक्त
दैन्य होय शरण कूं राखे हैं तिनको सब भांति सुर
क्षा करत हैं काहे ते जो श्री कृष्णचंद्र हैं सो सर्व साम
र्थ्य युक्त हैं सो नवमस्कंध में श्री भगवान दुर्वासा प्र
ति कहे हैं श्लोक ॥ ये दारागारपुत्राप्तान्प्राणान्वि
त्तमिमं परं हित्वा मां शरणं याताः कथं तांस्त्यक्तुमुत्स
हे ॥ १ ॥ इति वचनात ॥ श्री ठाकुरजी कहें जो ऐसे भक्त स्त्री
घर पुत्र प्राण वित्त सर्वस्व को समर्पन कर मे
री सरण होइ रहे हैं तिनको छोडिवे को मैं के

...करें मेंउनकी श्रष्टमहरएलाहीकरनहो ताते री
...होइ भक्त सरणहैं तिनकीएलाप्रभुश्रापुकरतहैं सर्वं
...मर्थप्रभु... श्रीकृष्णसै ब्रजराजजो श्रीनंदरायजीकेपु
...न श्रूपनी... यसोदाजीकेश्रंकके भूषणहै एसे
...श्रीकृष्णहमकोश्रबदरसनदेहुगे नाम ५० भरोसे
...नामें तिश्रीस्वामिनीजीविप्रयोगविरहमेंललितासेंकहै
...प्रभुके नामकहत कृष्णतदेहानुसधान भूलिगएमहा
...के गिरी विरहमें नन्म यहोइबोली सोश्रागेंकहै
...हैं श्लोक हाकृष्णहामरानंदहावृंदावनभूषण
...नंदराजतनय हायसोदाकेवलन १ श्रर्थ
...स्वामिनीजीकहतहै हाकृष्णहाश्रीकृष्णनाम
...है सर्वे वेदके स्मृतिको सार सो ब्रजभक्तश्री
...कृष्णकेनामकोसुमरतजपकरतहै ताहीतेंश्रीश्रा
...चार्यजीमहाप्रभुंने श्रष्टाक्षरपंचाक्षरमेंयहीसर्वोपरी
...हीकोपानकहारोहै विरहकरिहाकृष्णकहैं हास
...दानंदश्रुमतोसदानंदरूपहो सोहमकोश्रानंदहेहुंस
...वृंदावनके भूषणहै श्रीकृष्णतुमतो श्रीवृंदावनतेंएक
...पाउं बाहिरनाहीजात भूषणरूपहो हानंदराज
...नंदनयपुत्र हायसोदाजीके श्रंकमेंखेलकेवाती
...ऐसे श्रीकृष्णहमको श्रबदरसनदेहुगे नाम ५५ भरो
...से श्रागें श्रवश्रौरहू कहतहैं श्लोक हागोपिकेस
...हानाथ सा गोकुलपुरंदर हाहाब्रजजनार्तिघ्न हाह
...निसाधनाश्रिप १ श्रर्थ श्रबकहतहैंजो
...हा गोपीजनके ईश्वर हानाथ तुमतो हमारेनाथ
...हो यहहमारी एलाबेगिहीकरो जैसें पंचाध्यायीमेंवि
...रहकरिभक्तकहतहैं हानाथरमणप्रेष्ठक्वासिक्वा
...सिमहाप्रभु हा स्पोविक्षपनामयासखेदरसनस
...निधि: तैसेंहीइहांकहेहैं हानाथहे गोकुलकेपतिपु

हुजेसें एक छिन भोग नाही छोडत नेसें तुम गो
केउ हो या तुम्हको पुनि ठि रहे हो हमकों ध्याने द
जनके प्राति के हरनहारा तुम पूजन भक्ते.
विना ही सहे हो फा हेतो देपत्र छाडि तिनि गवा।
जनपक्षे कृपि तवउ इसगारव जयो लिखे कोउ पुने
घपूठागा। सो गो कहुं न जठाय सगारे कजवी र द्यालो
री। सर्व दिर्ह इसमुदुमें हम उवत हो पितु मही का नव
सें सामर्थ्य हो। नातेंविनि विरहे पाछिपे रा। पोतनुपसे
सेंहो। निसाधनभक्तेः अधिपति हो। सोह मंविरद्व
रिके वाल्लुवाई हेह ही मनसगारे छिपत दोष ही कृ
साधनकारि रहित निःसाधन हो। प्राकृपके.
आति हरो। नाम हैं [illegible]
नहें लीक॥ [illegible]
[illegible]

या भांति समस्त स्वामिनी विप्रयोग करत हैं नाम ६४
भये। आगे अब छठे श्लोक कहि पत्र पूर्ण करत हैं।
श्लो। एवं विधा निसतं जल्पिता ति मुहुर्मुहुः। अव
गत्य च भावेन भावनीयान्यहर्निशं। ६। याको अर्थ। या
[illegible] जो निरंतर श्री स्वामिनी जी बारंबार ज
ल्पना [illegible] श्री ठाकुर जी प्रगट के समस्त श्री स्वा
मिनी जी के हृदय में अनेक लीला करि रसदान क
रि उनके मनोरथ पूरण ही करत हैं सो या में ६४ नाम
कहे ताको अभिप्राय यह है जो चतुर्थ यूथपति हैं सो
एक एक यूथ की स्वामिनी षोडस नाम षोडस श्रृंगार
त्मक सर्वोपरि रस को अनुभव लीला सहित करत हैं
ताते ६४ नामक है हैं अब श्री हरिराय जी पुष्टिमार्गी
य भगवदीय सों कहत हैं जो तुम या भांति स्वामिनी के
विरह भाव की भावना अहर्निश करो तब श्री स्वामिनि
जी की कृपा ते हृदय में भाव स्थित होइगो तब प्रभु अप
नो अनुभव करावेंगे यह सिद्धांत सर्वोपरि है ॥६॥ इ
ति श्री हरिराय जी कृत सिद्धांत पत्र [illegible] नाम टी
[illegible] श्री [illegible] जी कृत संपूर्णं ॥ ११ ॥ अब चोरह कहत
कहि आप जो या प्रकार विप्रयोग करें तो
भाव सिद्ध श्री स्वामिनी जी की कृपा होइ परंतु यह का
ल महा कठिन है सत्संग नहीं है दुःसंग बहुत है सो बु
द्धि सब की भ्रष्ट है ताते यह विप्रयोग व्यर्थ है तातें
अपने मन में विचारि दैन्यता करि के प्रभु प्रसन्न होय
सो उपाय कहत हैं कालः कराल समुपागतो यं मति
मतां प्राग्गहरत्समस्तां नौ श्री वल्लभाचार्य जी समाप्ति
ता नाथः कालः कालः सर संसरा व ॥१॥ याको अर्थ य
ह काल महा कराल कठिन है सो सत्पुरुषन की
मति हरि लेत भयो तो श्री आचार्य जी के का गति है

समस्तलोकी बुद्धिकों परस्खलित युगान्त्याय स्थपते
तें सर्व हरि लीलाहि नहीं को कहे हैं जो कोई कोई यह
लक्ष्यो हों सो परकाल । तहां श्रीहरिरायजी कहत
जो को ग्रीव श्रीआचार्यजी महाप्रभु को आश्रय
न समन धन को विकार हे हैं । तिनको नाश बाधक सन
तो श्री उनको सहाय कहे । सम्हरि गोहि होइ
इन में फल सिद्धि हे । सो ताको सब लोक धर्म को विकल है
है सो लोको । कार्य न बाचा मनसे हूँ योबो धातना
बाकु सत्स्वभावाना । करोति प्रयत्न सकल परस्खलनात्
यानि येति सम प्रयत । या भांति प्रभु को सब नाथ बन्यो
आ चार्यजी द्वारा पाइ है । तिनविंत हूँ ईश्री आचार्यजी
महाप्रभु को आश्रय कीयो । तिनको यह बाधक नाहीं बा
धक हैं । द्वादशस्कंध में श्री शुक देवजी कहे हैं लोक कू ॥
कलि दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान्गुणः । कीर्तनो
देव कृष्णस्य मुक्तबन्धः परं व्रजेत् । यद्यपि हे राजा कलि
युग दोष को निधि है । परन्तु एक या में महान गु
ण है । श्रीकृष्णदेव को नाम लेवे ही ते नकार न है । सो सब है खे
तारें सिसे प्रभु को पावत है । ता तें श्री आचार्यजी को नाम
जो बे सब धर्म भयो । तिनको यह काल परम सुखदा
१ नहीं को है पूर्व पक्ष करे जो तुमारे सेवकन को इ
स्वाधक होय है । ऐ विपत है । या भांति की संका है । तन
श्रीहरिरायजी कहत है । श्लोक ॥ नसेवा न कथा
भावन नापि सं श्रयः ॥ नित्य सृष्टि गमन सा कथं
प्रथा ख्याति ॥ १ ॥ याको अर्थ ॥ अथ श्रीहरिराय
नहीं जो एसे जीव है । तिनको तो काल बाधक हो
जो पुष्टिमार्ग में प्रथम भगवत्सेवा मुख्य पु
कीनी । तिसो भगवत्सेवा है नाही करत न
... नायजी के ग्रन्थादिक साधुन नः

२ मैं भगवद्धर्म आवै सो कथा हू नाही सुनन को ईश्वरे
८ तोहैं इत्यादिक सहायनाही है नथा भगभंगरोगी है
भगवद्सेवा न बनी तो कथाको तो ई भगवदीयकहे
सो हू न मिले तो मनही कर प्रभुके नाम स्वरूपमें
सरनकी भावना हे तो लाकी भावना मनमें भावि
चारें यहन बने तो लौ चित कबै हि दुखसुखसां वैठो
हिरवरसंश्रीआचार्यजी महाप्रभुके चरणकमलको
आश्रय राखे याभांति कहूं भगवद्धर्ममें मन लगा
वै है संबंधी संसारामि दुखे सुख नाहीं मिलगाइके
नि जे तो कष्ट भरे दुखसुखमें हाय हाय करै तो ति
नकों इहां काल कहा करे इनको बाधक हीं करे तहां
कोई प कहे जो सेवा एक तथा कथातें कहा होइ कलिके
हाय तो बहुत है याभांति कहैं तहां कहत हैं जो नव
मस्कंधमें श्री भगवान आप कहे हैं तो दुर्वासा प्रति
श्लोक मत्सेवया प्रतीतं च सालोक्यादि चतुष्टयं ने
च्छंति सेवया पूर्णाः कुतोन्यत्कालविप्लुतं इति वचना
त भगवान कहत है जो जाजीवको मेरी सेवामें प्रतीत
है विश्वास है तिनको में चार्योमुक्ति देत हों सालोक्य
१ सामीप्य २ सायुज्य ३ सारूप्य ४ सो नाही लेत हे
मेरी सेवा करि पूर्ण हैं तिनको काल कहा करि सके
मेरी नाही चलत है औ भगवानकी कथा कैसी हे
सो सप्तमस्कंधमें श्री शुकदेवजी कहे है श्लोक नस्मा
त्सो दिव्यमानात्म्यमानं रसमसुधरा प्रणयात्कीर्तयन्ति
तं सत्कृताधीन संश्रयाः १ इति द्वितीय स्कंधे शुकवाक्यं म वि
पृथकारो ऽधुरां स्वाहा ना भावसरोरुहं धुनेति समल हृत्स
सतीस्त्स्य यथास्मृतं २ इति वाक्यात् शुकदेवजी
कहत हैं जो श्री ठाकुरजी की कथामृत सुंदर सुनत है
नित्य लोक कृतार्थ रूप है तिनके चरणारविंदमें श्रीठाकुर

ीकी कथा मन करि धरनी। रहस्य में जानत हैं। तिनको स
रेदीय रहस्य ते जानत हैं तिनके भगवदीय रहस्य में हैं
तिनके हृदय तें सो कथा कहें सुनें सुन पाछें श्री स
अनुवाद करे सो तिन जीवको कृतार्थ होय सगरे
जन लावें लाय सगरे आस पास के पवित्र होय। ऐसी
कथा करें जाते भगवद्धर्म में मन होय ताको यह का
न बाधक नाहीं है और सबको बाधक होय। स्यागो
वयो इहां कहत हैं श्लोक॥ सत्संग दुर्लभो हृदय संग स
चिन्तावृत्ते अनायासेन सम्बन्ध की गति मैं भविष्य
ति॥ अस्यार्थ॥ श्रीहरिराय जी वह कहत हैं जो स
संग तो महा दुर्लभ है और दुष्ट संग विना यह जीव
तो स्वभाव के रिके दृष्टी है तामें सत्संग दुर्लभ है
और दुष्ट संग विना चिन्ता नाहीं आपते विन जतन रहे सो
हि सत आवत है सो जीवको भगवद्धर्म में लागन ना
हीं देत हैं दुःसंग को गाथ होइ सो बाधक होत है यह
नो हे सो दिसात दुःसंग होत है सो बाधक होइ। याते
कहा कहत हैं सो श्रीगुसांई जी विज्ञप्ति में कहे हैं। या
गीकृष्ण भगे गीत गीत नाहीं तो स्मरण या सम्बन्ध गाथा
कथा सो बाधक तो या भांति कृष्ण सम्बन्ध होइ गाथ हन
गराव के सो रसरीत तो ऐसो दिसात दुष्ट संग विना
नन आवत है सो मेरी अनुभव के होत गति होत नाही
मोको नानि नाहीं पस्तो। अत्र गोस्व संग को है
नहीं श्लोक॥ संगो हो यनु माव लेते कोऊ दुःख तु
वाग्वाक लीक तु मधु नाम सो बालक की बुद्धि
याको अर्थ॥ अपरको है जो दुःसंग हे सम्बन्धी सं
सो लागत है नाम मतो को हिये तिनको दुःसंग को
पास राखि ऐसे अनेक भांति विना
कैसो लत है

कारे जगत मैं ऐसेंही मनुष्य मोकों मिलत हैं सो हे प्रभु
ग्रहस्थाश्रु नीके जीवके तुम ईश न चावत हो काहूकी
सुनी लगत ओरत मा रहे थई सगाजेंनहे तुम जंत्री
हो जा भांति बजावो तैसेंही बाजत हैं ओर तुम तो वा
सकों भी नाच कों भावत हो रखवाल करत हो सहज मे
हू सन याससगारो जगत यह मायाकरि भ्रमत है या भां
ति करि ऐसें श्रीहरिराइजी कहत हैं जो अब हम पर
कृपा करो मैं अत्यंत दैन्यता होय प्रार्थना करत हों ताते
अब मो पर क्षमा करो यह माया करि प्रेरित दुखसु
रहत हों ताकौ या भांति प्रार्थना करि अब दैन्यता सू
म सो [illegible] करत हैं ४ आगें अब ओर हू कहत हैं सो
हे नाथ स कृपानाथ गोपीनाथ स्यामिधे रुक्मि
णी रमानाथ त्रिभुवनाथ जगन्नाथ ५ या श्लो
श्रीहरिराइजी कहत हैं हे नाथ हमारे तुम नाथ
हो स्वामी हो ताते तुम बिना ओर हम कोन सों दु
ख सुख कहें अब यह संसार दुखना हीस घो जात
है तुम अपने जानि दया करो हे कृपानाथ तुम आ
गे ते अपने जीवन पर कृपा करत आए हो सो अब ह
म पर कृपा ही करो काहेतें तुम गोपीनाथ गोपीजनके
नाथ हो गोपीजन निःसाधन तिन पर सदा कृपा करे उ
नके कारज सिद्ध करे तैसें हम हू निःसाधन हैं हम प
र कृपा करो ओर तुम व्रजके नाथ हो कंसने धीत्र
कहे न पठायो सब को मार अग्नि तें जल तें कालन के वि
ष तें सर्वप्रकार अपने व्रजकी रक्षा हीकीनी तैसेंही
हमारी रक्षा करो रमा जो लक्ष्मी तिनके नाथ हो अब
प्रभु हम पर प्रसन्न होउ ओर अपने भक्तन को निज
भक्त के नाथ हो भक्त प्रसन्न रहें सुख पावें सोई करतहो
सो नवमस्कंध श्रीभागवत में भगवान द्वीपा प्रति के

हे हैं श्लोक ॥ अहं भक्तपराधीनो ह्यस्वतंत्र इव द्विज। साधु
भिर्ग्रस्तहृदयो भक्तैर्भक्तजनप्रियः ॥ १ ॥ मैं भक्तन के पराधी
न हौं स्वतंत्र नाहीं हौं। हे द्विज भक्तजन मोकौं बहुत प्रिय
हैं मैं भक्तन के सदा हृदय में रहत हौं। याते तुम अप
ने निज भक्तन के नाथ हौ। ताते हम पाय परैं। और जगत्प
ति हौ। सगरे जगत में तुम ही करत हौ। सो इहि तें नाते
तुम्हरे पाय परौं गी। तव यह कालनु तुमकौं देखि निश्चय यह
नाहीं है हि गोप ॥ आगें अब के और हू कहत हैं श्लोक ॥ गो
कुलाधीस गोपीश व्रजाधीश व्रजप्रिय ॥ गोपालनंदनिज
नंद गोकुलानंद गोप्रियः ॥ याको अर्थ ॥ हे श्रीकृष्ण तु
म गोकुलाधीस गोप व्रज के राजा हौ। सगरे गोकुल वासी
तुम्हरे कारि सौं भिन्न हैं। गायन के रक्षक तुम ही हौ। गो
पीजन के ईस तुम ही हौ। और सगरे व्रज के राजा तुम
ही हौ व्रज तुम कौ प्रिय है तुम व्रज कौ प्रिय हौ। परस्पर
सौं है समस्त धर्म ब्रह्मा नेत्र थों हैं। अहो भाग्यमहो भा
ग्यं नंदगोपव्रजौकसां। यन्मित्रं परमानंदं पूर्णं ब्रह्म
सनातनं ॥ इति वचनात् ॥ व्रज के जनन के अस सो दा गो
प गोपी के परम भाग्य हैं। जो जिनको मित्र श्रीकृष्ण पर
मानंद रूप है सगरे व्रज कौं आनंद दाता हौ। और
अपने निज आनंद में मग्न रहौ। निज भक्तन कौ हू अप
नौ आनंद दान करत हौ। गायन के कुल तिनकौं आ
नंद दाता हौ। काहे तें गाय तुम कौं बहुत प्रिय हैं। गो
भागवत में यों कहे हैं ॥ आगें गाय पाछें गाय इत गाय उ
त गाय गो। विंद कौं गाइन में रहिबोई भावै। ऐसौ
गाइ प्रिय है। अब सो श्रीकृष्ण सब ऊपर कृपा करौ ई श्री
गोप्रवधू रक्षै ॥ श्रीहरिदास्या स्विधी

छायाकौ अ

हनहे हाहा प्रभु तुमके सेंहो। निःसाधन फलात्मक हो
सो हमारे पर कृपा करो और तुमने कृपा ही करोगे य
ह निश्चय है परंतु हम को धीरज नाहीं रहत है ताते
विज्ञप्ति करत हैं सो श्रीगुसांईजी विज्ञप्ति में कहत हैं ए
वं दासस्य स्वभावोयं समये वारि मुच्यते तथापि चा
तकः पिबन्नीरं रटत्येव न संशयः १ सेवक को स्वभाव है त
[illegible] तिन के मन में वरा मिले समय आवे जैसे चातक
नहै परंतु [illegible] स्वरूप [illegible] वर्षा दिन सों रटिवो
[illegible] तैसे श्री कृष्ण अपने भक्तन पर निश्चय कृपा क
रेंगे भक्त को आर्ति कर्तव्य है हे दयालु धीरज तुम वे
गि ही दया करो काहेते तुम दया करो तो सगरो अ
नकूल है जाय माया बाधक न होय और तुम जहां ताईं द
या में ढील करत हो तहां ताईं माया करि हम दुःख पाव
त हैं सो श्रीगुसांईजी विज्ञप्ति में कहत हैं श्लोक नाथेन
कूलता याते सर्वो यात्यनुकूलताम् तस्मिंस्तद्विपरीते
तु सर्वमेव भवेत्तथा १ हे नाथ तुमारे अनुकूल ते सर्व
अनुकूल है तुमारे विपरीत ते सर्व जगत विपरीत
भयो है ताते तुम दया [illegible] तुम के से हो श्री स्वा
मिनीजी राधिका वे वरपति हो परम सुंदर हो और ह
म बहुत दीन दुःखी हैं ताते कृपा करो भली मेरे दोष
देखि कृपा में ढील करत हो तामें निरंतर अपने श्री
वल्लभाचार्यजी की आश्रित हों यह जानि के श्री आ
चार्यजी महाप्रभु की कानि करि के कृपा करो या भां
ति दैन्यता करि [illegible] अपने दोष की स्मृति होय
प्रथम विरह करि के प्रभु के नाम लीला संबंधी कह
ता करि [illegible] महाप्रभुजी को आश्रय पाछे अ
पने दोष स्मृति सो श्लोक कहत हैं ७ श्लो [illegible] हर्ष
सुदोष [illegible] निःसाधने [illegible]

यथो। स्व श्री हरिराइ
ुरयावू रस्याकूं सेवायाको दुष देहो। सो थोरो हु रूप करि दुष
वहत है जो मैं बडो दुष देहो। ... भांति के मानसी क वाय कूं
दीही। अपराध अनेक भांति के ... ता करि दुःख है।
कवचन करि अपराध पत ता करि ... सो महा गायो है
ुरसभागवत धर्म करि ... भागवत सो सुगाई ...
भाप मैं भागवत धर्म नाही लिख्यो ... सुमर स मैं
हो। हे म र ... क जो मरो सो ही जो तुम ... नाही वचन है मति
नि:साधन है। मो लें साधन ... नाहीं। ... जो मैं तिनप रवस
करि रहित है। अनन्य मति ... सो जो मैं मन सुर है। मैं निःसाधन
ही अवश्य मद ... का दे मैं प्रभु ... सो दोष कियो
रमति हे खो। ताते ... प्रभु ... ऐसो भांति कहा
हे ब ... दोष ... सोन ... कहत हैं श्री
तरह श्री ... सो ... विर ... पाप तिउ ... ता
क॥ वालिस्यामपि ... विधर्मन॥ ... परा धर्म
याइ ... धर्म ... ऐश्वर्य भाव ... कि
भागवत ... कायाव ... जो ... यद्यपि ... बहु नहीं ...
...दूत या वन ... यद्यपि ... कुमारी ... ईश्वर
...तन कुमारीरूप के ... दुर्वल ... ताते ...
धर्म रूप है दोष ... नि:साधन: फल
करो ... सो तुम ... अधिपति ... तिनकी गान ... तुम
महा ताते ... धर्म ... महा ... ऐसो
तो ... नाहि ... है ... पुन के भाव
... जाय ... महा ... सो ... नाहीं। ताते
मैं ... यन नाम लीयो। सो ... नहीं ...
तुम ... सो ... कह ...
रस्याकूं ... भाव ... इन ...
वतस्वेत ... तो निरूपण ...
... सर्व ...

रसोई है संबंधी नाम अरु है नाममता करि मेरे चित्त पर
ही सो यह संसार ते मेरे चित्तको निवर्त करो निरोध
और तैसे ही आपने में लगावो जैसे भक्तन के चि
कलीलान करि आपने में लगाय है श्री कृष्ण माखन
में भक्तनको चित्त हरो सो प्रभु चोरिकरि आपने
गाये तैसे ही हे श्री कृष्ण निरोध याही ते कहि है मो
न आपने में लगावो आपने हृदय में विचारि जो ये
र प्रभु है आपने मन में जानि आवश्य कृपा करत
आपने तुम भक्तन के हृदय में सदा स्थित हो सो
परत कृपा करो जो आपना स्वरूप आनंद करत है सो
हृदय स्थित सुखानुभव सुखित राखत है सो
हरणः श्री कृष्ण स्मरण मम [illegible]
तुम देखे आपने भक्तजो दुःखलेश करि पीडित
इ सो तुम नाहीं देखि सकत भक्त [illegible] हे सो तुम के
भावना है भक्त दुःखी होय मलीन सुखदेय सो तुम न
हीं देखि सकत काहे ते सर्व भूत प्राणी मात्र के सुख
दाता सो भक्तन को दुःख कैसे देखोगे यह विचारि के
मनोरथ चिन्ता होत है जो भक्तनको क्लेश सब सहन
करो सो दिनमें श्री गुसांई जी कहे हैं सो काहे नाहीं
[illegible] भायो है ह्योगो [illegible] भक्त लेश सहि सुत
मेरे भाग्य है है गोकुल [illegible] जानत हो जो मेरे अवध
[illegible] मेरो भक्त ले सब
मेरे कहा [illegible] सर्वभूत प्राणीकन मेरी सुख दाता हो
आपने निज भक्तनको दुःख के अत्यंत करुणा करि
ही करत है [illegible] के करुणासिंधु श्री कृष्ण
[illegible] और वह भाव रस को आगाही
करत है १० आगे श्लोक और कहत हैं श्री

का। आत्मस्वरूप ज्ञानने होनि जानें हा आश्रय स्थित। स्वरूपानं
द देता। श्री सकलशरणं ममा।। अथ को अर्थ ए श्री सम
उमवे से हैं। अपार बहुत ज्ञानेंद्र कवि पूरि है हैं। पर
मानंदरूप ही हैं। तुम आप ने निज मलन के धोनें द्र
ना हैं जो कोऊ तुम रे आश्रित हैं। तिन के आश्रित तु
म ही हो। तिन को स्वरूपानंद के देन वा रन हो। सो र
समस्त धर्म आनंद शरणी क हैं। मन सो हून्यो नें सुक्र
स पाप दुःख जाय या।। ता आश्रित विना दीनता क यस
न्मक यां हित। मन वचन काय कर श्री वंदू के पदा तु
न के आश्रय तो है तिन को धो स्क रथ के छूना ही कृतज्ञ
है सर्व पिछि भयो ताते जो भक्त तुम रा आश्रय को यहि
तिन को स्वरूपानंद के दाता हो। एह जो श्री सकल तिन
की सेवा रत हो सोन दूस को श्री आचार्य जी महा स
मझक है तैं तज्ञान सर्व किन्ना नित्य श्री सकल सर णं
ममा। तिन श्री सकल की शरण की भावना करनी
है और भाव रागी तामैं श्री सकल के है सर्व धर्म जल परि
न ज्ञाम मैं क सरण जैन सा हत्वा सर्व पाप भयो मोह
पिच्छा निमा गु च।। ए हि ज्ञ जै नन सर्व धर्म छो डि शरण
आत्म मैं आश्रय न को नाक स्व को।। उ पाधि मन
न वचनें तातें श्री सकल तें कछु धर्म नाही वनि
आवत ताते तुमारी सरन की भावना करें तो फल सिद्ध
होय।। गति श्री लघिराज्ञ प्रहत सि साप जनता कोटी करी
गोपच्छ रही सकल पूर्णे।। २७।। सर्व श्रीर हु कहन है जो
कुस्कल की शरण की भावना करें सो श्री सकल के चरण
शरण ग्रहे की सरण बहुत दुख भये हैं पाप को न प्र
कार सिद्ध होय सो आवे आगम कहत है जो या भांति रहे
तो सर्व राग दि भांति सिद्ध भयो।। श्लोक।। श्रीमत्प्रभुप
स्यु गतेस्यावश्च चित्तस्य मन्या रिपन स्तु

सि०प०वं भवति तदीय मप्स वेतः सर्व लोक [illegible] को अथे
७२ [illegible] जो मेरे प्रभु श्री आचार्यजी महाप्रभु तिन
सो ऊंच [illegible] मैं आपनो चित्त स्थापन कीये
सो [illegible] परम [illegible] कारी है भक्तिरस
अनुभव करावत हैं तासों [illegible] चरण को आश्रय
पुष्टि [illegible] अनुभव होत है इन चरणन के आ
श्रय ते मर्यादा भक्ति को अनुभव होत है सो श्रीगुसां
ईजी लिखत [illegible] पुष्टि भक्ति स्थिति हृदय
[illegible] मर्यादा पु
[illegible] श्री [illegible]
[illegible] प्रभु [illegible] हेतु
[illegible] मर्यादा भक्ति
[illegible] महाप्रभुजी के
[illegible] श्री [illegible] देव तुम्हारे तदीय के सर्वस्व [illegible]
[illegible] सिद्ध
[illegible] जो [illegible] श्री [illegible] देव
[illegible] तिनको [illegible] होय
[illegible] लीला [illegible]
[illegible] पर [illegible] मास [illegible]
[illegible] श्री [illegible] सर्वेदम
[illegible] तिनको प्रभु [illegible]
[illegible] सो श्री [illegible] श्री आचार्यजी [illegible] शरण
[illegible] जीव [illegible] निश्चय [illegible] ही है
[illegible] कर [illegible] विरोध
[illegible] ता [illegible] जन तो [illegible]
[illegible] रूप जो श्री [illegible] सबे [illegible]
[illegible] होत [illegible] आश्रय

महाबाधक है अन्याश्रय । सो बाधक है जो तदीय
भगवदीय को ही चरणकमल के आश्रय से विरोध ही
करे तो चोऽजी के शब्द हुते सो तो गिरे ही अन्यदेव
मनुष्य राजादिकन को आश्रय न करे तिहां कहत हैं भग
वत्पदपद्मपरागसुधानहियुक्तिनरं मरणापि नो ।
इतराश्रयणं गजराजगतो नहि रासभमप्युररीक
रते ॥ श्रीप्रभु वोन्ने चरणकमल को छोडि अन्यदेव
को आश्रय सो है जैसे हाथी की असवारी छोडि गि
धा पर चढै स्वाति में कहे हैं ॥ हारीत स्मृतौ ॥ नान्यदेव
नमस्कार्यो नान्यदेवं निरीक्षयेत् ॥ नान्यदेवं नम
स्कार्यो नान्यदेवं निरीक्षयेत् नान्यप्रसादं भक्षयेन्ना
न्यदायतनं व्रजेत् ॥ पुनः अन्यत्र गायत्रु तथैवानो
न्यसाधनात् ॥ अनन्यभोगपभोगपाये न तु सर्वाधिकारि
णाः ॥ इति वचनात् ॥ यो देव को नमस्कार न करे अ
न्यदेव को प्रसाद न ले अरु अन्य प्रभु की सरणा है सो
धन सो स्मरणादिक भी सखी कहै न प्रभु प्रसन्न हो
इ अन्याश्रय करे ताके ऊपर प्रभु उदासीन होइ जाइ ।
सो जैसें वल्लभा सामर्थ्य है वैसे ना ही है तो आन्याश्रय
करत हैं जैसे रामोदरदास संभल वारे की स्त्री ने च
क अन्याश्रय कीयो ॥ तातें पुत्र मरिले छुभयो बहुत र
सपारस तातें वे सब भगवदीय को अन्याश्रय नि
ग्रहसी द्रुत्याग करे ॥ सो बाधक है ॥ अथ आगे अव
श्य रह कहत हैं ॥ श्लोक ॥ असंसाध्ये वस्तूना भाव
बाधकनीयन: यथा व्याघ्रबाधकस्याछूरीरा खेरा
री ॥ ३ ॥ याको अर्थ ॥ अन्याश्रय छोडि के कहे तो भग
वद्भाव में असमर्थ बाधक है ता को तो छिके रहे
न कहत हैं ॥ जो जैसे व्याघ्र जानो हर के आगे मनुष्य जा
य तो सरीर को विघ्न ही होइ ताके रिसेह को नास हो

पा.० हूनेसें दी असत्संग होय छ तो भगवदीय भावको निश्चय ना
स होय ता असत्संग तो जडभरथको तीन जन्म लेने भ
ये। द्विविद्वान सो नरकादुःख सगते श्री ठाकुरजी ति
नकेसंग नाते असत्संग महाबाधक जानि तत्काल छो
डनो। आगे अवश्य रहकहत हैं सो कहै। असत्संग
त्यागमें श्री महाचार्य पंडितन्ये थामें सव सरीरा
सेनादीयम प्रकारतं धयायो अथवा प्रमाण श्री हरि
रायजी कहत है जो असत्संग महादुःखरूप है जो अ
सत्संग महा दुःखरूप है तो असत्संग बाधक सो हमारे
श्री आचार्यजी महाप्रभु महापंडित वेदसास्त्रपुरा
णश्री भागवत सर्व मथिके श्री सुबोधनीजी आ
दि ग्रंथ प्रगट कीये हैं तहां अन्यास्रय अरु असत्सं
ग महाबाधक ठहरायो निरूपण कीयो है तातें आ
पने सरीरको ये ही उपाय करनो जो भगवदीयके सं
ग ही रहनो भगवदीयके संगतें छुटत नहीं बाधक है
या भगवदीयके संगतें सगरो असत्संग छूटि जाय
निश्चय भावतें सरीरको अध्यासकूं छुटे अरु श्रयते
बुद्धि धा आगे अवश्य रहकहत है सो कहै। विधायस
वस्य सीतं विधेयं तस्या गतः सत्संगतें असतोक निष्टवे
नकसप्रवायापसत्यावो अथ यो या भांति असत्संग सोम
हाभयरूप है यह निश्चय सिद्धांत मनमें जानियें जी
वको यही योग्य है यही करनो है। यातें भगवद्भ
मैं यने तो छूटे नाहीं परंतु असत्संग न करै सत्संग
करै तहां सत्संगको रहो है तो भगवदीयकी निष्ठा
ये नस्माग यह पुष्टिमार्गमें निष्ठा होय ताहीको संग
करै सर्वथा औरको संग न करै कारण है तें एतन्मार्गी
य भगवदीयके संगतें अपने पुष्टिमार्गकी सगरी री
ति जानें मार्गमें पूर्ण निष्ठा होय भाव बढै सर्वथा स

प्रसिद्ध है ॥ ७ ॥ आगें अब और कहत हैं श्लोक ॥ सम
र्पेन तु सर्वथा निवेद्य मिलितैः सदा ॥ इदमेवास्मदा
चार्य मार्ग साधन मतन्मसे ह्रियाः ॥ अर्थ ॥ भगवदीयके
संग मिलिके यह कर्तव्य है श्लोक कहत है ॥ श्री ठाकुरजी
कों सर्वसमर्पन श्री आचार्यजी महाप्रभु द्वारा समर्प
न कीयो है सो भगवदीयसों मिलिके विचारो ॥ कहा सम
र्पन कीयो ॥ यह कैसो कीयो सो कहत है ॥ कि अपनी वस्तु
प्रभुमें अंगीकार होत है सो नसी इंद्री वह सुख है तथा
कितने दिन तें प्रभु ते बिछुरे हते ॥ सो अब श्री आचा
र्यजी महाप्रभु कृपा करिके दीये हैं सो कोन प्रकार सम
र्पण करे इत्यादि भाव भगवदीयसों मिलिके विचारे
हैं ॥ भगवदीयसों रहे जो देह कृपा करिके बतावे यही
श्री आचार्यजी महाप्रभु के पुष्टिमार्ग में उनसों साध
न है ॥ भगवदीयसंग निवेदन को स्मरण नाहीं तें न कर
ल ग्रंथ में श्री आचार्यजी महाप्रभु कहे हैं ॥ निवेदनं तु
स्मर्तव्यं सर्वथा तादृशैर्जनैः ॥ सर्वथा सर्वदा तो ऊपर
सो भगवदीय को संग सर्वथा करनो ॥ तथा सर्वदा नि
त्य करनो ॥ उनसों नित्य निवेदन को प्रकार सुनिके स्म
रन मन में भाव राखनो ॥ यह सत्संग है ॥ श्री आचार्य
जी महाप्रभु के मार्ग में उत्तम ते उत्तम साधन है ॥ सो
इ करे या ते विरोधी साधन न करे ॥ ८ ॥ आगें और कथे
र कहत है ॥ श्लोक ॥ स्वाचार्यचरणद्वन्द्वदास्यया
मात्मनः ॥ विधेयं तेन सकलमस्मिन्मार्गे भविष्यति ९
या को अर्थ ॥ अपने श्री वल्लभाचार्यजी के दोउ चरणा
रविंद तिनको दृढ आश्रय मन में कीये हैं ॥ और जो कोई
पुष्टिमार्गीय जीव करें आदर प्रवेश तिनके हृदयमें

सस्य पुष्टिमार्ग को सकल सिद्धांत जाने

चार्यजी महाप्रभुके चरणकमलको आश्रय दैवी जीवन
कों निश्चय दीनों है ताही करिकें सकल कार्य सि
द्ध होयगो यह हमारे मार्गको सकल सिद्धांत जाने यह
हमारे मार्गमें अनुभव होय यह सिद्धांत सर्वोपरि ॥७॥
इति श्री हरिरायजीकृत सिद्धांत चतुर्दशी टी
का श्री गोकुलनाथजी कृत संपूर्ण ॥ [illegible] कहे जो
भगवदीयको संग करे तो आपने श्री आचार्यजी महाप्र
भुनके चरणकमलको आश्रय करे तो यह पुष्टि
मार्गको फल सिद्ध होय आप श्री महाप्रभुजी को आ
श्रयको न भांति करे तब हाथ लागे [illegible] कहत
हैं तो याभांति श्री आचार्यजी महाप्रभुनके गुणके
अहर्निश स्मरण करे [illegible] यह पीछे जीवनको न
दुःख लेशमात्र न होय सदानंदः [illegible] तस्मात् क्रि
यतां [illegible] अपने अंगीकृत जीव जो यह
पुष्टिमार्गमें [illegible] तिनको दुःख [illegible] कहे होय
दुःखको नाश होय सो श्री आचार्यजी महाप्रभु नाहीं
[illegible] आपने जीवनको सकल दुःख दूरि करिकें
सदा आनंदको दान करत हैं ॥ श्लोक ॥ यो नि जानाति
संततम् [illegible] विस्मृतं [illegible] प्रादुर्भवति चित्त
[illegible] यह जीवकी
[illegible] नतो विश्रांति
नतें यह चौरासी लक्ष योनिमें कोटान कोटि वार भ्र
मतें जन्म मरणके अनेक प्रकार दुःख पाये हैं तिनहीं
में परयो पावत है संसाराग्निमें महासंतप्त है जद्यपि
दैवी जीव हैं [illegible] दासपनो भूल्यो श्री प्रभुके
स्वरूपको भूलि गयो है ताकरिकें महादुःख है संसार
में याभांति जीव अपनो [illegible] महादुःखी होत हैं श्री
ठाकुरजी दया करिकें विस्मृत भयो मनमें [illegible] करत हैं

मारेदैवीजीवबहुतदुखीहैं।यहकरुणाकरिश्रीहरिसरू
पश्रीआचार्यजीकोस्वरूपजेसेंश्रीहरिप्रगटेनाहीभा
तिगर्भमेंप्रादुर्भूतहैया।आपनेदैवीजीवनकेअनेककृ
रकालकेसगरेदुखदूरिकीने।तासेंश्रीआचार्यजी
महाप्रभुजीभक्तवछलपरमदयालतिनकोस्मरण
सदाहीकरनोंयेसेंश्रीयोगेश्वरकहतहें।श्लो
क।यःस्वान्सेवकान्नाहिपराश्रयनिवारकः।रूपा
सरित्पतिहस्ततस्मृतिःश्रियतांसदा।१।याकोअर्थ
जेसेंश्रीहरिसगरेव्रजभक्तनकोंअन्याश्रयछोडायोहै
इन्द्रयज्ञछोडायगिरिराजधरायोआपुआरोगे।औरविकुप्र
जनमेंश्रीनंदरायजीकोदंडदेकेछुडाये।तेसेंहीश्रीआ
चार्यजीमहाप्रभुआपनेसेवकनकोंपराश्रयअन्य
देवकोभजनछुडायो।एकश्रीहरिहीकोभजनबता
योसर्वथाऔरतेंनिवृत्तकरिएकश्रीकृष्णहीकीसरणकी
यो।सेंश्रीहरिकेसेहेंकृपाकेसमुद्रहें।तिनाकोंअंगीका
रकरतहें।फेरिकबहुछोडतनाहीं।भक्तपक्षपातीके
स्तहें।सोनवमस्कंधमेंभगवानकेहेंहें।श्लोक।अ
हंभक्तपराधीनोह्यस्वतंत्रइवद्विज।साधुभिर्ग्रस्तहृ
दयोभक्तैर्भक्तजनप्रियः।१।भगवानकहेहें।द्विजदु
र्वासामेंतोभक्तकेवसपराधीनहूं।स्वतंत्रनाहींहूं।मोव
आपनेहृदयमेंधारिलीनोहें।मोकोंबहुतप्रेमहें।भ
क्तजनअसेंसदाकृपालश्रीहरिहें।तिनकीप्राप्तिश्रीआ
चार्यजीआपनेभक्तनकोंकरातेजीवनकोंकरातहें।अ
सेंसेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकेचरणकमलकोंसु
मरणअहर्निससेवकनकोंकर्तव्यहें।३।याकोस्व
रूपश्रीहरिकहतहें।श्लोक।हृदयस्थःसमस्तानाधुर्
तिविषयादरा।हृययासांमोदरः।श्री
यतांसदा।४।याकोअर्थ।श्रीहरि

श्रे॰ प॰ जीमात्रके हृदयमें स्थित हैं। सो भक्तनके हृदयमें
१५ प्रकट होत हैं। परंतु जीव विषयासक्त खानपानादि
संसार सुखमें आसक्त होय मनको लगायो ता[illegible]
यसो प्रभु हृदयमें हैं तिनको भूलि गयो है। अनेक विषयमें
भ्रमत है हामी दर है। जैसो हृदा जीपर आपु हृदयाके
[illegible] सोया यसमान श्रीकृष्ण श्रीआचार्यजी
प्रतिनको सुमरन वे सबको करत है। [illegible]
और इन्द्रिय हरत है। श्लोक। यः प्राणप्रेष्ठ गोपीन
गोपयति स्वतः निलायना [illegible] भिन्न [illegible]
[illegible] तथा [illegible] और श्रीकृष्णके सेह
[illegible] सगानको रस [illegible] गोप
[illegible] जसोदाजी और अनेक गो
[illegible] भक्तनको [illegible] दान करत
[illegible] प्रानप्रिय हैं। सो गोप
[illegible] भगवानके हैं। ता [illegible]
[illegible] देहिका। येन [illegible]
[illegible] तन मन प्रान देह प्रभु
[illegible] श्रीकृष्णके
[illegible] प्रिय हैं। सो [illegible] धर्म कहे हैं। सो
[illegible]
[illegible] बाह्य [illegible]
[illegible] श्रीकृष्णके [illegible] मे [illegible]
[illegible] सो [illegible]
[illegible] भगवद [illegible] आदि [illegible]
[illegible] भावन है। ऐसे व्रजभक्त ति
[illegible] कहा कहें [illegible] है
प्राणप्रेष्ठ गोपीको रसदान छिपायवे सबनके
[illegible]

श्रीकृष्ण तिनकौं सुमरन सदाही करनौ यह आज्ञा गौस्व
मीसौं कहत हैं। श्लोक। यत्र माहात्म्यबोधाय प्रादुर्भा
वितवान्स्वतः। स्वभक्तश्रीवल्लभाचार्यान्तत्स्मर्ते
र्यतां सदा॥ १॥ याकौ अर्थ। श्रीकृष्ण उद्धवजीकौं अप
नो निजभक्त जानिकैं अपने स्वरूपसौं आपुनकी रे
गोपीजनपास पठाए। तहां यह जनायौ जो भगवान्स्वरूपा
करौ नाहूं तो आश्रय करि भगवदीयद्वारा स्वरूपकौ बोध हो
य सो सर्वोपरि है। तैसैंही दैवीजीव संसारमैं प्रभुकौं भूलि
गए। तब श्रीठाकुरजी अपने स्वरूपमाहात्म्य बोधा
र्थ श्रीआचार्यजी महाप्रभुनकौं पठाए। तब श्रीआ
चार्यजी महाप्रभु पृथ्वीकेऊपर प्रादुर्भूत प्रगट भए। भू
मिपर स्थित होय दैवीजीवनकौं स्वरूपानंदकौ अनु
भव करायो। तासौं श्रीआचार्यजी महाप्रभु सर्वसामर्थ्यु
त हैं। तिनकौ चरणकमलकौ सुमरन सदा करनौ यह
श्लोकार्थ॥ यत्र स्वेन भक्तन स्वस्वरूपम्बोधयन् गोपिका
नां हृतस्वान्तः स्मृतिः स्मर्यतां सदा॥ २॥ याकौ अर्थ
श्रीकृष्ण उद्धवकौं निजभक्त जानें। जब विचारे जो उद्धवनें
बहुत सेवा करी है। अब ब्रजलीलाकौ अनुभव उद्धव
जीकौ होइनौ चाहीये। सो ब्रजलीलाकौ अनुभव तौ श्री
स्वामिनीजीके हाथ है। भावात्मकस्वरूप तौ श्रीस्वामिन
जी ब्रजभक्तनके हृदयमें स्थिति है। तातें यों मनकौं विचा
रिकै उद्धवजीकौं भगवान् ब्रजमें पठाए। अपने निज
स्वरूपकौ बोधायें। तब गोपीजन भगवान्कौ सुख
जानि अपनी सगरी लीला उद्धवजीकौ दिखाई।
तब उद्धवकौ अनुभव भयो। तब जो गति भई सो गाए
हे नाथ रमणनाथ। नाथप्रिया गजनितां तत्तमस
ह: सायो पितोतलति नगंधरु वा कृतो न्याराशोत्सवे:
भुजदंडयुग्मं हीनकंठ लब्धाश्रियाय व्रजवे

प॰ वीनां ॥५॥ आसामहो चरणरेणुजुषामहंस्यां वृंदाव
नेकिमपिगुल्मलतौषधीनां यादुस्त्यजंस्वजन
मार्यपथंचहित्वा भेजेर्मुकुंदपदवींश्रुतिभिर्विमृग्यां
मू॰ हेस्रेंद्र व्रजस्त्रीनां पादरेणुमभीक्ष्णशः यासांह
रिकथोद्गीतंपुनातिभुवनत्रयं ॥६॥ यहश्लोकउ
द्धवजीकोमहैं सो गोपीजनके चरणकमलकीरज
कीआसक्ति गुल्मलता औषधीकों प्रीथनाक
री सो भाव भक्त भगवानहूजनभक्तके हृदयमें स्थि
ति हे तामें स्वरूप श्रीआचार्यजीमहाप्रभुजी हैं ता
तें श्रीआचार्यजीमहाप्रभुजीके चरणकमलको सुम
रन सर्वदा प्रीतिसहितकरो आश्रय सर्वकों हू कह
त हैं श्लो ॥ यस्य स्मरणमात्रेण सकलाधिविनाश
नं तत्क्षणादेव भवति सा स्मृतिः क्रियतां सदा ॥ या
को अर्थ प्रगट है जो ऐसे श्रीआचार्यजीमहाप्र
भुजी श्रीकृष्णजीस्वरूपभावात्मक तिनकेचरणारवि
दको सुमरण करतमात्र ही सकल आधि संसारके दु
ख सर्वदोषको नाश होइ जाय ओर नकाल नाहीं छि
नहे तत्क्षण है श्रीविट्ठलेश्वर श्रीकृष्ण स्वरूप प्रसन्नवा
नी है ... होइ तातें यह पुष्टिमार्गीय वैष्णवनको
निश्चय यही धर्म है जो ऐसे श्रीमहाप्रभुजीके चर
णकमलको सुमरण मनलगाइ अहर्निश करनो
ऐसे जन भक्त रात्रिदिवस सुमरन करत हैं तैसे ही करे
नो यह सिद्धांत भयो ॥ इति श्री ... सि
द्धांत ... श्री ... स
हे ॥ ... महाप्रभु ... है ताभांति श्रीमहाप्रभुजी
को सुमरण करें तो प्रभु प्रसन्न होइ तब आपने स्वरू
पको ज्ञान होइ ... भांति सो आगे सि
खावत कहत हैं श्लोक ॥ महाप्रभु हृदयावास

स्वाचार्यभाविताय पोहातिप्रिय. श्रीमथुरेस्प्रभु
रजेश्वरा॥१॥ याको अर्थ॥ सदां श्रीठाकुरजी अपने भ
क्तनके हृदयमें वसत होत हैं सदा ॥ सो कोन्हें
भक्त तहां कहत हैं॥ जो श्रीआचार्यजी महाप्रभू को
भावका भावित श्रीआचार्यजीको प्रसन्न कीये हैं
श्रीआचार्यजी महाप्रभू के भक्त भावहीं॥ ऐसे पुष्टि
मारगीय भगवदीयके हृदयमें श्रीआचार्यजी महा
प्रभू सदा विराजत हैं॥ सो प्रभु कैसे हैं॥ श्रीयसोदोत्संग
लालित श्रीयसोदाजीको अतिप्राणप्रिय श्री सो भ
सहित नंदसनु नंदरायजीके पुत्र दसमस्कंधमें नंद
महोत्सवमें प्रभु केहव जीव हैं हैं नंदस्वात्मज उत्पन्ने
आनंदनिर्भर महामना॥ नंदरायजीकि आत्मातें उत्पन्न
भये॥ ऐसे श्रीकृष्ण सो व्रजके राजा सो सदा व्रजहीमें भ
क्तनके संग विहार करत हैं॥ ऐसे श्रीकृष्ण पुष्टिमार्गमें
सेव्य हैं॥ सो एतन्मार्गीय भगवदीय श्रीआचार्यजी
के कृपापात्र तिनके हृदयमें वसत हैं॥ तथा श्रीठा
कुरजीके हृदयमें भक्त वसत हैं॥ सो श्रीभागवतमें न
वमस्कंधमें भगवान् कहे हैं॥ सो श्लोक॥ साधवो
हृदयं मह्यं साधूनां हृदयं त्वहं॥ मदन्यत्ते न जानंति
नाहं तेभ्यो मनागपि॥१॥ भगवान् कहे हैं भक्तके हृद
यमें में हों मेरे हृदयमें भक्त हैं॥ और को में जानत
हीं॥ ऐसे श्रीकृष्ण हैं॥ पश्चात् आगें अब और हू वर्णन हैं स्व
क स्मरणीयो यथा सानि सेवनीयस्तथा पुनः॥ ताहू
रोसहसंगेन कथनीयस्वमनव्यथा॥२॥ याको अर्थ॥ र
सु व्रजमें सदा विहार करत नंदयसोदाके पुत्र तिन
हीको स्मरण करनो॥ काहे तें॥ ऐसे भावात्मक प्रभु
व्रजभक्तनके वस हैं॥ ताते व्रजभक्तन सहित स्मर
न करनो॥ ज्यों सेवा हू एसी ही भक्तनके भावसहित

१· श्रीकृष्णहीकीकरनी। औरताकृसौभगवदीयसौं मिलि
कैंरहैभक्तजनसहितश्रीकृष्णतिनकीकथाकहतौसु
नतौसर्वथाचित्तलैसो ॥ २ ॥ आगें श्रवणश्लोककहत
हैं श्लोक ॥ श्रवणसम्बुजाद्रीसा प्रपंचास्मृति साधक
भगवदीयपक्षपाति च निजात्मनाम् निरोधकृत् ॥ श्या
श्रीषैं ॥ स्मरणसेवा कथावार्ता श्रवणनि भगवद्व्रजा
धीशकीकरतौ भक्तोहोइ ॥ यह प्रपंच दर्शे सबधीलौकि
कवैदिक सबकीविस्मृतिहोइ प्रपंचविस्मृतिको
साधनयही पुष्टिमार्गीयभगवद्धर्ममेंहै। औरतासी
वाहिंहैं व्रजाधीसकेसेहै आपनेभक्तनकेपक्षपाती
हैं सो सामर्थ्यकरि भक्तनकोंसर्वठौरतें निरोध
सिद्धकरतहैं ॥ औरजोमर्यादामार्गकेसाधनहैं जप
तपयज्ञहोमतीर्थव्रतादिक इत्यादिकमेंअनेक
कालकौदोषप्रतिबंधहोतहै ॥ नहांप्रभुरक्षाहीक न
रतहैं ॥ औरभगवद्धर्ममेंप्रभुरक्षायांपुकरतहैं जैसें
प्रह्लादकों अम्बरीषभक्तप्रगटभक्तकीरक्षाकीनी ॥ ता
तैंश्रीकृष्णको सुमरनसेवा इत्यादिमनलगाइके
करतौ ॥ नहांकालादिककछुवाधकनहोइगो ॥ आप
नेभक्तनकेपक्षपातीभगवानहैं ॥ अपनीसामा
मर्थ्यभक्तनमेंधारिकैं औरतैनिरोधहीकरतहैं ॥ ३ ॥
आगें श्रवणश्लोककहतहैं ॥ श्लोक ॥ शरणोपसृष्टपाप
रीवारोविह्नित्तरूपवान् ॥ सएवास्मत्स्वकृत्तौ चिंत
नुरपिलोफहि धयाता श्रय ॥ ४ ॥ वैसेश्रीकृष्णकोस्मर
णहीसदाकरतव्यहैं ॥ श्रीकृष्णपरमकृपालहैं सोव
इसोस्वश्रीभागवतमेंप्रसिद्धहै षष्ठस्कंधमेंवर्णेहै
हैं ॥ अजैतपापीहोइ सवासतभेदूतनसेंदवा वैकुं
नामग्रहणमात्रसोंधा धरिविदु ॥ ॥ अजामिलनादयवा
नमोच्चारणमात्रतें नामहाप्रभुसेंदई
२।

सौ है यथानल । इति वचनात् । और श्री आचा
र्यजी महाप्रभु कहत हैं । नवरत्न ग्रंथमें कहे हैं । अ
तानादृष्टवा । सो नौ न्कृतेनात्मनिवेदनं । स्थेः इत्य
साम्कृतनप्राप्ति त्येयाकापरिदेवनं । इत्यादि वचन
सो जाननें । सो भगवत्स्वरूप जानिकें करें तौ भावे
स्त्र न जानें करें प्रभु कृपा ही करें । सो श्री महाप्रभुजी
कीबातें मन कहें हैं । जो गाढ़ साधन सब नें सावकी बात
तव साधारा सक्त चाप्यो ना करि भक्ति साधो दास
कों भइ । याभांति प्रभु सेवा मानि लेत हैं याभांति
प्रभुकी कृपा द्यासा ह्यमें विदिन प्रसिद्ध है । तातें प्र
भुही हमको अपनें जानि सर्व कार्य सिद्ध करेंगे । तथा अपु
नें भगवदीयकों लौकिक वैदिक चिंता तथा अपु
उद्धारकी चिंता नाही करनी है । श्रीगोपीनाथ की आ
ज्ञा कहत हैं श्लोक ॥ मनासमर्पयन्नु वापि स्वकीया
नां कृपानिधि । करिष्यति स्वनं सर्व मन श्चिंता का
न विद्विध याकों अर्थ । प्रभुकी यह भक्ति नाहि जो
भक्तनके उपर सदा कृपा ही करत हैं सो पतिव्रतादि
यहें सनन वचन कैयाती ऽयो करि अपने स्वकी
य निज भक्तन पर कृपा है । कृपानिधि असे प्रभु को
नाम है । त्रिविधि नामावली में श्री आचार्यजी महा
प्रभुन के नाम कहे हैं । भक्तजन वत्सलाय नमः । भ
क्तार्थीनाय नमः । इत्यादिक हैं तन नाम हैं । सो प्रभु आपु
ही स्वदेसवत । हरि सिद्धि करत हैं । तातें अपने को कछु
चिंता नाहीं करनी है ॥ ५ ॥ श्रीगोपीनाथ की आज्ञा है
है श्लोक ॥ सत्संगा भावनो नित्य प्रसत्संगाक्ष
वेत । वर्तते विस्मयावेशो वक्रो हृदय सन्मतिः
याको अर्थ । श्रीवल्लभ हरिरायजी कहत हैं । जो प्रभु
भगवदीयन को संग करें सो अपने कहे जो

भगवदीयके संगको अभाव है काहेते जो सत्संग होय
तो दुःसंगको आधान करे सो सत्संग तो यह कालमें दु
र्लभ है सो सत्संग बिना जतन यह कलिके स्व
भावते सिद्ध है सो हृदयमें विषयावेश करावत है
जद्यपि भगवद्धर्मादि लौकिक वैदिक सर्वीकारि
पन है और विषयके आवेश हृदयमें रहत है सो
श्रीआचार्यजी महाप्रभु सेवाफल ग्रंथमें कहे
हैं नहानाइ विषयको आवेश होउ नहीं विषयाक्रांत
देहानां नावेश: सर्वथा हरेः इत्यादि वचनान् तातें अ
सत्संगतें विषयको आवेश होत है ताकरिके मेरी म
नि ... की नाई ऐसो दिसा फिरत है प्रभुमें विश्वास
नाहीं सो ता बिना होउ केत्य नेक संसारको दुःखही अ
नुभवत है ताकरि बुद्धि मलीन होत है अपने अ
... नैतस्मिन समये कोपि सहाय
... बिना श्रीवल्लभाचार्यचरणांबुरुह
... ७ याको अर्थ श्रीहरिरायजी कह
त हैं जो दुःसंग करि विषयावेश मन भ्रमत है अ
नेक दुःख पावत है भगवदीयको ई मिलन नाहीं
तातें या दुःखमें मेरी सहायको करेगो या समयमें
यह कालकरा जो मेरी सहायको न करनवारो है
एक श्रीवल्लभाचार्यजीके चरणकमलको में आ
श्रय कीयो है सो ई मेरो सहाय है और कोई सहायक
... में नाहीं सामर्थ्य है यह कहिके श्रीहरिरायजी
जनावत हैं जो यह कलिकालमें श्रीआचार्यजीके
चरणारविंदको आश्रय कीयो है तिनको तो स्वरूप
दायकी सिद्धि ... फल हूं सिद्ध है जिनके श्री
आचार्यजीके ... चरणकमलको आश्रय
न ... साधन करो परंतु मंगाहाय

त्दोषते विक्षेपावेशाकरि चित्तकी नाई भ्रमेगो॥ तन
कछु फलसिद्धि नाही है। तातें श्री आचार्यजी महा
भूके चरणकमलको आश्रय यह पुष्टिमारगीय वै
ष्णवको निश्चय ही करत यहां ग्रंथ। आगें श्लोक वश्चारं
हन हैं स्लोक॥ ततस्तु तामतिः कालव्यालात्येवं
ल्लौकिके॥ नित्यस्थितानाततो भीतिर्भयसंजायते
हि॥ याको अर्थ। अब श्री हरिरायजी कहत हैं। जो मे
अपने श्रवणासों कालको दुःख सुने हैं। जो जन्ममृत्यु
दुःखसमान दुःख कोई नाही है। यह अनेकवारव
हुनसों मुखसों सुन्यो है। सो मनहू में कालदुःखश्रा
वत हैं। नऊ यह कालसो कठिन है वंशाका स्कौरिस
गरो ज्ञान धर्यो रहत है। केवलरत लौकिक रीव निश्राव
न हैं॥ सो या भांति नित्य ही लौकिक कार्यमें स्थिति हैं। ता
करि स्वपनेहू स्वप्नमेंव हू न भय वास्वार पावत हैं जैसें प
रीक्षत राजाको कालको भय भयो तब शुकदेवजी भ
गवदीय प्रभुकी कृपातें आगे। सो वह कालभयनि
वर्तेकी रो। सो अब मेरे मनमें हू न भय भयो है। सप्तो
आचार्यजी महाप्रभूके कृपापात्र भगवदीयके संगतें
राह भय दूरि होय। सो मोको इन भैसें। तातें भय करि वि
चारहू स्वयंके पायमान होत हैं। द॥ आगें अब या कहू
हत हैं स्लोक॥ विवेको वेद भगवान करुणात्स्याचि
रवितः॥ न जानेति न मे चेतः खिन्नं भवति सर्वथा
याको अर्थ। वेदके तथा भगवानके अभिप्राय
को ज्ञान न होय तैसें ही कोहिन वरससों वेदाध्या
यपाठ करो। अनेक शास्त्र पढे। परंतु मेरेको अभिप्राय
को ज्ञान न होइ काहेतें। भगवानकी करुणा होय तो
स्वै जान्यो जाय भगवद्धर्म मन वचन कर्मकरि
भगवद्सेवा आचरण बनि आवे।

सद्उदनाहीहोत तातेंमैंअपनेचितमेंनिश्चयहीखेद
पावतहों नहोंताप्रभुकीकृपानाहीं नहोंताइसर्वथा
सर्वकार्यमेंदुःखहीहै यामेंअवश्योरस्यकहतहैं श्लो
क विशेषप्रेमजापत्राद्वैद्व्यंसवलोपिहि अनेनै
वकर्यंविचित्स्वास्थ्यमन्यामहे हृदि १० या श्लोकको अर्थ श्री
रविशेषसमाचारप्रेमजोवृक्षकपात्रमेंलिखिपठा
येहें सो यहपत्रतेंबोधनहोइतोवामेंहारेकेमन
लगाइकेवाच्यबोधथ्यो तातेंवि. चित्तकरणानाप्रभु
हैं यहजानिहृदयमेंस्वास्थ्यधीरजहैं जोप्रभुकृपाव
रेहीमि कहेतें भगवद्धर्मजानिकेंकरिये अथवा
अनेजानेकछुवनिजायतोंऊप्रभुजीकहेहैं अज्ञा
नाद्थवाज्ञानात्कृतमात्मनिवेदनं तातेंसोनिवे
दनतोकोइप्रकारभयोहैं तातेंमनमेंस्वास्थ्यहैंजो
प्रभुकः:[illegible] ॥१०॥ श्री हरि राय
कृत सिक्षाप. ताकी टीका श्री गोपेश्वरजी कृत सं
पूर्णम् ॥ [illegible] अवऊपरकहेहैंकेंकोभगवानकेअभिप्रा
यकोनाहींजानत तातेंमनमेंखेदहैं नहोंप्रभुकरु
णाभाहें ताकरिकछुमनमेंधीरजहैं सोप्रभुकरुना
कोजवउत्तममध्यमभगवद्धर्मवनिआवे नहीं
कोई [illegible] नमध्यमकहीभगवद्धर्मनोरख
सोहैं नहोंआगेशिक्षापत्रमेंकहतहैं श्लोक
दुमन: [illegible]चार्ययोगोनमुख्यभेदत: त्यागोग्रहध वि
नादिनाथवाहृप्रयोजनं १ या श्लो० अर्थ ॥ अव
श्रीहरिरायजीकहतहैं अवश्रीआचार्यजीमहाप्र
भुभक्तिवर्द्धनीआदिग्रंथमेंउत्तममध्यमप्रकारकहे
हैं अव्यावृत्तोभजेत्कृष्णंपूजयाश्रवणादिभिः व्यावृत्तो
पिहरौचित्तंश्रवणादौयतेत्सदा १ इतिवचनात्
श्रीहरिनकीकथासेवास्मरणअव्यावृत्तहोइकेंकरे

यह मुख्य और एक आवत है कहे परंतु मन हरिमें राखे यह जो तात सो श्रीहरिरायजी कहत हैं जो घर धन लोक के देखि सब सब त्याग करि प्रभुको भजन करें जे संग्रह धरत सो श्रम व्यावृत्त है तिनकी लोरी भरि पूर्वन जी यह स्थर्धर यह मुख्य सकाम्य है तिनने तो सब के सब श्रम पावे तत प्रभु कृपा करें तो आगे श्रवरणे रहे कहे जाहें श्लोक ॥ वैराग्यपरितोषाद्यैरत्यागो पीति निरूपितः तथा विषय भोगस्य त्यागो पिविनिबोधतः श्रयाक्रीश्यवृ॥ वैराग्य और संतोष के त्याग न करें काहे ते यह लोकिक संसार में वैराग्य होइ तो हृदय में बंधी दुख सुख हृदय में बाधक न करें भगवद्धर्म न मीजाय और संतोष होइ सह जसे आयप्राप्ति होय ताहीकरि श्रानंदपा रहे लोभ करि पाप आचरण न करें काहे ते जो श्री आचार्यजी महाप्रभु श्री सुबोधिनीजी निबंधादि ग्रंथ में कहे हैं श्लोक ॥ अचौर्येणास्य पापानां चोरी करि पाप करयुत्पावें ताह्य चतन प्रभु के सें आगे आरोगाताने वैराग्य संतोष आदि धर्म न छांडनो और विषय भोग को त्याग करें काहे ते विषय बहुत नहीं ते हृदय में विषय को ध्यान होइ जाय पाछे विषयावेश सगरी देह में होइ तो प्रभु को आवेश न होइ या समें त्याग निर्णय में श्री आचार्यजी महाप्रभु कहे हैं विषया क्रांत देहानां ना वेशः सर्वथा हरे ताते विषय भोग हूं त्याग आवश्यक करनो आगे श्रवरणे रहे कहत है श्लोक ॥ तथा सत्संग मत्यागः सर्वथैव विशेषतः अन्याश्रय परित्यागउक्तो वाधकरूपतः ॥ यश्रयाक्रीश्यवृ॥ भगवदीय को संग न त्यागे सदा सत्संग करें भ दीय को संग न त्यागे सदा सत्संग करें भ

५० संगबहुतबडोहैंसर्वोपरकरतव्यहैं सोश्रीभागवत
प्रथमस्कंधमेंसोनककवाक्यतुलयामलवेनापिनस्व
र्गेनपुनर्भवं।भगवत्संगीसंगस्य मर्त्यानांकिमुताशि
षः।सत्संगकेतुल्यसमानस्वर्गलोकअपवर्गमोक्ष
हुनाहीहैंतातेभगवदीयकोसंगछोडनोनाहीजहां
भगवदीहोयमनसोंआपुनजायकेसर्वथाहीसंगकरनो
रअन्याश्रयकोसीघ्रहीत्यागकरेयहभावमेंबाधक
हैं।नंददासजीअंबिकापूजनगयेतोमनमेंग्रसेतबते
छूटगये।श्रीगुसांईजीकीसेवकनीडोकरीनेकहीतु
मकोंकोंजिवाये।तबनांकहतप्रभुअंतरध्यानभयेतोस
मोरदासकोवांकोदोषजोकीयोसोपुत्रसतेछूटभयोनाते
अन्याश्रयकोसर्वथात्यागकरनोयहबडोबाधकहै
३ आगेअववचारहूवकहतहैं।श्लो० एवंनिरूपितेत्या
गेत्यागोसर्वत्रसर्वशः नजीवात्यक्ततात्किंचि
दुःशक्नुवंतेस्वतः।४ याको अर्थ याभांतिनिरूपणश्री
आचार्यजीमहाप्रभुनेश्रीसुबोधनीजीआदिग्रं
थमेंकहेहैंसोतातेविचारकरत्यागकरनोहैइत
कोत्यागआत्माकरनोहैइनाकोसयहभगवद
धर्ममेंसाधकनाकोसर्वथात्यागयहविचारम
नमेंराखेपरंतुजीवकोबलनाहीहैंसत्यागसकेन
राखिसके ब्रह्मादिकसिवादिकनारदादिकोंकछुवस
नाहीचलतवेवडेत्यागीहैंतोजीवतुच्छकहावे
याकोकछुनाहीहोततजीवतेमायाकेवससवभाव
करिदुष्टहोइरह्योहै।४ आगेअववचारहूवकहतहैं
श्लो० अतः कथंभूक्तमार्गेस्थितिर्जीवेषुसर्वथा
फलसाधकयंकारमो न नैस्वतंत्रास्थितेपुनः।५ याको
अर्थ एसेदुष्टजीवनिराधारहैंकोकारणवारोसोय
हसर्वोपरतुछिमार्गमेंस्थितिसर्वथानहोय अव

प्रहरसेसारलौकिकविषयादिमेंपरेसोपुष्टिमार्गमें
कौनभांतिस्थितिहोसर्वथानहोइ.सोजीवयह
पुष्टिमार्गीयकोफलताकीआसकेसेंकरेयहस्थि
तिनाहींतोफलकहातेसिद्धहोइ.जोजहांलोंकहेजो
जीवतोपुष्टहै यहसहीहैकोइप्रकारफलसिद्धहहो
इ.लौकिकतोजीवतोनाहीछूटतनहींकरतहै.पे
श्लोक.तथाहि श्रीमदाचार्यचरणाश्रयणादपि
असकृमपियहछूटतनहीयेतसर्वथैवहि धायाको अ
वश्रीहरिराइजीकहतहै.जद्यपिजीवअनेकदोषसो
भर्योहै.याजीवसोंदोषनाहीछूटतनरूसेजीवश्री
आचार्यजीमहाप्रभुनकेचरणकमलकोआश्रय
ननिहूरवीयाहै.दोषकेछुड़िवेमेंअसमर्थहै.नक
वाकोंफलसिद्धहोइ.यद्यपिपुष्टिमार्गकोफलसर्वथा
सिद्धहोइ.आपुसोंइजोविलंबकरतहै.चितनहू
असाधिदुफलाथनहूहविषयपावहुहै.तानेनहू.यो
मुक्तेनहूहोममापराधविनथाविचार्यो.एवंसोरसा
पारमर्गुजीवो : आश्रयाच्चन्पदाम्भोजयु
प्रगो श्रीव्या
मरणाप्युसमुद्धारं इतिवच
सर्वाहरि.याभी
तु प्रभुनकेचर
तिनि: कोयहपुष्टि
ताकफलकोइ हैं.स्यागांचवचार
मार्गीयफलनिश्चय सगदोषेपानभवेचित्य
हूकहतहै ताविश्वासोपिभवेन्न
लेमनः यद्विवाकाल क्वोनि
हि.९.या ज्यु उपरकहे नितसो
अयफलसिद्धहोय.तामेंदोषमहाबाध
वचेतोफलसिद्धहोय.एकतोइ.संगहे।

सुते भोलघर्हितोय मनसिअल होइजाइ नो आश्रय जा
नतहैं । मत्य को मृगाही दुःसंगते तीन जन्म भरो । हुविद
वानर राम भक्त हतो । नै नरकासुर के संगते प्रभुनो जरयो
ओरयो हे । तजीव दुःसंगते गिरे । तथा कालदोषते वि
श्वास न रह्यो । तहां अविश्वास भयो । तहां आश्रय छूटो
सो जीवनि अय गिरयो । ७ । मार्ग अवश्य करि ह्कहत
हे । श्लो० । अविश्वासो न कर्तव्य इत्युक्ता सानुबोध
क । अथ मेवास मार्गो सर्व माश्रय साधक । अथ या को
अ । श्री अविश्वास को न करें सो श्री आचार्य जी महाप्र
भु विवेकधैर्याश्रय में कहे हैं । अविश्वासो न कर्तव्य स
र्वथा बाधकस्तु सः । ब्रह्मास्त्र चातकौ भाव्यौ प्राप्तं सेव
त निर्ममः इति वचनात् । अविश्वास सर्वथा न करें
रामनको अविश्वास भयो तब ब्रह्मास्त्र छूटि गयो ह
नुमान ने लंका जराई । चातक को विश्वास है सो मेघ
ही मनोरथ पूर्ण करत हैं तातें अविश्वास आसुर ध
र्म है तातें सर्वथा न करें यह श्री आचार्य जी महाप्र
भु के पुष्टिमार्ग में मूल सर्वोपरि आश्रय ही साधक है
८ मार्ग अवश्य करि ह्कहत हैं श्लो० । आश्रयेनैव सर्व
लो सिद्धिमेति न संशयः । पृथक्शरणमार्गोक्ति रत्न सर्व
प्रभो रूपि धिया को अर्थ । जा जीव को दृढ आश्रय
मुख भयो तिनको सकल कार्य सिद्ध भयो निश्चय या
में संशय नाहीं व [illegible] । पुष्टि श्री आचार्य जी
महाप्रभु सर्व तें न्यारो प्रगट कीयो है श्री हस्तफला
त्मक पुष्टि पुरुषो [illegible] शरणा अपने है जीवन
के अर्थ सो मार्ग कहत हैं । श्लो० । सरणस्थ समु
द्धारं कृष्ण विज्ञापनादिषु । विवेक धैर्य भक्त्यादि साध
नाभाव बाधनं । १० । या को अर्थ । श्री आचार्य जी महाप्र
भु कृष्णाश्रय ग्रंथ में कहे हैं शरणस्थ समुद्धारं कृष्ण वि

रोपनात्पि। विवेकधैर्यभक्त्यादिसाधनाभाववा
॥९॥ याभांति श्रीमहाप्रभुनें श्रीहरिजीसों कही जो अ
पने पुष्टिमार्गीय सेवकनकों सरणसिद्धकीये है
र विवेकधैर्याश्रयमें व्है हैं। ताकरिकें जीवनमें स
धनकोअभावहै तिनहूकों सरणकी गे हैं और विवेक
धैर्याश्रयमें व्है हैं। ताकरिकें जीवनमें साधनकोअभा
वहै तिनहूकों सरणकी गे हैं। विवेकधैर्यभक्त्यादिर
हितहैं दुःखसुखमें असमर्थोवासुसर्वथा सर्वथा असम
हरिः। याभांति पुष्टिमार्गीय सरणहूं साश्रयमें विना
साधनवे जीव तिनकों सिद्धकी गे हैं और भगवद्गीतामें भ
गवद्गीतामें भगवान सरणमार्ग कीयो है। सर्वधर्मान्
परित्यज्य मामेकं सरणं व्रज। अहं त्वा सर्वपापेभ्यो
मोक्षयिष्यामि मा शुचः। भगवानने कह्यो है सर्वधर्म छोडि
कें हे अर्जुन तू मेरी सरण आव में सगरे पापनकों हरि
मोक्ष करूंगो यह मर्यादा जो पापहूं हरिकें सो हरें
सो फल और श्री आचार्यजी महाप्रभु अपने जीवन
कों दोषसहित रहे तो उ सरणसिद्धकी गे हैं जो वि
वेकधैर्याश्रयकों अभाव है तिनकों हूं सरणसिद्धि
की गे है। ॥१०॥ या श्लोककों अर्थ कहत हैं। श्लोक ॥ सन्या
से सततं हरिप्रभुपदाश्रयेः नद्भृत्ववाक्यभावा
विभावनपरायणोऽस्मि। श्रीयांको अर्थ। अब श्रीहरिर
नीकहत हैं जो पुष्टिमार्गमें जे जीव नहीं आचार्यजी म
प्रभुद्वारा सरण आये हैं सो तिनकों श्री आचार्य
निश्चय निरंतर अपनो सरण प्रभु चरणकों आश्र
ही सिद्ध करें। सो अपने जीवनकें अर्थ जो यह स
। तातें श्री आचार्यजी महाप्रभु

धिपकी
निरा

मार्गमें अप्रसन्न परायण रहे इत लिख्यो सगरो श्रीकृष्ण
के सन्मुख ह्वे सो या ग्रंथको पाठ करे तो सकल कार्य
सिद्ध होय ॥ १ ॥ आगें और कहत हैं श्लोक ॥ यथास
क्ति स्वमार्गीय प्रभुसेवापरै रपि ॥ निरंतर स्वमार्गीय स
तां संगः सन्निधितो ॥ २ ॥ याको अर्थ ॥ अब श्रीहरिरायजी
कहत हैं जो मरणा की भावना करें सो यथा सक्ति पुष्टि
मार्गीय भगवत्सेवा करे जितनी बने तितनी करे
[…] काल तो थोड़ो का [...] ना चिंता खोवा या भांति नीनो
[…] वचन श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहे हैं श्रीभागवतस्य
[…] स्कंध में श्लोक कहे हैं श्लोक ॥ यथा हि स्कंधसाखा
नां तरोर्मूलावसेचनं ॥ एवमाराधनं विष्णोः सर्वेषामा
त्मनश्च हि ॥ १ ॥ भगवान की सेवा करें सो वृक्ष के मूल
में जल दीयो ॥ साखा पत्र सब हरे होय ॥ और देवन की से
वा […] पत्र साखा वत है तातें प्रभु की सेवा करनी पहु
ष्टिमार्गी भगवदीय वैष्णव कौ मुख्य धर्म है ॥ और पुष्टि
मार्गीय को संग निरंतर करें ॥ सो भक्तिवर्द्धिनी में श्रीआ
चार्यजी महाप्रभु कहे हैं सेवायां वा कथायां वा यस्यास
क्तिर्दृढा भवेत् ॥ […] तें पोहें चिंतें भगवदीय के मुखतें
सुनवो […] ॥ जे निरोध लक्षण […] में कहे हैं महतां कृपया
यद्वत्कीर्तनं सुखदं सदा ॥ न तथा लौकिकानां तु स्निग्ध
भोजन रूक्षवत् ॥ १ ॥ भगवदीय की कथा सो स्निग्ध सुंद
र है महाप्रसाद भोजन तातें सर्वदा सुनाय ॥ लौकि
क जीवन के मुख तें रूखो आसुरी भोजन तातें स्वमार
गीय वैष्णवन को संग कर्तव्य है ॥ १ ॥ आगें और कहत हैं
[…] श्लोक ॥ स्थेयं […] विमुखे स्वगुरु प्राणते
रपि ॥ […] संदेह […] ॥ २ ॥ या
को अर्थ ॥ […] लौकिक संसार ते विमुख रहे ॥ अपने गुरु
की सरणागति रहि दैन्य होय ॥ प्रा[…]तें […] है [...] को […]

यस्यभोजनगनाथगुरो संसारवन्हिनाह अंमाकाल
चन्हीयें शरणागतः श्याभावकरिवें गुरुकी सरा
नेरहें काहेतें गुरुकी कृपा होइ तो प्रभु पावें गुरु
सत्व होइ तो काहेसाकरन सामर्थ्य नाहीं श्रो प्रभु
प्रसन्न होइ तो गुरु रांषि रहे तातें गुरु ते प्रभु
पुष्टिमारगमें जितनो है ताको श्रापुन पर हें प्र
याभांति अन्यमार्गनिकें छोड़िके त्यागही श्रहिमरावें नो
तन्मार्गसों विरोधी हू नसो त्यागही करनो याभांतिवे
स्वरहें ताको पुष्टिमारगीय फलको श्रनुभव होइ श्री
श्राचार्यजी महाप्रभुकी कृपातें यह सिद्धांत भयो १३३
श्रीहरि... सब हस सिद्धान्त नाहीं टीका श्री
... जैसी श्रास्वपूर्णो ॥१४॥ श्रव अनुपर स्वरूपको प्र
कारकहें श्रोर सेवाको प्रकार कहे हें मनन रूप साधन तामें
यह कालबाधक हे सो जीव नाहीं जानत सो जीवकों या
भांति ज्ञान होइ तो साधन बनिश्रावें श्रो श्रागे सिलापत्र
मेंवहतहें श्रो ... कालस्वकार्य करतेन जानाति जनो
तः प्रमाद्य तिहर कार्ये स्वात्म कार्ये जनो यतः प्रमाद्य
तहे रे कार्ये स्वात्म कार्ये विविक्तः ॥२॥ या ... अर्थ श्री
गुसांईजी कहत हें जो यह काल हे सो अपनो कार्यकी
नतहें ताको जामें जीवकी श्रायुको हरत हें श्रोर जीव
हीं जानत हें जो मेरी श्रायु दिन दिन घटत हे कालनि
लीपिजात हे यह सो न जीवको नाहीं होत हे सो कह
हें श्रनेक कार्यमें प्रमाद पाजीवको होइ रह्यो हे सो
विद्दिव संसारको काम देह इन्द्री को पोषण विषया
नेक भांतिके कार्यकी चिंता ग्रसित हें तातें प्रमा
श्वव यह मनको भुरनो हे मे
ककार्यमें प्रमाद होइ रह्यो हे ताकरिशान ति
री श्रायुको भक्षन करत हे मेरी ने

५ मोको कहा करनो है। यह ज्ञान नाहीं होत अनेक कार्य में
८३ प्रमत्त है। और अपने स्वामी के कार्य में विकल नहीं हैं। सं
बंधी संसार को कार्य में है। तामें तत्पर है। या मसंबंधी भ
गवद्धर्म सेवा स्मरन कीर्तन वार्ता कथादि इत्यादि का
र्य में विकल है नाहीं सो कहत हैं॥ श्री आचार्यजी आप कहत
हैं। श्लोक॥ केवलो हरि किंचेन्नु नहीयानां नचो विन्तान
प्रयत्निसुहृत्सेवकानां कृपानिधिः॥ या को अर्थ आप
कहत हैं। तो विना कार्य में प्रमाद है स्वात्म कार्य विक
ल है। सो केवल श्रीहरि भगवान के कार्य में व हविनिमत ए
है। सो यह पुष्टिमार्गी ये वैष्णव को उचित नाहीं है। काहे
ते श्री ठाकुरजी कृपा के निधि हैं। सगरी जगत के भरण पोष
न करत हैं। सो कहा अपने सेवकन को पालन नाहीं कर
गे। सेवकन के ऊपर तो सदा कृपा करत ही आये हैं। या भां
ति वैष्णव श्री ठाकुरजी को विश्वास मन में राखि भगवद
धर्म आचरन करे सगरे दिन तथा आहार बिना न च
लै तो अपने सरीर में प्रहर एक तथा घड़ी ॥४॥ आहार हूं करे
और मन में यह जाने जो जितनो मिलनहार होइगो
सो पहर एक चारि घड़ी में अवश्य मिलि रहेगो यह विचा
र वैष्णव राखे भगवान को माहात्म्य विचारे जो प्रभु सब
सामर्थ्य युक्त है सर्वात्मा सर्वेश्वर है॥ आगे अब श्लोक
कहत हैं॥ श्लोक॥ चिंता कापि न कार्येति प्रभुवाक्य विचि
पता॥ श्लोक ज्ञानिनो ज्ञानिनः यद् इस्यात्समन्ततो
इ श्लोकार्थ मन में चिंता न करे। सो नवरत्न में श्री आ
चार्यजी महाप्रभु कहे हैं॥ चिन्ता कापि न कार्या निवेदिता
त्मभिः कदापि भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति
लौकिकीं च गतिं॥ इत्यादि वाक्य को चिंतन भावना
करे नित्य मन में करे। यह न जाने जो मैं तो कछु सम
र्थ नाहीं। प्रभु कृपा के सब करेंगे। यह विचार तो प्रभु को

अज्ञानीभक्त ज्ञानीभक्त बराबरि हैं। सो नवरत्न में श्री
आचार्यजी महाप्रभून कहे हैं। अज्ञानादथवा ज्ञानात्
कृतमात्मनिवेदनं। यह निवेदन श्री आचार्यजी महाप्र
भून द्वारा ज्ञान करि कीयो है। अथवा अज्ञान ते काहू की देखा
देखी कीयो। ताते चिंता नाही करनी है। काहे ते अग्नि के
यह स्वभाव है जो अनजाने हाथ धरे। अथवा जानि के हा
थ धरे सो दोहू थि भस्म ही होय। यह लौकिक अग्नि में इतनो
सामर्थ है। तो यह तो श्री आचार्यजी महाप्रभून द्वारा निवेद
न कीयो। ताको लौकिक गति कबहू न होइ। श्री भागवत
के अष्टम स्कंध में कहे हैं। अज्ञानादथवा ज्ञानादुत्तम
श्लोकनाम यत्। संकीर्तितमघं पुंसो दहेदेधो यथानलः।
१ अज्ञान ते ज्ञान ते भगवन्नाम लेइ तो सकल दोष दूर
होइ जाइ। इत्यादि वचनन की भावना मन में राखि चिंता रं
चक हू नाही करनी। एक प्रभु को आश्रय मन में राखे
३ आगे अब चौथो श्लोक कहत हैं। तथानुसाधनाभावान्
किं इति ज्ञानतः फलं। विरहे न हरिस्तु नो सर्वत्रै
र भावना न ४ व्या० अर्थ नहीं जीव बुद्धि ने यह वि
चारहु तो साधन मेरे मन में कछु नाही है। फल सिद्ध के
से होइगो। सो यह चिंता हू नाही करनी है। काहे ते का
हू जीवन में साधन को अभाव है। साधन नाही बन्यो आव
ता है। साधन बने होय न ही जा से निवेदन कीयो है सो
योग के फल श्री आचार्यजी महाप्रभून के अंगीकार ते फ
ल सिद्ध है। साधन ते फल सिद्ध नाही है। फल सिद्ध कर जा
निये। तब श्री आचार्यजी महाप्रभु जी विप्रयोग दान
दीनो है। विरह हृदय में होय तैसकी भावना होइ। हरिजो
सर्वेश्वर है। ताते नहीं कोविर   रहो इश्री प्रभुजी
के संबंध बिना और कछु न सु   ताणह
तैसकी भावना होइ या भी

अग्निहृदयमें प्रगटहोइ ॥ तिनहीकोयहपुष्टिमारगी
यफलकौअनुभवहोइ ॥४॥ यवंओरहूकहतहैं ॥ श्लो
क ॥ लीलातिरिक्तसृष्टौहि निरानंदत्वनिश्चयात् यथा
कथंचिद्विस्मृतप्रपंचः हृदयेन्यसेत् ॥ पा ॥ पा ॥ अथ ॥ अव
श्रीहरिरायजीकहतहैं ॥ जोलीलासंबंधतेरहितप्रवाही
सृष्टिहै ॥ सोनिरानंदहै ॥ तिनकोप्रभुअपनोआनंदकव
हूंननाहीकरतहैं वेचर्षणीनाईं सदासंसारमेंभ्रम
तहैं ॥ उनकोयहसंसारहीप्रलतहै ॥ भगवल्लीलासंबंध
कोउनकोआनंदनाहीहै ॥ आनंदकरिरहितहैं ॥ यहनि
श्चयजाननो ॥ ओरभगवल्लीलासंबंधीदेवीसृष्टिहै
तिनकोकहालक्षणहै ॥ महाप्रभुजीद्वाराशरणआसक्त
गावरिएकरीवारयहप्रपंचतें तिनकोनाहीछूटतो ॥ सो
धीरेधीरेजनसमरसनेछोडतहैं ॥ अहनिसअपनेमन
मेंविचारकरिकेकेप्रभुकोस्मरणकरतहैं यहज्ञानह
दयमेंहोतहै ॥ जोहमतोसदाप्रभुकेदासहैं ॥ अरहमका
प्रभूकोभूलिगयेहैं हमारेतोप्रभुधर्महीहै ॥ जोप्रभुकी
सेवासुमरनकरें ॥ याभांतिदैवीजीवकोंज्ञानहोतहै ॥ आ
सुरीजीवकोंनाहीहोतहै ॥ ५ ॥ आगेअवओरहूकहतहैं
श्लो ॥ का ॥ हृषगूढसदानंदं तथालीलायुतसदारसस्व
[illegible] भक्तभावात्मकं पुनः ॥ ६ ॥ पा ॥ अथ ॥ श्रीह
रूपकेभेदहैं महागाढसर्वोपरहैं ॥ जिनकोवेदआदिपार
नाहीपावतहैं नेतिनेतिकहतहैं ॥ बुद्धिवानीतेंअगो
चरहैं ॥ ओरसदाआनंदरूपहैं ॥ एकरसजिनकोआन
दहै ॥ सोश्लोकमेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकहैंहैं ॥ आ
कृतासकलदेवानां नानंदकंयहन ॥ पूर्णानंदोहरि
स्तस्मात्श्रीकृष्णसरणंमम ॥ औरदेवनातोप्राकृतहैं ति
नकोआनंदप्राकृतहै ॥ सोलानंदहूपारआनंदकी
गननामेंहै ॥ अपारनाहीहै ॥ श्रीकृष्णपूर्णानंदहै

जो आनंद कौं हू पास नाहीं हैं जैसें वस्त्र कौं हू पास नाहीं हैं तातें
श्रीहरि सदा आनंद रूप हैं सो श्रीहरि सदा व्रज भक्त
के हित रसरूप लीला में रस के वश करत हैं या प्रकार स्वरूप
भक्तन सों मान करत हैं तैसे ही मान मनावत हैं सो गीत
गोविंद में कहे हैं स्मर गरल खंडन मम सिरसि मंडनं देहि प
द पल्लव मुदारं या भांति श्री स्वामिनी जी सों प्रार्थना करत हैं
जो आपने चरणारविंद मेरे मस्तक ऊपर धरो तुमारो पद
पल्लव है सो है मेरे मस्तक को शृंगार हैं या भांति अनेक है
न प्रभु करत हैं व्रजभक्तन के भावात्मक हैं श्रीहरि कू रस
सो व्रजभक्त भाव रूप के अनुभव करत हैं ६ अब और
हु कहत हैं सो ... प सो दोत्संग लालित मुग्ध भाव समाहू
तो प्रपंच वैरि गालाध हेतु लौकिक नाशनं ७ या ...
और श्रीहरि जी के से हैं श्री यशोदा जी आपने उत्संग में ली
खिलावत हैं सो या भांति परम शोभा देत हैं मुग्ध बा
लक की नाईं श्री यशोदा जी के कंठ में वे छिन हैं अपने जो यह
संबंधी स्त्री पुत्र पति घर लौकिक वैदिक कार्य ताके
ही हैं श्री यशोदा जी रंचक हू भूमि में प्रभु को धरि के दूध
न देत हतीं सो स्वार न गई सो श्री ठाकुर जी न सो है स
धि के मार फोरि डारे और माखन खायो सो यह संन्यन वद
के खवाइ श्री ... यह कहि के यह जनायो जो मो को
यह समर्पण करेगा ताको ... हूं हो तो छिन के
न सिद्ध होइगो और यह प्रपंच के वैरी हैं जो जो भक्त प
र प्रीत कीयो तिन सबन को प्रपंच नाश भयो प्रपंच
क हैं लौकिक कार्य को धम ... तातें
... तातें लौकिक सब के नाशक हैं भक्तन को प्रपं
च सब दुःख करत हैं ७ आगे
... स्वप्न वैराग्य कामादि सब के
... धीयं परमातिम होत्सवं ८

सि.पृ. सेश्रीकृष्णजबभक्तनेंहृदयप्रवेसकरनको विचारकरतहैंतातें
८५ समयउहभक्तकेहृदयमेंकामक्रोधमत्सरताआदिसकलदो
षदूरिकरतहैं परकाहेकेंउहजनतारोजोजहोंतोईभक्तकेहृद
यमेंकामादिमायाकेदोषहृदयमेंभरेहैं नहोतोतोश्रीकृष्णहृ
दयमेंनाहीपधारेजानियें जबदोषदूरिहोय तबजानिये
प्रभुहृदयमेंनिश्चयपधारे भक्तकेहृदयमेंश्रीकृष्णपधा
रिकेंकहाकरतहैं उहभक्तअपनोलौकिकदेहसंबंधीआ
पेछोड़िकेंश्रीकृष्णकेदासनकीआर्तिचतिविरहहोतहैं
सोतद्रूपसंआर्तिविरहदुखदेंहैं सोमहामहोत्सवरूपहै
सोहैभक्तनकोसिद्धिहै श्रीकृष्णहृदयमेंभावात्मककेवि
राजतहैं तातें ग्रहकाजनाहींबनिआवत सगरोदिन
वेणुगीतयुगलगीतगानकरिकें निरवाहकरतहैं श्री
रासपंचाध्याईमेंअंतरध्यानप्रभुभयेपाछेभक्तनको
महाविरहभयोतोप्रभुफेरप्रगटरसदानकीये विरहन
नीअधिकहोय सोमहा स्वरूपआनंददानहैं तदनुरागेष्व
वेश्वोभइंकहतहैं सोकोश्रीमदाचार्यहृदयश्रीयपूर्णकला
थिनंअनेंतभावरूपात्मागोपारमणनस्पार्शियाकोअर्थ
रासभावात्मकश्रीकृष्णश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकेहृदयमें
भक्तनसहितकेसेंलीलाकरतहें सोकाहेतेंजोसोक्षीर
सागरमेंशेषसाईभगवानकोदृष्टांतदेकेंकहतहैं जैसें
क्षीरसागरमेंसेषसिज्याहैं तैसेंहीश्रीआचार्यजीमहा
प्रभुंकोहृदयसिज्यारूपहें तहांसेषसिज्यापरश्रीनारायन
हें इहांश्रीकृष्णभावात्मकरसात्मकपोढेहैं उहांए
कश्रीलक्ष्मीजीसंगविहारहै इहांअनेकभावात्मक
भक्तनकोटानकोटिस्वामिनीतिनसंगारमणकर
तहें सोश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकहेहें अपनेहृद
कोभावजनारोहें ताकरिकेंजान्योगयोहें लोकन

मासि हृदयारोये लीला ही राधिका सहयने लक्ष्मी सहस्रती
लालित सेव्यमान कलानिधि ९ याभांति श्री आचार्यजी महा
प्रभू अपने हृदय में प्रभु लीला करत हैं सो तिनको नमस्का
र मंगलाचरण करि श्री सुबोधनी जी निबंध प्रगट करी ए
हैं याभांति श्री आचार्यजी महाप्रभू अपने निज भक्तनकों
अपने हृदय की लीला प्रगट करत हैं सो भक्त या भांति ली
ला सहित श्री आचार्यजी महाप्रभु को स्मरन करतो अनु
भव होय ९ आगे यव श्री रहे कहत हैं श्लो ... मधुपालि
जटाघुकरी माक्ति सुविराजितं प्रसन्नवदनो भोजन कर
णारसवहुरां १० या ... बेरहा जो मोरके पखको सि
वौरिकें माथे में मुकट धरे हैं श्री कृष्ण के सरें रोमावली है
ताभिक मलपाल सो मानो मधुप जो भ्रमर की पंक्ति माला
कीनाई यत्पत सो भावत है मुखारविंद्र अपत प्रसन्न है ता
को भाव यह जो अनंत कोटि व्रजभक्तन के संग लीला करि
अधरामृत पान करत हैं हृदय में महा आनंद भयो है
ता करि वैदनकमल अति प्रसन्न है करुणारसस्यु
त हैं भक्तन के ऊपर करुणा दृष्टि करि रसपान करावत हैं
१० आगे श्री आरु कहत हैं श्लो ... बर्हिपिच्छ शिरो
भूषं शृंगाररसरूपिणं ... एवं विधाने तगुणानि धाय हृदये
सदा ११ या ... कहा जो मोरके पखको सवारि के मा
थे में मुकट धरे हैं सो शृंगाररसरूप हैं जेसें मोर जब रसको
नृत्य करत हैं तब नित्य करत हैं सो तैसे ही श्री ठाकुर जी मोर मु
कुट को शृंगार करि भक्तन को रसदान करत हैं ता तें मोर मु
कुट के शृंगार है सो शृंगार रसरूप है ता तें मोर मुकट को
शृंगार है या भांति या मादिक लीला में अनेक लीला कुंज
खेल क्रीडा मानादिक सर्व लीला संयुक्त ऐसे श्री कृष्ण को
अनंत लीला संयुक्त अपने हृदय में
दरसन करि हृदय में सदा ही धारन कर नि

१०१· रिवृष्ठ्ये कैसेव करें नाहीं ॥ ऐसें नक्रों ॥ १ ॥ आगें अष्टव और हू
कहत हें श्लोक ॥ नस्वसेवाप्रवृत्तीत्याजीवत्वधर्मतः नफलार्थे
नलोभार्थे न प्रतिष्ठा न प्रसिद्ध्यै ॥ १ ॥ याको अर्थ ॥ ऊपर कहे ए
से श्रीकृष्ण गारसरूप तिनको सदा हृदयमें ध्यान करे
मानसी सेवा योक व सिद्ध होय सो कहत हैं जो प्रथम तनु
जा वित्तजा मन लगाइ के सेवा करें सो सिद्धांतमुक्तावली
में श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहे हैं ॥ तो हृत्सेवा सदा कार्या
मानसी सा परामता ॥ श्रीकृष्ण की सेवा सदा करें तिनको
यह मानसी सेवा सिद्ध होय ॥ ताते यह पुष्टिमार्गीय वैष्णव
को धर्म हैं जो श्रीकृष्ण की सेवा करें सदा ॥ जैसे ब्राह्मण गाय
त्री न पै तो ब्राह्मणपनो जो स्युदूवत है ॥ तैसेंही वैष्णव होइ
के भगवत्सेवा न करे तो वैष्णवता जाय ॥ ताते श्रीकृष्ण की
सेवा करें ॥ अपनो स्वधर्म जानि कछु फल की आस करि से
वा न करें जो मैं कृतार्थ होऊंगो ॥ कछु लौकिक वैदिक मो ह
भक्ति कछु फल की वासना मन में न राखे ॥ कछु लोभ मन
राखे जो मैं सेवा करूं तो कछु वैष्णव जाने मोकों कछु दे
नाय ॥ कछु मन में अपने में लोभ न राखे ॥ और प्रतिष्ठा
र्थ न करे जो मेरी बडाई होइगी ॥ लोग भलो वैष्णव जानेंगो
या भांति अपने को प्रसिद्ध न करें जो मोकों कोकुं जानें
सो ऊ न करे गोप्य ॥ ति सों करें ॥ सो श्रीभागवत नवमस्कं
ध में भगवान कहे हैं जो दुर्वासा प्रति ॥ मत्सेवया प्रतीतं च
सालोक्यादि चतुष्टयं ॥ नेच्छंति सेवया पूर्णाः कुतोन्यत्का
ल विप्लुतं ॥ १ ॥ इति वचनात् ॥ श्रीभगवान जी कहत हैं जो भ
क्त सेवा मेरी करि पूर्ण हैं यही प्रतीत हैं ॥ तिन कों मैं चार प्र
कार की मुक्ति देत हों ॥ सालोक्य ॥ सामीप्य ॥ सायुज्य सारूप्य
सो ऊ नाहीं लेत हैं ॥ ऐसे पूर्ण निष्काम हैं ॥ तिन को काल क
हा बाधक है ॥ या भांति मन पूर्वक वैष्णव को स्वधर्म जा
सेवा करे ॥ अब और हू कहत हैं श्लोक ॥ श्रीमदाचार्य सा

गैरान्यानेनापि कस्याचन: नकल्पितप्रकारेण न दुर्भाव
समन्वियात् १३ या श्लोक में वैष्णव सेवा करें सो श्रीआचा
र्यजी महाप्रभु के पुष्टिमार्ग की रीति है ताही अनुसार करें क
ल्पित भूलिवें हूं अन्यमार्ग की रीति है सो न करें और अप
ने मनते कल्पित प्रकार हू न करें जो न जानें सो पुष्टिमार्गी
य भगवदीयसों पूछि लेंइ मन न कल्पित सर्वथा न करें दु
र्भावसों न करें जो कहा भयो जैसें लौकिक कार्य हैं तैसें य
ह करिये हैं या भांति अश्रद्धा दुर्भाव सम्पकन करियें प्रीति
पूर्वक सर्वोपर परमफलरूप जानिकें सेवा करियें १३ आगें
अब और कहत हैं श्लोक तत्वं विदित्वा परमं यसोदोत्सं
गलालित: श्रीमदाचार्यं तत्पुत्रौ हित्वास्म स्वामिनीरपि
१४ या श्लोक में वैष्णव भाव सेवा करें और यह चारों पदा
र्थकों परमतत्व जानें श्रीयसोदोत्संगलालित प्रथम तत्व
श्रीगुसांईजी कहत हैं जो जानित परमं तत्वं यसोदोत्संगा
लालितं तदन्यद्विति ये प्राहुरासुरास्ते न संशय: या भां
ति प्रथम तत्व यसोदोत्संगलालित १ दूसरें श्री आचार्य
जी महाप्रभु अपने आचार्यजी श्रीवल्लभाचार्यजी परम
तत्व २ तीसरें श्रीगुसांईजी श्रीमहाप्रभुजी के पुत्र श्रीवि
ठ्ठलनाथजी परमतत्व ३ चौथें श्रीस्वामिनी व्रजभक्त से
परमतत्व ४ ये चारों परमतत्व अपने मन में जानें १४ आगें
अब और कहत हैं श्लोक न तुल्यं वुध्यनारा: स्यात्
सर्वथेति विनिश्चय: एतावती सती सिद्धा संस्थिता स्ट्धी
यता १५ या श्लोक में ऊपर कहे जो श्रीवल्लभाचार्य
स्वामिनीजी इन चारों को परमतत्व
न और कोई को न जानें जो कोई
जानें इन चा फिकमें काहूकों जानें ताको सीघ्र हीन
जानन्नो, सो वो तामें
महोइ
इके धरहैंगे

नैकही जो कछु श्रीठाकुरजी के पद गावो। यह सुनत ही रा
म्हाराने कही। रामदास यह पद तेरे खसम को है। आगु पाछे
तेरो मुख देखुंगो। पाछे मीराबाई ने बोहोत मनुहार करिके
राखे। परंतु ये न रहे। तुरत गाम छोडि दीयो। आचार्जी न स्वामी
वीरबलके डेरा गये। इतने वरस मों टीलेन न्हां गये ही तब
मीतिरधरन श्रीविठ्ठल ये इतने ने पूछ्ये कछु न संदेह यह
सुनिके वीरबलने कही। देसाधिपति पूछेगो तो कहा जुवा
ब देहुंगो। यह सुनत ही तानस्वामी कहे जो मेरे भाग्य हो तो तुम
ही मन लेहु हो। ना आगु पाछे तेरो मुख न देखूंगो। पाछे व
रसोटी छोडि के चले आयो। एसी टेक वैस्नव राखे चारोत
त्यके लोगि विवस्यौ कोई अन्य समान जाने। ताको निश्चय यही
नास होइ। अब श्री हरिराइजी अपने मन में श्रीगोपेश्वरजी
सो कहत हैं। जो या प्रकार में सिद्धांत लेप में लिख्यो है सो तु
म अपने हृदय में आवश्यक ही करीयो।१५। आगे अब कथ
रहे कहत हैं श्लोक। अन्यस्य चेपरेष्वा यदि स्युरधिक
रिणः। मिलेत् स्वेष्टधर्मदा युतापूर्ति चेत्न्हार धय
कोत्र श्लो।। यह कहत सिलाक ही है। सो आगे के आगे म
का हियो कोई या सिलाके अधिकारी लायक होइ ताके
आगे कहियो सो भगवद्स्थान आपुही आय के प्राथ
नावरे अद्वाहोइ पृष्ठ चितन लगाइ के तासों कहियो
पनी इच्छाते मनिकुला इके कहियो यह सबो परसिद्धांत
अधिकारी पात्र विना स्पष्ट होने नाही पहजानिके
आगे मतिके हियो।१६। आगे अब और हू कहत है
जीवन त्यरता सिद्धो रूपा कुलेषु तुष्यति। यथा विष
तो वाइतिका सुनथा हरे।।१७।। या को अर्थ ऊपर कहे
का यह जीव भगवद्धर्म में जवन त्यर होइ न वयहू
मा णीयफल सिद्ध होइ। जैसे प्रह्लाद को हरणाकु
न दुख दीयो। परंतु प्रह्लाद अपनी तत्परता भगव

मैंजवतत्परभगवानकोंआश्रयनछोडेंतोफलसिद्धीप्रा
ष्टहोइ प्रतिबंधदूरिहोंकोंफलसिद्धभयो।तैसेहीपुष्टिमार
गीयभगवदीयतत्परहोइ। पुष्टिमार्गमेंतोफलसिद्धिहोइ
काहेतेंप्रभुकृपालहें संतोषपावें प्रसन्नहोइ जैसेंविष
ईकोंइतीमिलेंतेंसंतोषहोइ तैसेंश्रीभगवानअपने
भक्तकोंअनन्यतादेखिकेंमनमेंबहुतसंतोषहोतहें प्र
सन्नहोइ तातेंकार्यअपनेदासकेपूरनकरतहें सदाकृ
पाकरतहें प्रतिबंधदूरिकरिकेंफलदेतहें यामेंयहसि
द्धांतनिश्चयभयो।१७। इतिश्रीहरिराइजीकृतसिद्धां
पत्रनामकटीकायांमापेकरहस्यसंपूर्णम् १८ अबकु
परकहेतातअंतःखेंमध्वतत्परहेंतोफलसिद्धहोइ सोयहक
लिकालमहाकठिनहें सबबाधकहें यासोंबचेतोफलसिद्ध
होइ सोआगेकहतहें श्लोक इदानींवर्तितकालकाल
कलिरीहृशोयत्रहिंसंतस्यातिमति सतामपिदुःसंगातः १
याकोअर्थ अबश्रीहरिराइजीकहतहेंजोयहअबजो
कालवर्तमानप्रसिद्धहें सोमहाकरालहें प्रसिद्धहस्य
मांनहें प्रसिद्धियाकोप्रवाहदेखियतहें काहेतेंजोसत
पुरुषहें निश्चयतिनहूकीमतिकुसंगतितेंविनसजेभ्रष्ट
भईहें यहकहिकेंयहजतायोजोयाकलिदोषतेंसतप्राणी
कीबुद्धिभ्रष्टहोतहें तोअपानीनकोंभ्रष्टहोइ यामेंकहा
कहनो ऐसोकठिनकालआयोहें तहांकोउकहेजोस
तप्राणीकीबुद्धिभ्रष्टहोतहें तहांकहतहें श्लोक
सत्संगोदुर्लभोयत्र सततंसतप्रसंगतः कृष्णाकृष्णचरि
त्रैकयुतानित्यंभजंतिहि २ याकौ अबश्री
राइजीकहतहें जोसत्संगतोबहुतदुर्
ही निरंतरदुःसंगतेंसतप्राणीकीबुद्धिनास एकल
ण्प्रसंगहू भगवदीयकोदुर्लभभयो
कहाहोइ काहेतें जोजवनिर

नैक रही जो कछु श्रीठाकुरजी के पद गाबो यह सुनत ही रा
महाराज ने कही सारी ॥ यह पद तेरे रख सके है आगु पाछे
तेरे मुख रखुगो ॥ पाछे सीथ बाई ने दोहा तमनु हाथ करिके
राखे परंतु यन ... हुगाम ... हृदी यो ॥ आज ... श्री तस्वामी
वीरबल के हगारो हते ॥ वर सो टीले न तहा गम ॥ श्री तस्वा
मी गिरधरन श्री विठ्ठल ये इतने ... ये कछु न संदेह यह
मुनि के वीरबल ने कही ॥ देसाधिपति पृछ गाने ॥ कहा जुवा
व देतो ॥ यह सुनत ही ... स्वामी कहे जो मेरे भाग्य तो तुम
श्रीमहले हो ॥ ता आगु पाछे तेरा मुख न देखा गो ॥ पाछे व
रसोई छोडि के चले आगे ॥ ऐसी टेक वैस्नवन की चारोंत
खको लोभ बिना ... कोई तृन समान जाने ॥ ताको नि श्च यही
नास होय अब श्री हरिराय जी अपने ... श्री गोपेश्वर जी
सो कहत हैं जो या प्रकार में सिद्धांत लेपमें लिख्यो है सो तु
मै अपने हृदय में आवस्यक ही कीयो ॥ १५ ॥ आगे अके
हे कहत हैं श्लोक ॥ अन्य विचो पर पृच्छा यह दि सुरधिक
रित ॥ मिले ति स्वेच्छया प्रदा युक्ता पुष्टि चेत न्हा ॥ १ धाय
कोऊ ... ॥ यह ऊपर सिद्धांत ही है ॥ सो आरे के आगे मति
करियो कोई या सिद्धांत के अधिकारी लायक है ॥ ताके
आगे कहियो सो भगवद् इच्छा ते आपु ही आय के प्राप्त
ना वरे अद्धा होय पृछिवे न लगे ॥ ताके आगे कहियो
पनी इच्छा ते मति कहियो ॥ यह सबै पर सिद्धांत है
अधिकारी पात्र बिना सुनि के होना ही ॥ यह जानिके यो
आगे मति कहियो ॥ १६ ॥ आगे अब और हूं कहत हैं श्लो
जीवन त्वरता सिद्धा दूरी पाकुरतेषु तुष्यति ॥ यथा विष
तो धातुतिका सुनैया हरेः ॥ १७ ॥ या को अर्थ ॥ ऊपर कहे
का यह जीव भगवद्धर्म में जवन तत्पर होय तब यह
मारगीय फल सिद्ध होय ॥ जैसे प्रहलाद को हरणाकु
न ह स्वदीयो ॥ परंतु प्रहलाद अपनी तत्परता भगव

मैंजवतत्परभगवानकोंयाश्रयनछोडेतोन्तसिद्धजीप्रा
प्तहोइ प्रतिबंधदूरिहीकौफलसिद्धभएं तैसेहीपुष्टिमार
गीयभगवदीयतत्परहोइ पुष्टिमार्गमेंतोफलसिद्धहोइ
काहेतें प्रभुकृपालहें संतोषपावें प्रसन्नहोइ तैसेंविष
ईकोंइतीमिलेंतेसंतोषहोइ तैसेंईश्रीभगवानअपने
भक्तकीअनन्यतादेखिकैंमनमेंबहुतसंतोषपावतहें प्र
सन्नहोइ सर्वासकार्यअपनेदासके पूर्णकरतहें सहाय
करतहें प्रतिबंधदूरिकरिकेंफलदेतहें यामेंयहसि
द्धांतनिश्चयभयो ॥१७॥ इतिश्रीहरिराइजीकृतशिक्षा
पत्रं ...टीका... संपूर्णं ॥१८॥ अथक
प्रकहेतासप्रकारसेवकतत्परहेतोफलसिद्धहोइ सोयहक
लिकालमहाकठिनहें परबाधकहें यासोंबचेंतोफलसिद्ध
होइ सोआगेंकहतहें श्लोक॥ इदानींवर्तनेकाले काल
कलिरीदृशः यस्मिन्स्वेनस्यातिमति सतामपि कुसंगतः॥१
याकोअर्थ॥ अबश्रीहरिराइजीकहतहें जोपहलेंअबजो
कालवर्तमानप्रसिद्धहें सोमहाकरालहे प्रसिद्धहस्य
मांनहें प्रसिद्धयाकोंप्रवाहदेखियतहें काहेतेंजोसत
पुरुषहें निश्चयतिनहूकीमतिकुसंगतितेंविनजेभए
भईहें यहकहिकेंयहजतायोजोयाकलिदोषतेंसतप्राणी
कीबुद्धिभ्रष्टहोतहें तोअपानीतोंभ्रष्टहोइ यामेंकहा
कहनो ऐसोकठिनकालआयोहें नहांकोइकहेंजोस
तप्राणीकीबुद्धिभ्रष्टहोतहें नहांकहतहें श्लोक
सत्संगोदुर्लभोयत्र सतांतत्रप्रसंगतः कृष्णास्यापि
त्रैकयुतानित्यंभजेतानिहि॥२॥ याकोअर्थ॥ अबश्रीहरि
राइजीकहतहें जोसत्संगतोबहुतदुर्लभहें मिलतनां
ही निरंतरदुःसंगतसत्प्राणीकीबुद्धिनाससेंहें एकल
ताअसंगहूभगवदीयकोदुर्लभभयोहें तोसदानिरंतर
कहाहोइ काहेतेंजोजवनिरंतरभगवदीयकोसंगहो

श्री· ३ कृष्णकी कथा कृष्णकी लीला सुने प्रीति सों । नित्य श्रीकृष्ण
८ की सेवा करे । और भगवदीय कृष्णकथा लीला सुने भगवत्सेवा
आपुन करत हैं । ऐसे जो भगवदीय होय ताकों आपुने बीच और स
को न बतावे जैसें भी जो कपरा होय सो अपने कपरा को भिजावे
तैसें ही आपु औरसों कहत नहीं जो भगवद्धर्ममें तत्पर होय तो
उहां और सों नमस्कार । आगें और वचन कहत हैं श्लो
का । निजाचार्यपदाम्भोजसेविन सुसुदुर्लभा । ... मन
:स्वसेवा यया चिन्तनतया ॥ ४ ॥ याको अर्थ । और भगवदी
य के सो हैं अपने श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीवल्लभाचा
र्यजी हैं सो तिनके चरणकमलकी सेवा में अहर्निस जा
को मन है । ऐसे जो जन त्यां पुछिसा ... य भगवदीय बहुत
दुर्लभ हैं । ... सो ही ... रूप नहीं । श्रीकृष्णजी की ली
ला ... में तत्पर हैं । काहेके ... वे ... भाव
धर्मन करत हैं शुद्ध न होय । ऐसे भगवदीय होय सो ता
या काल में बोहोत दुर्लभ हैं ॥ ५ ॥ आगें और वचन कहत
हैं श्लोका । अहं तु सर्वथा नित्यं तथा सत्संगवर्जितः । लो
का मिमन सा ... नित्य ॥ ६ ॥ याको अर्थ । श्री
रन के सो हौं सर्वथा नित्य सत्संग करके वर्जित हौं मो को
तो सत्संग मिलन नाहीं । तातें मनमें बहुत ... सपाव
तहीं । जो मोको भगवदीय को सत्संग न भयो । काहेते भगव
दीय को संग ... श्रीकृष्ण ... पावे हैं तिनकथा
नको अनुभव होय । भगवदीय बिना आनंद करि रहि
त है । नित्य । आगें और वचन कहत हैं श्लोका । वाप्य
नि:शरण ... पापन ... मिमहीतले । को बाम ... दीय हृ
दय दुःख ... कि स्थिति: ॥ ७ ॥ याको अर्थ । अब श्रीह
रि जी नि:साधन हौं । ... हृदयमें ... ताको वि ...
कहत हैं जो मैं यह महीतल पृथ्वी में आयके वास कीयो
सो पृथ्वी ही भयो । काहेते । हरिस्मरण को उपाय जब

न्वनिआयो ताकोजन्म यह पृथ्वी पर वृथा है सो प्रहलादजी
श्रीभागवतमें कहे हैं जो कौमार आचरेत्प्राज्ञो धर्मान्भा
गवतानिह दुर्लभो मानुषंजन्मतदप्यध्रुवमर्थदं १ और ए
कादस स्कंधमें जनकजी कहे हैं जो दुर्लभो मानुषो देहो देहीनां
क्षणभंगुरः तत्रापि दुर्लभं मन्ये वैकुंठप्रियदर्शनं इति
वाक्यात् यह मनुष्य देह महा उत्तम है कौमार अवस्थाते
प्रभुको सरणागत होय भगवद्धर्म करनो उचित है काहेते
लरकाईमें भगवद्धर्म ना होय तो पुनः कालसमय कछु नाहीं बनि
आवेगो पछे यह देह ही मिलनी दुर्लभ है तातें भगवानको ध
र्म भगवानको दरसन यह महा दुर्लभ है या वयस यह देह पा
वने सो कहा करनो कहे सो मोसो कछु भयो पाछे यह देको महा सो
च है जैसे चिंतामनि पायके कोडी दे पलटे है पाछे चिंता
मणिके गुन सुने तब अनेक दुख आवे पाछे यह देह पा
इके लौकिकमें लगावे ताको जन्म वृथा है तातें मैं हरि
सरणाको उपाय नाहीं कीयो तातें हृदयमें महा दुःख है
यह मेरे हृदयके दुखको दूरि करे ऐसो कौन है प आपो
अब और हू कहत हैं स्लो० व्रजवासस्तथा श्रीमद्यमु
नातटसंगतं दुर्लभं हरिदूरस्थानां यस्तानं ह्या
लोकं अब श्रीहरिरायजी कहत हैं जो श्रीहरिके चरण
कमलको साधन कछु न बनि आयो सो व्रजवास हू न भयो
काहेतें व्रज देस महा उत्तम है प्रभुके चरणारविंदको
स्थल है तहां परिग्रह एतो प्रभु अपनो जानिके कृपा करे
सो उमाको न भयो और श्रीयमुनाजीको दरसन नाहीं है
कैसी है श्रीयमुनाजी जो दुष्ट प्राणी अनजाने एक बार हू
जलपान कीयो सो इतो उह जीवको यमयातना नहीं हुय
ह प्रताप है जो श्रीयमुनाजीको आश्रय करे तिनको श्री
यमुनाजी श्रीठाकुरजीकी लीलाको अनुभव करावे स
र्वकार्य सिद्ध करे हैं अलौकिक सर्व सिद्ध करे ऐसी श्रीयमु

नाजी को रसमन नाहीं है। ओर श्रीगिरिराजकू मोतें दूरि है सो
श्रीगिरिराजजीकुं देसे है। तिनके संग ते भीलनी जो पुलिंदी
तिनको भक्ति भई। ऐसे श्रीगिरिराजजीकूं मोतें दूरि है। ओ
र श्रीगोवर्द्धननाथजी को दरसन हू मोको दुर्लभ भयो है।
सो मैं पर देस में या भांति हौं। अब मन कहा करूं। तातें कहै
मन करि भावत हैं जा वस्तु को स्मरण करै सो प्राप्त ही है सो
तातें मन करि भावत हैं सो ब्रज श्रीयमुनाजी श्रीगिरिराजजी
श्रीजी को दरसन सब कल्पे है। इन नावेदन में को
पावन है। या भांति को कहै है तहां कहत हैं धृतो का।
विषयाक्रांत तनो है भगवद्भाव संतति है सो तत्र स्थिति स्या
धु हरि संगमतामपि ७ या को अर्थ। अब श्रीहरिरायजी कहत
हैं जो विषयाक्रांत देह में भरी रह्यो होइ तिनको भगवद्
ब्रह्म ता दूरि रहे। मन करि के भावना सिद्ध न तिनको होइ
तिनको सुद्ध हृदय होइ। ओर पुष्टप्रकार लीला के कहन पु भगव
इस्मरण में मग्न है तिनको सगरी वस्तु सिद्ध है। ओर सो को
विषयावेश को भगवद्भाव दूरि ही है। अनेक देसान्तर में
स्थिति है। अनेक प्रकार के लौकिक सबादी सृष्टि को संग
है। भगवदीय को संग मोतें दूरि है। भगवदीय मिले तऊ उन
सो मिलि के भावस्भाव विचारियें सो ऊ मोतें दूरि है। तातें
मनमें बहुत खेद होत है ॥७॥ आगे अब यों कहत हैं लो
का। तत्स्थान कथा रतनो विमुखता दर्शः। एवं विध स
सतने श्रीहरि स्मरण मम ॥ या को अर्थ। अब श्रीहरि
रायजी कहत हैं जो भगवदीय होय भावात्मक कथा श्री
सुबोधनीजी आदिक है। तथा सुनिवे हृदय में भाव उ
त्पन्न होय सो भगवदीय मोतें दूरि है। ता करि भावात्म
क कथा हू मोतें दूरि है। तातें हृदय में विमुखता छाय रही
है। सो या भांति मैं सब साधन करि रहित हौं। यह देसान्तर
मैं स्थिति है। ओर सो जो मैं निरंतर श्रीकृष्ण की सरण है

श्रो ऐसें कहा करों जब वस्तु न बनें तब सरण की भावना कर
त हें। सो श्री आचार्यजी महाप्रभु श्रीकृष्णाश्रय में कहे हैं वि
वेक धैर्य भक्त्यादिरहितस्य विशेषतः पापासक्तस्य दीन
स्य श्रीकृष्णःशरणं मम: १ विवेक धैर्य भक्त्यादि सर्व धर्म
करि रहित होय पापासक्त होय अति दीन दुखी सोऊ
श्रीकृष्ण ही की सरण करें। तातें मैं सर्व साधन करि रहित
हों निरंतर श्रीकृष्ण ही की सरन कीये हों। आगें अब और
हू कहत हैं श्लो० को वेद हरसंकिंव ना न जाने हं कृपानि
धि तथापि श्रीमदाचार्यशरणं कुरवे मनः १ या ... अ
सो यह मैं नाहीं जानत जो श्रीकृष्ण कहा करिवे वारे हैं
मेरी कहा गति करेंगे सो जानी नाहीं जात है का हेतें वे
हे श्रीकृष्ण के अभिप्राय कों नाहीं जानत हैं तामें कहा
करूं परंतु इतनो श्री आचार्यजी महाप्रभुन की कृपातें जा
नत हों जो श्रीकृष्ण कृपानिधि हैं अपने निज भक्तन पर
स्नेह करत हैं निश्चय कृपा करत हैं। तातें मैं एक श्री आ
चार्यजी महाप्रभुन के चरण कमल की सरण अपने म
न में करि रह्यो हों ताकरि श्रीकृष्ण कृपा करेंगे। श्रौ ऐसा
रो कार्य सिद्ध होइगो। यह कहिकें यह जतायो जो श्री आ
चार्यजी महाप्रभुन की सरण की रहें जीव तिनकों श्रीकृ
ष्ण कृपा करेंगे सगरे कार्य सिद्ध होयगो श्री कृष्ण श्री यमु
नाजी श्री गिरराज जी श्री जी सगरी लीला को अनुभव
होइगो। जो श्री आचार्यजी महाप्रभुजी की सरण ना
ही कीये हैं तिनकों कछु फल सिद्धि नाहीं तातें स्व
पने श्री वल्लभाचार्यजी के सरण मन करि कीयो है या
आश्रय करि अपने मन कों समझायकें राखे हैं आगें
अवधोपदेश करत हैं श्लो० विशेष प्रेम जीपित्राद्बोध
था: सर्ववृत्तयुक्ता: अनेन केवलेनैव किंचित्स्वस्थम
नो मम: १० या ... अर्थ ... अब श्रीहरिराइजी कहत हैं

१०५ सोश्रीगोपेश्वरजीसों कहत हैं। जोविशेषसमाचार मैंमजीलि
१० पत्रमेंजानोगे श्रीमहाप्रभुजीकीसरणकरिकिंचितमन
मैंस्वास्थ्य है। जोप्रभुकृपाकरेंगे अपनीओरदेखिवे। १७६
तें श्रीहरिरायजीकृत शिक्षापत्रको नविशो तीकी टीका
श्रीगोपेश्वरजीकृत संपूर्ण। अथश्रीगोपेश्वरजीकोप
त्रआयोहै। सोताकोप्रतिउत्तरश्रीहरिरायजीलिखतहैं
तातेंसगरीपुष्टिमार्गकीरीतिसार है। जो फलसिद्धि होय
सोसबलिखतहैं। श्लोक। समाचारांश्चगात्वेवसंतोषो
जनितो महान्। सदैवापिहरिर्जीवेष्वनुग्रहंकुरुतेस्वतः
१। भाषाटीका। अबश्रीहरिरायजी कहत हैं। जोतुमारोपत्रआ
यो। सोवांचिकेमनमेंसंतोषभयो। काहेतें जद्यपिग्रहभा
कोंबडोदुखहतो। सोदुखतुमारोनिवृत्तभयो। तुमारेहृद
यमेंसंतोषभयो। ताकरिकेहमहूमनमेंसंतोषपायो। आगे
यहशिक्षाकहतहैं। सोमनमेंधारनकरियो। हरिजोभगवा
नवेसेहैं। जद्यपिजीवकेदोषकोजानतहैं तऊअपनी
ओरतेंजीवपरअनुग्रहहीकरतहैं। जीवकीओरनाहीं
देखतहैं। सिसुपालश्रीकृष्णकीनिंदाहीकरतो। ऐसो
दुष्टताहूकोगतिदीनी। इंद्रनेजलवृष्टिकरिद्वेषकीयो
तऊवापाप्रसन्नभये। ऐसेश्रीकृष्णहैं। तातेंश्रीकृष्णही
कोभजनस्मरणआश्रयकरतव्यहै। जोसदाहीकृपा
करताहैं। अनेकप्रमेयबलतें यहीजीवपरअनुग्रह
करतहैं। २। आगेअबऔरहूकहतहैं। श्लोक। प्रमेयब
लमासाद्य किंमसाध्यंतस्याभवेत्। अतःप्रथमदोषा
णांचिंतानैवविधीयतां। २। भाषाटीका। अबश्रीहरि
रायजीकहतहैं। जोयहपुष्टिमार्गमें ताकेकेवलप्रमेयब
लहीतेंसबकार्यसिद्धिहै। जीवकेसाधनतेंसर्वकार्य
सिद्धहोतनाहीं। औरजोजीवकछुनाइसाधनकरेगो। ता
तेंजीवकोपरमदोषबनतहै। सोअपनेदोषकीचिंताक

तो। याके साधन ते सो यह रहि नाहीं होइ सकत। तातें
चिंता क्यों करत हो। श्रीमहाप्रभुजी कहे हैं जो जीवो स्व
भावतो दुष्ट। जीव तो स्वभावते दुष्ट है निश्चय परंतु अ
निमन में ते अज्ञान करि अनमजानत है सो रूपस्म दो
वंत है। सो देयकी चिंता नाहीं करनो सो तातें चिंताकी
कहा सिद्ध है चिंता वाध्य कोन भांति है। सो ख्व
आगे कहत हैं श्लोक॥ संजातभगवद्भावे मप्यथ मिव
तु। लौकिक निंदा भवदुःखनधन वांहिमानसो ध्या
। अथ। लौकिक चिंता ते भगवद्भाव नाश होत है सो ख्व
को दृष्टांत कहत हैं जैसे सुंदर औषद खाया तो कुपथ्य
पथ्य करें खाटो खारो खाय या भांति कुपथ्य करें तो विनाप
च इहि औषद को गुण जाय और रोग बढे सो तैसे मन में
कु भावद भाव होइ सुमरन भजन सुंदर औषद कीनो
करी ता में यह लौकिक चिंता हि कुपथ्य करें तो भगवद
भाव उलटो जाय सो ता ही तें श्री आचार्यजी महाप्रभुन व
ग्रंथ में चिंता निवृत्त करी है चिंता ला पिन्ह कायो गि
निवेष्ता त्मा भिकदापि निवेदन जो जीव कीयो है तिन
निश्चय ही चिंता नाहीं करनी है और यह लौकि
जीव बुद्धि ने निंदा करत है सो महादुख रूप है सो
ही धरनी का है तो जो लौकिक में जीव बुद्धि
रत है सो महादुखरूप है सो अपने मन में
का है तो जो लौकिक में अनेक भांति के जी
ने करिये तो भगवद्भाव जाय तो
ही उचित है सो श्री भागवत में कहे हैं
सो लौकिक छोडि के प्रभु को भजन
माता पिता कीयो सो न धारन की
निंदा
किन निंदा भाव दीय को
तातें
त
ध

।५। यो सो तातें लौकिक निंदा भगवदीकों सहनो यह परम धर्म है
१ आगें और यों ही कहत हैं श्लो — अग्रेतु सावधानित्य विधे
य सर्वथा पुनः दुःसंगा निमहादोषा नामन्यत्र वर्जन लक्षण
त् ४ या श्व अब श्रीहरिरायजी कहत हैं जो श्रीगोपे
श्वरजी सों आगें और सावधान रहियो सर्वथा सोकाहेतें
जो दुःसंग महाबाधक महादोषरूप है जो जन्मजन्मन ते भगव
द्भाव कों छिनि एक ठोर ओंर सों अरु एकक्षण में हीतिरस्
कार भाव कों नास दुःसंग ते होय सो श्रीभागवत पुराण
में कह्यो है और बडे बडे भगवदीय दुःसंग ते गिरे हैं ता तें दु
ःसंगतें निश्चय करि ता क्षण में सावधान रहियो इतनी
हमारी बात सर्वथा हृदय में धारन करियो जो दुःसंगतें
बचे रहियो सर्व भाव के लक्षण में नासक तो है ४ आगें औ
र यों ही कहत हैं श्लो — असज्जन कृता निंदा तुष्टै सत्व
विनिश्चयात् यतस्तेषान रो चैते सन्त एव हि सर्वथा ५
या श्व अब श्रीहरिरायजी कहत हैं जो असज्जन जो म्ले
च्छ तथा अन्य मार्गीय तथा बहिर्मुख जो निंदा करें तो
उनकी निंदा सुनि कें मन में दुःख मति पाइयो मन में प्रस
न्न संतुष्ट पाइयो जो ये निश्चय सत्य ही कहत हैं मैं तो दो
ष वंत निश्चय ही हों या भांति मन में ज्ञान करि विचारि
निंदा सहनी सो या तें जो संतजन हैं सो उन दुष्टन की
वानी में सर्वथा रुचि नाहीं राखत जो जैसें प्रह्लादजी
सादिजीयो तासें प्रह्लादजी को कछु बिगार्यो नाहीं
हरणाकस्यप को प्रभु मार्यो सो ता तें संत जो हैं सो दुष्टन
की वानी में सर्वथा मन नाहीं राखत ५ आगें और यों
ही कहत हैं श्लो — मार्ग विश्वास रहिताः पूर्व दोषैक दुष्ट
याः यतो नामैव हि हरेः सर्वदोष निवर्तकः ६ या श्व
अब कहत हैं जो वे दुष्ट कैसे हैं जो या पुष्टिमार्ग में
विश्वास करि रहित हैं सो काहे ते जो पूर्व जन्म में दोष

हीहै रखत हैं। सो यह जाननौ। तथा मार्ग में सर्गाख्यातो हैं त
ऊ प्रथम की सुष्टता ही जातें दोष ही है रखत हैं। पुष्टिमार्ग को
प्रकार सगरे जगत में प्रसिद्ध हैं। सो दे रखत हैं त ऊ अपनी कु
टिलता नाही छोडत हैं सो काहे तें जो पूर्वजन्म में वैष्ण
व हैं। तातें मार्ग में इनको विश्वास नाहीं है। सो हातें दुष्ट हैं ता
तें दुष्टता प्रगट करत हैं। या भांति जाननौ। और भगवान्‌को
नाम साधन में हूं। सो हैं जाको नाम लेत मात्र सर्व दोष
दूरि होत हैं। सो षष्ठस्कंध श्रीभागवत में कह्यो है। ह्लोक॥ अ
ज्ञानादथवाज्ञानादुत्तमश्लोकनाम यत् संकीर्तनमघं पुं
सो दहेदेधो यथानलः॥१॥ सांकेत्यं पारिहास्यं वा स्तोभं हेल
नमेव वा। वैकुंठनामग्रहणमशेषाघहरं विदुः॥ अन्नमोचा
रायणमाहात्म्य हरेपस्यति पुत्रकं॥ अजामिलोपियनेन्नम
तु पासादरमु अंतो॥ अथ ष्ठमे षष्ठ मृदाकम मंत्र नरतंत्रम
च्छिद्रं देशकालार्हवस्तुतः सर्वं करोति निश्छिद्रं नामसं
कीर्तनं तव॥ अलितिक्रमापापमनुबंधुदनायोन्पनिष्वि
मे स्मरं तिष्मास्यतीयेहरेनाम कलो युगो॥ भक्षस्वसंध
शुकवाक्य॥ कालेदोषनिधेराजन्नस्ति ह्येको महान्गुणः
न् कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तबंधः परं व्रजेत्॥ कलहा
पितृरागोध्रौ मात्रहा बाह्महा च दानाश्वादः पुष्कसं को
वापि शुद्ध्येरन् यस्य कीर्तनात्॥ इत्यादिक और नामको
माहात्म्य है। तातें सब जगह में भगवन्नाम मुख्य तें अनजा
नें निकसि जाय तो उह नाम सर्व दोष दूरि करत हैं। तातें
हरि भगवान् को नाम है तासूं तें अधिक श्रेष्ठ और नाम है
सो आगें कहत हैं। ह्लोक॥ तदापि श्रीमदाचार्यवल्लभ
बुजनैः मृते तन्मेव्यासि तन्मागोस्य सर्वसंपादनान्नमः॥
या को अर्थ। जद्यपि श्री भगवन्नाम सर्व गु दाता है
संसार दुःखन छोडावो तासूं सै यह हस्तस
रणमः॥ यह नाम श्री आचार्य

न मलीन लिकस्यो है सो पुष्टिमार्ग में स्थिति करत नहीं है काहे तें य
ह पुष्टिमार्ग है श्री आचार्यजी महाप्रभून द्वारा प्रगट भयो
तिनको सर्व सिद्धि कहूगी सो श्री गुसांईजी विज्ञप्ति में कहे
हैं श्लोक ॥ यदनुग्रहतो नातः तच्चरणौ श्रीहरः शरणं मम: ततनाधाति
नैश्चितं मे हृदि पारलौकिका १ इत्यादिक वचनके भावसों पु
ष्टि ब्रह्मसंबंध को जपवे ब्रह्म करे यह सर्व सिद्धिकर्ता में सामर्थ्य है
या में अब और हू कहत हैं श्लोक ॥ ततो निवृत्तसंबंधस्सर्व
दोषनिवर्तक: निर्दोषानंदरूपे वा तिदोषभावमसाध्धिकं
... ऊपरकहे तें नाम में सर्वदोष नासक है तैसे तो
ब्रह्मसंबंध जा जीवको होय तिनके सर्वदोष नास होय यह
कहत चित नहीं हैं सर्वदोष निवर्तक यातें तो ब्रह्मसंबंध जी
जीवको होइ है ऐसो श्रीप्रभुन कहो है सो सिद्धांत रहस्य में श्री
आचार्यजी महाप्रभु कहे हैं श्लोक ॥ ब्रह्मसंबंध करना
त् सर्वेषां देहजीवयो सर्वदोषनिवृत्तिर्हि दोषापंचवि
धास्मृता २ इत्यादिक वचनसों जाननो जो ब्रह्मसंबंध
श्री आचार्यजी द्वारा जा जीवको भयो तिनके सकल दो
ष दूरि भये काहे तें भगवान निर्दोष हे सो भगवानकी
सेवाकें जीव निर्दोष होइ ताको अंगीकार होय नातें ब्र
ह्मसंबंध महाप्रभुजी कराये अपने जीवनको निर्दोष
कीये पाछें सेवा में लगाये सो भगवत्सेवा ऐसी है जो जा
में दोष रहें नाहीं निर्दोष आनंदरूप है सगरे दोष प्रति
बंध तिनको नाश ही करतो है सो काहे तें जो दोष नास सब
ब्रह्मसंबंध ते नास भये पाछें सेवा करें ते प्रभुकी लीला
प्रापक प्रतिबंध रूप दोष सो सब भगवत्सेवा ते दूरि हो
य स्वरूपानंदको अनुभव होइ यह भाव हि चारिके
ब्रह्मसंबंध और भगवत्सेवा करें ॥ या आगे अब और
हू कहत हैं श्लोक ॥ गुनगानं तु सर्वेषां दोषाणां विनि
गुणगान ज्ञानमार्गी हुन्त ब: प्रणोदिनः ९

याको अर्थ॥ अब श्रीहरिराईजी कहत हैं। जो भगवद्गुन
न हैं। सो सगरे ही अब को निरूपन करे हैं। तामें दोय प्रकार को
गान हैं। एक पुष्टिमारगीय जे मैं गुनगान एक मर्यादामार
यजे मैं गुनगान एक मर्यादामारगीय गुनगानसों होउके भे
कहत हैं जो पुष्टिमारगीय जे मैं व्रजभक्त गुनगान गावत
हैं श्रीस्वामिनीजी के संयोग में सेवा समय न करत हैं। और श्री
पश्रीठाकुरजी तो यासन को पधारत हैं। सो नवविरह स्यार गु
न गान वेणुगीत युगलगीत गाय मायासंध्या पर्यंत विना
वन हैं। पाछे श्रीठाकुरजी संध्या समय पधारि व्रजभक्तन
के विरह दूर करि के सकल मनोरथ पूरन करत हैं। सो तें से
हैं श्रीआचार्यजी महाप्रभु के पुष्टिमार्ग में विरह के रि गुन
गान विप्रयोग की भावना यह पुष्टिमार्ग में या भांति गुन
गान संयोग विप्रयोग की होउ रसको अनुभव। और
मर्यादा ज्ञानमार्ग में केवल गुनगानही करत हैं न हो
सेवा नाहीं है। त्यागेश्वर यों रहत हैं। सो श्लोक॥ ज्ञान
सकृत्व्हे या गाणा हरिकं पावकीर्तिनै तथापिनः प्रभोप्रा
तुभावय प्रति वृध्यके। १०। याको अर्थ। ज्ञानमार्ग गु
नगान के सो हैं नो सकल रस घस खावे हैं। सो भसम होय
ानहैं। पाछे निविड स्पर्श होय तो मोक्ष की प्राप्ति होइ तो
ानमार्ग के गुनगानतें प्रभुको आइ भाव स्वरूपानंद को
नुभव होइ। पुष्टिमार्ग में प्रतिबंध रूप सों सोवा है
ानमार्ग को है। सो भांति मार्ग में प्रतिबंध रूप में सो वाहे
पप्रभुको रस न नाहीं लीला को अनुभव नाहीं स्वरू
हके अनुभव नाहीं है। तातें ज्ञान भक्ति को प्रतिबंध ही
नो। सो श्रीहरिराइजी श्रीगोपेश्वरजी को वचन हैं जो
ानमार्ग नाहीं गुनगान ही मुख्य मति जानियो सो
ाग सेवा करत हैं। श्लोक॥ तन्निवर्तेयितुं शानमनेनापूर्ने
ये तात॥ ततः स्वाचार्यसान्निध्यं
दायकं॥११॥

अब श्रीहरिरायजी कहत हैं जो ताते ज्ञान तुम मा
करियो अपने भगवत्सेवा ही मुख्य है यह ज्ञान तो काहे
यह ज्ञान भक्ति मार्ग यह पुष्टिमार्ग में संन्यास है या भांति श्री
चार्यजी महाप्रभु निरूपण कीये हैं संन्यास निर्णय में कहे हैं
जो ज्ञान तें मुक्तमार्ग की सिद्धि जन्म सतैः परं सो जन्म ते र
न मार्ग को साधन सिद्धि होइ प्रतिबंधन होइ तब ब्रह्मलावे
लोक जाय पाछें जब ब्रह्मा को लय होय तब वा ही को मो
क्ष होय ताते ज्ञान मार्गीय जीव भक्ति ते न्यारो है ताते तुम
पुष्टिमार्ग की रीति में तत्पर रहियो श्री आचार्यजी महा
प्रभु को यह पुष्टिमार्ग है सो है एक रस श्री आचार्यजी
महाप्रभु को सो निश्चय होइ तो एक रस भगवद्भाव को
ज्ञान करें स्वरूपानंद को अनुभव होइ ताते सर्वोपरि फल
रूप भगवत्सेवा पुष्टिमार्ग में है जामें भगवद्रस को अनु
भव होइ यह भाव विचारिकें श्री आचार्यजी महाप्रभु जा
रीति सों सेवा में प्रगट करे हैं ता भांति करियो श्री आचा
र्यजी महाप्रभु भाव करें तब करेंगे यह निश्चय सर्वोपरि सि
द्धांत है ॥ आगे अब और कहत हैं श्लो... नहि हरि
...तापानां क्रमाद्वैव संभवात् ततः उत्तर भावस्य भाव
ने वद्रूपतां ... या को अर्थ ... पुष्टिमार्ग को जो जो मन
लगाय के भगवद्सेवा करेंगे तो तो श्रीहरि की दर्शन
की ताप क्रम क्रम ते बढे या भांति जब अधिक ताप हो
य ता काल में संसार दोष भक्ति करते दूरि होय जाय
तब दैन्य सिद्ध होय दैन्य सिद्धि भए पाछें ताको अंतर भा
व सिद्ध होय भाव जब हृदय में सिद्ध होय सो तब देहभक्त
न के भाव की भावना करें जाको मानसी सेवा कहत हैं
सर्वोपरि सो व्रजभक्तन को भाव है सो है अग्निरूप है
भाव अग्निरूप हृदय में होय तब जानिये जो श्री आचा
जी महाप्रभु हृदय में पधारे भाव अग्निरूप श्री आचा

यें जो महाप्रभू हैं।२। याग्रागें अव श्रोएर कहत हैं। श्लोक। लौ
कानसोयसंगाग्येनास्कं सर्वथा मता।। एवं भूतेष्विलमार्गे
मूर्नैयेषामभाग्यता।।३।। याको अर्थ पुष्टिमार्गीय वैष्णवको
एक क्षण हू दुःसंग होय कौ लेगन्हे तो क्षणमें भावको ना
स होय जाय। श्रीआचार्यजी हू स्थल पधारे। रामेश्वरको
स्त्रीकोर खंड अन्याश्रय भयो। तो श्रीआचार्यजी अप्रसन्न
भये। तातें अन्यसंबंध गयो यों कें धर्म सब बाधते। या भांति
दुःसंगते भाव जाय। एसो पुष्टिमार्ग है। तथा ये हू अर्थ है जो
रे यवक हू भाव आश्रित्यो हृदयमें संगा है। इतो एक क्षणमें संग
रे दोषकौ सर्वथा नाश करे। या भांति पुष्टिमार्ग सर्वोपरि है
यह पुष्टिमार्गको मत हैं। ऐसे वृजभक्तनके भावात्मक यह पुष्टि
मार्गमें भूत जो प्राणी स्थित हैं तिनको जो कोई स्मरन करते
हैं निश्चय करत हैं तिनके बडे अभाग्य हैं। अथवा पुष्टिमा
र्गमें स्थित जीव है इकें और पुष्टिमार्ग न जानत है तिन
को महा अभाग्य है इनको पुष्टिमार्गीय फल नाहीं सिद्ध
होन हारके।३। अथ आगें अव श्रीआचार्य कहत हैं। श्लोक। अवि
श्वासतनः स्तेषां न गतिः कापि विद्यते। अतः स्वयं श्रुति
पद्मभाग्यहरिं समाश्रयेत्।।४।। याको अर्थ। ता जीवको अ
विश्वास यह पुष्टिमार्गमें है ताको कहू ग्लानि नाही है कौ कैसी
वहे उ अविश्वास सबको बाधक है सो अविश्वास सबको
बाधक है। सो अविश्वास कैसे होय सो नहा कहत हैं। तो अवि
श्वासके कारन है या भांति अविश्वास होत है। एक अपने
मनमें स्वयं कल्पित विचारे हैं जो यह मार्गमें तो कछु मो
को सिद्धि नाहीं दीसत एक तो यह हा।। हू सरो हूतो ज्ञानमार्गी
य कर्ममार्गीय मर्यादामार्गीयतें सुनि कें कोहेतें अन्य मा
र्गीय मर्यादामार्गीयतें सुनिकें कहे तें अन्यमार्गीय हू
यह पुष्टिमार्गको उत्कर्ष नाहीं देख सकत हैं। तातें उनको
दूसरो महा बाधक है। उनके सुनतें मार्गकी निंदा सुनिकें

अविस्वासजीवको होइ यह दूसरो कारन तथा पुष्टिमार्गको
फलसर्वोपरि है सो भाग्यमें न होइ जीव ही भीतर प्रवाही है
इ मर्यादामार्गीय होइ पुष्टि न होइ तो वह कहा ते पावे वा
को अविस्वास ही होय यह तीसरो कारन ३ तथा हृदयमे
अनेक भांति के विषय की तरंगा ले विषय वैदिक की तर
गो पुष्टिमार्ग में तें विश्वास छूटि जाय औ वैदिक क्रियाकरन
लागे यह चतुर्थ प्रकार ४ तथा काहू वहिर्मुखके संग में ते
दुःसंग ते होइ तो अविश्वास होइ ताको पुष्टिमार्गको फल
सर्वथा न होइ ५ आगे अव और हू कहत हैं श्लो० तदे
वाहिर्मुखस्यापि सर्वथा जीवनं वधिः ना ... वचना चा
... बुद्धिरापातसुंदरात् १५ या ... ऊपर कहे इन पांच
हेतन ते अविस्वास हृदयमें दृढ़ होइ जाय ताकरिके सर्वथा
वहिर्मुख जीव को वाध कहो करे जैसे जल अग्नि को नास ही करे
तैसे दुःसंग दोषभाव के वाधक है सत्य जीव अज्ञानी जी
व के वचन चातुरी ते बुद्धि जो पंडित भगवदीय बुद्धि सुंदर है
सो वहिर्मुख के आगे न चले सो कहत हैं जो पंडित भगवदी
य मर्यादा सो इह शास्त्र न बोले सील स्वभाव संयुत यो
... त्य जीव अज्ञान वारि निंद्य ... वचन मन होय तैसे
ही विना मर्यादा वोले ताको आछो ज्ञान करे तातें अज्ञा
नी के संग वाद सर्वथा ही नाही करनो यह १५ आगे अव
और हू कहत हैं श्लो० ... सत्व निश्चयन संगः साधको न
हि संशयात् ... यत्र वै विपरीतेव हरि स्तत्र भ्रम स्वतः १६
या ... तातें यह निश्चय मनमें जाननो जो या भी कहो
सत्संग ही भगवद्धर्म को साधक है या में संशय नाही सो
श्रीभागवत प्रथमस्कंधमें सौनक वाक्य तुलयाम लवे
नापि न स्वर्गं न पुनर्भवं भगवत्संगी संगस्य मर्त्यानां कि
मुताशिषः एकादसमे भगवद्वाक्य न रोधयति मां योगो
न सांख्यं धर्म उद्धव न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो नेष्टापूर्तं न

हेक्षणा।पारे नानियमो ३सास्थितीर्थो निनियमायमा
थावेरुद्ध सत्संगास्सर्वसंगापह्नो हिमाशि इत्यादि व च
तेजाननो।जो सत्संगही वडो जीवको सार्थकहै नातेय
ह्वैस्नवपुष्टिमारगीय है सो यह निश्चय सत्संग है वरो।
औरपुष्टिमागते विपरीति हैं इन जीवनको संगजो अन्य
मारगीयतिनके संगतें वैस्नवकोहू निश्चयभंग होइ ता
तेंयह विचारकरिकै पुष्टिमागतें विपरीति इनकेरना
वैस्नव होय तो वाहको संग सर्वथा न करै।और अन्यमा
रगीयको सगाहू संग न करै।यंत्रमो ग्रवयोरहू वरतहै
स्लोक॥ नत्वश्रातापरंमहात्सत्संगा:खलुवाधिकः अन
सत्संगासहिभक्तिष्ठा स्सर्वेस्सवैसा।१७।याको अर्थ।जेजी
वश्रातहैं।यापुष्टिमागमें विश्वासकरिरहेहैं सोम
हामहदवंशानीहैं।इनको खलकहिये दुष्टजानियें
उनको संग महाबाधक है।तातें यह वैस्नव तहां जाइ
तहांस्वकीयपुष्टिमारगीयके संगास्थितिमें दृढहोसो
नवहींदुःसंगतेंवचो।तातें सर्वथा सत्संगमें रहेताहीते
नवरत्नग्रंथमेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकहेहैं।निवेदन
स्मनेयंसर्वथानाइसेजैनो।यहनिवेदनकोस्मरणास
सवैसानावुद्धीसों मिलिकैपरैं सोतातें सत्संगहे
भावरुद्धिकरतहैं।तातें नित्यपुष्टिमारगीयभगवदीयको
नवकरनो।त्यागोऽथवै औरहू कहतहैं।स्लोक॥सेवाबुद्धे
शचारोधर्ममार्गास्थितेपिच्चास्वदिरुद्ववचाववकृष्यवि
वैचौवैको गतिप्रिया।१५।याको अर्थ॥अवश्रीहरि
नीकहतहैं जो पुष्टिमारगीयवैस्नवयाभांतिरहैं।नि
नश्रीआचार्यजीमहाप्रभुदाराकरिपाछैंभगवद्
वरपुष्टिमार्गकीरीतिसों आचारसहित।का ते
ह्य मेंकहेहैं।आचारप्रथमोधर्मो आचार
वको प्रथमधर्म है।तातें आचार वि

सामर्थ्य होय सेवा श्रीस्वरूप मर्यादा न होनको जानरासे धर्म
में हढ रहे तथा स्वधर्म राखे आपने तन धन तें न होतो इ स्व
कोरी करिये स्याहाय करिये और पापाचरण करे पुष्टिमा
र्गीय वचन कहे जो कोई पुष्टिमार्ग सो अवि
रुद्ध सुन्दर सिद्धान्त है ताकों मान लेइ अविरुद्ध यामा
र्गरीतिकी सेवा है सो मन में प्रिय जाने १८ आगे अ
वश्य कहत हैं श्लो स्वाचार्य मार्गवाक्येषु नि
सतनः भावुके जनः दीयतां न संशयः सर्वसंगविवर्जितः
१९ या ... एक अपने श्रीवल्लभाचार्यजी के वचन प
र निरंतर निष्ठा राखे श्रीआचार्यजी महाप्रभु के किये ग्र
न्थ श्रीसुबोधिनीजी निबंधादिक तन्मार्गीय ग्रंथ को व
हे सुने ताही के नेह राखे जो जा क्रियाभाव कहे ताही में
मन लगाइ देवे ऐसो ताही भांति रहनो और जो भगवदी
य श्रीआचार्यजी महाप्रभु के वचन अनुसार चलत हैं
श्रीआचार्यजी महाप्रभु के वचनमें जिनकी प्रीति निष्ठा है
ते भगवदीय भाव करि भावित हैं तिनही को संग करे औ
र सब को त्याग करे जो ऐसे पुष्टिमार्गीय भगवदीय मिल
तो संग करे नाही तो सब सों छोडि के भगवत्सेवा स्म
रण मार्ग रीति प्रमान करे परंतु अन्य को संग सर्वथा ही न
करे या भांति वे सब रहे तो पुष्टिमार्ग को फल श्रीआचार्य
जी महाप्रभु की कृपा ते पावे यह सिद्धान्त भयो १९
श्री ... र ... कृ ... सि ... पन ... वि ... ता ... टी ... श्री ... पे
र ... कृ ... भा ... में ... पू ... २० अब कृपा करत हैं सो ता प्र
कार वे सब रहे तो फल सिद्ध होइ सो यह कलिकाल दो
ष तें भक्तिमार्ग को भाव अ सतसंग तिरोभूत है याको दे
से फल होइ सो आगे लिखापत्र में कहत ... श्लो ... भ
क्तिमार्गस्तिरोभूतस्तथा संगसनाम ... गो
पीलं तदमावेदि लव या १ या

रसाइजी कहत हैं जो भक्तिमार्ग यह काल महा कठिन ते(
रो भक्त भयो है और पुष्टिमारगीय भगवदीय को संगहू ति(
भक्त है नाही मिलत तो नाकरिके पुष्टिमार्ग को भाव हू सि
थल भयो है सो भाव बिना सब वृथा कहत हैं यह पुष्टिमा
मैं सगरो भाव ही हैं भावात्मक ही हैं सो भावना पुष्टिमार
गीय में स्थिति है सो भगवदीय को संग है सो अनन्य ही जाने
अन्यथा कैसे जानो कहा है तो भक्तिमार्ग में वल्लभप्रभु जो सु
ख अष्टप्रहर विचारे अपनो देह संबंधी सुख संबंध कहन
विचारे या भांति सेवा करे सो दुःख को ना करि भाव सिध
न हो गयो है तातें भाव बिना सब वृथा है पुष्टिमार्ग अकथ्यो
संवृ कहत हैं श्लोक भक्ति मारगीयता भावे क्रियामात्रे हि
कर्मवत् तत्रापि न मनः स्थैर्यं विक्षेपाद्यवहारतः ॥ याको
अर्थ भक्तिमार्ग की रीति यह जो अष्टप्रहर भाव में रहे सो ता
कहीं नाम भक्तिमार्ग को लीयें परंतु क्रियावत् कर्मवत् जे
सेवा में मारगीय कर्म करें तहां ताई तो प्रयोजन न पाछे कछु
नाही भगवत्सेवा में संयोग को सुख भयो न अनेनसर्ग
विप्रयोग भयो तातें क्रियावत् पृथक है सो क्रियावत्
हू मन लगाय के नाही तहां सेवा में हू मन एकाग्र होय नाही
थ नेक भांति के विक्षेप मन में होत है नाना भांति के सब
वृत्ति मन में उठत है ताकरि मन थिर नाहीं विक्षेपणा
नहे सो क्रियावत् हू भगवत्सेवा नाहीं बनत है शास्त्रा
थके और हू कहत हैं श्लोके हारोप्पासिद्ध्ये छि
ष्लोभे कोमतः तद्भावे तु गा प्रकारेसे
हिया को अर्थ ॥ अब श्री
सेवा में विवहार की
ही यां तब मन में और
तहैं तब भाव ग्रहस्थ को
के सेवा करत तातें यह पु

प. २ जीव तुछ्य हैं काल महा कठिन हैं सेवा करने में व्यग्र होय कै
स्मरणास्तु तेः अन्य काल दोष तें होय सो व्यवहार खाली प
रे न सिद्धि होइ तब धीरज कैसें रहै अति ही दुःख मन में पावें
तब मन में भगवद्भाव लौकिक चिन्ता तें कैसें रहै और यह
स्याश्रम में सब ही माथे है लौकिक वैदिक सो करनो कुटुं
को भरणपोषण इत्यादिक वे सें भगवद्सेवा करें मन में तो चिं
ता नें आइ ग्रस्यो है तहां कोउ कहै जो व्यवहार समाप्ति करो प्रभु
तो सर्व सामर्थ्य मान है लौकिक वैदिक सर्व कार्य सिद्ध करेंगो
तुम भगवद्सेवा करो मन लगाइ कें या भांति कोई कहै त
हां कहत हैं ३ श्लो[illegible] [illegible] अन्यभावपरस्तु विद्धि [illegible] तु
दुर्लभः बुद्धिरात्मनि संततं निवेदन विचिन्तयेत् ४ या
[illegible] श्री [illegible] श्री हरिराइजी कहत हैं जो व्याकुलता को अ
भाव कैसे करें जद्यपि व्याकुल होय भगवद्सेवा करें सो
तो सर्वोपर है परन्तु सो तत्त्व नाहीं है पूर्ण विश्वास प्रभु
को सो नांहि दुर्लभ है या भांति या कलि में तो है विना पूर्ण
विश्वास व्याकुल होय तो बहुत ही दुःख पावें श्री यदु
नीमे दोष बुद्धि होय जाय जो सइ नवे आश्रय सेवा कर
तहां मेरो लौकिक कहा नाहीं सिद्ध करत है या भांति होइ
तो अर्थ ही य [illegible] दाय [illegible] भाव जात रहै ताते [illegible] व्याकुल केसे
६ ऐसी तीव्र बुद्धि मन होइ है विश्वास पूर्ण सो दुर्लभ
है तहां कोइ कहै जो बुद्धि उत्तम होय पूर्ण विश्वास जो भांति
होइ सो इकार्य करो तहां श्री हरिराइजी कहत हैं जो बुद्धि
प्रबल उत्तम विश्वास पूर्ण तो तब होय तब निवेदन कूं
चेतन अष्टप्रहर करें अष्टाक्षर सरण की भावना करें
गद्य के श्लोकन में कहा निवेदन कीयो है अब कैसी क्रिया
करत हैं कितनेक दिन भयो सो अब श्री आचार्यजी म
हाप्रभु द्वारा संबंध भयो है प्रभु कैसे हैं जीव कैसो है जी
व को कौन प्रकार दासत्व करनी हैं या भांति पंचोतर

मैं एकप्रभुरीगाति। याभांति निवेदनकौं चिंतन होइ तो बुद्धि
प्रबल होइ तो नव विश्वास रहे है। आन वकोई कैसें निवे
दनकौ चिंतन प्रथम करो। पाछे भगवत्सेवा को विचार कीए
यो या भांतिको कहे है तहां कहत हैं श्लोक ॥ तत्रापिसह भा
व सुसतामेव निरूपित: मे दुःखेभोदुरगाश्च न तो बुद्धि मे ता
हश ॥५॥ याको अर्थ ॥ श्रीहरिरायजी कहत हैं। निवेद
नकौ चिंतन अपुनी बुद्धि ने नाही होय सकत है। सो नव
रत्न ग्रंथ में श्री आचार्यजी महाप्रभु निरूपण कीए हैं॥
निवेदनं तु स्मर्तव्यं सर्वथा तादृशैर्जनैः। ताते निवेदनको
चिंतन भाव सहित तादृसी पुष्टिमार्गीय भगवदीयसों मि
लिकें करो। नव भाव सिद्ध होय आन तौ कोई कहे जो भगवदी
यसों मिलिकें चिंतन प्रथम करिलेहुं। तहां श्रीहरिरायजी
कहत हैं जो पुष्टिमारगीय भगवदीय तो मिलने हू नहीं
दुःखे मिले हैं कहत है सो दूरि हैं। तिनके संग को न भांति सो हो
इ उन भगवदीयन के संग बिना तादृसी बुद्धि कैसें होय या ॥५॥
आगें और वस्तु आरहे कहत हैं श्लो० ॥ चिंतापिशाचियेनेनि
त्यपोषक भावतो मम: खिन्नत्वं जायते चित्तवान अव
तात्त्वन्यथा ॥६॥ याको अर्थ ॥ श्रीहरिरायजी कहत हैं जो
और भावकूं सोतो परम दुःखभरै है कछु क भाव आगे तें ह
यमें स्थित है सो ऊ छिन्न होत हैं दिनदिन घटत जात है
काहेतें पोषण भाव है भगवदीयनको मिलाप होइ तो भा
वको पोषण होइ भाव बढ़े बिना सत्संग भाव सिथल
होत है नहीं कोई कहे जो जितनो भाव है तितनेको चिं
तन करो भाव तो रंचक होय तो सर्व कार्य सिद्ध होय तहां
श्रीहरिरायजी कहत हैं जो मैं चिंतन को न भांति करूं लौ
किक मनुष्यनको संग या चार स्वन्यो है सो त्यों किकवानो अ

प.कौ जैसें भांति स्मरण करि भावकों राखें त्यहू निरंतर यावा
नौं अनन्य श्रवणमें रंकणमें होत हैं ताकरिकें हृदयतें भा
व सिथल होय जात हैं सो मेंकिन सौं कहुं मनमें खेद होत हैं
हैं आगें श्रव चौरहू कहत हैं श्लो० श्रुतानमप्रकारग्र
भगवान्मानसान्यपि श्रमसीया सौ विवेकसु प्रतिष्ठा
मात्रसाधका ७ याको अर्थ याभांतिमें अपने मनमें दु
खी होंय भगवद्भाव दिन दिन सिथल होत हैं और मेंअ
पने श्रवणमें उत्तमप्रकार अपनी वडाई सुनत हों कोई तौ
भगवान कहत हैं कोई कहत हैं अष्टप्रहर इनको मन भग
वानमें ही लगेरहत हैं इत्यादि अनेक बडाई मेंअपनी स
त्तिमें सुनत हों ताकरिकें कहा सिद्ध है एसो जो मेंलौकि
कमें वडी प्रतिष्ठा भई है सो प्रतिष्ठा मात्र यही साधक भई
लौकिकमें यह फल और तौ मोकों कछुरी सत्त नाहीं यह
प्रतिष्ठा तौ भगवद्भावमें वाधक है ७ सो अब आगें नि
रूपण करत हैं श्लो० चित्त अर्थ प्रवर्ती व्यार्देहं वक्र
ते: भगवन्मार्गे निष्ठातुलोकनेष्ठा विरोधिनी ८ या
को अर्थ श्रीहरिरायजी कहत हैं जो यह चित्त भग
वानके चरणारविंदमें न लग्यो और यह मनुष्य देह
हू भगवानमें विनियोग भई जो देह है वृथा ही जात
है सो जब वृथा जात है जो यामें देह है उत्तम भगवदका
र्यमें विनियोग भई सो श्रीभागवत एकादस स्कंधमें राजा
जनक कहे हैं श्लो० दुर्लभो मानुषो देहो देहीनां स
णभंगुर तत्रापि दुर्लभं मन्ये वैकुंठप्रियदर्शनं १
और महत्ता जी कहत हैं कोमार आचरेन् प्राज्ञो ध
र्मान् भागवतानिह दुर्लभं मानुषं जन्म तदप्य ध्रुवम
र्थदं इत्यादि वचनसों जान्यो जात है जो मनुष्य देह
दुर्लभ है क्षणमें याको नास है तातें भगवानकी
ह सेवा यह परम दुर्लभ है सो वचन तौ त्याग्यो य

हरिकौमारग अवस्थाभगवद्धर्मकरण्योगयहै लाणमैंनार
होयजाय।तातैंभगवद्विनियोगविनारहैयोवनसर्वेद
थाहीहैं।श्रीभगवन्मार्गकीनेष्ठाहैं।सोलोकनेथावि
रोधिनीहैं काहेतें अपनीवडाई सुनिके आनंदभयो।वडेस
नैंसोभगवानकोतुरीलागोमदहोइतौभगवानहृदयमेतेजा
तरहैं।तातैं यहलोकनकीवडाईहैं।सोभगवद्धर्मकीविरो
धिनीहैं।निश्चयार्थ।यातें अव और हू कहतहैं।श्लोक।संसा
रवैरीकृष्णोपि मूढतेनानुपेक्षते कालेनामपिहरत्यसौ
मंप्रतिसन्मार्गीणांधियां।याको अर्थ।संसारवैरीयहतोश्रीकृष्ण
कौनामहै।जहांश्रीकृष्णहृदयमेंआवैं।तहांसंसारनाशक
रैं।निश्चय।वासोंलौकिकदेहसंबंधीनकौ।सोयहजीवमू
ढअज्ञानीहैं श्रीकृष्णकोचाहतहैं।औरसंसारहूकोअपेक्षा
करतहैं संसारहोइगौ।तहांतोश्रीकृष्णकहां।जवश्रीह
रिरूपावेंगे तवसंसारकहां।सोयहकालतेहोयतप्रभु
कौज्ञाननाहींहोतहैं।ए सोकालकठिनआयोहै।सोस
ल्याणीकी मतिजोवुद्धिताहूकौहरिलीनो।सोतातेंवार
वारसंसारकी अपेक्षा चाहतहैं।जद्यपिसंसारीकौतुच्छ
नतहैं भगवानकेगुणहूसंसारनाशकयहूजानतहैं
कुयहकालकरिवुद्धिहीनहोइजातहैं।सतपुरुषन
ीसी।श्लो।ग।अव और हू कहतहैं।श्लोक।कालसर्प
राकृतीनस्मृतिसतामपि।अतःस्थेयंसावधा
समस्तैर्मोजयतिभिर्भुवि।याकोअर्थ।अवश्रीहरिरा
ीसिगरेपुष्टिमारगमेंस्थितिजोवैष्णवहैंतिनकों
ताहेतेहैंजोसावधानरहियो।काहेतेंजोकालसर्प
हैसोयहमहादुष्टहै।सवधर्मनिप्रतिवंधकहैं।सो
हयहकालकेहोयकौनाशनाहींकरिसकतहैं।
काहेतें।सत्संगनाहींमिलतहैं।सो भगवदीयकौं
मिलेतौकालसर्पसावधानकरैं।सो

से॰प॰ भयो है तातें हे वैष्णव तुम समस्त सावधान रहियो मेरे
९८ हृदयमें यह पुष्टिमार्ग सर्वोपरि है तामार्गमें तुम अति स्थिति
होय सो दुःसंगतें वचे रहियो यह पुष्टिमार्ग सर्वोपरि है
तामार्गमें तुम स्थिति होय सो दुःसंगतें वचे रहियो भग
वदीयको संग करियो और श्री आचार्यजी महाप्रभु
नके चरणकमलको आश्रय अपने चित्तमें धरियो
यामें यह निर्णय भयो ॥१०॥ श्री हरिरायजीकृत
[illegible] सिद्धांत [illegible] टीका श्री [illegible] संपूर्ण
॥ अथ [illegible] कारक है जो यह सत्संग विना जीवको लौ
किक नाहीं करि सकत तातें समस्त पुष्टिमार्गीय भ
गवदीय सावधान रहियो काहेतें यह भावात्मक मा
र्ग है ताको प्रकार आगे कहत हैं श्लोक ॥ भावात्र साध
ने मार्गे प्रमेयं भगवान् हि सः प्रमाने कृष्णसेवा हि
स एव च फलं पुनः ॥१॥ याको अर्थ यह पुष्टिमार्गमें य
ह प्रमान नाहीं है जो इतनी सेवातें फल होइ न वाप
में यह विचार नाहीं [illegible] फल ता न होइ सो श्रीकृष्णकी
सेवा है सोई प्रमान है सोई फलरूप है ज्ञानमार्ग
में कर्ममार्गमें साधन फल न्यारो न्यारो है फल पावे
को साधन करे सो यह पुष्टिमार्गमें नाहीं है साधन हू
श्रीकृष्णकी सेवा फल हू में श्रीकृष्णकी सेवा तातें फल
रूप जानि सेवा करनी है श्रीकृष्णकी सेवा उपरांत औ
र फल कछु नाहीं सो नवम स्कंधमें श्रीभगवान कहे हैं म
त्सेवया प्रतीतं च सालोक्यादि चतुष्टयं नेच्छंति सेवया
पूर्णाः कुतोऽन्यत् कालविप्लुतं ॥१॥ ऐसे भक्त मेरी सेवामें
विश्वास करें हैं जो चार प्रकारकी मुक्ति हू नाहीं चाहत
सेवाही करि पूर्ण हैं तिनको कछु नाहीं वाधक है तातें
प्रमान हू कृष्णसेवा फल हू कृष्णसेवा आगें और श्लो
क कहत हैं श्लोक ॥ तस्मात् सर्वं परित्यज्य निधिरूपस्तु

सर्वथा परिहर्तव्यं तत्सर्वं ज्ञात्वा ज्ञात्वा निवर्तते॥३॥याकौ अ-
र्थ॥ तातें निषिद्ध रूप श्रीकृष्ण जो जाननें॥ तेसैंही निषिद्धरूप
भगवद्भावकौं जानिजो दिन दुःसंग तें निश्चय करतो करन
व्य है॥ पर पुष्टिमार्ग तें जो विरुद्ध होइ सो विचारि विचारि
कें सर्वकौ त्याग करें जो अनुकूल होय॥ ताकौ संग्रह सनिवृ-
त्तिकौ त्याग ही श्रीआचार्यजी महाप्रभुकी आपणा है॥ आ-
गें अवर्जर्य रहे वरतनें सों श्लोक॥ हरौ हृत्से यथापूर्णा मिह
स्यात्पो विशेषतः॥ गोष्ठी चनादृशी कार्या ध्रुवमस्मत्प्र-
यत्नतः॥४॥ याकौ अर्थ॥ हरि जो श्रीकृष्ण सर्व दुःखके हर्ता
हैं। तिनकी सेवा फलरूप जानिकें करनी॥ सो ऊपर कहे हैं जो
तिनही श्रीकृष्ण मैं सर्व ओर तें मन रखें चिवेक इनही मैं विशेष
करिकें लगावें औ पुष्टिमार्गीय तनाइ ऐसी वैष्णव होय तिन
ही सों गोष्ठी प्रश्न लेकरिकें करौ॥ तनसों मिलिकें पुष्टिमार्ग
कौ भाव विचारें तो हृदय मैं भगवद्भाव अचल होइ ता
तें अवश्य भगवदीयकौ संग कर्तव्य है॥४॥ श्लोक॥ एत
स्यांतः स्थितिप्रायः समीचीनां विलोकयन्॥ नान्यच लौकि-
कं चित्ते विचार्यमिह सर्वथा॥५॥ याकौ अर्थ॥ भगवदीय संगा
दी मैं नित्य करत करत अंतःकरण मैं भावकी सिद्ध होइ तब
हृदय मैं स्वरूप भगवान स्थित हैं॥ तिनको दरसन होय चित्तकौं
तब यह जीवकौ चित्त लौकिक मैं सर्वथा न लगावौ॥ नानाप्रकार
के लौकिक विचार मिथ्या ध्यान मिथ्या क्रिया मिथ्या वानी
सब निश्चय छूटि जाय॥५॥ श्लोक॥ विशेषतस्तु समग्रोऽपि भंडा-
गारिकपत्रतः॥ विज्ञेयः सर्वथा श्रीगलीख्यतो वतदुत्तरं॥६॥
याकौ अर्थ॥ विशेष समाचार भंडारी के पत्र तें जानौगे पत्र
वांचि सर्वथा वेगि ही प्रतिउत्तर लिखोगे॥६॥ इति श्री हरिरा-
इजीकृत द्विसप्तो शिक्षापत्र ताकी टीका श्रीगोपेश्वरजी कृ-
त भाषामैं संपूर्ण॥२॥ अब अवरूपाक है जो भगवदीय संगा-
दी कीये तें हृदय मैं भाव सिद्ध सिद्ध हौ यातें व

.प. कोदेखे नवलौकिकविचारमें चिंतनजाय परंतु यह चिंतानजी
वकोछुटै तौ भाव हृदयमें आवें सो चिंताकोन भांति छूटें सो
सर्वप्रकार आगें वर्णनकरतहें श्लो० भवंतः श्रुतिसिधां
ताः कथं मुह्यंति लौकिके अलौकिके तु चिंतायां विषयाभा
वितोन सा १ या० श्र श्रीहरिराइजी कहतहैं जो
अपने छोटेभाई श्रीगोपेश्वरजीसों कहतहे जो तुमके से
हो श्रुतिजो वेद पुराण स्मृतिसास्त्र श्रीभागवत सर्वके
सिद्धांतकों जानतहो ऐसे तुम सोंयह लौकिकमें मोहको
काहेकों पावतहो यह तुमकों उचितनाहीहे अब मेंक
हतहों जो यह पुष्टिमार्गको सिद्धांत सो तुमको उचित लगा
इबो सुनियो जहांताई लौकिक विषय हृदयमें नाहीजा
तहेनहांताई लौकिक विषय हृदयमें नाहीजातहे न
हांताई अलौकिक चिंतानाहीहोत लणक्षणमें लौकि
क चिंताहोत हे जब हृदयतें विषयको अभावहोइ
तब अलौकिक चिंतहोतहे यह सास्त्रकीरीति है याभां
तिकहतहे सो अपने पुष्टिमारगीयकों लौकिक अ
लौकिक दोऊ चिंता नाहीकर्तव्य है सो आगें कहतहैं श्लो०
यतः सर्वसमर्थोऽसौ प्रभुः सर्वं करोति हि पतिर्यन्निजदासा
नां मे हि परिलौकिके २ या० श्र श्रीकृष्ण अपने प्रभु
असमनु प्रभु वसेहें सर्वसामर्थ्ययुक्त हे सो श्रीगुसांईजी वि
ज्ञप्तिमें कहेहें श्लोक कर्तुं पुनर्यथा कर्तुं मनुष्याकर्तुमी
श्वरे सामर्थ्यं न मया दृष्टं त्वयि वार्तां न संशयः १ श्रीकृष्ण
केसेहें कर्तुं अकर्तुं अन्यथाकर्तुं सर्वसामर्थ्ययुक्त हैं सो लौ
किक अलौकिक सर्व प्रभु आपुही सिद्धकरें चिंताभगव
दीयकों नाहीकर्तव्य हे सो दृष्टांत कहतहे जो लौकिकमें
जैसे पिता अपने पुत्रकी रक्षा करतहें सो अपने निजदास
नको लौकिक अलौकिक सर्व सिद्धकरेंगे निश्चय यह जा
नवो २ श्लो० अतएवास्मदाचार्यवचने विराज

ते। भगवानपि पुष्टिस्थो न करिष्यति लौकिकीं च गतिं ॥ ३ ॥
याको अर्थ ॥ श्रीहरिरायजी कहत हैं । जो पुष्टिमार्गीय
वैष्णव कों चिंता रंचक हू नाही कर्तव्य है । काहे तें श्रीमन्
आचार्यजी महाप्रभु के वचनामृत विराजमान हैं नवरत्न
ग्रंथ में श्री आचार्यजी महाप्रभु कहे हैं भगवानपि पुष्टिस्थो न
करिष्यति लौकिकीं च गतिं । इति वचनात् । यह पुष्टिमा
र्ग में श्रीकृष्ण भगवान साक्षात विराजमान हैं सो आप
ने निवेदनीय जीव कों लौकिक वैसें ही गति कबहू न करेंगे
यह निश्चय वैष्णव मन में विचार राखें । ता तें यह पुष्टिमार्ग
समान और दूसरो मार्ग कोई नाही है । ता में सरणागत आए
हू लौकिक गति कबहू न होइ । तहां कोई कहे जो वैराग्य
करि लौकिक गति नहीं और अलौकिक में रहे सगरे
लौकिक कार्य करे तो तिन कों लौकिक गति कैसें न होइ
सास्त्र में तो या भांति कहे हैं । या भांति कहें तहां कहत हैं ॥ ४ ॥
मर्यादा मार्ग की यही रीति है । जो ज्ञान वैराग्य करि कें सद्गति
होइ । जितने साधन जीव करें । तितनी गति उत्तम सवा को मि
ले । सत्यलोक ब्रह्मा के लोक में जात ज्ञानमार्ग करि कें ब्रह्म
याही मार्ग सें प्रमान मार्ग की रीति है सो यह पुष्टिमार्ग है
यह मार्ग में प्रमेय बल तें फल होइ । साधन या मार्ग में नाही है
सो एकादस स्कंध में भगवान कहे हैं । केवलेन च भावेन गो
प्यो गावः खगा मृगाः । येन्ये मूढधियो नागाः सिद्धा मामी
युरंजसा ॥ व्रज में श्री कृष्ण भगवान निसाधन हैं तो सो प्रभु
अपने प्रमेय बल तें फल दान कीए हैं । तैसें ही यह पुष्टिमार्ग में
श्रीकृष्ण विराजत हैं । सो साधन की अपेक्षा नाही है । स्वतंत्र प्रमे
य बल तें बिना साधन ही फलदान निश्चय करेंगे ता तें पुष्टि
मार्गीय वैष्णव कों लौकिक अलौकिक चिंता कबहू नाही
करनी है । और श्रीगुसांईजी नवरत्न की टीका करी हैं सो
तहां प्रथम मंगलाचरण की यो है । चिंता संतान नाशाय

सि.प. न्यासीव्रजरेणवः स्वीयानां तान्निजाचार्यान्प्रणमामि मुहु
१०० र्मुहुः २ श्रीआचार्यजी महाप्रभुके चरणकी रेणुके प्रसाद
केतें सगरी चिंता आपुतें नास होत हैं ऐसे श्री आचार्यजी
महाप्रभुके चरणकमलको मैं वारंवार नमस्कार करत हों
४ आगें अवश्रीरहूं कहत हैं श्लो॰ यत्तस्तदीयाकिंभ
ताश्चिंतादिंद्रधत्ते जना ज्ञानिनोपिनवै दुखं चित्ते द्ध
ति लौकिकं ५ या॰ ऐसे पुष्टिमार्गीय वैष्णव श्री
आचार्यजी महाप्रभुके सेवकतदीय भ्रांत होइ चिंतन्नमें
कोपरे हैं काहेतें ज्ञानमार्गमें जीव हैं ऐसे ज्ञानी सोऊ लौ
किक दुखमनमें नाही धरत अरुकों लौकिक दुखमनमें
आयो चिंतकों नाही देहत हैं यहतो पुष्टिमार्ग जहां साक्षा
त भगवान सों संबंध श्रीआचार्यजी महाप्रभु द्वारा भयो
हैं सोअज्ञानकरि चिंतामें देहत हैं सोनकरनो चिंताप्र
भु सर्वसामर्थ्ययुक्त है ५ श्लो॰ सेवारसादिरहितास्त्वि
भक्ताकथानथ्याः येस्वरूपसेवायां दरसनस्पर्शनादि
भिः ६ या॰ ऐसे पुष्टिमार्गीय भक्तजन सो श्रीकृष्ण
की सेवारस अनुभव विना सेवारसको चित्तमें आवेस वि
नाकोरहत हैं साक्षात श्रीकृष्णके स्वरूपकी सेवा करत हैं द
र्शन करत हैं चरणस्पर्श करत हैं तऊ चिंतामें भगवत्स्व
रूपके रहित हैं सोकोरहित हैं तातें यह जान्यो जात है
चिंता चित्तमें भरी है तातें रसको अनुभव नाही होत है ६ श्लो॰
अनुभूतं सदा तेषां चित्तं दुःखयुतं कथं परमानंदसंबंधेदु
खं नित्यं तिनैवाहि ७ या॰ ऐसो पुष्टिमार्ग जामें भावा
त्मक सर्वोपरि पदारथको अनुभव तिनको चित्तमें दुःख क्यो
होत है सो यह लौकिक चिंताहीतें अज्ञान करि दुखी है भा
वात्मक रसको अनुभव नाही होत है और श्रीकृष्णस्वरूप परमा
नंदरूप भावात्मक तिनको संबंधी श्रीआचार्यजी म
हाप्रभु द्वारा भयो है साक्षात परमानंदसों संबंध है ऐसे

निवेदनीयवैष्णवके हृदयमें दुखकेसें तिष्ठत हैं सो आशा
नकरि लौकिक चिंतानें दुख होत हैं ।७। श्लोक ॥ पितृस्य
तु सर्वेपि संबंधावस्त्र हेतवः । वहर्मुखजनस्यैव वहर्मुखं
ततस्त्यजेत् ॥८॥ याको अर्थ ॥ लौकिकमें पिता हैं सो अप
ने पुत्रकों सर्वस्व देत हैं काहेतें पुत्र आत्मज अपनी आत्मा
हैं यह संबंधतें सर्वस्व देत हैं । सो तो यह पुष्टिमार्गमें श्रीहरि
स्वसों संबंध भयो हैं नहीं केवल सिद्ध हैं । सर्वस्व सिद्ध ही
हैं अज्ञानकरि चिंता करत हैं । अपनो संबंध तौ विचारें
और वहर्मुखके संगतें वहर्मुखजीव होत हैं । तातें सीघ्र
ही वहर्मुखको त्यागकरै उनको संग न करैं ॥८॥ श्लोक ॥
वहर्मुखस्य वाधंते दोषादेहिकमानसाः । सीध्या तो
रिवानेस्व रोगावातिकपैत्तिकाः ॥ ९ ॥ याको अर्थ ॥ वैष्णव
कों वहर्मुखको संगवाधक है । संगतें देहिक दोषमान
स दोष निश्चय ही आइ लागें । सो दृष्टांत कहत हैं । जो रो
गी होइ ताकी छीन धातु होइ । तिनको वायुपित्त सर्व आइ
सें याभांति वहर्मुखको संग होइ तिनको सर्व दोष आ
य लगें ।९। श्लोक ॥ न निवर्तंते तु संपाद्य सतां संगेन सेव
या । श्रीभागवतपाठेन तत्स्थश्रवणेनापि ॥१०॥ याको अर्थ
सो रोगी सुंदर औषद खाय तो वाको रोग जाय तैसें ही वैष्ण
व ताइसी वैष्णव भगवदीयको संग करैं उनकी सेवा करै
तो वहर्मुखता जाय भगवदीयके संगतें देहिक मानसिक
दोष आदि सर्व दूरि होइ । तन्यको पूसं देह करें जो ताइसी भग
वदीय मिलनें तो दुर्लभ हैं । वे मिलें तो कहा करैं । नहीं के
स्त हैं जो श्रीमद्भागवत्को पाठ करैं काहे तें जो श्रीभाग
तको पाठ अर्थ अप्राप्त होइ तो पुष्टिमार्गीय भगवदीयके
मुखतें श्रवण करैं तो सगरे दोषनाश जाय ।१०। श्लोक ॥
निवेदनस्मरणं तैः सद्भिः सह कथादिभिः । सदानाम
ग्रहणंतैः सहाशरण भावना तु ॥११॥ याको अर्थ ॥ जो श्री

प० भागवतश्रवणकरिवेकौसंयोगनवनिआवैतौनिवेद
१ नकोस्मरणअहर्निसकीयोकरैतथासदाभगवदी
यकेमुखतेंपुष्टिमार्गीयश्रीआचार्यजीमहाप्रभुश्री
गुसांईजीकेग्रंथतिनकोकथाभावसोंसुनैंआत्मनि
नेतौसदाश्रीकृष्णकेनामकौस्मरणकरैयामेंतोक
छुश्रमनाहीहैनामहीस्मरणकरैपरंतुनामहूकोस्म
रणयहजीवकोदुर्लभहैसोश्रीगुसांईजीविसतमें
कहेहैंस्वल्पनामोच्चारणेपितनजीवेष्वधिकारिताअ
लौकिकत्वात्वल्पानामतद्रूपलौकिकत्वत १ इतिवि
वनातश्रीगुसांईजीश्रीगोकुलनाथजीसोंकहतहैं
जोतुमपेनामहूउचारकरिवेकीयोग्यताजीवकोंना
हीहैंकाहेतेंजोतुम्हारोनामतोमहाअलौकिकहै
सोकैसेंनमलेहि सोनामहूनबनिआवैतोस्मरण
हीकीभावनाकरै सोविवेकधैर्याश्रयमेंश्रीआचा
र्यजीमहाप्रभुकहेहैं श्लोक यहिकेपरलोकेचसर्व
थास्मरणंहरिः दुःखहानौतथापापभयेकामाद्यपू
रणे १ भक्तद्रोहेभक्त्यभावेभक्तेश्चातिक्रमेकृते अ
सक्यवासुसक्येवासर्वथास्मरणंहरिः इत्यादिवच
नकेअनुसारस्मरणकीभावनाकरैश्लोक अष्टाक्ष
रमहामंत्रकीर्तनेनविशेषतः पंचाक्षरेणमंत्रेण
तदीयत्वविभावनात् १ यथा अ अष्टाक्षरमहा
मंत्रहैश्रीकृष्णःशरणंममः यहीमंत्रकोएककालिकेअ
ष्टपहरकीर्तनकरैतोसबसिद्धिहोयसोद्वादशस्कंध
मेंश्रीशुकदेवजीकहेहैं कलेर्दोषनिधेराजन्नस्ति
ह्येकोमहान्गुणः कीर्तनादेवकृष्णस्यमुक्तबंधःपरंव्र
जेत् १ जद्यपिकलियुगदोषनिधिहै परंतुयामेंएक
बड़ोगुणहैश्रीकृष्णनामकोकीर्तनजोकरतहैंसो
यहकालबंधनतेंछूटिजातहैंतातेंअष्टाक्षरमंत्रको

०त्तनकरें तथापंचाखरमंत्रकौ भावनाकरें नहीय
स्वधर्मसंगमिलिवेकूं रो तो श्रीआचार्यजी महाप्र
नवरत्नमेंकहेहैं। निवेदनं तु स्मर्तव्यं सर्वथा ताद्रशै
नेकाहतें पंचाखरमंत्र भगवदीयके संग विना भाव
प्रगट होइ नहीं॥ निवेदनके स्मरणमें भगवदीयकी
अपेक्षा है।११। श्लोक। वैराग्यपरितोषाभ्यां ह्लसंनि
हिताश्रितैः लौकिकलेश जो ह्यास्यात्पुत्रायनतुरा
गतः।१२। याको अर्थ। संसार यह देह संबंधी पदार्थ लौ
किकमें वैराग्य राखनो संसारसूं वैराग्य होइ तो लौ
किक दुखसुख चित्तको बाधा न करें ताते वैराग्य राखे
और यथालाभसंतोष होइ जो सहजमें बने आय प्रा
प्ति होइ ताहीमें संतोष होइ तो मनमें विक्षेप न होइ
और श्रीठाकुरजी विराजत होइ पुष्टिमार्गकी सेवा
होइ तिनके पास स्थिति होइ तो स्वस्थ मन सेवा बनि आ
वे सो भक्तिवर्द्धनीमें श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहे
हैं। यद्वा विघ्नकर्त्तव्ययथा चिंतनं इत्यादि निकट
रहिके सेवा करे तो चित्तके संगरें सो श्रम नहि होइ बहुत
निकटमें चित्तको रोध होत नहीं तो नेक दूर है परंतु नि
त्य सेवा रसस्वभाव नेसों करे लौकिक लेशते अपनो
मन उदास राखे अपने चित्तमें लौकिक लेश न करें
और देहसंबंधी पुत्रादि स्त्री बंधु काहूमें अनुराग न
राखे।१३। श्लोक। गृह चिंता पुनारान्यात्तदीयष्वनुराग
तः। नवरत्नस्य पाठेन सर्वा चिंता निवर्त्तते।१४। याको
अर्थ। गृह आदि धन इत्यादिकमें आसक्ति न राखे ये सब
ये चित्तके मल हैं, ताते इनमें प्रीति न करें पुष्टिमार्गी
य भगवदीयमें अनुराग राखें तथा नवरत्न ग्रंथको
पाठ नित्य नेमसों बने तिन नो करने सगरी चिंता
मनमेंते निवर्त्त होइ चिंतानामके अर्थ श्रीआचार्य

जीमहाप्रभुन वल्लभ ग्रंथ प्रगट कीये है॥ सो गोविंददुबे वै
ष्णवके मिस पुष्टिमार्गीय सबनके अर्थ॥ तातें वल्लभग्रं
थके पाठतें सर्व चिंता दूरि होय॥ निश्चय॥ १४॥ श्लोक॥ ए
वं निवर्ते सुखं जनं दुःखं नेवाधते॥ अतः तत्प्रात्रयत्नेसु
भवितव्यं भवाद्दृशैः॥ १५॥ याको अर्थ॥ अब श्रीहरिरायजी
कहत हैं जो कुपरसगरे भगवद्धर्म कहे हैं उनमें तें एक हू
दृढ करिकै जो वैष्णव धारन करेगो॥ सो तिनको सर्व दुःख
लौकिक निवृत्तके अनेक भावसों दूरि होइगो॥ उहमन
मनमें परमसुख पावेगो॥ याभांति दुःख निवृत्तके अनेक
यत्न है॥ सो भावीक वैष्णवको कर्तव्य है॥ प्रयत्न भावके
वढत है॥ ताके भाग्यमें वेतो फलदान है॥ तिनको भाविक
बनि आवेगो॥ १५॥ श्लोक॥ दुःखेन नरथा नेय कालः प
रमदुर्लभः॥ कृष्णसेवानुकूलस्तु निजाचार्याश्रयात्ते॥ १६॥
याको अर्थ॥ अब श्रीहरिरायजी समस्त वैष्णवनसों कहत
हैं॥ जो यह काल परम दुर्लभ है॥ जो यह काल परम दुर्लभ है
के लिये सो समर्पन बनेगो॥ यह मनुष्य देह श्रीकृष्णसेवाके
अनुकूल॥ सो यह लौकिक दुःख चिंता करिकै वृथा न खोवे
काहेते यही देहतें श्रीकृष्णकी सेवा बनत है॥ और युगमें
यह पुष्टिमार्गीय सेवा नाहीं॥ कलिहू किनको दुर्लभ है॥ श्री
आचार्यजी महाप्रभु द्वारा ब्रह्मसंबंध और युगमें कहां॥
श्रीआचार्यजी महाप्रभुनको आश्रय फेरि कहां॥ तथा
श्रीआचार्यजी महाप्रभुके आश्रित जो ताकुं श्रीनिजसे
कृतिनको आश्रय फेरि कहां॥ याभांति मनमें विचारिकै
यह काल परम दुर्लभ जानि दुःख लौकिक लौकिकमें मन
लगाइ वृथा नाहीं खोवनो॥ भगवदीयको आश्रय अपने
श्रीवल्लभाचार्यजीको आश्रय करि श्रीकृष्णकी सेवा श्री
वस्यक ही कर्तव्य है॥ यह देह काल सबसे वा अनुकूल है
यह जानिके एकहू सेवा विना न टैं

नेर्ष्या रथा चिंता प्राप्तापि निजदोषतः चिंतोद्वेगं विधा
यापीत्येतद्वचन चिंतनात ॥७॥ याको अर्थ पो अब श्री हरि
राइजी पत्र पूर्ण करत हैं या में सबो पर यही सिद्धांत है जो
मनसीघ्र ही चिंता को त्याग करें एक चिंताते अनेक
दोष को प्राप्ति होय ताते नवरत्न को वचन निश्चय क
रि चिंतन करिये ही चिंता को त्याग करें नवरत्न मे
कहे हैं। चिंतोद्वेगं विधायापि हरिर्यद्यत्करिष्यति:
तथैव तस्य लीलेति मत्वा चिंता द्रुतं त्यजेत् ॥ १ ॥ इति
वचनात् या भांति सीघ्र ही चिंता त्याग करि कर भ
गवद् धर्म करे ता मे प्रवर्ते होइ भगवत्सेवा सुमरन
ता इसी को संग करे यह नवरत्न ग्रंथ को मन लगाइ
के नित्य चिंतन करे पाठ करे भाव विचारे तो चिंता
दूरि होय ॥ १ ॥ श्री हरिराइ जीकृत नाम रत्न
ऐसो ताकी टीका श्रीगो पेंच रत्नाकर संपूर्ण ॥ २ ॥ अ
रु कहे जो चिंता तजे भगवद् सेवादि भगवद् धर्म क
रे जो जीव को कहा सामर्थ्य है काल दोष ते ग्रसित
है। ताते श्री आचार्य जी महाप्रभु को दृढ आश्रय
होय तो प्रभु कृपा करें सो आश्रय को न भांति क रै सो
याग सिद्धांत में कहत है लोक ... भांति मार्ग ... नी
मंत्र कारण परम ... ते नैवमार्ग सकल ... सिद्धि ...
न संशयः ॥ १ ॥ याको अर्थ, यह श्री आचार्य ... ...
सुनके पुष्टिमार्ग यह भक्ति मार्ग ते ... ...
लके कारण है। साधन ते फल ना ... ...
ल सिद्धि है ताते श्री ... जी ... ...
ताते यह पुष्टिमार्ग में जो वे ... ...

... ...

वनन तो कहा भयो पुष्टि ...

मि॰ प॰ सर्व सिद्धि इनको करेगो सर्वथा यामें संसय नाही १ श्लो
१०२ का ॥ सा तु श्री आचार्यशरणागतो ते शोपि नः प्रभुः स्वयं देव वृ
ष्णेः स्मातच्छा भवति सर्वथा ॥ २ ॥ या श्लोक में पुष्टिमार्ग में
सरणा आय के श्रीवल्लभाचार्यजी के सरणागत
होइ है तब श्री आचार्यजी महाप्रभु दया करि के श्री
कृष्ण सो स्थापना करे जो यह जीव सरण आयो है सो
न श्रीकृष्ण को वह जीव बहुत भावे सर्वथा ऊ यह जी
व पर श्रीकृष्ण कृपा करे ॥ २ ॥ श्लोका ॥ अतस्सदाश्रयो जी
वेद्राग्विधीयतां यथावतारेली खातो नासोश्री यमु
नामता ॥ ३ ॥ या श्लोक में नातें यह पुष्टिमारगीय जीव श्री
वल्लभाचार्यजी के चरणकमल को दृढ आश्रय निश्च
य ही करें तब फल प्राप्ति होइ जैसे अवतारादि सा में
यमुना जी द्वारा कुमारिका को प्रभु प्राप्ति भये तैसे ही अ
व श्री आचार्यजी महाप्रभु के आश्रय तें श्री आचार्य
जी द्वारा

॥ ३ ॥ श्लो ॥ यथावा

दासादि पुलिंदी ॥ यथावाग्निकुमा
राणां वृतं कात्यायनीमता ॥ ४ ॥ या श्लोक में यासमय में
तो एक श्री आचार्यजी महाप्रभु द्वारा है और श्री नार
ली जामें हरिदास गिरिराज परम भक्त है तिनके संग
ते पुलिंदी को भक्ति सिद्धि भई लीला को प्राप्ति भई ज्यों
अग्निकुमारिकान को कात्यायनी मिस तें श्री यमुना
जी द्वारा लीला में प्राप्त तैसे ही अब श्री आचार्यजी
द्वारा उहो पुलिंदी की सेवा गिरिराज द्वारा प्रभु ने अं
गीकार करी कुमारिका की सेवा श्री यमुना द्वारा
तैसे ही यहां वैष्णव की सेवा श्री आचार्यजी द्वारा
अंगीकार श्रीजी करत है ॥ ४ ॥ श्लोका ॥ प्रादुर्भूतस्व
यं कृष्णो यथा स्वप्राय कमनः ॥ यथावाहेन्यभावा

म्माप्रादुर्भावे स्वयंमतः ५ याको अर्थ। और श्रीहुसंके
प्रादुर्भाव प्रगट दसा मैं स्वयंप्रभु आपुही द्वारा करत प्र
करणापंचाध्याई में यतिहैत्म्य की भावना करि स्वयंप्र
भु आपुही प्रगट हैन्पते। श्लोक। इतिगोप्यः प्रगाय
न्यप्रलयं त्यश्च चित्रया। हरुदुः सुस्वरं राजन्कृष्णदर्शन
लालसा १ तासामाविर्भूछौरिस्मयमानमुखाम्बुजः पी
तांबरधरः स्रग्वी साक्षान्मन्मथमन्मथः। याभांति हैन्पते
प्रगटे। श्लोक॥ तथापरो हैजीवांनापुष्टिसंबंधसिद्धि
य श्रीमदाचार्यसंबंधो नान्यदास्ति हि साधनं हि याको
अर्थ॥ साराट दिसा मैं हैन्पते तैसेंही अब परोक्ष दिसा
मैं जीवनकों पुष्टिसंबंध भयो तें याकांही तें जो यह क
लि में और साधन नाही। उहदैन्यु कह्या। तातें श्रीआ
चार्यजी महाप्रभु अपने तिनके संबंधतें निर्वेदन होइ
न वही तो और दूसरो साधन नाही॥ एक श्रीआचार्य
जी महाप्रभु के संबंधतें पुष्टफलदान करत हैं धृतो
का। अन्तरावोक्तमाचार्यैस्तोत्रे हसमाश्रयामि धेस
त्प्रस्य समुद्धरणक्षम विद्याश्रयाम्यहो॥ ७। याको अ
र्थ। अब श्रीहरिराइजी कहत हैं जो हमारे श्रीवल्ल
भाचार्यजी हुलस्य प्रथम में श्रीहुलसा जीवकूं लीए वि
जनकी रोहो। तो मेरे सरणा जीव हैं। सो तिनको उ
द्धार करो यह लौकिक तें निकासि अपनी लीला
मैं अंगीकार करो या भांति प्रभु सों कह्यो और प्रति
दा करि जीवनको विश्वास कराय धीरज दीए
जो कछु दर होइगो चिंता मति करो। सो अब कहत
हैं। ७ श्लोक। विश्वासार्थं वरं महादिति श्रीवल्लभो
रुवीनां आज्ञो नान्यप्रकारेण फलं स्वहृदि चिन्तनं
ना। याको अर्थ॥ श्रीकृष्णाश्रयमिदं स्तोत्रं यत्पठेन्नरः
ष्णसंनिधौ। तस्याश्रयो भवेत्कृष्ण

र.प. वीनृ। श्रीआचार्यजीमहाप्रभु प्रथम श्रीकृष्णजीसों
०४ कहीजो अब अपने पुष्टिमारगीय वैस्नवसों कहत हैं
जो यह श्रीकृष्णाश्रयग्रंथको पाठ श्रीकृष्णके सनमुख
करियें। ताकरिकैं श्रीकृष्ण अपनो आश्रय निश्चय
करेंगे। यह मेरी प्रतिज्ञा है। या प्रकार प्रतिज्ञा श्रीम
हाप्रभुजीकीये। तो जीवनको विस्वास होय। जो हम
कों पुष्टिरस मिलेगो जैसें चीरहरणमें ठाकुरजी भक्त
नसों कहे। जोया ससरादरि तुमकरि तुमारे मनोरथ
पूर्णकरेंगे। यह कहें तब भक्तनको विश्वास भयोना
हीं तो सरदरितुपर्यंत विस्वास न रहतो। तैसेंही श्री
आचार्यजीमहाप्रभु प्रतिज्ञा करि अपने निजसेव
कनको विस्वास दीये। तातें एक श्रीआचार्यजी
महाप्रभु द्वारा फलसिद्धि है। और प्रकार फलको चिं
तन न करनो। श्लोक॥ विश्वासेन यथा प्रोति चा
तकः स्वातिजं जलं। तथा चेत्कृष्णजलदः स्वानं
दपयसे चिष्यति॥ टीका। कोअर्थ॥ विश्वास करि चात्र
क जैसें स्वातिके जलकों अपेक्षा राखत है। और पृ
थ्वीपरके बात तलाव नदी समुद्र पर्यंत भर्यो है। तामें
आसना हीं करत यह विस्वास देखि घन ही मनोर
थ पूरन करत है। तैसें ही जो वैस्नव एक श्रीकृष्ण ही
कों आश्रय मनमें दृढ कीयो है। और अवतार तथा
देवतासों फलकी अपेक्षा नाहीं है। तिनकों श्रीकृ
ष्णजलद रूप अपनो आनंद वरषेंगे। निश्चय आ
नंददान करत हैं। श्लोक॥ एवं विश्वाससद्भावस्यै
व भविष्यति यतः परिदृढोस्माकं सर्वकर्तुत्तमोस्म
नः१०॥ याकोअर्थ॥ या भांति पुष्टिमारगीय वैस्नव
विश्वास सुद्धभावसों करें। तिनकों सर्वसिद्ध होय
सो श्रीहरिरायजी कहत हैं। ऐसे हमारे प्रभु सर्वकर

॥ मैं सामर्थ्ययुक्त हैं ॥ तातें कृपा करेंहीगे ॥ १० ॥ श्लोक ॥ सहि
स्वतः समर्थत्वान्न साधनमपेक्षते कालकार्यविलो
कात्र तदीयांशविशेषतः ॥ २१ ॥ याको अर्थ ॥ अब श्रीहरि
राइजी कहत हैं जो श्रीकृष्ण प्रभु ही स्वतः सामर्थ्ययुक्त हैं
कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुं आपुही हैं सो आपने सेवकन
के साधन की अपेक्षा नाहीं करत हैं सो यह इतनो साध
न करें तो फल होय यह तो अन्य देवतान में हैं जो जितनो सा
धन करें तितनो लौकिक फल देइ सो श्रीकृष्ण में नाहीं
है यह काल कर्महू तन महा भक्तन विपरीति धर्मयुक्त हैं
विलोकें आपने निजीय पर कृपा करी बिना साधन ही वि
शेष कृपा करत हैं ॥ श्लोक ॥ निःसाधनजनस्य स्फुरणोऽद्भुत
तत्पराश्रय ॥ अत्र सूरा ॥ मविलासी न चान्य संगा
नामपि ॥ २२ ॥ याको अर्थ ॥ या भांति जब जीव साधन क
रत करत पाछें निःसाधन होइ जैसें ब्रजभक्त रासपंचा
ध्याई में अंतरध्यान समय अनेक साधन कीये लीला
कीने गुनगान करि पाछें निःसाधन भई तब प्रभु ही
को आश्रय होत तब प्रभु प्रगटे तैसें ही जब वैष्णव मन ते
निःसाधन होय तब दैन्य करि श्रीआचार्यजी महाप्रभु
के चरणकमल को आश्रय होय तब श्रीप्रभु कृपा करें
और जिनके मनमें अविश्वास है सो केवल असुर ही
हैं ॥ तिनको त्यागनो कोई करे तिनहू को आसुरावेस
अविश्वास होइ ॥ तातें इनको संग न करनो ॥ श्लोक ॥
मतिमोहो महादोषनिधानं संभविष्यति यथापूर्वं
कथं प्रभुत्वा भगवत्पदसेवनः ॥ २३ ॥ याको अर्थ ॥ अबके
हरिराइजी कहत हैं लोया नीके जो मतिको मोह भ
यो है सो भावदोषरूप होइ रह्यो है तातें निःसाधन
ता नाहीं आवत है अहंता दोषरहित होय आपनेके
यह जानत हैं जो मैं ही करत हों यह आ

ि.प. कवहूं नहूरि होइ तव पूर्व जो प्रथम स्कंध भक्त श्री भागवत में
०५ कहे हैं प्रह्लादजी तथा ध्रुव भक्तादिन तथा पुष्टिमारगी
य श्री आचार्यजी महाप्रभू के चौरासी वैष्णव की वार्ता
यह कथा सुने तो प्रथम याभांति सेवा कही है मैं हूं कहा क
हत हों याभांति रैन द्यो य भगवद्सेवा करो तव निसाध
न होय सर्व दोष दूरि होइ तातें श्रवण मुख्य सेवा कों
पोषण है तातें श्री आचार्यजी महाप्रभू भक्तिवर्द्धनी
में कहे हैं सेवायां वा कथायां वा दृढ्यकर्तव्या तव भग
वद्सेवा प्रीतिसों करो १२ श्लोक ॥ य्वपिं नहृन्त्यस
मुत्पत्तिस्तथा साधनता ज्ञान ॥ नदीयाणां सर्वमार्ति
सदा न द्रावु भाविना ॥ १४ ॥ या श्लोक श्री गासे भगवदीय
की कथा सुने तें है नाहोय । सो दैन्य उत्पत्ति तें ग्रहंना रू
प साधन जो मैं करत हों सो नास होइ ॥ तव नदीय भक्त
हैं सो तिनके भावत होइ ॥ उन जो भाव तें करत हैं सो ता
भाव मैं यह लगो तव फल सिद्ध होइ ॥ तातें श्रवण हू आ
वश्य है सो गोपिका गीत में कहे हैं तव कथामृतं तप्त
जीवनं कविभिरीडितं कल्मषापहं श्रवणमंगलं
श्रीमदाततं भुवि गृणन्ति ये भूरिदा जनाः ॥ १ ॥ तातें श्रवणतें
सर्व दोष दूरि होइ ॥ और भगवद्भाव वढे १४ श्लोक ॥ ६
नरेषा कालिकानां कालेन निखिलेशितुः । यतः कालस्त
द्विभूतिः कालकल्लय नामस्य ॥ १५ ॥ या श्लोक की व्याख्या
श्री हरिरायजी कहत हैं ऐसो जो यह ... कालसंधा
रकर्ता सो निखिल नाम सब रक्षित गनकों खात है सो का
लके सोहे जो यह श्री कृष्ण भगवान की विभूति है सो य
ह कलि में महाकलीन सृष्टि सर्वकाल में लय होत हैं
याभांति सगरी जन काल में लय होत हैं याभांति संसा
री जन काल में लय होत हैं श्लो ॥ मुख्याधिकार्यो
पि हरिरिच्छा शक्तिस्वरूपवान ॥ तदेन्यां गदास्वेशुनतत्सी

ऐसे मिथ्याती॥ १५ याको अर्थ॥ कालके सो है जो सुख
मावान को अधिकारी है॥ इह शक्ति को स्वरूप है ताते
बलाहिक नकों नाही छेदै नहीं॥ ऐसो जो काल सो ग्रस्यो
हसके अंत संसार सबको जह काल को सामर्थ नाही है
भगावतीय को बाधक नाही है रिसकन हे॥ अर्थ श्लोक॥
सहिस मर्यो यथा न्येषा मारको पिन हि लम॥ पीतामृत
जनेनातु अपृष्टमा घ्रातुमेव च॥ १७॥ याको अर्थ॥ यह
काल सर्प है॥ सो सगरे जगत को खान है॥ परंतु श्री
कुल के चरणारविंद तथा अधरामृत जिन पान की
पीहें ऐसे भक्त को परस हू नाही करत है और सुघत है
नाही है॥ सो भी प्रसाई नी सप्रसन्नता को प्रकट है॥ ऐसे
घोषतमस प्राप्नु तैक लिमुजनामखा दिनं ज्यादि धर्म
सागर पतितं मखधर्मरतपसी दरासुधा निधिः॥ स
मुदितो नु कंपामता न्दमत्पुमकरोत तदुःखाणाहर॥
मेसु मेत नपदां॥ १८॥ याको अर्थ॥ श्री आचार्य जी कहे प्रभु
कृष्ण जाकृत जो कोई पानी पी पाते जिनको काल सर्प
वपरस है नाही करत है और सुघत है नाही॥ २७ सो काल
तथा कहतो पिमनुजसहापुरुष स्वीत भक्ति पी अप
पातास्न किंचित्कतु मी भूर ह॥ १८ याको अर्थ॥ जो मनु
घमहापुरुषमी आचार्य जी कहे प्रभु [illegible]
थाभगवदीय पुष्टिमारगीय तिनके [illegible] तिनके [illegible]
पुष्टिमारगीय कृष्ण को पान [illegible] नाही है [illegible]
तां चक काल सो वा [illegible]
वा प्रामर है तासें [illegible] है [illegible]
याको अर्थ॥ [illegible]
दीय को करत सो वाणी प्रासि है [illegible]
वे पलट सुक्ति दी नी॥ भक्ति [illegible]
कोकाल कर्म करि सके॥ १९॥ [illegible]

स.पृ. ऐसे जनको त्वश्चिंत्यता हरि । तथैव तस्य लीलेति वचन
२०६ तैसेंव चिंत्यता ॥ ९ ॥ याकौ अर्थ ॥ सब श्री हरिरायजी आप
ने छोटे भाई श्री गोपेश्वरजी सों कहत हैं जो तुम तो तदी
यहो सर्व काल भगवद्धर्म में निपुन हो । तातें तुम अ
पने मन में काल की चिंता मति करियो । कोई काल में
तुमकों चिंता नाहीं करनी है । श्री आचार्यजी महा
प्रभुन वल्लभ कहे हैं । जो तथैव तस्य लीलेति मत्वा चिं
ता द्रुतं त्यजेत् । यह वचन कौ चिंतन हृदय में करि
कें चिंता नाहीं करनी यह है सगरी श्री कृष्णजी की लील
ही जाननी ॥ श्लोक ॥ सर्गोच्छितीलाकर्त्तव्यालिं चि
त्तता दृसे प्रभो ॥ विवेकाप्ययमवाप्त स्फीनं वै विधा
स्यति ॥ १० ॥ याकौ अर्थ ॥ श्री भागवत में सर्ग विसर्ग
आदि लीला इस विधि लीला के करता या भांति
द्रु ली प्रभु कों सगरे जगत में लीला जानें । ऐसो जा
के मन में होइ सोई विवेकी कहिये । सो विवेक धैर्या
श्रय में श्री आचार्यजी महाप्रभु कहे हैं ॥ विवेकस्तु ह
रिः सर्वं निजेच्छातः करिष्यति । यही विवेक जो सर्व के
धैर्य निजेच्छा मानें ॥ श्लोक ॥ स्वकीयानां निजेच्छ
तस्स्माच्चिंता न को भवेत् भवंतः श्रुतसद्धर्माः
सत्संगस्तनयो पि हि ॥ ११ ॥ याकौ अर्थ ॥ या भांति भगवा
न के स्वकीय निज भक्त हैं सो निजेच्छा भगवद्इच्छा
सर्व कार्य में जानत हैं । और तुम तो भगवान के सब धी
हो भगवद्भाव सुन हो । पुरस्वात सुने हो । और स
त्संग बहुत कीये हो तातें तुम कों चिंता कोई प्रकार
नहीं करनी है ॥ १२ ॥ श्लोक ॥ प्रभुपादैक निरतयस्ते
षां कोपायहिन ॥ धर्म संस्थापनापयस्मागृदस्मु
मतो ॥ १३ ॥ याकौ अर्थ ॥ सब श्री हरिरायजी कहत हैं जो
तुमके से हो प्रभु जो श्री कृष्ण तयां श्री आचार्यजी

महाप्रभुनिनकेपदकमलमेंगतिनामप्राप्तहोय
सोतुमसें ॥ सोपरिवेदनोचिंतासर्वथानाहींकरनेयो
ग्यहै धर्मकेस्थापनकेलीयेमहाप्रभुजीकोतथातु
मारोप्रागट्यसोंउचितहै प्रभुसदाधर्मकीरक्षा
करीहै ॥ सोभगवदीयगाएहैं ॥ सोचहूजुगवेदवचन
प्रतिपाल्यो धर्मगिलानभईजबहीजबतबतुमव
पुधार्यो ॥ १ ॥ सतयुगश्वेतवाराहरूपधरिहरिह्र
नाकुसमार्यो ॥ त्रेतारामस्वरूपदसरथकेरावनकुल
जोसंघार्यो ॥ द्वापरव्रजबूडतेराख्यो सुरपति
पाइनपार्यो ॥ कंसादिकदानवसबमारेवसुधा
भारउतार्यो ॥ अबकलियुगश्रीवल्लभप्रभुप्रगटे
मायावादनिवार्यो ॥ मानिकचंदप्रभुश्रीविठ्ठल
पुरुषोत्तमरूपनिहार्यो ॥ ध्रु ॥ यांभांतिश्रीवल्लभ
पुरुषोत्तमरूपहैं धर्मस्थापनार्थप्रागट्यहै ॥ २२ ॥
श्लोक ॥ येतु विरोधी धर्म सद्धर्मलतिवरसह
तेसहनेकर्थं ॥ प्रत्ययेतुनिप्रेगोवेदधर्मकप
लकः ॥ २३ ॥ याकोअर्थ ॥ अबकहतहैंजोजेकोईवेद
धर्मकोअतिक्रमकरेंअपनेमनमानीआचर
नकरतहोइ सोप्रभुकोअनसंभवैसोकाहेतेंजो
प्रभुवेदसत्यहैं ॥ धेनुविप्रवेदधर्मकेप्रतिपाल
कहैं ॥ २३ ॥ श्लोक ॥ सकथंसहतेस्मत्तद्विरोधम
जनैःकृतं ॥ परमानंदसंदोहास्याकुसुतरामपि
॥ २४ ॥ याकोअर्थ ॥ अबकहतहैं ॥ सोजोभगवान
सोबहुसुखजीवेहरिविरुद्धहैंनतेकरनामनुष्य
सोश्रीकृष्णविरोधहैंतबैसमहो ॥ श्रीकृष्णकेस
हपरमानंदरूपहैं परमदयालहैं ॥ ताहूकोदुख
नाहीदेखिसकतहैं ॥ २४ ॥ श्लोक ॥ सकथंसहतेहु

सि॰प॰ दोषेण सर्वथा॥२५॥याको अर्थ यह कहत हैं जो॥ स
१०७ कलप्राणीमात्रके अनेदसहा तासों अपने स्वकीय
जनभक्तनके दुख कैसें सहेगो॥ सर्वथा न सहेगो॥ नातें
स्वभगवदीयकों यह लक्षण है॥ जो लौकिक वैदि
क कछु कामना सिद्ध होइ॥ काहू वस्तुकी हानि होइ
हां अपनोही दोष विचारनो॥ देह संबंधी अनेक
खमें अपनो दोष विचारनो॥ प्रभु तो भक्तनही करन
मेरो दोष है॥ तातें यह दुःखको समयो है॥ या भांति जानने॥२
श्लो॰॥ निर्दोषपूर्णगुणता हरौ नित्यं विराजते॥
कदाचित्स्वप्रभो दोषा नानेय सर्वथा हृदि॥२६॥या
को अर्थ॥ सो आपु श्री आचार्यजी महाप्रभु बालबो
धमें कहत हैं॥ निर्दोषपूर्णगुणता इत्यादिक वचन
नतें यह निश्चय मनमें जानिये जो श्रीकृष्ण निर्दोष
सदा है॥ सकल गुण करिकें पूर्ण है॥ ऐसे श्री हरि दुख
हरता है॥ सदा विराजमान हैं॥ तातें कदापि कोई प्रका
रसों प्रभुको दोष हृदयमें सर्वथा नाहीं लावनो यह
सर्वोपरि सिद्धांत भक्तिमार्गमें है॥२६॥श्लो॰॥ केवाचय
वराकाय वराकाय उद्धवाय अपि प्रभो॥ श्रुतवंतो वि
महत्श्रीलीलापश्चात् स्थिताश्चपि॥२७॥ याको अ
र्थ॥ यह श्री हरिरायजी कहत हैं जो मैं अपनेको कहा
कहूं महा रंक तुच्छ हों॥ उद्धवादि बडे भगवद्भक्तनकीय
हगति है॥ जो अपने अपने प्रभुको अंतरध्यान सम
य सुने जिनकी लीला सुनी देखी अनुभव करी सो
उद्धव ऐसे समय स्थिति रहे॥ प्रभु बिना तो मैं कहा करूं
२७॥श्लो॰॥ कुंती वदी हरौ भारपकरप भागवतोम
वेत स घ्याण विमोकान श्रीकृष्णविरहेण हि॥२८
याको अर्थ॥ कुंती बडी भक्त परम भगवत है॥ जो श्रीकृ
ष्णजीके अंतरध्यान सुनत ही श्रीकृष्ण विरह करिकें

अपनेमनमेंतत्कालमाराछोडिदीयेतातेंकुंतीमहा
भाग्यवानभक्तहें।१८।श्लोकः॥ अस्माकंतुप्रभुर्नित्य
मत्रैवावाहनोधुनो।विराजतेततोदुःखंनविधेयं
मनसापि।१९।टीका।अथ॥अवश्रीहरिरायजीकहत
हैंजोहमारेप्रभुतोनित्यहीप्रतिहांविराजमानहें।
जैसेंतोविक्रमेंआधुनीकजीवहेंसोवाहसकारिपतिपास
रहेतेसेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुद्वाराश्रीप्रभुजीसेंवा
हसंबंधभयो।सोप्रभुसदाघरमेंविराजमानहें।ताते
मनमेंदुखधारनुसकैयाहीनकरतेहूंहें।२०।श्लोकः।भ
वद्भिर्मिलितैःसर्वैरयंसिद्धाविचार्यतां।ततःसंदेह
नाशेनयद्विस्थंतद्यपोह्यतां।२१।टीका।अथ॥अवश्रीह
रिरायजीआपुअपनेछोटेभाईश्रीगोपेश्वरजीसोंक
हतहैंजोयहमेंशिक्षापत्रतुमकोंलिखिपठाइहे सो
ताकोसगरेपुष्टिमारगीयभगवदीयमिलिकेंवि
चारकरियो।समस्तवैष्णवमिलिकेंवासिक्षाकेभा
वविचारकरतेमनकोचिंतारूपसकलसंदेहदूरिहो
इजाइगोसुदुःखबुद्धिकोपोषककरोइगी।श्लोकः।अथोरह
मारेतोसाधनहूंसिद्धहूंएकश्रीकृष्णःशरणंममःय
हमतिहै।सोयहश्रीवल्लभाचार्यजीअष्टाक्षरमहामंत्र
प्रगटकरिश्रीकृष्णहीकीसरणसिद्धकीरीहें।तातेहम
तोएकश्रीकृष्णहीकोआश्रयहृदयमेंकरिकेंश्रीकृ
ष्णहीकीशरणमनवचनकर्मकेंसर्वभांतियही
साधनसाध्यजानतहें।तातेसंपतिअनेकसुखहमश्री
कृष्णकीसरणहें।सोरआपतदुःखहूमेंएकश्रीकृष्ण
कीसरणकीटेकछाडेंनहैं।हमारेश्रीआचार्यचरणनप्र
गटेहें।यहसेवनसोंश्रीगुसांईजीविज्ञप्तिमेंकहेंहें।श्लो
कः।यदुक्तंतातचरणैःश्रीकृष्णःशरणंममः।ततस्तवा
स्तिनैश्चित्यमैहिकेपारलौकिके।

चै

से.प. अष्टाक्षरमंत्रहीहमारेसाधनसाध्यहैयहसिद्धांतभयो
१०८ ३ इति श्रीहरिरायजीकृत सिक्षापत्रचतुर्विंसोताकीटीका
श्रीगोपेश्वरजीकृत संपूर्णं २४ अबकमारकहेजोचिंत
नादीककेयहहै अथचतुर्दशीपरमगतिहै सोकोटानको
टिसाधनकरो मगरैधर्महोइ औरश्रीवल्लभाचार्यजी
केचरणकमलकेआश्रयहोइ तिनकोफलदानहि
सोफलदानआगेसिक्षापत्रमेंनिरूपणकरतहे
श्लोक श्रीवल्लभपदांभोजभजनं दूरतोपिदया
परःकरोतिचिंतनंनजहातिजनंहरिः १ या श्लोककोअर्थ आ
पुआपश्रीहरिरायजीश्रीमुखतेकहतहे जोवैष्णवको
श्रीवल्लभाचार्यजीकेचरणारविंदकोभजनआदर
पूर्वककरतहे एवश्रीमदाचार्यजीकेचरणकमलमें
अनन्यभावहे जैसेंसूरदासजीकहेहें जोभरोसोदृढ
इनचरणनकेरो श्रीवल्लभनखचंद्रछटाबिनुसब
जगमांझअंधेरो १ श्रीआचार्यजीमहाप्रभुनकेच
रणकमलकोसेवासदावैष्णवआदरैहैं तिनकेऊप
रहरिजोश्रीकृष्णसदादयाकरतहैं प्रसन्नहोइकैकृ
पाहीकरतहे अपनोस्वरूपानंदकोसदादानकरतहे
१ श्लोक कृपाकटाक्षसंपातपात्रपानपरोहरिः तमम
वेहनदोषलक्षमप्युत्तमस्वनः २ या श्लोककोअर्थ आप
श्रीहरिरायजीआपुश्रीमुखसोकहतहे जोजावैष्णव
नकेऊपरआपश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकृपाकटाक्ष
करतहैं सोआपकृपाकरिकेंअपनीअमृतदृष्टिसो
अवलोकनकरतहैं तिनकोपरिपालश्रीठाकुरजीक
रतहैं पद्मनाभदाससाक्षी छोलाधरने सोश्रीठाकुर
जीआपुश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकीकानिकरिकेंपद्म
नाभदासकेछोलाभोगधरेआरोगते सोयाभांतिजाप
रश्रीमहाप्रभुजीकृपाकटाक्षकरिकेंरक्षानकरतहे

सोउनवैष्णवननेललावृधि को टिको। इनअपराधपरत हैं
सो तो ऊ श्री छलनचंद्र सर्व अपराध क्षमा करिके यापर कृपा
ही करत हैं ॥ २ ॥ श्लोक ॥ यदीय हृदये श्रीमदाचार्य चरणा
द्वयं । नत्स्वसरणेभ्य सनावृत्तिमन्तो मम ॥ ३ ॥ याको अ
र्थ ॥ वैष्णव कहत हैं जो पुष्टिमार्गीय भगवदीय के हृदय
में श्री आचार्यजी महाप्रभु के दोऊ चरणकमल विरा
जत हैं या भांति श्री महाप्रभु के मन वचन हू सब करि वे
सरण हैं तिनके सतत अपराध होय हैं सो तिन हू
को प्रभु नास करि प्रतिबंध दूरि करत हैं अंगीकार
करत हैं ॥ ४ ॥ श्लोक ॥ यदंगुलिनखानेन्द्र चंद्र सैतप
मसा हृदि । तापहर्त्ति भक्तानां तान्हा नदे पदांबुजं ॥ ४ ॥
याको अर्थ ॥ अब श्री हरिरायजी कहत हैं जो श्री आचा
र्यजी महाप्रभु के चरणकमल कौ है सो अंगुरी परम
सुंदर हैं तिनमें दश नख चंद्र १० हैं सो सो एक न
खचंद्र की कला आगे कोटि चंद्रमा की कला नपाप्र
नहैं सो ऐसे श्री महाप्रभुजी के नख चंद्र जो वैष्णव हृदय
में धारन कीयो है सो तिन भक्तन के हृदय के त्रिविधिता
प दूरि होत हैं आधिदैविक आध्यात्मिक आधिभौतिक ॥
तथा कायक वाचक मानसिक ॥ ऐसे भगवत्के दोषरूप
श्रीकृष्ण मिलन में प्रतिबंधरूप ताप सगरे दूरि होत हैं
ऐसे श्री आचार्यजी महाप्रभु के चरणकमल हैं सो दी
नें श्रीनंदनंदन सेवनको करत हैं ॥ ५ ॥ श्लोक ॥ सत्यपरतु
गतेन लोके वेदे च प्रकीर्तितः प्रत्येन विजाचार्य च
रणात्वहृदयं मम ॥ ५ ॥ याको अर्थ ॥ अब श्री हरिरायजी आ
प कहत हैं जो वैकुंठ में हैं कीर्ति जाकी ऐसे जो वैकुंठ
पदार्थ सत्यलोक जो वैकुंठ लोक सगरे ज्ञान मार्गी
य मर्यादा मार्गीय की सर्वोपर फल हैं सत्यलोक
जो फल हैं सो पुष्टि मार्ग में वाता

चतुर्थमोक्ष नाई सबचतुष्टय है । सो यह पुष्टिमार्ग है सो जो
संग्रीतिकस्साधनसुधापान यही परमफल है सो साधन
करिके सिद्धि नाहीं है ताते मेरे तो परमफलरूप आप
श्रीवल्लभाचार्यजी के रूद्दोनक चरणांबुज यही फल
है इनहीं के सिद्ध स्साधरा मनसिद्धि है । पासो ... नकर्म
वेदविहित फल के जनस्याति ध्रुव । या तो वह मुख चित्त
नायते ताम्मुते ईरि ई । या ... श्र ... वेदविहित अने
क प्रकार के कर्म है । वेद में ज्ञानमार्ग योगमार्ग कर्मम
र्गउपासना मार्ग अनेक व्रत संयम नेम इत्यादि अ
नेक साधन है । सो काहे ते जो ताके लीये यह पुष्टि
मार्ग को फल जान्यो नाहीं जात है । निश्चय काहे ते जो
पुष्टिमार्ग तो केवल व्रजभक्तन के भावात्मक सर्वोपर
है । सो श्रीमहाप्रभुजी की पाछे स्वाधीन साधन ते सि
द्ध नाहीं है ते से वह सुख जी वके चित्त ... ऐसे
नीहरिजी भगवान की कथा स्वातंत्र्य मनजनतारे श्री
भगवान की कथा वह सुख कोन सुहाइ । और भगवद्रस
में सेवादि वह सुख के चित्त में न सुहाइ है । ऐसो ... आन
नुभाति हेतु ल्वात ते सान्तव फलरूपाणी यतो जीवस्य हा
सत्व हेतु भेद निवृत्तिका ७ या ... श्र ... सा ... में ... स
वहै जो ज्ञान है सो भक्ति हेतु है सो ताते भक्ति की
ज्ञानमयो है ताको भक्ति होय सो यह पुष्टिमार्ग को सि
द्धांत को फल नाहीं है पै यह मर्यादा मार्गीय भक्ति है
सो तामें श्रेष्ठ धर्म की मम मोक्ष फल है । सो तामें प्रथम ज्ञा
न ही मुख्य है । ता पाछे मर्यादा भक्ति होय सो पुष्टिमार्ग
के फल में रह है ज्ञान और मर्यादा मार्गीय भक्ति दोऊ
विरोधी है । सो काहे ते जो यह ज्ञान में दासत्व नाहीं
रहत है । और पुष्टिमार्ग में तो जीव को दासत्व मुख्य
है । प्रभु स्वामी है । या भांति श्री भगवत् सेवा है ना भा

वको निवर्तकत्तो ज्ञानसौं नहीं स्वामीसेवक यह भाव
नाहीं है ॥ श्लोक ॥ मर्यादाभक्तिरप्येषा नावृत्तेर्व फला
त्मिका याके वन्यत्रतेपुष्टिः भक्तिः सकल मूर्द्धगा ।
याको अर्थ । यह मर्यादाभक्ति है उह अपनी आत्मा
को देव अरु ब्रह्म मानत है ॥ मेंहीं ब्रह्म हों ॥ ताकरि
के प्रभुसों सेवक भाव छूटि जात है ॥ यह ज्ञान ने यह ज
ताये जो पुष्टिभक्ति सर्वोपरि सिरोमनि है ॥ तातें या
मर्यादामार्ग की भक्ति के मस्तक पर विराजत है ॥
तातें पुष्टिभक्ति सर्वोपर जाननी ॥ श्लोक ॥ पुष्टिभक्ति
हरेरास्यं तेत्वन्यत्र भुवः स्वयं नराः वसंपन्ताः संतः
फलरूपा भवंति हि ॥ ६ ॥ याको अर्थ ॥ यह पुष्टिभक्ति है सो
श्रीठाकुरजी रासादिक लीला करि भक्तनको दान कीये
रसलीला श्रीठाकुरजी करिके सो व्रजभक्तनके
लीये करी है ॥ रस श्रीकृष्ण सो श्रीवल्लभाचार्यजी यह
कलियुग में पुष्टिभक्ति के ॥ सो तिनके कीये प्रगट सो
श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी है स्वयं भगवान् श्रीकृष्णचं
द्रजी है ॥ सो प्रगट है ॥ सो तातें श्रीआचार्यजी महाप्रभु
के चरणारविंद को दृढ आश्रय है ॥ ऐसी सति तें अंत
रंग है तिनही को भजन सर्वात्मभाव सों कीयो ॥ तब
रासलीला में फल प्राप्ति भयो ॥ सो तैंही यह पुष्टिमार्ग
में जो श्रीमहाप्रभुजी के आश्रित है तिनहीं भाव
नको फलसिद्धि है ॥ ६ ॥ श्लोक ॥ तदूर्ध्वं तं नके तेव्यं मनु
गते परं कि सु ॥ तथा रत्नाक फलं प्रान्तेन भोगादिधिका
रीति ॥ १० ॥ याको अर्थ ॥ तातें उपरजो पुष्टिमार्गानुवर्ति
कर्मज्ञानकर्मवेदमर्यादाभक्ति इत्यादिक विरोध धर्म
कोक्छू नाहीं करन है ॥ जो स्मरन करिके भूतप्राणी को

से.प. मारगीयधर्मसेवादियहलौकिकफलात्मकनहीकरे जो
१२० मेंसुखपाऊं कुटंबीदेहसेंबंधीसुखीहोउं ॥ पारलौकवैदि
क कामनार्थवर्ने नभोगादिविचार्य इहलौकिक वैदि
ककामनासर्वेहीछोडवें ॥ श्लोक ॥ तस्मात्फल
विनाचार्यपदांभोजद्वयंसदा हृदिधार्यैवकार्यासं
शयापितमानसैः ॥ १ ॥ याकोअर्थ ॥ यहपुष्टिमारगीय
भगवद्धर्मसेवादिकरियहस्वपनेश्रीवल्लभाचा
र्यजीकेदोउंचरणकमलकोअपनेहृदयमेंधारनक
रियहनिश्चरणकमलकोध्यानमनमेंराखें या
प्रकारसेंकरेंकार्यपुष्टिमारगीयकोनाईकरतव्य
हैमनमेंसंशयअविश्वासनकरें ॥ सोकाहेतें जो गी
तामेंकहेहें ॥ श्लोक ॥ संशयात्मा विनश्यति ॥ संशयतेफल
कोनाशहोतहे ॥ तातेंसंशयनकरें ॥ २ ॥ श्लोक ॥ अत्रसं
शयमापन्नासर्वथासुरामता ॥ दैवाअपितुरानेपि
हरिणापतिताद्रुतं ॥ २ ॥ याकोअर्थ ॥ श्रीवल्लभाचार्य
जीकेस्वरूपमेंसंशयहोय ॥ तथायहपुष्टिमार्गमेंसंश
यहोय ॥ ताकोसर्वथाआसुरीहीजानियें ॥ दैवीजीवहो
य ॥ अथवाआसुरकोईहोय ॥ ताकोअविश्वासश्रीआ
चार्यजीमहाप्रभूमेंहोय ॥ सोताकोंश्रीठाकुरजीआप
नेहाथसंसारमेंडारिदेंय ॥ सोताकोंअंगीकारकवहूंन
करें ॥ सोतयनाईतें विवेकधैर्याश्रयग्रंथमेंश्रीआचा
र्यजीमहाप्रभूकहेहें ॥ जोअविश्वासोनकर्तव्यःसर्वथा
बाधकस्तुसः ॥ तातेंअविश्वासमहाबाधकहे ॥ २ ॥ श्लो
क ॥ अहोमहच्चित्रमस्मत्भवनीयौहरीभुवि ॥ विद्यमा
नेभगवतोद्दिवतौ अपिसर्वथा ॥ ३ ॥ याकोअर्थ ॥ श्री
वश्रीहरिरायजी आपुश्रीमुखतेंकहतहें जो मेरेमत
मैंवडोचित्रदेखतहें ॥ औरवडोआश्चर्यहे जो भूमिवि
षैंश्रीवल्लभाचार्यजी श्रीहरिजो अपनेहृदयमहीचव

तारलीयें सो तिनकों तुलनिं कृतं भगवद्रूपस्वरूप श्रीवल्ल
भकुल भूमिपर विराजमान हैं। और श्रीभागवतहू विद्यमा
न हैं। श्रीभागवतकी टीका निबंध श्रीसुबोधनीजीहू विरा
जमान हैं सर्वथा नऊं यहू जीव मार्गमें नाहीं प्रवर्त होतहैं
यह मोकों बडो आश्चर्य है॥ श्लोक॥ सत्वासु श्रिसुबो
धिन्यां सत्सु श्रावत्स्व विना ग्रंथेषु विद्यमानेषु सर्वोऽ
ज्ञापकेष्वपि॥५॥ याको अर्थ॥ श्रीहरिरायजी कहत
हैं जो आचार्य श्रीसुबोधनीजी निबंध भूमिपर विराज
त हैं और एक हू सत्य हूतें भागवतधर्महू सत्य हैं तथा
श्रीसुबोधनीजी निबंधके वेत्ता ऐसे सत्पुरुषहू विराज
त हैं। और छठे बडे श्रीगुसांईजीके श्रीआचार्यजीम
हाप्रभुके पुष्टिमार्गीय ग्रंथहू विद्यमान हैं। सो ए ग्रंथ
कैसे हैं सर्व पुष्टिमार्गके भाव तिनके ज्ञापक हैं इन ग्रंथ
नद्वारा सगरी रीति पुष्टिमार्गीयकी जानी जात है या
भांति सगरी रीति वस्तु विद्यमान हैं।५। श्लोक। तथा
पि न प्रवर्तन्ते यथाभक्तिपथे जना। प्रायस्तत्र हरेरेवा
कारणत्वेन रक्षिता॥५॥ याको अर्थ॥ श्रीहरिरायजी
आप श्रीमुखतें कहत हैं जो ऊपर कहे हैं सो सगरे पदा
र्थ भूमिपर विराजमान हैं तऊ जीव यह पुष्टिभक्तिमार्ग
में नाहीं प्रवर्त होत हैं सो काहेतें जो एक श्रीहरिकी कृपा
को कारन हैं सगरे पदारथहू और श्रीहरिकी कृपातें
ई तब ही जान्यो जाय श्रीहरिकी कृपा होय तब ही जान्यो
जाय श्रीहरिकृपा बिना जीव भक्तिमार्गमें नाहीं प्रवर्त होत
त हैं तातें यह पुष्टिमार्ग तो केवल प्रमेयमार्ग है सो श्री
हरिकी कृपा प्रमेयबल बिना यहमार्गमें कैसे आवे॥५॥
श्लोक॥ सृष्टिं तेद्रियव नू
कृपा बिना सर्वसाधनं । या ॥
अवकाहन है जो तातें श्री

सिद्धि होय ताको दृष्टांत कहत हैं जो जैसे प्रान विनास

भारी इन्द्री मूर्छित होइ तिनते कछु न कार्य होय जब प्राण
आवे तब सगरी इन्द्री चैतन्य होइ अपने अपने कार्य
में तत्पर होत हें ताहि श्रीकृष्णजीकी कृपा प्राणस्थापनी ना
हीं होय जब पर्यन्त तहांतांई पुष्टिमार्गीय साधन इन्द्री स्थाप
नी निकछु न होइ जब श्रीकृष्णजी कृपा करें तब ही यह पुष्टि
भक्तिमें आइ सेवादिक करे भाव सिद्ध होइ इति निश्चय ५९
इति श्री हरिराइजी कृत सिक्षापत्र पंचविसमा की टीका श्री
गोपेश्वरजी कृत संपूर्ण २५ अब कहत हैं जो पुष्टिमारगी
य सगरो पदार्थ प्रगट हैं परंतु श्रीकृष्णजीकी कृपा विना
नाहीं जीव सवर्त्त होन हैं तहांकों कहत हैं जो श्रीकृष्ण कृपा
न करत हैं श्लो सो तहां श्रीहरिराइजी आगें सिक्षापत्रमें
कहत हैं जो श्रीकृष्णनो परमकृपाल यामांति कृपाक
रत हैं श्लो स्वकीयानामैहिकं अथवा पारलौकिकं
अकरोत्कृतकृत्य प्रभुरेव न संशयः १ या श्लोक को अ
र्थ कहत हैं जो श्रीकृष्ण केसे हैं परमकृपाल हैं अपने स्वकी
य निजभक्तनकों यह लोक परलोक को कार्य सिद्ध करत हैं
यह लोक में विषयादिक मतिकों जानों यह लोक में स्त्री पु
त्र धन हैं वी सिद्ध करत हैं जामें भगवद्धर्म सेवादिक में वि
धन करें या भांति लौकिक सिद्ध करत हैं और अलौकिक
में लीलारस स्वरूपानंदको दान सो क सिद्ध करत हैं सो नि
विधिनामावृत्ती में श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहे हैं भ
क्त सर्व दुःख निवारकाय नमः भक्तके लौकिक अलौकि
क सर्व दुःख दूरि करिके सर्वथा सर्व कार्य सिद्ध करे सो ता
तें जीवकों कछु चिंता नाहीं करनव्य है १ श्लो तथा
पि कुर्याज्जीव प्रयत्नं निजदोषतः अज्ञानात्करण
ताहि समर्तेन तादृशं स्वतः ॥ या श्लोक को अर्थ या भांति श्री
कृष्ण तो पि अलौकिक सर्व कार्य सिद्ध करत हैं सो तऊ

जीव अपने मन में अनेक प्रकार के साधन को उपासक
रत हैं जीव बुद्धि अज्ञानतें अनेक प्रयत्न करत हैं ऐ
से अज्ञानी जीवन पर श्रीहरि करुनानिधि हैं सो सब
रो अपराध क्षमा करत हैं अपनी ओर तें सो येनः कर
ण में श्री आचार्यजी महाप्रभुन कहे हैं प्रभु के से हैं सत्य
संकल्पतो विभुर्नान्यथा तु करिष्यति। श्रीहरि सत्
य संकल्प हैं श्री आचार्यजी द्वारा अंगीकार कीये
हैं सो हू दूसरे जीव अज्ञान करि भूलत हैं प्रभु के से भ
क्ते [illegible] अविरुद्ध मद्रूप ते निरुद्धा स्य अप
पि यासे पुष्टि लोवाले [illegible] रूप ते हि तें पथा
को अये यह पुष्टि मार्ग में अविरुद्ध भगवद् सेवा है श्री ह
रि को आश्रय सो तो नाही करत हैं और अनेक साधन
प्रयत्न जो पुष्टि मार्ग ते विरुद्ध में हैं ताही के करन में तत्प
र हैं ऐसो अज्ञानी जीव हैं उलटो चलत हैं ऐसो हू दास
पर श्री आचार्यजी की कानि तें श्रीहरि ऐसी सी दया कर
त हैं सो पिता वात्सल्य को हित ही के बालक अज्ञानते
कछु दोष करे परंतु पिता दोष कों नाही विचारत हि
नाही करत हैं ऐसे न्यास निर्णय में श्री आचार्यजी मह
प्रभुन कहे हैं हरिस्मरण मत कीन्ते बाधं कुतोपरं। अ
न्यथा मानसे वाला [illegible]: पथ पंचविन १ जैसे मा
ता पुत्र कों बारंबार अपने तन सों पोषन करत है तैसें
ही जो जीव श्री आचार्यजी महाप्रभु द्वारा सरण आ
ये हैं तिनको प्रभु बाधा नाही करत हैं जा प्रकार भांति
के दास को कल्याण होइ सोई प्रभु करत हैं ऐसे द
याल श्रीहरि हैं। श्लोक [illegible] न जानाति निजाज्ञानात्
[illegible] तिसहन [illegible] ना: [illegible] राशि जीवोयं [illegible]
रिपि [illegible] या [illegible] या भांति प्रभु कृपा करत
जीव अपने अज्ञानतें नाही जान

प.प. तछिद्रहैं उपकारकौनाहीजानतहौं ऐसेदोषकीरासिहोय
१२ भर्योजीवहै और हरि तो श्रीकृष्ण हैं सो गुननिधिहैं जी
वदोषनिधिहै भगवानगुणनिधिहैं यासों का कथम
न्योन्यसंबंधः सातमस्तिजसोस्ति तथापिदोषराशी
नाहहैंन निवेदनात् पापा को श्रीकृष्ण ऊपरकहेऐसे
श्रीकृष्णसों जीवकोपरस्परसंबंध कैसें होइ जैसें तमऔ
र अंधियारो है ताको संबंध प्रकाशसों कैसें होइ जहांतें जहां
इतहां अंधकारमकेसें आवें तेसेंहीयह जीवको तमप्रका
र श्रीकृष्णसों मिले सो कहा गहे जो यों रतोउपाइकोई
नाहीं है जीवसर्वभगवानमें निवेदन करतो नवहीं सर्वदो
ष दूरि होय सो तो रासीवातें में प्रसिद्ध है सो श्रीआचार्यजी
को चिंता भई तब श्रीकृष्णनें यही आगपाकरी जो समर्पन
करावो निवेदननें सगरे दोष जीवके दूरि होइंगे तातें जी
वको दोषनिवेदनतें निश्चय दूरि भये पाछे सो आचा
र्यद्वारकानुसार सोगपताहरियो जनें अतः स्वाचार्य चर
णास्थापोहृदि निरंतरं ईयाको श्रीहरिराइजी
कहतहैं तोरासोदोषरूप जीवको जब अपने श्रीवृल
भाचार्यजीद्वारा निवेदन होय तब सगरे दोषनास है
इन तब श्रीकृष्णकी सेवायोग्य होइ और उपाइकोई
नाहीं ऐसें अपने श्रीवल्लभाचार्यजीके चरणकमल
अपने हृदयमें स्थापन करनो यहीयोग्य है तातें पुष्टि
मार्गीय वैष्णवकों परमधर्म यही है जो श्री आचार्यजी
के चरणहृदयमें अहर्निस धारन करें याहीतें सर्व फल
सिद्ध होइगो सो यथा बालक रक्षायै डाकिनीतो
भवतिहि माता तथैव भेनच दुःसगाद्रावूरक्षे ७
या तैसें जैसें बालककी रक्षामाताकरे डाकिनी
बालककोघातकरतहैं सो बालककी रक्षायै डाकि
तेमाताभयभीत होतहैं बालककोछिपायराखे तै

सेंही पुष्टिमारगीय भगवदीय दुःसंग रूप डाकिनी है
अपने भगवद्भाव रूप बालक की रक्षा थोडा वि नी हू
संगत्याग करें तातें वैष्णव को दुःसंग वो होन ही बाध
है तातें सर्व भाव जाय यह डाकिनी हैं जैसे गर्भस्थ
सड रपत है तो भाव की वृद्धि होय ॥ ७ ॥ श्लोक ॥ समस्ते
निजस्नेह गोपायांति तथा सूति तथैव भगवद्भाव गो
नश्रियंते न नो ॥ टीका को अर्थ ॥ श्रीहरिरायजी पु
ष्टिमारगीय वैष्णव सों कहत हैं जो आपने हृदय में
यह भाचार्यजी विचार करि के मन में लिखें हैं ॥ सो सर्व के
आगे भोग परस्वनो ॥ काहू के आगे कहनो नाहीं जैसें स
तीपतिव्रता स्त्री होय सो अपने हृदय को अभिप्राय अप
नेपति के आगे कहें और काहू के आगें सर्वथा ही न कहें
तैसें ही पुष्टिमारगीय भगवदीय भक्त अपनो भाव सर्व न
के आगें गोप्य राखे या भांति जतन सों राखे तो या काल
में धर्म रहें नाहीं तो बाधक ही होय ॥ ८ ॥ श्लोक ॥ हुनिवा
लापसंसर्गौ यथा वर्ध्यते रति श्चेतिस्यै भक्तसंसर्गौ भाव
वृद्धिस्तथा न्यथा न ॥ टीका को अर्थ श्रीहरिरायजी व
हत हैं जैसें इतनी वस्तु आलाप घने वचन तें स्त्री को का
मवर्द्धत विषय संगत रतिवद्धे विभचारि स्त्री कों तैसें ही
वैष्णव को भगवद्भक्त ताहू सों मिलनो भगवान में भाव
बढ़ें यह प्रसिद्ध ही भाव है ॥ कारेंतें इतनी वस्तु हास्य व
हालके मन वचन विषय संबंधी जो काम वृद्धें तैसें
ही भगवदीय भगवान की कथा एसी भाव में मन के हृदय
में भगवद्भाव प्रगट होइ आवे ॥ तातें पुष्टिमारगी
य भगवदीय होइ तिनको संग आवश्यक करनो ॥ ९ ॥
श्लोक ॥ असत्संग सर्वदा त्याज्य
भक्त नाशहेतु चेतः स्यात्
जैसें विभचारिणी स्त्री असत्
तयः खिले वै
पु

.प. थाकलगे।सदाग्रहमेंतेंमनचारहीरहैं।अनेकपरन्तु
१३ हमपासमनभटकै।तैसैंहीजाभगावदीयकोचित्तश्री
ठाकुरजीकेस्वरूपमेंलगपोटै।एकश्रीकृष्णकेचरण
रविंदकेआश्रितनदाचित्तस्थितिहै।तिनकोमनअ
पनेग्रहमेंदेहसंबंधीलौकिकवैदिककार्येमेंनल
गै।तातेंश्रीप्रभुकोआश्रयहै।सोइमुख्यहै।निश्चय
१४।इति श्रीहरिरायजीकृतशिक्षापत्रषष्ठविंशोताथौ
टीकाश्रीगोपेस्वरजीकृतभाषामेंसंपूर्ण।२६।अवऊपाव
है।जोभक्तप्रभुकेआश्रयहैं तिनकोचितलौकिकमें
नाहीलगतहै।नहींफलमेंअनेकवाधकहैं तिन
कोतजियें।तवफलसिद्धहोइ सोकहावाधकहैं कैसे
तजियें सोआगेंनिरूपणकरतहैं।श्लोक।निजाचार्य
पदांभोजयुगलाश्रयणंसदा।निश्चयेंनेननिखिलफ
लंभावविनाश्रयं।१।यातौटीका।अवश्रीहरिरायजीक
हतहैं जोपुष्टिमार्गीयवैष्णवयाभांतिसोंरहें सोतिन
कोफलनिश्चयहीसिद्धहोइगो।अपनेनिजाचार्यश्री
वल्लभाचार्यजीकेदोउचरणकमलकोआश्रयसदार
है।सोतावैष्णवकोनिखिलविनाश्रमहीसिद्धहोइ
सोविनासाधनहीश्रीप्रभुजीकीकृपातेंसकलफल
सिद्धहोइगो।१।श्लोक।धनंग्रहंग्रहासक्तिःप्रतिष्ठालो
कवेदयोः।कामादिनिष्ठामननसःस्वर्गादिफलकांक्ष
णां।२।याटीका।अर्थ।अवश्रीहरिराइजीआपुश्रीमुख
तेंकहतहैं जोपुष्टिमार्गकेफलमेंयहचालीसदोष
हैं।सोयेवाधकहैं।औरदोषतौयोंअनेकहैं।परंतु
येचालीसदोषमुख्यहैं।सोतिनकोंतजियें।तवफ
लकीप्राप्तिहोइ।सोकहतहैं।प्रथमधनतेंयहमहादो
षहै।धनकेहोतेंयहजीववावरोहोइजातहै।काहू
गिनतनाहीं।तातेंधनकोनिवेदनप्रभुमेंकरिभो

भगवत्सेवामें लगावैं। प्रभुजामें अपने कों दासजानें
गृहसो यह ते जो यह मेरो गेह है। मैं वनायो है मेरो पि
ताको है। यह ममता वाधक है। सो छोड़े। २। तीसरो गृह
सक्ति है। और प्रहर यहां स्थिर वैकुंठमें आसक्ति है। आ
नुयह करनो है। यह वनावनो होय। यह आसक्ति वाधक है
४। चौथे लोक वेदकी प्रतिष्ठा ते जो यह लौकिकमें जो कछु घ
टती कार्य करेगो तो प्रतिष्ठा जाइगी। तातें फरवानो धलगा
वेगो तो प्रतिष्ठा जाइगी। तिरस्कार लगाउगो। लाभमें री वड़ाई
होइगी। औरें वैदिक याग आहि यह होमयज्ञ इत्यादि
क मैं सवते वहुत करत हों। यह प्रतिष्ठा वाधक है। धक
मोक्षमें निष्ठा संख्यात पन रहनेनेम इत्यादि भगवद
सेवामें नाहीं वाधक है। ६। फलमें स्वर्गादिकके फलकी
कामना जो स्वर्गलोकमें जाय नाना प्रकारके भोग
विलास करूं। यह भक्तिमार्गमें वाधक है। ७। अथ श्लो
रहु वस्त हो स्लोक।। लौकिके परमप्रीति विरुद्ध विष
येसेषा। व्यपिरुद्ध यथासक्ति विशये भोगभोजने च।
पाकेष्वधि। लौकिक जो देह संबंधी स्त्री पुत्रादिकमें पर
म प्रीति सो भक्तिमें वाधक है। ७। भक्तिते विरुद्ध जो लौकि
क विषय ताकी ईर्षा न जो चाहना। सोऊ फलमें वाधक
है। लौकिक विषयन ते विरुद्ध विषयासक्ति सोऊ वाध
क है। ९। आछो आछो खानो विषयभोगार्थे भगवत्से
वार्थ महाप्रसादके लेकें तहां सो भावना ही विषया
र्थे आछो भोजन नेधनादि सोऊ वाधक है। १०। श्लो। हेस
रि भिमानकुल जो विद्या विहितोपि चेत्।। भगव
नाभावासहितं देहपोषणं। भा। षा। कें। अ
नत जो मन मदनेको हूको नेम
रहे वेही निनयम वारो अपनी इ मनसे
ले यह वाधक है।।

प. ५ मे है। ब्राह्मण क्षत्री सब मोतें नीचे हैं मो समान कोई ना
ही यह भांति मैं बाधक है १२ विद्यामद जो मैं बहुत पढ्यो
हूं षटसास्त्र को ज्ञान मोको है और तो सब मूर्ख हैं यह वि
द्यामद बाधक है दैन्य सिद्धि नाईं होन देत १३ भगवद
नाहीं करत लौकिक वैदिक अनेक कार्य में दिन बिता
वत हैं भगवद्सेवा में मन नाहीं है यह पुष्टिभक्ति में
बाधक है जैसें ब्राह्मण गायत्री न जपे तो ब्राह्मणपनो
जाय तैसेई वैष्णव दास्य के भगवद्सेवा न करे तो पुष्टि
भक्ति में बाधक है १४ देह को पोषन रंच हू सीत उस्न स
हि सके अनेक औषध तैसान पान ते देह की रक्षा मैं र
हे देह की रक्षा तो भगवद्सेवार्थ करी है सो नाहीं वे
वल लौकिक कार्य देह पोखै सो बाधक है १५ अब
और हू बहुत हैं श्लो० असत्संगमहादुःखसानु
छिद्रभक्तानां निवेदनानुसंधानत्यागः शरणविस्मृ
ति पंचायं असत्संग महादुःख को वह सुख ना
दुष्टता होइ सोऊ बाधक है १६ और श्रीकृष्ण महापवि
त्र प्रसाद छोडिकें असमर्पित खाय यह महाबाधक है
सो पद्मपुराण में कहे हैं श्लो० अनिवेद्य तु यो भुंक्ते ह
र्य परमात्मने पतंति पितरस्तस्य नरके याः श्वती स
माः १ अवैष्णवानामन्नं पतितान्नं सैसे भवेत् त
थैव च। अनर्पितं तथा वैष्णो सुमासमं इसे भवेत् २
कूर्मपुराणे अनर्पयित्वा गोविंदे यो भुंक्ते धर्मवर्जि
तः। स्वानविष्टासमं चान्नं नीरं तत्सुरयासमं ३ इति
वचनात् असमर्पित ते बुद्धि भ्रष्ट होइ सर्व धर्म को
नास होइ यातें महाबाधक है १७ निवेदन कीयो है
ताको अनुसंधान कबहू नाहीं करत है जो मैं समर्पन
कीयो है पंचाक्षर को कहा अभिप्राय है या भांति नि
वेदन को अनुसंधान नाहीं करत यह बाधक है श्री

कृस्नजीकीशरनस्मृतिहैं।अष्टाक्षरमहामंत्रश्रीकृस्न
शरणंमम:यहस्मरणकीविस्मृतिवाधकहैं।१।स्लोक।
देवांतराश्रयस्तस्य प्रार्थनापिफलार्थिनः।भगवच्चित
रहितान्यावृतिरपिलौकिकी।१।याकौअर्थ।औरदेव
कोआश्रययहमहावाधकहैं।सोपूरणपुरुषोत्त
मश्रीकृस्नकौआश्रयछोडि।अन्यदेवकोआश्रयक
रैताकैयहपुष्टिमार्गकोफलनाशीहैं।सिद्धा।स्मृति
मैंकह्यौहै।हारितस्मृतौ:नान्यंदेवंनमस्कुर्यान्नान्यदेव
निरीक्षयेत।नान्यंप्रसादंनाद्रीनान्यदायतनंव्रजेत्
१।याभांतिअनन्यरहैतौपरमसिद्धिहोइ।श्रीगुसांई
जीकहेंहैं।स्लोक।भगवत्पादपद्मपरागयुषोल
छियुकेनरमरणापितरां।ऽतरायुश्रयणंगजराज
गतौभवदिहासमभय्युरीवकुरुनो।१।अन्यसंवंधगंधो
पिवंधरामेवबाधनेतं।ग्रं।तौवाक्यातृणभांतिअन्यदे
वाश्रिअन्याश्रयवाधक।२।२।पंचअन्यदेवरुद्रादिब्र
ह्मादिशिवादिगणेशसूर्यदेवी।सोफलकीप्रार्थना
यहवाधकहैं।श्रीकृस्नसर्वसामर्थ्ययुक्त।तिनकौंछोडि
अन्यदेवसवपराधीनतिनसोंफलकीलालसायहपुष्टि
मार्गवाधकहै।२।भगवानकेचरणारविंदनेचिंतार
हितलौकिकवैदिककार्यमनमेंअसंभावनाविपरी
तिभावनामिथ्याज्ञानयहपुष्टिमार्गकेफलमेंवाध
कहैं।२।अथयहलौकिकआवृतिकरिलौकिका
वेशहोइ।तातेंयहप्रथमसयहलौकिककार्यवाधक
हैं।२।३।अवऔरहूकहतहैं।स्लोक।।गुरुद्रोहस्तु
येभ्यस्थपत्याधिकाविभावना।स्वपक्षदेहसामर्थ्य
सिद्धियाणांचपोषणं।३।याकौअर्थ।गुरुद्रोहकरै
गुरुसौंप्रसन्नहोइतौयहवाधकप्रभुअप्रसन्न
तौगुरुरक्षाकरै।गुरुअप्रसन्नहोइतौरक्षाकरि

सामर्थ नांही ॥ ४ ॥ और पुष्टिमार्गीय भगवदीय कौं
अपने नेनन न जानें ॥ अपने कों अधिक भगवदीय
को जानें ॥ या भांति मन में भावना करै ॥ यह बाधक है
२५ देह में अत्यंत सामर्थ सो काहू को गिनें नाहीं ॥ अ
हंकार होइ तथा बडो विषय होय ॥ यह बाधक है ॥ २६ ॥
अपने इंद्रियन पोषन में लग रहे सो इंद्रिय को विष
य ही मोगाइ प्रिय है ॥ तातें इंद्रीय पोषण ते विषय या
वेस बढे ॥ २७ ॥ अब और हू कहत हैं ॥ श्लोक ॥ गृहस्वामि
रतिर्भार्यापुत्राद्विषु मनोगतिः ॥ क्लेशतु नाव रहितो हि
ग्रासतनसे स्थिति ॥ १ ॥ याकौ अर्थ ॥ गृहादिक लौकि
क कार्य की रति अरु पुर गृह आदिक में प्रीति ॥ २८ ॥ स्त्री
पुत्र में मन की प्रीति है संबंधी स्त्री पुत्रादि में मन
इनके दुःख ते दुःखी होइ ॥ इनके सुख ते सुखी होइ यह
पुष्टिफल में बाधक ॥ २९ ॥ श्री ठाकुर के अनुभव बिना दि
त्र श्री गोवर्द्धननाथजी तथा सातो मंदिर तथा व्रजभक्त
के मंदिर तथा पुष्टिमार्गीय नाई सी के द्वार राजसेवा त
था व्रज हरनी ठए वैष्णव कों अनुभव है अन्य महात
व भगवद्भक्तो बिना जीव कों अनुभव कछु न होइ ३०
अब और हू कहत हैं ॥ श्लो ॥ हृदय ज्ञाको लोक लाभो
नस्भाव कनो तथा: स्वातंत्र्य भावनं ध्यपनीवच
भावहट ॥ याकौ अर्थ ॥ यह जो लौकिक द्रव्य सो
क देह संबंधी कुटंब कछु अनेक के लौकिक आछो
होइ तो सुख पावे हर्ष होइ बुरी होइ ॥ नटा हानि होइ
तो दुःख पावे शोक होइ ॥ सो यह संसार रूपी दूत में दो
इ फल है ॥ कबहू सुख कबहू दुःख याही में अटक रहे सो
फल में बाधक है ॥ ३१ ॥ इत्यादिक लाभ में लोभ होइ जो
इतनो नो द्रव्य भयो ॥ और होइगो आछो कुटंब बढे तो
आछो इत्यादि लोभ पुष्टिमार्ग में बाधक है ॥ ३२ ॥

अपनेको खतें ऐसी भावना मनमें राखें हो सपनो भलें
यह बाधक है।१३ जीवको स्वभाव दुष्ट नाही की भावना
भाविवेके सा विना दुष्ट स्वभाव सबको बुरो चाहे यह
बाधक है।१४ श्लोका। अधिकार। पापरति पक्षपातो
दुरात्मनः इत्यत्र स्नाहीन जनोपेक्षीहृ मापुन ४।१०।
याकेस्थथे अधिकारको कोलेश नाते अनेक जीव
को भलो बुरो करनो पडे सो बाधक है। योही आचा
र्यजी महाप्रभु सुबोधनी निबंधमें कहे हैं जो नाराय
नने ऐसा सो भागवतमत है। सो ऐसाको अनुभव
न भयो। काहेते सृष्टि विषे अधिकारी है ताते ग्र
लानामें सो वही नारदको पूर्वसारेपि रनो है। एका
ग्रहमन नाही। ताते वेदव्यास सो कही। सो व्यासजी विद
पुराणके अधिकारी हैं ताते इनको अनुभव न भयो ता
तें व्यासजी शुकदेवजी सों कह्यो सो शुकदेवजी काहूवा
तके अधिकारी नाही ताते अनुभव भयो तातें अधि
कारीको फलमें बाधक है।१५ जो जीवको मन पापर
तिहै। ऐसो पापी जीव परीसानाही। और खोटे मनुष्य
चोरादिक दुष्ट क्रिया करे ताको पक्षपात करे साचे
को झूठ करे। झूठको साचो करे ताको फलमें बाधक
है।१६ इत्यत पूर होइ काहूको भलो न विचारे मनमें
रहे छल राखे सो बाधक है।१७ परीन जन जे कोई सेया
के सरण होइ तिनकी अपदा करे याको त्यागवे रे
इह पुष्टि भक्तिमें बाधक है।१८ चारास्तमान होइ वि
कारन क्रोध होइ भृकुटी चढी रहे। सहन न होइ य
पुष्टिमार्गमें बाधक है।१९। श्लोक।। एते चान्ये च वो
आरे याविस्मारको हरे सावधानीभूय हासेहद्ध

कोपलनमें बाधक है।३६।।

न्प॰ जिनमें होइ तिनकों हरि नजाने जाय यह जीव हरि
६ कों नजानें तातें श्रीहरिराइजी कहत हैं समस्त पुष्टि
मारगीय सो घने जो सगरे वै सब सावधान रहियो
यह दोष ८ रपतराहियो अब कूप सो दोष रूप रोग कहे
नाकों श्लोक या पदी कहत हैं काहेतें यह चारुगी सो दोष प्र
बल हैं तातें या भांति जो जीव रहेगो तिनको यह दोष
सम्न लगेगो श्रीकृष्णके चरणारविंदमें अत्यंत आद
रा रवै सर्वस्व जानें १ अब और हू कहत हैं श्लो॰ भग
वन्मार्गे मात्र ये स्वन्मार्गे को हि भि: विरक्तै रन्यतः क्वप
गुणाश्रितोनरान्मभि १॥ या को अर्थ भगवन्मार्ग जो पु
ष्टिमार्ग भगवान ही स्वरूप श्रीआचार्यजी को धरिके
पने जीवन अर्थ प्रगट भये हैं ऐसे पुष्टिमार्गमें स्थिति
होइ २ और अन्य मारगीय यह पुष्टिमार्गके फलकी
कोहू हो हू और मर्या इनके फलको न होइ काहेतें
पुष्टिमार्ग को फल श्रीकृष्णकी सेवा स्वरूपानंद को
अनुभव यह फल है और अन्य मार्गमें स्वर्गादिक ब्र
ह्मलोक तथा मोक्ष पर्यंत चतुर्थ मुक्ति सो यह फल
सर्वे पुष्टिमार्गतें विरोध हैं तातें पुष्टिमार्गके फलकों
चाहत [illegible] रो ३ यह लौकिक अन्य कार्यतें विरक्त श्री
कृष्णको सेव[illegible] विना सव ठौरतें मन खिंच
रावै ४ और [illegible] सवे गुणनि आसक्त रहे सगरी
आत्मा मन करि ध्यान करि श्रीकृष्ण हीकी सेवा वच
न करि गुनगान श्रीकृष्णको क्रिया करि श्रीकृष्ण
हीकी सेवा या भांति सर्वात्मभाव श्रीकृष्णके गुनमें
हैं तथा ऐसो भगवदीय होइ तिनको संग करें ५ अब
और हू कहत हैं श्लो॰ आचार्य शरणायातै स्वदि
ष्वास समन्वितैः परित्यक्ताखिलस्थयं सदानन्द ज्ञानो
मुक २ या को अर्थ अपने आचार्य श्रीवल्लभा

चार्यजीके चरणांबुजनकी रहै। श्रौर दृढ विश्वासम
नमें होइ। यह जानें जो श्रीवल्लभाचार्यजीके चरणांबुजन
की कृपातें सब लब्धार्थसिद्ध होइगो। निरुपाय हे विश्वा
स राखें।६। श्रौर लौकिक वैदिक पुष्टिमार्गमें तें विरोध
होइ ताको सर्वत्याग करें। स्वाचार्य श्रीश्राचार्यजीके
चरणनमें श्रीकृष्णके चरणनकी मननमें उछाह राखें। य
ही लगन लगामें चरणनकी श्रपेक्षा राखें।७। यह नवभा
तिके गुणरूप सबमें होइ सो सर्वोत्तम पुष्टिहीरा से गुणस
हित भगवदीय होय। तिनहीको संग करें तें नवसमर्पस
बहु रहै इ प्रभु कृपा करो परंतु काल महाकठिन है भगव
दीयको संग नाहीं मिलत। सो श्रागें कहत हैं। श्लोक॥ इ
दानीमापातः कालः सर्वबुद्धिविनाशकः। परिपतितदु:
संगो मिलितानांस्यबापि हि।१४। याको श्रर्थ। श्री
हरिराइजी कहत हैं जो रूप दोषरूप राग है चालीस
१४ कहे तातें इहिकरणीय प्रभुके गुणरूप जो पथ है
२ कहे परंतु यह कालमें जो श्रब श्रायो है सो सर्वबुद्धि
को नासक श्रायो है कालदोषने सतप्रानी हैं तिनहूकी
बुद्धि नास भई है। श्रज्ञानीकी बुद्धि नास होइ यामें कहा
कहनो। एक तो कालदोष बाधक होइ दूसरे दुःसंग विनो
बाह्य श्रापुने सुनसिद्धि श्रत्यमिलत है। तानो वारमें हम
में भस्यो है ताकरिकें जो धर्मको लेसहू रहत है सो उ साथ
तें पतित नमगिर परत है श्रौर भगवद्धर्म पढ़िवेकी कहा चे
ली हैं उलटो है जामें जो कछु है सोऊ दिनाइनाते
है तातें कालदोष श्रौर दुःसंग बहुत बाधक है
१५ श्लोक॥ किंकार्यं किमकार्यं पायतः सुरक्तिनेव
हि प्रभुनास्वबलं जावनतु पसंहृत्य मेव ही।१५ पया
को यह श्रौ। यह कालदोषतें कछु कार्यकरिवे भगवद
संबंधी तो कछु श्रौर ही उलटो होइ जाइ

नविचारियें फेरियाकलगामैंकछुमनमैंपुरीणाभातम
लेकार्यमैंअनेकप्रतिबंधपडतहैं केवलहूप्रभुनको
बलप्रतापमनमेंआवतहै जोश्रीकृस्नसर्वोपरसबकार्यके
सिद्धिकर्ताहैं अपनेजानिकें प्रभेककबलतेंकृपाकरें
इनकोप्रतापहै सोहिमाप्रगटहै। वेदपुराणश्रीभाग
वतगीतामेंप्रसिद्धहै। एसेश्रीकृस्नहमारेप्रसिद्धिपति
हैं सोहमकोकहाडरहै। सर्वसिद्धिहै। याभांतिकवहूप्र
भुकोबलप्रतापहृदयमेंआवतहै। सोफेरिउपसंहा
रनासहोइजातहै विश्वासछूटिजातहै। लौकिक
सुखदुखतिनकोपावतहैं।।५।। श्लोक।। साधनानि
नसिध्यंति कालदोषान्नरात्मन: प्रतिबंधश्चकाला
दिकृत:प्रत्यहमेवहि।।६।। याकोअर्थ।। तहांकोइक
हैजोकछुसाधनकरो। जासाधनतेंमनमेंदुर्वासनान
उठें भगवदर्थहोइ। याभांतिकोईकहै तहांश्रीहरि
इजीकहतहै। जोसाधनकरिसिद्धिनाहीहोनहेंतो
फलतोमहादुर्लभहै। तातेंयहकालदोषतेसाधनना
हीसिद्धहोतहैं तातेंयहकालादिनेंप्रतिबंधहोतहैं कृ
तजोउत्तमकरियेतोप्रत्यहबुरीहोइजातहैं सोआगें
कहतहैं।।६।। श्लोक।। उद्वेगप्रतिबंधोवाभोगोवापिस
जायते प्रतिबंधसेवनंतेप्रत्यक्षापफलस्यानि।।७।। या
को।। श्रीआचार्यजीमहाप्रभुसेवाफलमेंनिरूपणकी
येहैं। तामेंतीन३प्रतिबंधकहेहैं उद्वेगप्रतिबंधोवा
भोगोवास्यात्तुबाधकं याभांतिकहेहैं प्रथमउद्वेगमन
कोहोइ तबसेवामेंमनननलगो प्रतिबंधहोइ पाछेंदू
सरीरादिकवेभोगाकोमननहोइ भोगतेविषयावेस
होइजाय तबप्रभुअप्रसन्नहोइ सोयाभांतिप्रति
बंधतेंतबभगवद्सेवामेंनहोइ तबपुष्टिमारगीय
फलकीआसाकाहेकोकरीये यामार्गमेंतोभगव

हसेवाहीफलहैसोफलभईतोंयागेंकहाफलहोइगो।१७।सो
कहतहैंयापिश्रीमहाचार्यचरणाश्रयणसमानिवर्तेतो
निरासेरान्नमसनोफललधिनाः१४याकोअर्थतातेंयाम
र्गमेंसेवाफलहैसोयहसकलदोषमहानिश्चयतउश्रीह
रिरायजीकहतहेंसोएसोसेवाविनाफलकीनिरास
होतउएकमनमेभरोसोहैमेरेश्रीवल्लभाचार्यजीके
मेरेचरणकमलकोआश्रयमनसेंकीयोहैभगवत्सेवा
करिरहितहूंतउश्रीमहाप्रभुजीकेचरणकेआश्रयतें
यहपुष्टिमार्गकोफलसर्वोपरलधिहेंनिश्चयसिद्धहो
इगो।याविश्वासहें।१८।तातेश्रीहरिरायजीकहतस
र्वनिसनाकोटीकेश्रीगोपेश्वरजीकहतसेपूर्ण।१८।आश्र
यकरवेहैसर्वसाधनरहिततथासेवाकरिरहिततो
तउश्रीमहाप्रभुजीकेचरणआश्रयतेयेफलहोइगो
सोफलकोननातिहोइ।सोआगेंकहतहैंजोआश्र
यतेंदैन्यतासुरैसोफलरूपहैं।सोदैन्यताआगेंवर्ण
नकरतहैंश्लोक॥कदानंदात्मजःस्वस्वरूपावृतिक
रिष्यति:प्रतिक्षणेवाममैत्रेहिमनःश्रान्तमहेंद्रियं
१याकोअर्थ।यश्रीहरिरायजीविज्ञप्तिकरतहैंनंदा
त्मजश्रीकृष्णयशोदाजीनंदरायजीकेपुत्रसोहेंवसुदेव
नंदननाहीं।यहपुष्टिमार्गमेंनंदकुमारसेव्यहैं।श्रीगुस
ईजीनंदमहोत्सवकेअध्यायमेंकहेहेंनंदस्त्वात्मज
उत्पन्नेजाताल्हादोमहामनाः।नंदरायकीआत्माते
प्रगटेहैं।सेश्रीकृष्णभावात्मकरसपुष्टिपूर्णपुरुषोत्त
ममसोकोअपनेस्वकीयनिजभक्तजानिआपनीकृ
पादृष्टिकबकरोगे।तुमारीप्रतिक्षाकरनकरतअस्मद
दिकमनइंद्रीसहिततेंहसर्वशिथिल ह्योगेश्री
गुसांईजीविज्ञप्तमेंकहेहैंयो त्वत्पा
दाब्जैककिंकरा।तदुक्तंकथमप्यास्तुव्रजद्र

से.व्य. १७ नविचारियें पै परिग्रह तामें कछु मनमैं पुरें या भांति भ
लेकार्यमें अनेक प्रतिबंध पडत हैं केवल प्रभुनकोपु
वल प्रताप मनमें आवत है जो श्रीकृष्ण सर्वोपर सर्वकार्यके
सिद्धिकर्ता हैं अपने जानिकैं प्रेमलक्षणतें कृपा करेंगे
इनकौ प्रताप है सो ऐसो प्रगट हैं वेद पुराण श्रीभाग
वतगीतामें प्रसिद्ध है ऐसे श्रीकृष्ण हमारे प्रसिद्धिपति
हैं सो हमको कहा डर है सर्वसिद्धि हैं या भांति कबहूं प्र
भुकोबल प्रताप हृदयमें आवत है सो पैहि उपसंह
रनास होइ जात है विश्वास छूटि जात है लौकिक
सुखदुख तिनको पावत हैं ॥ श्लोक ॥ साधनानि
न सिध्यंति कालदोषान्तरात्मनः प्रतिबंधश्च काला
दिकृतः प्रत्यहमेधति ॥ टीका ॥ या श्लोकमें तहां कोईक
हे तो कछु साधन करें ता साधनतें मनमें दुर्वासना न
उठे भगवत्स्वरूप होइ या भांति कोई कहै तहां श्रीहरि
इ जीव कहत हैं जो साधन करि सिद्धि नाहीं होत हैं तो
फलतो महादुर्लभ हैं तातें यह कालदोषतें साधन ना
हीं सिद्ध होत हैं तातें यह कालादिकतें प्रतिबंध होत हैं त
नजो उत्तम करियें तो प्रत्यहं बुरी होइ जात है सो आगें
कहत हैं ॥ श्लोक ॥ उद्वेगः प्रतिबंधो वा भोगो वापि
जायते प्रतिबंधसेवनंतें प्रत्यगापूलस्पति ॥ १७ ॥ या
श्लोकमें श्रीआचार्यजी महाप्रभु सेवाफलमें निरूपण कि
ये हैं तामें तीन ३ प्रतिबंध कहे हैं उद्वेग प्रतिबंध वा
भोग अवश्य तु बाधक या भांति कहे हैं प्रथम उद्वेग मन
कोहोइ तब सेवामें मन न लगे प्रतिबंध होइ पाछें दू
सरी रीति करि सेवाको मन न होइ सो यातें विषयावेस
होइजाय तब प्रभु अप्रसन्न होइ सो या भांति प्रति
बंधतें तब भगवत्सेवामें न होइ तब पुष्टिमार्गीय
फलकी आसा काहेको करीये या मार्गमें तो भगव

इसेवाहीफलहैं सोइनभईतौ आगेंकहाफलहोइगो ॥ ४ ॥ श्लो
कः तस्यैवापि श्रीमदाचार्यचरणाश्रयणात्मना ॥ निवर्तते
निरासेन नमनो फलछिन्नः ॥ ५ ॥ याकोअर्थ नातेंयामा
र्गमेंसेवाफलहैं सोयहकालदोषमहानिश्चय तऊश्रीह
रिरायजीकहतहैं सो एसो मैसेवाविनाफलकी निरासे
सोनऊ एकमनमे भरोसाहैं जोश्रीवल्लभाचार्यजीके
मेरेचरणकमलकोआश्रयमनमेंकीयोहै भगवत्सेवा
करिरहितहूं तऊश्रीमहाप्रभुजीके चरणकेआश्रयतें
यहपुष्टिमार्गकेफलसबैंपरतछिहैं निश्चयसिद्धहो
इगो याविश्वासहै ॥ ५ ॥ इतिश्रीहरिरायजीकृत सम
र्पितसतांकारीके श्रीगोपेश्वरजीकृत संपूर्ण ॥ अथ
वऊपरकेह सर्वसाधनरहित तथा सेवाकरिरहित हो
तऊश्रीमहाप्रभुजीकेचरणआश्रयतें येफलहोइगो
सोफलकोनजातिहोइ सोआगेंकहतहैं जोआश्र
यतेंदैन्यतासरै सोफलरूपहै सोदैन्यताआगेंवर्ण
नकरतहैं ॥ श्लोक ॥ कदानंदात्मजः स्वेयस्वरूपालुर्भविक
रिष्यति ॥ प्रतिक्षयेवास्मद्दोषमनः शान्तमहेन्द्रियं
१ याकोअर्थ श्रीहरिरायजीविज्ञप्तकरतहैं जो नंदा
त्मजश्रीकृष्ण यहकहिनें हरिरायजीने पुत्रकहे तेसुख
ने नंदनाही महुपुष्टिमार्गमें नंदकुमाररूपहैं श्रीशुक
देवजीनें दसमहास्यके अध्यायमें कहे हैं नंदस्यात्मज
उत्पन्नेजातोल्हादोमहामनाः नंदरायकी आत्मानि
प्रगटे ॥ एसे श्रीकृष्णभावात्मक रासपुष्टिपूर्णपुरुषो
त्तमसोकों अपनेस्वकीयनिजभक्त जानि आपनीकृ
पादृष्टि करकबकरोगे तुमारी प्रतिज्ञा वरनकरन अस्मद
श्चितेमन इंद्रीसहित हैं सर्वशिथिलहोइगो श्री
गुसांईजी विज्ञप्तमें कहे हैं ॥ योऽकसीनादुरलीनाय त्वन्या
शनैवकिंकराः ॥ तद्दोषेण यमप्यासु कृपां योचरं ममः

सि.प. तातेमेरेनेत्रकेगोचरमोकोंवदनचंद्रकेदरसनदेहुगे
२८ १ श्लो० ॥ करुणानाशिधिःस्वीयनिधिसर्वाधिकःप्रभुःउ
पेक्षतेस्तुतःस्वीयानितिचिंतातुरंमनः ॥ २ ॥ व्याख्या ॥ हेश्री
दलतुमकैसेहो करुणाकेनिधिहो ॥ औरसर्वकेप्राणीमा
त्रकेस्मारकस्वगरेजातनकेप्रभुहो ॥ तामेंस्वीयजोतुमा
रेभक्तहैं तिनकेतोसर्वस्वनिधिहो ॥ ऐसेप्रभुस्वीयअप
नेभक्तकीउपेक्षाकोंकरतहो ॥ यहचिंतानित्यकरिकेंम
नतेआतुरताभयोहूं ॥ श्रीगुसांईजीविज्ञप्तिमेंकहेहैं हा
नाथजीचिंताधिस्वराजीवदललोचनः यथोचितंवि
धेहीतिप्रार्थनंतवकस्यमि ॥ हेनाथकमललोचनमैं
तुमसोंप्रार्थनाकहाकरूं तुमारीकृपातेजीवनहों सो
यहविप्रयोगतचिंतहैं ॥ तातेप्रार्थनामेंकहाकरूं तुम
सर्वज्ञहो सबजानतहो ॥ ३ श्लो० ॥ निजानंदनिमग्नस
मर्वेद्यपिविस्मृति ॥ भक्तार्थेभवतीर्णस्यकृपालोरू
चिनानमा ॥ ३ ॥ व्याख्या ॥ हेश्रीकृष्णतुमकैसेहो ॥ अ
पनेआनंदमेंरात्रिदिनमग्नरहतहो ॥ यहकहिकेंयहज
नायो ॥ सोऐसेमग्नरहतहोंजोयहभावसंसारादिकको
विस्मृतिहै ॥ तद्यपितऊआपनेभक्तनकेअर्थतुमप्र
लीरेहो ॥ प्रागट्यतातें ॥ औरतुमपरमकृपालहो
तुमारेभक्तजोसंसारमेंहैं ॥ तिनकोंअरुचिनाहि
करोगे ॥ रुचिहीकृपाकरिअंगीकारहीकरोगे ॥ सोश्री
गुसांईजीविज्ञप्तिमेंकहेहैं ॥ त्वदंगीकृतयोजीवेस्वाधि
कारायतः प्रभो ॥ अतस्त्वनविचार्याहो कृपांकुरुकृपानि
धे ॥ २ ॥ हेनाथतुमारोअंगीकृतजोजीवहै सोतुमारेअ
धिकारयोग्यहै सोइहालोकिकसंबंधतेतुमभूलेहो
अधिकारयोग्यनाहीहै ॥ तउतुमइनबातनकोंवि
चारमतिकरो कृपाईकरो ॥ काहेतेंतुमकृपानिधिहो
हमपरकृपाहीकरो ३ श्लो० ॥ केप्रार्थयेप्रसन्नेदीनो

विहायत्किंनपस्त [illegible]
साधनो॥ यस्‍ [illegible]
करैं हमतौनहैं तुम्ह [illegible]
है तुम बिना श्री कोइ [illegible]
सोई सर्वसाधन की [illegible]
है यहीभरो सो है साधन [illegible]
नै तुमारो श्री [illegible]
जो विवेक धैर्य [illegible]
वासर्वथा स्वरूप हरि [illegible]
नपाय हमको ना है [illegible]
॥ मन्नाथ नाथे [illegible]
सोनं वापि देहि [illegible]
श्री तुमको नाथ [illegible]
सर्वसाधन करि [illegible]
विरहाकुल हो [illegible]
हों श्रीर तुमारी सेवा [illegible]
तुमारी सेवा [illegible]
हमसा [illegible] पीडित [illegible]
राखि [illegible]
वित यथे [illegible]
रस्योन विना तुम्हारे [illegible]
नाथ के [illegible]
कहते है जो हमको [illegible]
कोव रावो ना [illegible]
गुना स्वकार [illegible]
पाधन करो [illegible]
ससार [illegible]
मुख्ह्री [illegible] हरसेनपरमेव [illegible]

.प. तातेमेरेनेत्रके गोचरमोकों वदनचंद्रकंदरसनदेहुगे
६ १ श्लो० करुणानाशिधिः स्वीयनिधिः सर्वाधिकः प्रभुः उ
पेक्षन्ते नु तः स्वीयानि तिष्ठिंनानुरं मन ॥ २ ॥ या० टी० ॥ हे श्री
कृष्ण तुम कैसे हो करुणाके निधि हो और सबके प्राणीमा
त्रके स्मारक स्वगरंजगतके प्रभु हो तामें स्वीय जो तुमा
रे भक्त हैं तिनके तो सर्वस्व निधि हो ऐसे प्रभु स्वीयअप
नेभक्तकी उपेक्षा कोंकरत हो यह चिंता नित्यकरिकें म
नतें आतुरता भयो हुं ॥ श्रीगुसांईजी विज्ञप्तिमें कहे हैं हा
नाथजी चिनाधि सुरोजी वृद्धल लोचनः यथा चिंतं वि
धेहीति प्रार्थनं तं वक्ष्यामि हे नाथ कमललोचन मैं
तुमसों प्रार्थना करयकरुं तुमारी कृपा ते जीवन हों सो
यह विप्रयोगवश्चित हैं ताते प्रार्थना मैं कहा करुं तुम
सर्वज्ञ हो सब जानत हो ॥ ३ ॥ श्लोक ॥ निजानंदनिमग्नस्य
मवेद्यद्यपि विस्मृतिः भक्तार्थे भवती गोप कृपालो रु
चिनानमा ॥ ४ ॥ या० टीका ॥ हे श्रीकृष्ण तुम कैसे हो अ
पने आनंदमें रात्रिदिन मग्न रहत हो यह कहिके यह ज
नाये सो ऐसे मग्न रहत हैं जो यह भाव संसारादिककी
विस्मृति है तद्यपि उ आपने भक्तनके अर्थ तुम श्रु
वनारल्ली गेहें प्रागल्भ्य ताते और तुम परम कृपालु हो
तातें तुमारे भक्त जो संसारमें हैं तिनको अरुचि नाहीं
करोगे ॥ ५ ॥ विशेष कृपा करि अंगीकार ही करोगे सो श्री
गुसांईजी विज्ञप्तिमें कहे हैं ॥ त्वदंगीकृतयो जीवे स्वाधि
कारायतः प्रभो अनंत नविचारा हो कृपा कुरु कृपानि
धे ॥ १ ॥ हे नाथ तुमारो अंगीकृत जो जीव है सो तुमारे अ
धिकार्योग्यपहे सो इहालौकिक संबंध ते तुम भूले हो
अधिकार्योग्यपनाहीं है तऊ तुम इनके दोषनको वि
चार मति करो कृपाई करो काहेते तुम कृपानिधि हो
हमपर कृपाही करो ॥ ३ ॥ श्लो० ॥ कैप्रार्थ्ये पुत्तेदीनो

यनिजनाथकों।। देहि कटाक्षं।। नित्यं विमुक्ता सर्व
बने।।पर्याको अर्थ।। हे नाथ हम तुमतें कहा प्रार्थना
हम दीन हैं तुमकों हम अपने नाथ करि प्रतीति जानत
तुम बिना और कोई हम नाहीं जानत हैं। और हमके
हूं सर्वसाधनकरि सून्य रहित हैं।।तातें नित्य तुमारे सरण
यही मेरो सो हीं साधन है तें नो कछु प्रार्थना करतें ना
तें तुमारो याश्रय करि तुमारे सरन हैं।।सो श्री आचार्य
जी विवेकधैर्याश्रय ग्रंथमें कहे हैं।। सर्वकें विषयसु सर्वथा
वा सर्वथा सरणं हरिः।। इत्यादि वचनकों विचारि।। और
पाय हमकों नाहीं सकत हैं।। तातें तुमारी सरणागति है।। कैं जि
।। मन्नाथ नाथ येन तें भवाम्निविरहाकुलाः।। इहसंनत्य
वनंवापि देहि वेणुध्य स्तुति।। पयाको अर्थ।। हे श्री कृष्ण
हे तुमारे नाथ हो।। और मेरे कैं सारहीं।। महा दीन तुम्हें
सर्वसाधनकरि रहित हैं।। सब जो यह संसाराहिकमें महा
विरहाकुल हों का हेतें।। यह संसाराहिकका यमें तो तत्पर
है।। और तुमारी सेवादि भगवद्धर्मका रिकें रहित हैं।। श्री
तुमारी सेवादि भगवद्धर्मकूं पैरें रहित हैं।। ताका ये
हम संसाराग्नि पीडित व्याकुल हैं।। सो श्री गुसांई जी वि
न श्रीमव्हदै।। त्वद्दर्शन विहीनस्य त्वदीयस्य तु नी
विन अर्थ मिलन थाना यह भोगायानवें वय।। तुमा
दर्शन बिना तुमारे तदीयजी वेदें।। सो अर्थ काहेतें है
नाथ के हैं भो।। उनके भागपरवाह हैं।। तातें श्री हरिराइ
कूं इतनई जो हमको दरसन दे हु।। और परम श्री अं
कौ करावो।। तामें यह जगत जो सेवा कृ करावो और
तु नाद करि शब्द करि हमारे हृदयमें अंधरा सतत
पावन करो।। तब हमको सुख होइ महा हेतें।। वृरहा
संसारा ग्नि विरह ग्नि आवल है।। तातें केवल दर्शन हीं
प्रम दरिहाइ।। दरसन परसनवें गुनानादकें सुरन

अ.प. यसैंयाभांतिसुखरेहुं।भा।स्लो।का।निजाचार्यश्रनानस्मान्
१६ यदिहस:प्रहास्यति।गमिष्यतिरहेनाथप्रतिज्ञैवत
हानवा।ईया।कौ।श्च।श्री।श्च वश्रीहरिरायजीकहतहैंजो
आपनेश्रीवल्लभाचार्यजीकेआश्रयपुष्टिमारगीय
नदीयहैं तिनकोहेनाथतुमछोडतहोनाही निश्चय
प्रसन्नहीरहतहो।तिनकीप्रसंसाहीकरिनिश्चेआप
नेजाननहो।जद्यपिवहजीवभगवदनामहूनाहीले
तकछुधर्मनाहीहैं तउतुमआपनी: [illegible] कीएवा
कोंअंगीकारहीकरतहो।तातेंहेनाथहमहूंआपनेश्री
वल्लभाचार्यजीकेआश्रितहैं।एसेंवडपरप्रसन्नहो
उगे।नाथहमकोखोटेजानिदोषदेखिकेंछोडोगेतोतुमा
रीप्रतिज्ञाभंगहोइगी।निश्चय।तातेंहूपाकरौ।क्याहेतें
तुमश्रीआचार्यजीतेंप्रतिज्ञाकरीहै।जिनकोब्रह्मसंबं
धकरावोगे तिनकेसवदोषदूरिहोइगे।तिनकोमें
अंगीकारकरतहों।सोसिद्धांतरहस्यमेंकहेहैं।ब्रह्मसंबं
धकरणात्सर्वेषांदेहजीवयो:।सर्वदोषनिवृत्तिर्हिदो
षा:पंचविधा:स्मृता:।१।इत्यादिवचनतेतुमहमारेदोष
देखोगेतो।तुमारीप्रतिज्ञाजायगी।तातेंआपनीप्रति
ज्ञाकेलीएंश्रीआचार्यजीमहाप्रभूजीकेआश्रितजो
निहमपरहूपाकरो।६।श्लो।का।वयंतुसर्वथादुष्टास्व
धर्मविमुखाश्चाति:।त्वमस्मदीयान्साधर्मान्गृहा
णागुणपूरित:।७।या।कौ।श्च।श्री।श्चवश्रीहरिरायजीके
हतहै।हमकेसेहै।वयजोवालापनतेंदुष्टहीआच
णकीएहैं।आपनेपुष्टिमारगीयधर्मतेरहितहैं।कव
हूंपुष्टिमार्गकीरीतितेंभावसहितसेवानाहीकरीहै
तातेंआपनेस्वधर्मतेंहमविमुखहैं।औरहेनाथतुमके
सेहो।अस्मदीयआपनेजनदासकेधर्मकीचाहनाआ
हीकरोगे।काहेतें तुमसर्वगुणाकरिकेंपूर्णहो।तातेंतु

ताकी चाहना न करो। कृपा करि श्रीगुन हम सारिखे पर
निश्चय कृपा प्रश्रय चलन करोगे। सो विज्ञप्ति में श्रीगु
साईंजी कहे हैं। श्लोक॥ बलिष्ठा अपि मद्दोषा त्वत्कृपा
ये तु दुर्बलाः। तस्य ईश्वर धर्मत्वात् दोषाणां जीव धर्म
तः॥१॥ यद्यपि हमारे दोष बहुत बलिष्ठ हैं तऊ तुम्हारी
कृपा के आगे दुर्बल हैं। काहे तें तुम्हारी कृपा है सो ईश्व
रता धर्म लीये है यह दोस जीव धर्म तें हैं। सो ईश्वर धर्म के
आगे जीव तुच्छ है। तातें कृपा करो॥१॥ श्लोक॥ कृपालो पा
लनीयानां गुणदोषविचारणा। न कार्या स्वीयकरण
विहितं वरणाद्यदि। स्वीया को अर्थ॥ हे नाथ तुम कैसे हो
परम कृपालु हो पालन करो। हमारे गुण दोष को विचा
र तुम मति करो। काहे तें हम तुम्हारी हैं। श्री आचार्यजी
द्वारा हमारो धर्म तुमने भयो। तातें हम ऊपर आपने
कार्य के लीये करि जो सेवा रूप ललस्त्री को धर्म है सो का
र्य मो सो न बनि आयो। उलटो अपराध अनेक करे। पूर्व तो
तुम हित के लीये हमारो वरण कीयो। सो वह हित कार्य मो
सों बनन नहीं। सो तुम अपनी ओर मति देखो। आपुन वरन
नानि कृपा करो। सो विज्ञप्ति में श्रीगुसाईंजी कहे हैं। त्व
द्गीकृतयो जीवे स्वाधिकारायतः प्रभो। त्वन्नलेन वि
चारः स्यात् कृपा कुरु कृपानिधे॥२॥ तुम्हारे अंगीकृत जो जी
व हैं सो तुम्हारे अधिकार योग्य हैं। अथवा दोस करि अ
योग्य हैं तऊ तुम अपने दोष नि विचारो। काहे तें तुम
कृपा के निधि समुद्र हो। सो कृपा करो॥३॥ श्लोक॥ अ
ज्ञानोपि दूरदोषगणान्नायां मम प्रभो। क्षमस्वेति
गोपीश त्वं तो विस्मर सर्वथा॥ स्त्रीया को अर्थ॥ हे नाथ तु
म कैसे हो। तुम काहू बात में हारो नाहीं। तुम कोऊ कबहू
करो

५० ननीकरोगेतोश्रमहीतुमकोहोइगो॥ अपारदोषहैंमेरेना
२० नहेगोपीजनयहसंबंधनकीयहजनारो॥ जोतुमगोपीके
ईशहो॥ विनासाधनगोपीजनपरकृपाकरीतेसेंइमारेउ
परकृपाकरो सर्वथाहमारेदोषकोविसरिजाउ॥ श्रीगुसां
ईजीविज्ञप्तमेंकहेहैं॥ अपराधेपिगणानानेवकार्येद
नाधिका॥ सहजस्वयंभावेनस्वस्यछुद्रतयाचनार्हे
वृजकेअधिपतिराजा निःसाधनकेफलात्मकहमा
रेहुअपराधकीगणनाकरनोतुमेउचितनाहीहैक्यो
हेतेतुमारीसहजमेंईश्वरताआगेदोषहमारेछुद्रहै
सोतुमकहांदेखिवोगे॥ ताते कृपाकरो॥९॥ श्लो
हीनेषुगुणहीनेषुतावकीनेषुमत्सभो॥ पराधीनेषु
करुणाकरणीयात्वयावया॥१०॥ या हेनाथमे
अत्यंतहीनहौंदुखीहौं॥ काहेतें यहमायाकेगुणसे
सांसारिककार्यमेंलीनहौं॥ एसोदोषकरिहीनहौं
तउमेतुमारीहौं तुममेरेप्रभुहौ॥ मेंतोअपराधिनी
हौं मायाके एसोहुं॥ ताते ऊपरसर्वथाहीकरुणाक
रियें सो विज्ञप्तिमेंश्रीगुसांईजीकहेहैं॥ वारत्वमो
धीनताय नकरोपिमपिसुदुरां॥ तरत्यनुचिंतयस्व
तवाहीयास्फुरीकृत:॥१॥ हेसुंदर श्रीवल्लभमेतोका
लकेइत्यादिमायाकेआधीनहौं॥ तउतुमारीहौं
आपनीत्वदीयतानिष्कृपाकरो॥१०॥ श्लो॥ निसाध
नामनोदीनांगतधनाबुदुःखिता॥ निजाचार्यप्रि
ताशोक: शोक क्षोभमोहभयाकुला॥११॥ या श्र
श्रीहरिराइजीकहत हैं॥ जोमेएसोहीनहौं निसा
धनहौं मेरेमेंकोईसाधननाहीहै॥ औरभावरूपीधन
हुगयोहै॥ ताकरिअतिदीनहौं॥ जाकोधनजाय सोदी
नहोइ यहलोकमेंप्रसिद्धिहैं और बहुतदुखी
हौं औरआपनेश्रीआचार्यजीकेआश्रितहौं श्री

रसोकलोभमोहभयमायाकेगु॥नाकरिकैंव्याकु
लहौं।कछुअपनेधर्मकीसुधिनाहीहै।औरऐसेइ
निसाधनजीवपरस्वरूपाकरनहैं॥सोआगेंकहतहैं
११॥श्लोक॥भवंतितेकृपापात्रंमहीदारस्यानिधेप्रय
छकरुणानेभ्योदत्तंपात्रेलयंभवेनृ॥१२॥याकोअर्थऊपर
कहेएसोहोइतोंप्रभुकेकृपापात्रयोग्यहोइ॥निःसाध
नहोइमनतेधनकरिहीनहोइधनगयेतेंदीननादुख
होइअपनेश्रीवल्लभाचार्यजीकेआश्रितहोइ॥सोक
लोभमोहसंगकोघोरकालभयतेंव्याकुलभये॥तव
प्रभुकृपाकरीतातेंश्रीहरिरायजीकहतहैं॥जोमेंऊप
रसोंहुतुमारेकृपापात्रहो॥तुमसमहोदारहो॥इयाकेनिधि
हो॥तातेंदयाकरो॥काहेतें॥अपनीइछालेकरुणाक
रिलनदीयेहो॥सोदीनतारूपीपात्रतुमारेहीरोतेभ
योहै॥सोदिनदिनलघहोनहै॥दिनदिनदीनतावढत
है॥तातेंवेगिहीकृपाकरो॥१२॥श्लोक॥संसारदावद
ग्धानांजीमूतजलकांक्षिणां॥नीलजलदानेन
जलदानेविनासुखं॥१३॥याकोअर्थ॥अवजोविल
दृष्टांतकहतहैं॥वनमेंदावानलअग्नितेंवनसगरे
जीवृक्षादिदग्धजरतहोइ॥तिनकेसीतलकरिवेको
एकमेघजलवरखेयहीउपायहै॥औरउपाइवासम
यकोईनाहीहै॥जद्यपिजलतेंसमुद्रनदीअनेकभरी
हैं परंतुवनकेदावानलकोंमेघहीजलदानकरिति
नकोंरे॥नवहोइ॥तैसेहीयहमायासंबंधीदेहसंबं
धीहै॥अहंताममतारूपयहदावानलमेंजोदग्धहै
जरतहैं॥तिनकोनीलमेघरूपश्रीगोवर्द्धननाथजी
अपनेआनंदरूपअमृतजलकोदानकरैतौंकृपा
स्वकेसुख॥औरउ

पाइकोईना

१.५० तनोकरोगेतोश्रमहीतुमकोहोडुगो। अपारदोषहैंमेरेतो
२० तेहैगोपीजस्यहसंबोधनकरियहजनारो। जोतुमगोपीके
ईशहो। विनासाधनगोपीजनपरकृपाकरीतैसेंहमारेउ
परकृपाकरो सर्वथाहमारेदोषको विसरिजाउ। श्रीगुसां
ईजीविज्ञप्तिमेंकहेहैं अपराधेपिगणनानैवकार्येह
नाधिक। सहजस्वयंभावेनस्वस्यकुरुतयाचनां॥२॥इ
ब्रजकेअधिपतिराजा निःसाधनकेफलात्मकहमा
रेहूं अपराधकीगणना करनो तुमेउचितनाहींहैंका
हेते तुमारीसहजमेंईश्वरताआगेदोषहमारेकहहैं
सोतुमकहारोषविचारोगे। तातेकृपाकरो॥२॥श्लो॥
सीनेषुगुणालीनेषुतावकीनेषुमन्मभोपराधीनेषु
करुणाकरणीयान्नमपवेया॥१०॥या॥ हेनाथमे
[illegible] होदुखीहों काहेतेयहमायाकेगुणसे
साराह्निककार्यमेंलीनहों। एसोदोषकरिदीनहों
तऊमेंतुमारीहों तुममेरेप्रभुहो। मेंतोअपराधिनी
हों मायाके एसीहूं तातेऊपरसर्वथाहीकरुणाकृ
रियें सोविज्ञप्तिमेंश्रीगुसांईजीकहेहैं। बालकमो
धीनताय नकरोपिमपिसुदूरं तरूप्यनु विनेयस्य
तुवादीयो सपुरीहूनू॥१॥ हेसुंदर श्रीवल्लभनंदका
लकमेंइत्यादिमायाकेआधीनहों तऊतुमारीहो
आपनोत्वदीयजानिकृपाकरो॥१०॥श्लो॥ निसाध
नोमनोदीनोगतधनाबुदुःखिता। निजाचार्यो वि
ताशोकःशोकक्षोभमोहभयाकुला॥११॥या॥ श्र
श्रीहरिराइजीकहतहैं जोमेंएसोदीनहों निसा
धनहों मेरेमेंकोईसाधननाहींहै औरभावरूपीधन
हुतोसोहू तातेअतिदीनहों जाकोधनजाय सोदी
नहोइ यहलोकमेंप्रसिद्धिहैं और बहुतदुखी
हों औरआपनेश्रीआचार्यजीकेआश्रितहों श्री

रसोकलोभमोहभयमायाकेगु॥ नाकरिवेंयाकु
लहीं॥ कछु अपने धर्मकी सुधि नाहीं है॥ और असे इ
निसाधनजीवपरकृपाकरनहो॥ सो आगें कहत हैं
११श्लोक॥ भवंतितेलु पापात्रेमहोदार दयानिधे॥ अय
थु करुणानेभ्योहंत पात्रेलयंभवेन्॥ १॥ याको अर्थ ऊपर
कहे एसो होइ नो प्रभुके कृपापात्र योग्य होइ॥ निःसाध
न होइ मनते धनकरिहीन होइ धनगयेतें दीनता दुख
होइ अपने श्रीवल्लभाचार्यजीके आश्रित होइ॥ सो क
लोभमोहसंगको और कालभयतें व्याकुल भये॥ तव
प्रभुकृपाकरि॥ तातें श्रीहरिरायजी कहत हैं॥ जो मेंऊए
सोहू तुमारेकृपापात्र हो॥ तुमम महोदार है॥ दयाके निधि
हो॥ तातें दयाकरो॥ कारतें॥ अपनी इच्छातें करुणाक
रिहानदीयो है॥ सो दीनतारूपी पात्र तुमारे ही रेते भ
यो है॥ सो दिनदिन रुपहोत सैं॥ दिनदिन हीनतावढ़त
हैं॥ तातें वेगिही कृपाकरो॥ १॥ श्लोक॥ संसारदावद
ग्धानां जीमूतजलकांक्ष्य॥ न नीलजलदानंत
जलदान विनासुखं॥ १॥ याको अर्थ॥ अब जो कि
दृष्टांत कहत हैं॥ वनमें दावानल अग्नितें वनसगरे
जीवपक्षी आदि दग्धजरन होइ॥ तिनके सीतल करिवेको
एक मेघजलवरखे यही उपाय है॥ और उपाइ वासम
य कोई नाहीं है॥ जद्यपि जलतें समुद्र नदी अनेक भरी
हैं परंतु वनके दावानलको मेघही जल देनवारे ति
नके रीत वहोइ॥ तैसेंही यह मायासंवंधी देहसंवं
धी है॥ अहंता ममतारूप यह दावानल में जो दग्ध हो
जरत हैं॥ तिनको नीलमेघरूप श्रीगोवर्द्धननाथजी
अपने आनंदरूप अनंत जलको दानकेरें वडीकृपा
करें॥ तव ही यह पुष्टिमारगीय वैष्णवको सुख॥ और उ
पाइ कोई नाहीं है॥ १॥ अब और हू कहत हैं॥ श्लोक॥ पे

प. मांगनी हूंना सर्वोत्वत्सेवा पै ग्रहस्थिता ॥ तरा व भावना
११ माय भवनी करवे कि सु ॥ १४ ॥ या श्लोक में श्री हरिराइ
जी याप सेवक की रहे हैं ॥ तिनकी प्रार्थना प्रभुन सो करि के
जी कर करावत हैं ॥ हे नाथ में अपने अंगीकृत सेवक बहु
त ही की रहे हैं ॥ सो ग्रहस्त सेवक बहुत ही की रहे हैं ॥ काहे ते
ग्रहस्ताश्रम में सेवा बनि नाहीं आवत भली ॥ या श्रम ते
में यह जानी जो भलो मोसों सेवा नाहीं बनत तो ग्रहस्त
को सेवक करि सेवा रीति बताई ॥ ये मेरे सेवक भली
तुमारी सेवा करेंगे तो हमको सुख होइगो ॥ यह अ
पनी सहाय के लिये ग्रहस्त अपने अंगीकृत की रहे हैं
सो वे ग्रहस्थ भगवान की सेवा ते नास भये ॥ ऐसे उलटी
हू न करत हैं ॥ सो में कहा करों ॥ तथा तुम मोकों अंगीकृत
करि अपनी सेवा के अर्थ ग्रहस्थाश्रम में हमको स्थिति
की रहे हैं ॥ सो हम तो सेवा तुमारी छोडि लौकिक कर्य उल
टे चलत हैं ॥ ता बात को तुम कहा करों ॥ १४ ॥ लो ॥ वह
मुखाः प्रभुर्वै नित्य सर्वेश्वर्य सुखा ॥ सहाय नाभ मादेव
नहा तुम वह मुख है ॥ १५ ॥ या श्लोक में एक जो जीव सुभा
वते दुख वह सुख है ॥ दूसरे वह सुख दुख के संगाते यगरेजी
व वह सुख भरे ॥ सो में भ्रम करि अपनी सहाय ग्रहस्त वे
सेवक को जान्यो ॥ जो में अंगीकृत की रहे हैं ॥ सो ये मोको स
हाइ होइगे ॥ ता से भ्रम सो सेवक की रहे हैं ॥ सो वे उलटे च
लत हैं ॥ भगवद् सेवा नाहीं करत तरकत न के छोडिवे
को उत्साह में वे संसार लैके वे से छुडायो जाय ॥ १५ ॥ लो
॥ सहाय भ्रम मुत्पाद्य व चयं ति यथा जनं ॥ मार्गे स्थिते
तथा नाथ वे चित्ते है यह स्थिति ॥ १६ ॥ या श्लोक में सेवक
करि अपनी सहाय अर्थ कीयो ॥ भ्रम करि के जो मे उलटो
चयं ति जो में ठग्यो ठग्यो हूं ॥ हे नाथ यह तुमारो मार्ग पुष्टि
में स्थिति होइ के ऐसो में स्थिति होइवे ॥ ऐसो में तिनको

एग्रहस्तवैसवनैंमोकोठगो।।एकनोमैंअपनेकीफिकरक
रतहों।लोऊसगरेइनहूकेऊद्धारकीफिकरमोहकोंवरनी
पडी।याभांतिग्रहस्थजनेनेतथाग्रहस्ताश्रमनैठगा
योहों।२६।श्लोक।। यथांधिकूपपतितंमंडूकादुखरै
जैनं।भयंयंतितथामुग्धोद्वेषोपिग्रहस्थिता।२७
याकोअर्थ।। लौकिकदृष्टांतनेंकहतहैं।श्रीहरिराइ
जीजोयाभांतिमोकोंदुखभयोहैं।जैसेंअंधकूपमेंमेंडुक
पर्योहोय।सोदुःखतेंबोलैं।सोसबकोंभयउपजावै
तैसैंग्रहस्थमेंअनेकअनेकलोगतिनकेदुर्वचनसु
निकेंवाकोंमहाभयहोतहै।ग्रहस्थाश्रममेंस्थितिएसे
देहसंबंधीतिनकेंअनेकभांतिकेवचननताकोंसुनि
कैंमेरेमनमेंव्यथाहोतहै।यहकहियहजनाए
जोमैंएग्रहस्थवैसवमेरीविडाईकरतहैं।सोदुःखमे
रेमनमेंहोतहैं मैंघरकेदेहसंबंधीअनेकभांतिनिंद्या
करतहैं. सोदुखमेरेमनमेंहोतहैं।२७।श्लोक।। क्रिय
न्पर्यंतमेंवेहिमदुपेक्षांकरिष्यति।न्यूतोवादोषसाहि
त्यादिमुखोहंदयालुनो।२८।याकोअर्थ।। तातेंहेनाथए
सोदुखीमेंहूं।सोमेरीउपेक्षाकदापर्यंतकरोगे।तथामो
कोंदोषसहितजानिकेंत्यागकरोगे।परंतुमैंयहमन
मेंजानतहों।जोतुमदयालहो।तातेंत्यागतोकबहूंन
करोगे। श्रीगुसांईजीविज्ञप्तिमेंकहेहैं।चित्तेनदुष्टोवे
चसापिदुष्टःकायेनदुष्टक्रियायदुष्टः। ज्ञानेनदुष्टोवै
वैसौपिभजनेनदुष्टोममापराधःस्वनिधाविचार्ये चि
त्तहूदुष्टहों।तुमारेमेंनाहीलागत।बानीहूमिथ्याभा
सनतेंदुष्टहों।कायाहूतुमारीसेवानाहींकरतताते दु
ष्टहैं।क्रियाहूमिथ्यालौकिककरियतहों।ज्ञानहूदुष्ट

रोदोषअपराधव

१८ श्लो॰ त्यक्तः कुत्र गमिष्यामि न मेत्ति शरणं मम: नाव
मारोप्य दीनं खं मध्ये धास्यन मन्ये नरथया श्लो॰ अवश्री
हरिरायजी कहत हैं हे नाथ कदाचित तुम ईश्वर हो कर्तुम
कर्तुं अन्यथा कर्तुं सर्व सामर्थ्य हो सो यह जानो जो मेरे सरन
लायक यह नाहीं है यह विचारि के त्याग करो तो हम क
हां जाय हमारे और कहूं तुम बिना ठिकानो नाहीं है तु
मारी सरण बिना और कहूं कों नाहीं जानत तब मेरी
कहा दिसा होइगी जैसे नाव में बैठाय और मध्य धारा में
नाव कूं छोडि देय तो उह कहा करे तहां खेवट ही सहाय
होय तो पार लागे और उपाइ नाही तैसे ही हम तुमारे पुष्टि
मार्ग रूपी नाव में बैठे हैं अब तुमारे मन में आवे तैसी करो
१९ श्लो॰ निजाचार्य कुले जन्म विमर्थं विहितं मम:
विहितं चेन्नापि सदा दोषपिनेहपकुसरण्याय श्लो॰ अथ
न ले तुम मेरो त्याग करोगे तो तुम सों हमारी कहा कछु व
लत है परन्तु यह मैं कहत हैं जो निज हमारे श्री वृहद
आचार्य जी के कुल में हमारो जन्म भयो सो कहा अर्थ है
तुमने हमारो जन्म श्री आचार्य जी के वंस में दीयो है सो
कहा प्रथम नाहीं जानत हते अब छोडत हो तातें यह
तामो को बडी है जो तुम कहा जो तुम कहा करोगे सो
जानी नाहीं जात मो पासों में तो सदा दोष करिके पीडत
भयो हों तातें कृपा ही करो यह निश्चय निर्धार है तुमारी कृ
पा ही ते हमारे सर्व कार्य सिद्ध होइगो २० श्लो॰ असत्संग: स
र्वथा दुःखे सत्संग सहितोप्यहं यथा रापि पणित्यकः कादि
शोको मगादने २१ श्लो॰ अथ हे नाथ असत्संग मो के
दसो दिसा तें घेरे हैं यह बडो दुख है मो कों और कहूं कुसंग
तें बुद्धि बिगडै तो सर्वे और तें मोको दुःसंग वेष्टन है तातें
सुं हूं सत्बुद्धि नास भई है और सत्संग तें सर्व धर्म को ताय
होइ सो सत्संग मो तें बहुत दूर है तातें मेरी कली दु

संगके मध्यमें बैठो हूं। सो मेरी कहा दिसा है जैसें अरन्य
नमें अकेलो छोडि दे। तहां मृगादि पसु पेली को ई नाही
तो उन वो न दिसा को जाय। तथा एकले मृगा को महागंभीर
वनमें छोडें सो व्याकुल होय। अनेक सिंघकी हुसो दिसा
गरज सुनि उह कोन दिसा को जाउ। तैसेई मोको भगव
दीय सत्संगते छोडे है दुःसंगरूपो दिसा है। सो मैं कोन
दिसा को जाउं सो उपाइ ही सूझत नाही॥२१॥ अब और हू
कहत है लौकिक दृष्टांत॥ श्लोक॥ जातपक्षाः खगा
स्वीयजननी च त्यजंति हि। यथा तथा करालेस्मिन्
काले हं भगवज्जनैः॥२२॥ याको अर्थ मेरी कहा अवस्था है
जैसें खग जो पक्षी है ताके बचा को जब पंख होइ तब वह पु
त्र अपनी जननी जो मा ताको तजिकें अनेक बनमें उडि जा
त है तैसेई हमारे पास भगवदीय कृपावान करते। सो यह का
लमहा कराल रूप प्रतिबंधक सोई पंख भयो। ताकरि भगव
दीय जन मोको छोडि गये। सो मैं कहा करूं॥ श्लोक॥ चिंता
पारावारपतितस्यात्रैकचक्रस्य। एतज्जनवडवाग्नि
शरणं वल्लभाचार्याः॥२३॥ याको अर्थ भगवदीय संग
विना मेरे हृदयमें ऐसी चिंता है जाको पारावार नाही
चिंतारूप समुद्रमें मग्न हों॥ ताको दृष्टांत कहत हैं। तै
से कोई महागंभीर पानीके समुद्रमें मग्न भयो परयो
होय। ताको एक वडवाग्नि ही सहाय भूत हैं। और को
ई नाही। एक घरी क्षणमें सगरो पानी सोखलेय। तैसेंही
यह संसाररूप भावसागरमें परयो हों। यामें एक श्रीव
ल्लभाचार्यजी विसरण हैं। ऐसें उपाइ हैं महाप्रभु अ
लौकिक अग्निरूप हैं। सो एक क्षणमें सगरी चिंता
संसार दुःख सब सोक सोखि लेयगे। यह उपाइ है सो एक
क्षणमें सगरी निपायहै॥ श्लोक॥
हाय सोहा प्रियाभक्त॥ हा गोपि

सि.प. यस्वकेराणमो ॥ ४ ॥ यांकोश्रयोकपरकहेयाभांतिश्रीहरि
३ राइजीदैन्यताकरतविप्रयोगात्मकग्रिहइयमैंप्रगटभई
सोअत्यंतविरहसोंदेहानुसंधानभूलिकेबोले हालस्तु
महीगतिहैं। फलात्मकनामकहे १ हानंदमनुनंदरायके
पुत्रजेसेंनंदरायहूमेंपाले तेसेंतुमहूपालो यहदूसरोना
मकुमारिकाकेभावतेऊपर हाब्रह्मकहे सोश्रुतिरूपा
केभावते २ पीछेकहे हायसोदाजीकेप्राणप्रियपुत्र
यहश्रीयमुनाजीकेभावते ३ पाछेंकहे हा गोपीजनके
प्राणआधारयहमुख्यश्रीस्वामिनीजीकेभावते ४
चारोनामलेकहे। ऐसेप्रभुअपनेकरतविप्रयोगास
मुद्रमेंहंमपरेहें सोकाढिलेहु याभांतिकहे ॥ ४ ॥ इ
ति श्रीहरिराइजीकृतसिक्षापत्रचतुर्विंशताकी टी
श्रीगोपेश्वरजीकृत संपूर्णा ॥ २४ ॥ अबऊपरदैन्यता
करिदैन्यतेंविप्रयोगप्रगटहोइ एसकोअनुभवक
रें सोयहसर्वभगवद्धर्मसवसिद्धहोइ सोबुद्धिकेन
प्रकाशहोइ सोआगेसिक्षापत्रमेंकहतहें स्लो० १ बुद्धि
नासक कालोयं सर्वेषां समुपागतः। अतो हि सर्वथा
गोप्यं बुद्धिरत्नं सुबुद्धिभिः ॥ १ ॥ यास्लोकमेंश्रीहरि
राइजीकहतहें जोयहकलिकालमेंवर्तमानहे सो
सबकीबुद्धिकोनासभयोहें काहेते कलियुगमेंवि
चारजोआरधर्मकोलेहुगो ताजीवभ्रष्टनहोइगो आ
नेकधर्ममेंएकधर्मनभयेतोकहाबिगडतहे तातेंबु
द्धिहरिलीयो बुद्धिनासभयेतेसर्वेसुधर्मबुद्धितेंकरि
ये सोनोकातेंहरिलीयो तबसुंदरसारेधर्मनास
भये कुबुद्धितेंविपरीतआचरणकरें तातेंश्रीहरि
राइजीपुष्टिमार्गीयवैष्णवसोंकहतहें जोतुमसाव
धानहोइरहियो यहकालसर्वबुद्धिहरनकोआयोहे
तातेसुबुद्धिनोवैष्णवहें सोअपनीबुद्धिरत्नकोबेटी

संधरिइतननेरा।खियें।काहसौंनजनताईयेतोरत्नरहैं
नाहीतोचोरलेजाय।तैसेंहीजोआपनीवेसबसुंदर
बुद्धिरूपाइकेंरत्नकरिराखैगे।तिनहीकीरहेगी।१।सो
कसत्संगरत्नस्मरणंतारणंगतिसाधनं।तदाभावे
कृतिसर्वोप्यतीवपथ्यमेनिहिाय।याकोअर्थ।अबश्रीह
रिराइजीबुद्धिरत्नकोंविशेषनकरतहैं।सदापुष्टिमा
रगीयवैष्णवकेसत्संगमेंरहें।औरअपनेमनमेंध्यान
करिश्रीठाकुरकेस्वरूपकोस्मरणकरें।औरश्रीठाकुरके
सरणकीभावनासदामनमेंराखें।अवश्यश्रीठाकुर
श्रयमेंसरणभावहै।सोसरणकीभावनाकरें।काहेतें
भावविनाजोक्रियाकरेंसोव्यर्थहै।तैसेंराखेंसेंहोमें
ताकोबहाफलतैसेंईभावविनाजोकरें।सोसबव्यर्थही
हैश्लोक।अत्रएकोकमाचार्यैस्वकीयकरुणात्सुभि:
बुद्धिप्रेरककृष्णस्यपादपद्मप्रसीदतु।१।याकोअर्थन
होकोईवहैजोयहबुद्धिरत्नकोंप्रकारतुमहीकहतहो
वैनहींसुनेहो।तदांश्रीहरिराइजीकहतहैं।जोश्रीआचा
ऐसेजीमहाप्रभुश्रीमुखतेंकहेहैं।जोबुद्धिप्रेरककृष्णस्य
पादपद्मप्रसीदतु।जोबुद्धिप्रेरककृष्णस्यपादपद्मप्रसी
दतुजोबुद्धिप्रेरकश्रीकृष्णहैं।तिनकेचरणारविंद
प्रसन्नकीनातेंसुंदरबुद्धिहोतहैं।तातेंमनवचनन
ऐकरिश्रीकृष्णकोसरणजोकोईदेगो।तिनकेचरण
रविंदकीप्रसन्नकीनातेंसुंदरबुद्धिहोतहै।तातेंमन
वचनकायेकरिश्रीकृष्णकीसरणजोकोईहोगो।तिन
चरणारविंदकीप्रसन्नकीनातेंसुंदरबुद्धिहोतहै
तैंमनवचनकायेकरिश्रीकृष्णकीजो ... णनकोइ
हैरी। ... ॥२॥
जो।तिनकीसुंदरबुद्धिहोइगी।
उपकारोपिग्रायत्रा।ध्यानहेतुरयंमत।
णयुक्तमजोनंप्रतिमोदन:।छ।याको

हरिरायजी कहत हैं ॥ जो गायत्री ब्राह्मण के बालक को देत
हैं ॥ सो कउ उपकार प्रभु को है काहे तें गायत्री उपदेस तें वेद के
कर्म में योग्यता होय ॥ तिसमें वैस्नव की बुद्धि निर्मल होय सो
ऊ प्रभु को उपकार है ॥ काहे तें बुद्धि निर्मल होइ तो श्री ठा
कुरजी को ध्यान होय ॥ सोई गीता में श्रीभगवान अर्जुन प्र
ति कहत हैं ॥ बुद्धियोग के अध्याय में सो आगे कहत हैं श्लो
क ॥ ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयांति ते ॥ बुद्धि स्थैर्य
हू ऐसो ही है ॥ तिन संसय ॥ २ ॥ या को अर्थ ॥ भगवान अ
र्जुन प्रति कहत हैं ॥ जो श्री गीता में दूसरे अध्याय में ता
रिके बुद्धि स्थिर होय ॥ ता करिके हरि जो भगवान हैं ति
नमें रति होय और बुद्धि नाश तें हृदय ने जात रहे नि
श्चय ॥ संसय आत्मा विनश्यति ॥ संसय भयो अविश्वास
ता करिके आत्मा को नास होय ॥ ताही तें गीता जी में ए
कसगरो अध्याय बुद्धियोग को भगवान कहे हैं ॥ काहे
तें सुंदर बुद्धि होय ॥ तब इस गरे धर्म बनें ॥ जप करे तो बुद्धि सो
होय ॥ यज्ञ तप हू बुद्धि तें होय ॥ स्नान तीर्थ व्रत दान इत्यादि म
र्यादा मार्ग के साधन हू कर्म मार्ग के साधन हू पुष्टि मार्ग
में हू ॥ लौकिक कार्य सब हू सुंदर बुद्धि तें सगरे कार्य लौकिक
कार्य वैदिक कार्य सिद्ध होय ॥ बुद्धि बिना कोई कार्य सिद्ध न
होय ॥ सो भगवद्गीता में कहे हैं ॥ सो आगे विलास में बु
द्धि लक्षण भेद कहत हैं ॥ प ॥ श्लो ॥ क ॥ तन्मासक्य वगीता
यो सर्वे नास निरूपित ॥ अतो बुद्धि सुंदरता भाव भावना
कारणं ईया ॥ या को ॥ अर्थ ॥ बुद्धि नाश तें नास होय बुद्धि
नास तें आत्मा को नास होइ ॥ सो भगवान गीता में द्वि
तीय अध्याय में योग बुद्धि कहे हैं ॥ ध्यायतो विषयान्पुंस
संगस्तेषूपजायते ॥ संगात्संजायते कामः कामात्क्रोधो
भिजायते ॥ १ ॥ क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात्स्मृतिवि
भ्रमः ॥ स्मृतिभ्रंसात् बुद्धिनासो बुद्धिनासात्प्रणस्य

॥१५॥ इतिवचनात् ॥ भगवानकहतहैं ॥ हे अर्जुनजीववि
षयमेंप्रवर्तहोतहैं ॥ सोहसंगातें ॥ मनवहुसंगपैसारीकूं
नगाहो ॥ मनवक्रमनेकभांतिके विषयकामादिप्रगटहो
यका ॥ कामादिमयतेंक्रोधहोइ ॥ क्रोधादिकतेंमोहप्रगट
होइ ॥ मोहकरिस्मृतिभ्रमहोइ ॥ अपहानतेंलौकिकसंस
रीकौंअपनोजानें तिनकोपालननार्थ अपनीपोष
नार्थखोटीक्रियाकरें ॥ याभांतिस्मृतिवेभ्रमनतेंबुद्धि
कोनासहोइ ॥ बुद्धिनासतें आत्माकोनासहोय ॥ यहव
हालामेंयहूसिद्धांतभयो ॥ जोहसंगातेंकामहोइ ॥ क्रोधतें
मोहहोइ ॥ मोहतेंविस्मृतिविभ्रमनहोनाईनासना
हीनवबुद्धिजायातबनासहोइ ॥ मूलातेंबुद्धिकीरक्षा
करेंबुद्धिहैसोभगवद्भावकेभावनमेंकारनहैसो
बुद्धिकोनप्रकारसुंदरहोय ॥ यासोंआगेंवर्णनकरतहैं
महाप्रसादादितेंश्लोक ॥ प्रसादमहाप्रसादसेसेवकीर्तन
वनोकरोरपितत्संगेनसदाहलसेकथाश्रवणकीर्तन
आयाको अर्थ ॥ अवश्रीहरिरायजीकहतहैं ॥ जोकृपस्करे
जोकृपस्करेजोबुद्धिकीरक्षायाभांतिकरें ॥ अवसमर्पितव
सुमेंरवककें अपनोमनचलायमानननकरें ॥ सदामहा
प्रसादभक्षनकरें ॥ औरश्रीहरिकीसेवानित्यकरें ॥ औ
रभगवदीयवैष्णवसंगकरें ॥ दुःसंगकोत्यागकरें ॥ श्रीकृष्ण
कीलीलातथानामकोकीर्तनकरेंतोबुद्धिनिर्मलहो ॥ इति श्रीगु
साईप्रभुस्वरूपमेंपधारें ॥ यहसिद्धांतभयो ॥१७॥ इति श्रीगु
रिरायजीकृतशिक्षानविरोसिलापत्रताकीटीका
श्रीगोवर्धनजीकृतसंपूर्ण ॥ २१ ॥ आगेंबुद्धिरहा
रप्रकारकहेपरंतुकालदोषहूवडोहैयहनि
भगवानकृपाकरेंतातेंआगेकालदोषहनलागो
तेंआगेंबुद्धिहूसुंदरहैं ॥ सोप्रकारकहतहैं ॥ श्लोक ॥
तैव्यःसर्वदाकृष्णो ॥ विस्मर्तव्योजगत्गुन ॥ प्रपंचस्प

परकालदेसकहे अवऊं द्रव्यादिकमें सगारोपस्वार्थ परत्वा
यों एसे द्रव्यकों सर्वस्वजानने। ओर ऐसेंही सर्ववस्तुकों क
रीहूं यह अभिमान सो हममता करिरहित होइ द्रव्यकों
सर्वस्वजीवन प्रानजानें यह समत्व और मेंही ग्रहस्ताश्र
ममें रहतमें और अनेककार्यमें आपनेकों कर्ताजानें य
हृदोऊ बाधक है तातें समत्व अहंकार छोडें २ ओर सग
रे मंत्रमें श्रीकृष्णको एकनाम है सोई सर्वोपर महामंत्र
जानें श्रीकृष्णः शरणं मम ओर अनेकगुण हैं सो श्री
कृष्णकी अनेकलीला हैं तिनहीको गुनगान भावना
मुख्य है सो अष्टमस्कंधमें श्रीशुकदेवजी कहे हैं मंत्रतंत्र
स्वतस्छिद्रं देसकालार्हवस्तुत। सर्वकरोति निश्छिद्रं देस
कालार्हवस्तुतः सर्वंकरोति ममसंकीर्तनं तव १ याभांति
श्रीकृष्णनाम लीयो कीर्तन सर्वदेसमें अधिकार सर्वोप
रसाधनकरिचुकों श्रीगुसांईजी विज्ञप्तिमें कहे हैं हरेर्ना
मतिव्यक्ति ये हरेस्तुति है सदा गुणापस्मि पद्य दानार्थे ततये
नास्तु नान्यथा १ श्रीकृष्णके सेहैं वे स्तुतिको सार है सो
श्रीकृष्णकी क्रिया याहीतें लीयो जाय अन्यथा नाहीं ता
तें मंत्रही श्रीकृष्णको नाम सर्वोपर है गुणा हू श्रीकृष्णकी
लीलाको सर्वोपर है यह और हूं कहत है लो... कर्मा
गतंतपद्मसमतो
हिसत्संगसाधने मन है याकेय ... श्रीकृष्णकीसे
वा है सोई सर्वोपर उत्तम कर्म है जहां श्रीकृष्ण
की सेवाकरी तहां सर्वसाधन सिद्धिकरिचुक्यो सोअ
ष्टमस्कंधमें प्रह्लादने कही है यथाहि स्कंधशाखानां
तरोर्मूलावसेचनं एवमाराधनं विष्णोः सर्वेषामा
त्मनश्चहि इत्यादि वचनसों जाननो जैसें वृक्षकी
जडमें जलसींचे तो सबडारपात हरी होइ तैसें ही
श्रीकृष्णकी सेवाहीतें सर्वसाधन सबलोकसंतु

ह्रदे होइ॥ तातें सगरे कलसें मुख्य श्रीकृष्णकी सेवाही नेंहोइ॥ सर्वसा
धनकें सें ग्रहस्थ॥ रो षट्पदार्थ हृदयमें धरें तो सबसें धर्मी
श्रीकृष्ण सदा हृदयमें तें कबहूं बाहिर न जाय॥ श्रीकृष्ण श्री
जी सात स्वरूप श्रीवल्लभकुल जहां विराजें सर्वोपरि तन में देस
हूं जानें॥२॥ पुष्टि काल तहीं जानें॥३॥ जा घरी सत्संग हो
इ॥४॥ द्रव्य आदिक सें मंदिरमें ही कीनो॥५॥ सब अभिमान त्याग
करे॥६॥ श्रीकृष्णको नाम सर्वोपरि मंत्र॥७॥ श्रीकृष्णकी
लीला सोई सर्वोपरि गुण॥८॥ सब मस्तक में श्रीकृष्णकी
लीला सोई सर्वोपरि है॥९॥ षट्पदार्थ सर्वोपरि है॥ सो
जब मिलें॥ तब मन में सहन कर पुष्टिमार्गीय वैष्णवकी
को संग होइ॥ यही साधन है॥ और दूसरो साधन नाहीं
तातें सत्संग भयो॥ सर्व साधन करि चुके॥ पैं नहां को इके
हैं सत्संग दुर्लभ है॥ सो कहां मिलें नहीं कहत हैं॥ श्लोक॥
कृष्णसान्निध्य [illegible] तु [illegible] साधन॥ काल: प्रसंग
[illegible] मिलितें [illegible] तिहि॥७॥ याको अर्थ॥ श्रीहरिरायजी
कहत हैं जो पुष्टिमार्गीय भगवदीय जहां श्रीकृष्ण सा
न्निध्य हैं सर्वोतिकृति रहत हैं॥ जहां श्रीकृष्ण विराजत हैं त
हां भगवदीय हृदय मन सेवा में रहत हैं॥ तहां काल
को प्रसंग नाहीं है॥ उन भक्तन के मिलनें काल हू द्रवत
रत हैं जो ऐसो विपरीत काल को भलो काल भयो॥ इ
हां मेरो सामर्थ्य नाहीं चलत हैं तातें जहां श्रीगोवर्द्धननाथ
जी सात स्वरूप श्रीवल्लभकुल को मंदिर होइ त
हां भगवदीय मिलें॥ तब सर्व कार्य सिद्ध होइ यह सर्वो
परि सिद्धांत है॥ श्लोक॥ सर्वस्वोपयोगोपि सिद्धांत
सद्बुद्धि [illegible] सि॥
सिद्धि॥८॥ याको अर्थ [illegible] प्रभु और भगवदीय जहां

सुद्धबुद्धिसबनाइसीकेसंगतेहोयअभिमानअहं
कारअज्ञानकरिनिवर्तहोइ प्रभुकोआश्रयसिद्धहो
इ तथाभगवदीयकोआश्रयकरैतोसबसिद्धिहोइ अ
बऔरहूकहतहैं श्लो० कृष्णनामस्वरूपादिज्ञानंतु
ततएवहि भगवत्सेवनंवापिपुरुषार्थस्ततएवहि ९
या० टी० अ० श्रीकृष्णकेनामकोश्रीकृष्णकेस्वरूपकोज्ञा
नतबहोय तबश्रीकृष्णकीसेवाकोपरमपुरुषार्थरूपफल
रूपसबतेंपरजानैं तबप्रभुकृपाकरैं तबहीजान्योजा
य ताहीतेंसिद्धांतमुक्तावलीमेंकहेहैं कृष्णसेवासदाका
र्यामानसीसापरामता श्रीकृष्णकीसेवासदाकरै फलरू
पजानिमनलगाइकेकरै तबश्रीकृष्णप्रसन्नहोय अपने
स्वरूपानंदकोअनुभवकरावै तबमानसीसिद्धहोइ
तातेंपरमपुरुषार्थरूपजानिभगवत्सेवाकरनी ९
श्लो० यदातथाविचारेतोइस्यंतेसेव्यताततः अतः
सत्संगएवास्मिन्मार्गेमुख्यसाधनं १० याकोअर्थ ऊ
परकहेजोश्रीकृष्णकीसेवातेनामस्वरूपकोज्ञानहो
इ ताहीभांतिसेवकजनकीसेवातेंभगवदीयकेस्वरू
पकोज्ञानहोइ मनलगाइसबतेंपरजानिताइसीकी
सेवाकरैं तबताइसीकेस्वरूपकोज्ञानहोइ प्रभुकृपा
होवकरैं अबश्रीहरिरायजीकहतहैंजोहमारेयहपुष्टिमा
र्गमेंतोसबतेंएकसत्संगहीसबतेंपरसाधनहै निश्च
यहै ताहीतेंनवरत्नमेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुक
हेहैं निवेदनंतुस्मर्तव्यंसर्वथाताइसैर्जनैः तातेंभ
गवदीयकोसंगकरनो १० श्लो० तदभावेसर्वथै
वनाकिंचिदिहसिध्यति तस्मात्प्रयत्नेनकर्तव्यःसत्सं
गायसुबुद्धिभिः ११ या० टी० अ० ऊपरकहेभांति
भगवदीयमेंभावसिद्धिभयेतेंसर्वसिद्धहोइ एसेभगवदी
यकेसंगबिनाकिंचिन्मात्रकछुहूसिद्धिनाहीहोइ

तातें सर्वथा प्रयत्न करिकें भगवदीयन के सत्संग करत हैं। सत्संग
करत हैं। सत्संग करे सोई वे सब सुबुद्धि हैं। तथा सत्संगते
सुंदर बुद्धि पावें। तथा जो भगवदीयन की सुंदर बुद्धि है दु
तिनको संग करें। एकादश स्कंध में भगवान कहे हैं। निरो
धयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव। न स्वा
ध्यायस्तपस्त्यागो नेष्टापूर्तं न दक्षिणा॥१॥ व्रतानि यज्ञ
छंदांसि तीर्थानि नियमा यमाः॥ यथावरुंधे सत्संगः स
र्वसंगापहो हि माम्॥२॥ या भांति अनेक साधन करिकें भग
वान नांही वस होत हैं। जैसें सत्संग करि वस होत। तातें स
त्संग को यत्न सर्वथा बुद्धिमान भगवदीयन को करनो। श्लो
कः॥ श्लोक वोक्तमाचार्यैर्हरिस्थाने तदीयकैः। अदूरे वि
प्रवसेद्वा यथा चित्तं न दुष्यति॥१॥ श्लोक को अर्थ॥ अब श्री ह
रिरायजी कहत हैं। जो हमारे श्री वल्लभाचार्यजी महाप्रभु
भक्तिवर्द्धिनी में कहे हैं। अतस्थेयं हरिस्थाने तदीयैः सह तत्
परैः। अदूरे विप्रकर्षे वा यथा चित्तं न दुष्यति॥१॥ इति व
चनात्। तातें हरिस्थान श्री गोवर्द्धननाथजी विराज
त हैं तहां स्थिति होइ रहे हैं। तदीय भगवदीयसों मिलिकें
रहे। पास रहिकें सेवा करें। जामें चित्त में कोई दोष न होइ
या भांति रहें तो होत निकट में चित्त कों दोष होइ तो नेक
दूरि रहै। जामें दुस्संग नित्य वने चित्त में दोष न होइ या
भांति भगवदीयसों मिलिकें रहे हरिस्थान में। श्लोक॥ चि
त्तदोषे कथं सेवा चेतस्तत्सर्वतो भवेत्। अतो विचार
कर्तव्यः सर्वथैकत्र वा सह तु॥१॥ श्लोक को अर्थ॥ जब चित्त
में अनेक भांति के दोष उत्पन्न होइ तब सेवा कहा है कि
सो श्री आचार्यजी सिद्धांत मुक्तावली में कहे हैं। चित्तत्प्र
वणं सेवा तत्सिद्ध्यै तनुवित्तजा। तनुजा वित्तजा मन लगा
इकें करो। तब मानसी सिद्ध होइ। जैसें नदी को प्रवाह रा

सुद्रबुद्धिसवतादृसीकेसंगतेहोयअभिमानअहं
कार अज्ञानकरि निवर्त्त होइ प्रभुको आश्रय सिद्ध हो
इ तथा भगवदीयको आश्रय करे तो सर्वो सिद्धि होइ अ
वश्रोरहू कहत हे श्लो० ॥ कृ ॥ कृष्णनामस्वरूपादिज्ञाने तु
ततएव हि ॥ भगवत्सेवनं वापि पुरुषार्थस्ततएव हि ॥ टी ॥
या० ॥ अ० ॥ श्रीकृष्णके नामको श्रीकृष्णके स्वरूपको ज्ञा
न तव होय तव श्रीकृष्णकी सेवाको परमपुरुषार्थरूपफल
रूप सर्वोपर जाने तव प्रभु कृपा करें तव ही जान्यो जा
य ताही ते सिद्धांतमुक्तावलीमें कहे हैं ॥ कृष्णसेवा सदा का
र्या मानसी सा परा मता ॥ श्रीकृष्णकी सेवा सदा करी फल
प जानि मन लगाइके करें तव श्रीकृष्ण प्रसन्न होइ अपने
स्वरूपानंदको अनुभव करावे तव मानसी सिद्ध होइ
ताते परमपुरुषार्थरूप जाने भगवत्सेवा करनी ॥ टी ॥
श्लो० ॥ कृ ॥ यदा तथा विधा ये तो इत्यते सत्यनायता अतः
सत्संग एवास्मिन्मार्गे सेव्य साधनं ॥ १० ॥ या० ॥ अ० ॥ पु० ॥ कृ
परक हे जो श्रीकृष्णकी सेवा ते नामस्वरूपको ज्ञान हो
इ ताही भांति संतजन की सेवा ते भगवदीय के स्व
पको ज्ञान होइ मन लगाइ सर्वोपर जानि तादृसीके
सेवा करें तव तादृसीके स्वरूपको ज्ञान होय प्रभु कृपा
ही करें अव श्रीहरिरायजी कहत हे जो हमारो यह पुष्टिमा
र्गमें तो सर्वस्व एक सत्संग ही सर्वोपर साधन है ॥ निश्च
य हे ताही ते नवरत्नमें श्रीआचार्यजी महाप्रभु क
हे हे निवेदनं तु स्मर्तव्यं सर्वथा तादृसैर्जनैः ॥ ताते भ
गवदीयको संग करनो ॥ १० ॥ श्लो० ॥ कृ ॥ तदभावे सर्वे
व नाकिंचिदिह सिध्यति तस्मात्प्रयत्नेन कर्त्तव्यः स
गाय सुबुद्धिभिः ॥ ११ ॥ या० ॥ अ० ॥ कृ ॥ ऊपर कहे भा भा
भगवदीयसे भाव सिद्धि भये तें सर्व सिद्ध होइ ऐसे त
य के संग विना किंचिन्नाम कछुहू सिद्धि नाही होय

तातें सर्वथा प्रयत्न करिकें भगवदीयन के सत्संग करत हैं। सत्संग
करत हैं। सत्संग करे सो ईश्वर सब सुबुद्धि हैं। तथा सत्संग ने
सुंदर बुद्धि आवे है। तथा जो भगवदीयन की सुंदर बुद्धि होइ
तिनको संग करें। एकादस स्कंध में श्रीभागवत में कहे हैं। निरो
धयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव। न स्वा
ध्यायस्तपस्त्यागो नेष्टापूर्तं न दक्षिणा॥१॥ व्रतानि यज्ञ
छन्दांसि तीर्थानि नियमा यमाः॥ यथावरुन्धे सत्संगः स
र्वसंगापहो हि माम्॥२॥ या भांति अनेक साधन करिकें भग
वान नाहीं वस होत हैं जैसें सत्संग करि वस होत। तातें स
त्संग को यत्न सर्वथा बुद्धिमान पुरुष को करनो है। श्लो
क॥ कृष्णसेवा क्रमाचार्ये हरिस्थानेन तदीयकैः। अहर्निशं वि
प्रकर्षे वा यथा चित्तं न दुष्यति॥१॥ याको अर्थ। श्रीहरि
रायजी कहत हैं जो हमारे श्रीवल्लभाचार्यजी महाप्रभु
भक्तिवर्द्धिनी में कहे हैं। अतस्थेयं हरिस्थाने तदीयैः सहत
त्परैः। अदूरे विप्रकर्षे वा यथा चित्तं न दुष्यति॥१॥ इति व
चनात्। तातें हरिस्थान श्रीगोवर्द्धननाथजी विराज
त हैं तहां स्थिति होइ रहे हैं। तदीय भगवदीयन सों मिलिकें
रहैं। पास रहिकें सेवा करें। जा में चित्त में कोई दोष न होइ
या भांति सेवा होत न निकट में चित्त को दोष होइ तो नेक
दूरि रहैं। जा में दर्शन नित्य बने चित्त में दोष न होइ या
भांति भगवदीयन सों मिलिकें रहैं हरिस्थान में। श्लोक॥ चि
त्तदोषे कथं सेवा चेतस्तत्त्व कोपि भवेत् तत्त्वतो विचार
कर्तव्यः सर्वथैव कृतवासहतः॥१॥ याको अर्थ। जब चित्त
में अनेक भांति के दोष उत्पन्न होइ तब सेवा का है की
सो श्रीआचार्यजी सिद्धान्तमुक्तावली में कहे हैं। चेतस्तत्प्र
वणं सेवा तत्सिद्धै तनुवित्तजा। तनुजा वित्तजो मन लगा
इवे को है तब मानसी सिद्ध होइ। जैसें नदी को प्रवाह रा
त्रि दिन धारा एकरस चलत है॥

१॰ एककरस भगवत्सेवामें लग्यो रहे सो सेवामें तो होइ तनु
जा वित्तजा करनमें जव चित्तको दोष होइ तव आगेमा
नसी फलरूप कहा तें सिद्ध होइगी तातें श्रीआचार्यजी
के वचनामृतनको विचार एकांतमें अकेले बैठिके करे
जो मैं कितनी सेवा करी पर चित्तमें तो कछु दोष नाहीं उ
त्पन्न भयो या भांति एकांतमें बैठिके अपने चित्तको
विचार करनो है सो ॥ श्रुत्वा विचार्य मतश्रोतं निधा
य हृदि सर्वथा। स्वार्थे स्वस्य कार्यो विचार एकवनान्तरे
१४ या ... श्लो ... एकांतमें बैठिके अपनी बुद्धिको विचा
र करे सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु भांति वह्नीमें कहे
हैं वाध ... वनायातु नेकांते वासइच्छा नो हरिस्तु स
र्वतो रक्षां करिष्यति निसंशय १६ इति वचनात् यह
श्रीमहाप्रभुजी श्रीरमनवचनामृतनको विचार अप
ने हृदयमें सर्वथा ही करनो है तहां कोई कहे एकांत
में अनेक सुखदुःख आवे सो तहां रक्षा कौन प्रकार क
रे तहां श्रीमहाप्रभुजी कहे हैं जो हरि भगवान सर्व
था अपने भक्तकी रक्षा करेगे यह चिंता न करे सर्व
था एकांतमें बैठिके अपनी शुद्ध बुद्धितें अपने चित्त
को विचार नित्य करे तहां कोई कहे है प्रथम कहे नित
सदा हि सेवा करे भगवदीयको संग करे पाछें कहे ए
कांतमें बैठिके चित्तको विचार करे सो दोऊ एक सं
के से होइ तहां कहत हैं जो सेवा दरसनके समय तो
सेवा दरसन करे पाछे अनोसरमें एकांतमें बैठिके
चित्तको विचार करे या भांति भगवदीयसों मिलि
के रहे तो सगरे कार्य सिद्ध होइ १४ इति श्रीहरिरा
जीकृत ... शिक्षापत्र ... नाकी टीका ... श्री ... पत्र ...
त से ... ३० अव ऊपर कहे जो हरि स्थानमें भग
वदीयके संग स्थिति होइ सेवा करे और एकांत

मैं बैठिकैं चितकों विचारकरैं साधनकों न संप्रफलें
मनमें साधनकी भावना न करैं यह मार्ग निसाधन
फलात्मक है ॥ सो कोन भांति सों अवश्य मार्ग वर्णन है ॥
श्लोक ॥ निसाधनफले मार्गे बलेनैवोपयुज्यते ॥ सा
धनानां मतो मायमान्मन्येवो हितास्तुति ॥ १ ॥ याको
अर्थ ॥ अब श्रीहरिरायजी कहत हैं ॥ साधनसाधन
री हैं रूपासाध्य हैं अपनो बलकरिकैं तानकों
टि साधनकरैं ताकरि सिद्धि नाहीं हैं साधनतो रा
कनासकरिकैं आत्मा संतोष होइ यह श्रुतिमें कहे हैं सो
मर्यादा भक्तिमें कहे हैं ॥ पुष्टिमें एक तरणाइ प्रभुको मूल
तों आसुरावेस होइ ॥ और मर्यादामें एवं नामने हतनाथे
होइ यह भेद हैं ॥ पुष्टिमार्गमें भगवान वर्णकरें नवफ
लसिद्धि होइ ॥ मर्यादामें जितनो साधन तितनो फल
पुष्टिमें प्रभुकी जितनी कृपा तितनो फल ॥ एइनाएन
मर्दे ॥ सो आगें स्वनिरूपण करत हैं ॥ २ ॥ श्लोक ॥ किं
तु सर्वस्य मूलं हि हरेर्वैराग्यमुच्यते ॥ यथैव हृत्तु
रसतथा निष्पतिवेजन ॥ २ ॥ याको अर्थ ॥ अब श्री हु
रिरायजी कहत हैं ॥ जो पुष्टिमार्गमें यह सिद्धांत है
सर्वस्व मूल पुष्टिमार्गको फल ॥ सो हरिके वर्णनेह
न हैं ॥ तातें जीवके साधनसाध्य नाहीं हैं जैसो
जीवकों भगवान वर्णकरैं ॥ तैसो फल सो वहन
नहोत हैं ॥ तातें जीवके साधनसाध्य नाहीं हैं
जीवके पुष्टिमार्ग में वने प्रभुकी नेह हैं सोइ यह पु
मार्गकी फलमें निष्पति है ॥ अन्यथा और नाहीं ता
भगवान वरन सो यह प्रकार सों करत हैं ॥ याहू
कारको हैं ॥ सो आगें कहत हैं ॥ २ ॥ श्लोक ॥ वरा
धासादानु पर्येयं पर्यवसिस्यन ॥ लीलास्थित
लाइ न्ये स्वातिपरंपरा ॥ ३ ॥ याको अर्थ ॥

ह्रीकहतहैं जोवरनदोयप्रकारकोहैं ।एकसाक्षात।ए
कपरंपरा सोयहदोयभांतिकेभेदहैं ।श्रीकृष्णकीली
लास्थितिसृष्टिमेंहूदोयप्रकारहैं ।साक्षातहूवरनहैं ।प
रंपराऊहै सोआगेकहतहैं ।श्लोक ॥ आचार्यद्वा
रकेतदैवत्रवरणानहरेखता ।लीलास्थंपिभक्तेषुह
।ति द्विविधमीक्षते ।४। टीका ॥ अबश्रीहरिरायजी
कहतहैं ।जोश्रीवल्लभाचार्यजीद्वाराजीवकोवरणभ
योहै ।एसोवरणहरि(?) जोश्रीकृष्णहैंसोतुनहनहोइ(?) ता
तेंहरिकेवरणकीरीतिहैं ।श्रीआचार्यजीद्वाराजीवकोवर
नकीरीतिहै सोउनमेंहै ।सोश्रीकृष्णकीलीलासृष्टिमे
ऊ स्वपनेभक्तकोवरनदोयप्रकारकरेकोकीयोहै सोसा
क्षातहूपरंपरातेंहू सोआगेदोऊभांतिकोवरणकहिय
तहैं ।५। श्लोक ॥ साक्षात्श्रुतिषुहरिणावरणं वा(?) सुनपु
परंपराप्रकारेणमर्यादापुरुषोत्तमात् ।५। टीका ॥ अब
श्रीकृष्णावतारमेंसाक्षातवरणतोश्रुतिरूपाकोभ
गवानआपुवरणकीयोहै ।सोरस्त्रगिसनहुहजो सोरह
हजारअग्निकुमारकोपरंपरा।मर्यादापुरुषोत्तमश्रीरा
मचंद्रजीद्वारायाभांतिलीलासृष्टिमेंहूसाक्षातपरंप
राकोवरणहै ।६। श्लोक ॥ अन्यथाप्यत्रभेदोस्तिदास
तात्मीयतादिभिः ॥ आत्मीयत्वनावनाद्दासेदासत
याच्युतिः ।६। टीका ॥ अब यहदोयभेदविनासाक्षातप
रंपरायहदोयभेदविनावरनेहोइ दासभावऔरआत्मी
यहदोय औरप्रकारआत्मीयभगवानकोसंबंधीतव
होइ अन्यअवतारदसामेंदासभावविनाभगवानको
आत्मीयसंबंधनहोइ सोदासत्वमेंदोयभेदहै सोआ
गेकहतहैं ।७। श्लोक ॥ दासत्वेप्यस्तिभेदोहिमर्यादापु
ष्टिभेदतः ॥ अनेनजीवस्यानंत्यंदासत्वाधिनिसर्गतः
७ या। टीका ॥ दासत्वभावमेंदोयरीतिहैं ।एकमर्या

रा भक्ति एक पुष्टि भक्ति यह होय भेद हैं। और अन्य जीव हैं
रासत्य धर्म विना के स्वतंत्र ते प्रवाही हैं। तिनसों दासत्व
धर्म सुवते अधिक हैं। दासत्वते आत्मीय प्रभु को संबंधी
होत हैं। श्लोक॥ यथा वृत्तिस्तथा स्वेच्छस्तस्य करोति
हि॥ मर्यादया वृत्तो न स्य भक्ते साधनति श्रुता॥२॥ याकी
अर्थ॥ जैसी जाकी वृत्ति है जहां को जीव है। जैसी क्रिया में
स्थिति है। ता भांति श्रीकृष्ण फल देत हैं। सो पुष्टि प्रवा
ह मर्यादा में श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहे हैं। इहां सास्त्रे
न मनसा प्रवाहं सृष्टि दानहरिः॥ वचसा वेदमार्गेही
पुष्टिकायेन निश्चयः इति वचनात्॥ मनन्ते प्रगटी सो
अपि प्रवाही॥ तिनको फल पर संसार ही वचनते प्रग
टी सो मर्यादा॥ वेदकार्य में कर्म मारगीय भई तिनको
फल सत्य लोक पीछे मोक्ष॥ और भक्त वानके सरीरते
प्रगटी सो पुष्टि सृष्टि तिनको मन भगवत्स्वरूप सेवा में ल
गे॥ तिनको फल स्वरूपानंद को अनुभव॥ या भांति
जैसे जीव जैसी क्रिया॥ तिनको ताई भांति श्रीकृष्ण फ
पा करत हैं॥ जिन जीवन को वरन भगवान मर्यादा में की
यो है ताते जीव की निष्ठा साधन में होइ यह यही वि
चारे जो फल तो साधन करूं तो कछु फल मिलें॥ य
मर्यादा भक्ति॥ अब पुष्टि की रीति लिखत हैं॥ श्लोक॥ पु
वनुगृह दृष्टिस्तथैव सर्वकल्पेषु नः वयं तु अनुग्रहाचार्ये
ह मर्यादा स्या सह है। ताको अर्थ॥ पुष्टि में जीव को वरन
गवांन की रीते है। सो जीव प्रभु की अनुग्रह देखत है
व कर्म करे भगवद्धर्म करे॥ परंतु साधन कुं फल
में कर्म न लावे॥ निःसाधन होय यह जाने जो प्रभु
करोगो॥ जैसेई मेरा कार्य होइगो॥ या भांति सर्वठौर स
यामें प्रभु को अनुग्रह ही देखे॥ सो श्रीआचार्यजी

पुष्टिमर्यादा सहित हैं भीतर पुष्टिरसमें मग्न हैं ऊपरते
मर्यादावेदमर्यादाके रक्षक हैं सो आगें कहत हैं ॥ श्लो
॥ क ॥ अंगीकृतिः समर्यादैः सर्वैरंगीकृता ः स्वतः । अ
नस्तदुक्तमर्यादा स्थितिर्हि हितकारिणी ॥ १० ॥ या को अर्थ
॥ सो श्री गुसांईजी सर्वोत्तममें श्री आचार्यजीको ना
म कहे हैं ॥ अंगीकृतो समर्यादो ॥ इत्यादि वाक्यतें सर्व
दा जो पुष्टिमार्गीय समस्त जीवनको अंगीकार स्व
तः आपुही कीये हैं तहां यह श्री आचार्यजी महाप्र
भुनकी उक्ति आपुई श्रीमुखसों कहे हैं जो पुष्टिमार
गीय दूर्मर्यादारीतिमें स्थिति होइ करें ऊपरते वेदमा
र्ग न छोडे ॥ लोक वेद विरुद्ध कार्य करें तो श्री आचार्यजी
हित करें पुष्टिरस दान करें तातें यह पुष्टिमार्ग लोक
विरुद्ध नाहीं है यह जानने ॥ १० ॥ श्लो ॥ क ॥ पुष्टिप्रभुत्वा
दस्माकं लौकिकपारलौकिकी सर्वा चिंता हरेरेव नि
तरांच विभाव्यतां ॥ ११ ॥ या को अर्थ ॥ याभांति श्री हरिरा
इजी कहत हैं जो अस्माकं हमारे प्रभु एसे पुष्टि हैं यह
लौकिक वैदिक सर्व वेदमर्यादा संयुत भीतर केवल
पुष्टिरसको अनुभवमें मग्न हैं ताहीतें सर्वोत्तममें क
हे जो श्री आचार्यजी वचन कहत हैं जो क्रियाकर
तहैं जो मनमें विचार करत हैं सो सब रासलीलामें
आपुको तात्पर्य हैं ॥ एसे श्री महाप्रभुजी पुष्टिमार्गी
यनके सबकी लौकिक वैदिक चिंता हरेंगे यह मनमें
निश्चय जानि निश्चिंतताकी भावना मनमें राखें तब
प्रभुमें मन लगें चिंता भगवद्भावमें बाधक है तातें नि
श्चिंत होइके करो ॥ यव श्रीरहें कहत हैं ॥ श्लो ॥ क ॥ अनाग
तिं होइ ... [illegible] ति नोपलते निजा
वोत्कमाचार्यैः ॥ निजध्यानतः कथंचिति ॥ या को अर्थ ॥ ऊपर कहे ता
तातें वल्लभ श्री गोकुलेश्वरः ॥ १२ ॥ प्रभुकी इच्छा जानें सो नवल लग
भांति निश्चिंत होइ प्रभुकी इच्छा जाने

थ॥श्रीआचार्यजीमहाप्रभुकहेहैं॥सर्वेश्वरश्चसर्वात्मा
निजेच्छातःकरिष्यति॥प्रभुश्रीकृष्णजेसेहैं॥सोसर्वके
आत्माहैंसर्वकेईश्वरसर्वोपरिहैंसर्वकेअंतःकरणकी
जानतहैंतातेंआपनीनिजइच्छातेंविनामांगेंसर्वसिद्धि
करेंगेतातेंअपेक्षाविनाअपनेजनकीचिंताकरेंगेदृ
ढतें॥आर्तिबंधुर्दीनबंधु॥ऐसेगोकुलेश्वरश्रीकृष्णहैं
तिनकोंईसंदेहकरजोप्रभुकीइच्छाविपरीतिसोंप्रभुस
नेंसेंकछुअकछुअन्यथाकछुऐसेंहैंसोविपरीतिइच्छा
होमतकरप्रार्थनाकरकेनकरोयहदोईसंदेहकरेंनहीं
कहतहैं॥२४॥श्लोक॥ हरीच्छाविपरीतापिदासदुःखाव
लोकनात॥अनुकंपानिधानत्वात्कुर्याद्विपरीतिवलेन
१३॥याकोअर्थ॥अबश्रीहरिरायजीकहतहैंजोहरिइच्छा
विपरीतिहैंकाहेतेंजीवकोआनंदकरियेमनमेंकछुतो
किकचाहैं॥सोप्रह्लादरूजैसेंनारदकोबालककोंवि
वीइच्छाभईतबभगवाननवरनदीये॥तबनारदजी
बहुतदुःखपायो॥तबकृपाकरिकैंदुःखदूरिकीयो॥तथा
प्रह्लादकोंहिरण्यकश्यपबहुतदुःखदीयो॥सोप्रह्ला
दकोंप्रभुइच्छामानीसहेपाछेंप्रभुदुःखदूरिकीयोहैन्य
कोंमारे॥तैसेंईजोकछुविपरीतइच्छाप्रभुकरीलाय
करें॥प्रभुतोसर्वकेआत्माहैं॥सर्वेआपुहीतेविनाक
हेजानतहैं॥सोदासकोंदुःखदेखिकैंआपुइच्छयमें
कृपायमानहोतहैं॥जाभांतिदासकोमनोरथहैंता
हीभांतिआपुप्रभुपूर्णकरेहोइगो॥जाभांतिदासकोंसुख
होइगोसोईआपुकरेंगे॥तातेंसुखहूमैंप्रार्थनाना
हीकरनीयहै॥१३॥श्लोक॥ आत्मार्निमानेमनुष्याप्य
प्रार्थनांनविधीयतां॥कृपालुरेवभगवान्निजानि
जनान्सदःस्यात्॥१४॥याकोअर्थ॥अबश्रीह
रायजीकहतहैंजोयहप्रभुछिमामागवेंआतिमात्र

पुष्टिमर्यादा सहित हैं भीतर पुष्टिरस में मग्न हैं ऊपर ते
मर्यादी वेदमर्यादा के रक्षक हैं सो आगे कहत हैं श्लो
क ॥ अंगीकृतिः समर्यादः सर्वेष्वंगीकृतात्मनः ॥ खतः ॥ अ
न स्वरूप मर्यादा स्थिति हितकारिणी ॥ टीका ॥ अथ
सो श्री गुसांई जी सर्वोत्तम में श्री आचार्यजी को ना
म कहे हैं अंगीकृतौ समर्यादा इत्यादिक तातें सर्व
था जो पुष्टिमार्गीय समस्त जीवन को अंगीकार स्व
तः आपु ही कीये हैं नहीं यह श्री आचार्यजी महाप्र
भुन की उक्ति आपु ही श्री मुख सों कहे हैं जो पुष्टिमार
गीय हैं मर्यादा रीति में स्थिति होइ करि ऊपर ते वेदमा
र्ग न छोड़ें लौकिक वैदिक विरुद्ध कार्य करें तो श्री आचार्यजी
हित करि पुष्टिरस दान करें ताते यह पुष्टिमार्ग लोक
विरुद्ध नाहीं है यह जानने ॥ १० ॥ श्लोक ॥ पुष्टिप्रभुत्वा
दस्माकं लौकिक पारलौकिकी सर्वाचिंता हरेरेव नि
श्चिंताच विभाव्यतां ॥ टीका ॥ अथ या भांति श्री हरिरा
इजी कहत हैं जो अस्माकं हमारे प्रभु ऐसे पुष्टि हैं यह
लौकिक वैदिक सब वेद मर्यादा संयुक्त भीतर वे व
पुष्टिरस को अनुभव में मग्न हैं ताही ते सर्वोत्तम में क
हैं जो श्री आचार्यजी वचन कहत हैं जो क्रिया कर
त हैं जो मन में विचार करत हैं सो सब रासलीला में
आपु को तात्पर्य है ऐसे श्री महाप्रभुजी पुष्टिमार्गी
य वैष्णव की लौकिक वैदिक चिंता हरेंगे यह मन में
निश्चय जानि निश्चिंतता की भावना मन में राखे तब
प्रभु में मन लगे चिंता भगवद्भाव में बाधक है ताते नि
श्चिंत होइ कें करो अवश्योरहं करत हैं श्लो ॥ आता
वोत्तमाचार्यो निजप्रातः कल्पिता नोपलते निजा
वार्ता विधुश्री गोकुलेश्वरः ॥ टीका ॥ अथ आपके हैं तो
मोंपि निश्चिंत हो प्रभु की इच्छा जाने सो नवरत्न में

यसों श्री आचार्यजी महाप्रभु कहे हैं। सर्वेश्वर प्रभु सर्वात्मा
निजेच्छातः करिष्यति॥ प्रभु श्री ह्रस्त्रके पैहैं। और सर्वके
आत्मा हैं। सबके ईश्वर सर्वोपर हैं सबके अंतःकरणकी
जानत हैं। तातें आपनी निजइच्छा तें विना मांगें सर्व सिद्धि
करेंगे। तातें अपेक्षा विना अपने जनकी चिंता किये करेंगे दा
हते। ताते प्रार्थना चाहिए बंधुहीन वंधु। ऐसे गोकुलेश्वर श्री हरिरायजी
महाप्रभुको यह संदेह करें जो प्रभुकी इच्छा विपरीत हैं। प्रभुके
नैसेंहि करेंगे अन्यथा करेंगे ऐसे हैं। तो विपरीत इच्छा
होय तो प्रार्थना करिवेते न करें। यह कोई संदेह करें तहां
कहत हैं। १४ श्लोक॥ हरीच्छाविपरीतापि दासदुःखावलोकनात्। अनुकंपानिधानेन त्वार्तेः विपरीतिवतेन
१४ याके अर्थ॥ श्री हरिरायजी कहत हैं। जो हरि इच्छा
विपरीत है। काहेतें जीवको ज्ञान करि मनमें कछु तो
किकचाहे। सो प्रभु नहि करें। जैसे नारदको ब्याह कराइवे
की इच्छा भई। तब भगवानने वानर रूप दीयो। तब नारदजी
बहुत दुख पायो। तब कृपा करिके दुख दूरि कीयो। तथा
प्रह्लादको हिरण्यकश्यप बहुत दुखदीयो। सो प्रह्ला
द प्रभु इच्छासों सहे पाछे प्रभु दुःख दूरि कीयो है। तथा
को मारि तैसें जो कछु विपरीत इच्छा प्रभु परीताय
करें। प्रभु तो सबके आत्मा हैं। सब आपुही तें विनाम
है जानत हैं। सो दास सब दुख देखिके आपु [illegible]
कंपायमान होत हैं। जा भांति दासको मनोरथ [illegible]
ही भांति आपु प्रभु प्रवर्तत होय सो जा भांति [illegible]
होइगो सो ई आपु करेंगे। तातें सुख [illegible]
हीकरने [illegible]। १४ श्लोक॥ आर्तिमात्रे [illegible]
प्रार्थना न विधीयते॥ कृपालुरेव [illegible]
जनने मेदः स्याच्च ॥ १५ याके अ [illegible]
राय तीकहत हैं। जो यह पुष्टिमार्ग [illegible]

कोंकर्तव्यहैंजोमेसोप्रभुकीसेवासफलनाहीजनतःम
नुष्यजन्मसगरोयहीबीतिगयो यामांतिआर्तिकरेंश्र
लौकिकअलौकिकफलकीप्रार्थनांकछुनकरें काहे
नेंश्रीकृस्नतोपरमकृपालहैं तातेंअपनेजनदासकी
आर्तिहरिकेंप्रभुअपनेनामहैंतहें सोनिरोधल
क्षणमेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकहेहैं श्लोक ले
रामोनानुजनान्दुःखापमुतो यदाभवेत तदास
र्वसदानंदहृदिस्थोनिर्गतोबहिः ॥ इतिवचनात अ
पनेजनको विरहआर्तिरूपक्लेससंयुक्तप्रभुदेखिकेंकृपा
युक्तहोतहैं सर्वप्राणीमात्रके हृदयमें सदाआनंदरूप
भगवानहैं सोविरहप्रगटहैं हो अपनेदासको सुखदेत
हैं तातें आर्ति पर पुष्टिमार्गमें सुखहैं सो आर्तिकोन
प्रकारकरे सो आगें कहत हैं ॥ ४ ॥ श्लोक आर्तैवक्ति
पतेर्यस्तुस्वगुणाकथादिके तदेवासमप्रभुर्भक्ति
र्भविष्यति ध्रुवं ॥ ५ ॥ या [illegible] अ [illegible] तातेंश्रीहरिरायजी
आर्तिकरिकें सीतिपूर्वककृपाकरें भगवत्स्वरूपसंबंधीगान
करें वा नीतिगुनगानकरें संयोगमेंसंयोगकेपदकी
र्तनसरसमें विप्रयोगके पदगानकरें अथवा तें श्रीसुबो
धनी आदिकथासुनें मनन करिकें श्रीकृस्नलीला
कोस्मरणकरें सोश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकहेहैं जो
यातें सितिपुष्टिमार्गमें सब स्थिति है ताको हमारे
सदप्रभु पुष्टिमार्गको धनिश्चय होय तातें कहे
सर्वथा होइ तहांको कहे है जो वेदसास्त्रमें अनेक
साधन कहें हैं ताको फल कहे हैं तुमसाधनतें फल
नाहीं कहें प्रभुकी कृपातें कहें सो कहो या भांतिसंदे
ह होइ न हम कहत हैं श्लोक अन्यथाल्पप्रयोगत्तु
कूलसाधुसाधक नमुख्यफलसंबंधस्ततो भवति
निश्चिन्तः ॥ ६ ॥ या श्लोक [illegible] अर्थ श्रीहरिरायजीकहे

ी जो यह पुष्टिमार्गकी क्रिया बिना ज्ञानतें साधनके
फल सिद्धि है सो श्रीकृष्णकी सायुज्यमुक्तिको लाभ
होइ साधनकी रीति अनेक फल मुक्ति ही होय यह पु
ष्टिमार्गको मुख्यफल तातें सब धर्म बहन सो शाय यहाँ नि
श्चय सिद्धांत जाननो॥ अब पुष्टिमार्गीय फल जो भाँति
उपाय सो कहत हैं श्लोक॥ नहास्ति प्राप्ति रेतेषां नदूपाय
सेवनात्॥ तत्कृपानन्द दुःखितवचो दृष्टिविचारणान्
॥७॥ याको अर्थ॥ अब श्रीहरिरायजी कहत हैं जो यह पु
ष्टिमार्गीय आर्ति विप्रयोगात्मक एसी आर्ति की प्रा
प्ति जो श्रीवल्लभाचार्य श्रीकृष्ण विप्रयोगाग्नि आर्ति रूप जो
अनंत प्रीति श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के वचनामृत पु
स्तक ग्रंथ ताको विचार करिके सो जब श्रीआचार्यजी
महाप्रभुनकी कृपा होय तब आर्ति है
साधनजी निवेदन करि सगरे छोटे बडे ग्रंथके विचार
में कहत आचार्यजीकी कृपातें आर्ति
सो प्राप्तियें तब श्री आचार्यजीकी कृपातें
यह क्रिया साध्य आर्ति फल यह मार्गमें कहत
हैं श्लोक॥ निवेदनानुसं
धानात् त्यक्तक्रिया भाव्यो निवेदनानुस्मरण
॥८॥ अस्य एष कहत हैं श्लोक॥ नन्पथा नमवेदूषस्य
ध्यानात् तत्कथा संग संभवात्॥ याको अर्थ॥ अब श्रीहरिराय
जी कहत हैं जो निवेदनको संधान अष्टप्रहर राखें
कृतार्थ होय साधनो॥ याको अर्थ॥ भगवदी
यनको संग सदा पुष्टिमार्गीय भगवदीय आर्ति
न मध्यारति होइ तथा सदा जो मई नाक रि आर्ति
सदा निवेदनको स्मरण करि मई तानको हि साध
फल होवे सोइ और प्रकार अनेनकों ते न होइ तब आ
श्रय करि आर्ति सिद्धि करि परंतु आर्ति सिद्धि नहोइ तब आ
र्ति निर्भर भये फलकी आसा कर है के करि एक लो
कर्तव्यो नान्यथा मिति निश्चयः॥ याको अर्थ॥ आ
स्या भव बहुइ यसो बहुट वचन कर्म मों सगरी प्रीति आ
करि श्री हरिरायजी कहत हैं जो कृपाकरि के ताप
श्री हरिरायजी कहत है जो कृपा करि ताकी वृद्धि निश्चय होय
मार्गमें रहनो भावकी वृद्धि

करिकैं श्रीआचार्यजीके वचनामृत ग्रंथ है श्रीसुबोधनी
निबंधादिक छोटे बडे ग्रंथ तिनहीं को मनन लगाइकै पाठक
रैं वचनकी विघर्षकरि धाराप्रवाह सगरे दिन तब श्रीआ
चार्यजी कृपा करें परंतु गोप्यहीं जिसो पाठ करें सो औरकोइ
जो तिनाही ओर आप्रकाश है सो जनावे नाही वडाई प्रति
ष्ठार्थ न करें गोप्य करें ओर लौकिक चेष्टा में मन न ल
गावें या भांति पाठ करें तो ताको निश्चय आर्ति सिद्ध होइ
श्लोको [illegible] नहृन्भेभूत्ये वापिधिये मूकंत्वं वावरमत्र वाचः
प्रसूणाय दृष्टवेहृज्जनानन्मवेतिनः ॥ याको अर्थ
अब श्रीहरिरायजी कहत हैं जो ऊपर पुष्टिमार्ग के आर
तिकी रीति कही सो ऐसो होनो तो बोहोत दुर्लभ है
या कालमें तातें ओर साधन न बनें तो मनमें धैर्य करि
मुख होई रहें तथा बाहिर होइ रहें लौकिकमें न काहू
की सुनें न काहूको कछु कहे यह या कालमें अत्यंत
है बानी जो वचनामृत आवे सो अपने मुखसों कहे
ओर श्रवण लौकिक सो प्रयोजन न राखे काहेते दुष्ट
जो दुर्जन के मुखकी बानी को फल नाही दुःखदी होइ
तातें दुर्जन दुष्टको संग हू न करे उनकी बानीहू न सुने
या भांति पुष्टिमार्गीय भगवदीय रहे जो दुर्जन दुष्ट
प्राणी भगवदवार्ता करें ताऊ भगवदीय अन्यमा
र्गीय के मुखसों सर्वथा न सुने यह बाधक होत भ
क्ति मार्ग कहत हैं श्लोको [illegible] लदृष्ट नामित्रगाय
त्री कृतः [illegible] विमुक्त नस्पर्धमा [illegible] वर्णो अनु
भावितरो हिति ॥ याको अर्थ [illegible] अब श्रीहरि
रायजी कहत हैं जो अनेक दुष्ट के मुखते गायत्री सुनें तो कछु
फल नाही होत सो उलटो बाधक है काहेते उनके आ
र्गमें उत्तम है बाह्मणके संगते गायत्री को वर्ण जो
अक्षर सो दुष्ट स्वरूप होइ काहेते उनके गायत्री में ते

ाधिदैविकस्य आसुर होके देवता सर्वोत्तम रोधा
होइ जाय के केवल भौतिक होय जैसें ऐवे प्रव
जे नके सुखतें सुनिकें तें कथा वार्ता फलरूप न हो
बाधक होइ जैसें गंगाजल सुंदर है परंतु नीच स्त्री
नी चमार खोडाला रिके पात्र में होइ तो उत्तम जनन
सा प्रित करनो पडे ॥ जो सुवे तो न होनो पडे या भां
ति पात्रभेद है ॥ २१ ॥ श्लोक ॥ अतः पूर्वन्न स्वण
होथा प्रसूत जाय तो सावधान सर्वे सेव्य श्रनी ह्रैं ८
श्रवण कीर्तनानान ॥ २२ ॥ याको अर्थ ॥ ऐसो पुष्टि
र्मुख अन्य मार्गीय है ताके मुखतें भगवद्
धर्म सुनें तो कछु फल न होइ होय प्रति बाधक होय
उलटो उलटो प्रायश्चित करनो पडे ॥ जैसें गंगाजी
को पानी धारा छूटि कें रहि जाय नाली में भक्त कें गंगा
जल जो निकें न्ह यो होइ तो सर होय हू होय ताको प्रा
श्चित करनो पडे ॥ तातें पुष्टिमार्गीय वैष्णव सर्वत्र
म सावधान रहियो ॥ जो वैष्णव पुष्टिमार्ग में स्थिति
होइ मार्ग अनुसार क्रिया करे या भांति सुंदर पात्र
वृत्ति श्रवन कीर्तन प्रीति केवल करनो भक्ति मार्ग में प्र
दृष्टि होइ यह पुष्टिमार्ग में है ॥ २३ ॥ श्लोक ॥ सर्वोपरुत्तमोत
महेत्स्व ओर इ पुष्टिमार्गीय भगवदीय केवल
कहत हैं ॥ श्लोक ॥ निरपेक्ष हृष्णजनानि जाचार्य
पत्रा प्रिनग ॥ श्रीभागवत तत्वज्ञा दुःख में भाय वस्तु न
लोर ॥ याको अर्थ ॥ पुष्टिमार्गीय भगवदीय के सी
होय निरपेक्ष जाको कछु अपेक्षा नाही होय प्रा
काम हृदय में होइ लौकिक वैदिक कछु इच्छा स्त्री
न होय ॥ ऐसो निरपेक्ष होय ॥ वस्तु कुलि पर्यंत या
सनाल होय या वीर हृष्ण जना एक श्री हृष्ण जनको

नसवनमेतेराके श्री कृष्ण ही में अनन्यभाव होइ औ
अपने श्री आचार्यजी महाप्रभु के चरणकमल
को आश्रय मन में दृढ होइ और श्री भागवत को
तत्व जो श्री सुबोधिनी जी निबंध में ज्ञान होइ जो
रास भगवदीय मिले तिनही को संग कर्तव्य है तहां
श्री हरिरायजी कहत हैं जो या काल में ऐसे भग
वदीय मिलिवेको परम दुर्लभ हैं तातें ऐसे भगवदी
य न मिले तो और अन्य को संग मति करियो सो आ
गे कहत हैं ॥ श्लोक ॥ अतः सरणमंत्र हि कर्तव्य
मखिलं नतत ॥ यदुनंदन चरणौ रतिर्वा कापि विद्य
तिरध्रुया ॥ याको अर्थ यो ऊपर कहे ऐसे भगवदीय नाडुसी
जो न मिले तो सरणमंत्र अष्टाक्षर महामंत्र श्रीकृ
ष्णः सरणं मम ॥ या मंत्र को साधन करे ऐसी भावना क
रे ता ही करि अखिल कार्य सकल सिद्ध होइगो सो स
रणमंत्र हूं जब श्री आचार्यजी द्वारा सरण आयो तब
सिद्ध होइ सो श्री गुसांईजी विज्ञप्ति में कहे हैं श्लो ॥
यदुक्तं तात चरणैः श्रीकृष्णः सरणं मम ॥ तदेवास्ति
नोऽर्थं नमो हि के परलोकि के ॥ या श्री गुसांईजी कहत
हैं जो हमारे तात चरण श्री आचार्यजी महाप्रभुजी
की उक्त प्रगट की यो अष्टाक्षर महामंत्र ता करि यह
लोक के सर्व कार्य सिद्ध होइ ताते हम निश्चिंत हैं
इत्यादि वचन को विचार श्री महाप्रभुजी की सरण
होइ अष्टाक्षर की भावना करे तो सगरे कार्य होय
निश्चय ॥ श्लो ॥ तथा विधेयं कृपया यथा गोव
र्द्धनेश्वरः स्वयं यत्न विराहैव निजरूपं नताश्रितः ॥२५
या को अर्थ ॥ अब श्री हरिरायजी कहत हैं जो अहस
रा भगवद्धर्मैकपरक है सो यह कब होय जब श्री गो
वर्द्धननाथजी कृपा करें तब होइ अपने आश्रित जा

निरूपनेनिजस्वरूपकोंदानकरोंप्रसन्नहोइकेंतवही
सर्वकार्यसिद्धहोइ।सोयहपुष्टिमार्गसाधनसाध्यना
हीहैंकृपासाध्यहैं।गिरिराजकेसंबंधवुलिंदीपस्व
कृपाकरीनेसैंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकेसंबंधते
श्रीजीकृपाकरींतवसर्वसिद्धहोइ॥२५॥इतिश्रीह
रिराइजीकृतशिक्षापत्रएकत्रिंसनाकीटीकाश्री
गोपेश्वरजीकृतसंपूर्ण॥३१॥अबकृपाकहतेंजोश्रीजी
कीकृपाहोइतोतवसर्वकार्यसिद्धहोइ॥सोपंचपर्वा
अविद्यानासहोय।विद्यासिद्धहोइ।तवभगवान
श्रीकृष्णहृदयमेंविराजें।सोअविद्याइंपंचपर्वाकीं
कहिकहतहें।तातेयहसिक्षापत्रश्लोकदसकहिकें
वर्ननकरतहें।अवप्रथमअविद्याकोंप्रकारकहत
हें।काहतें।अविद्याजायतवविद्याहृदयमेंआवें।जैसें
रासावतारमेंश्रीकृष्णनेंभक्तनकीअविद्यादूरिक
रि।तवहृदयमेंपंचअविद्यास्थितिभई।सोश्रीसुबो
धिनीजीमेंवर्ननकरेंहें।ताहीअनुसारश्रीहरिराइजीव
र्ननकरतहें।श्लोकः॥कामाविष्टःक्रोधयुक्तःसंसारास
क्तःसंयुतः।लोभाभिभूतसततंधनाजनपरायणः॥१
याकोअर्थ।अबश्रीहरिराइजीकहतहेंजोअविद्याके
इतनेरूपहें।कामाविष्ट।हृदयमेंभगवानकेंवूंनहीं
स्थितिहोइ।कामाविष्टः।कामादिकविषयमेंलिप्त
आविशहोइ।सोश्रीआचार्यजीमहाप्रभुसंन्यासनि
र्णयमेंकहेहें।विषयाक्रांतदेहानांनाविशःसर्वथा
हरेः।इत्यादिवचनतेंजानोजोकामविशनकरनो
२।क्रोधःहृदयमेंक्रोधभस्योरहें।सोवेंकुत्तकोस्वरू
पहें।तहांचांडालरूपक्रोध मेंहोइ।त
गवानहृदयमेंकेसेंआवें।ता
तेंयहलौकिकसंसारमेंआसक्त

प॰ देवधरस्नसीके भगवत्पोष तामें अष्टप्रहरआसक्त हैं
तिनके हृदयमें भगवान नाहीं आवें ३ औरलोभक
रिभरे हैं इत्यादिके लीयें अपघात चोरीकरत हैं स्व
हीकोसर्वस्वपदार्थजानतो हैं अष्टप्रहरकोडीजोडि
वेमेंमनहै देहसंबंधीमें लोभहै ऐसेंके हृदयमेंभग
वाननहीं ४ औरधर्मात्मा धनकेउपायमेंपरायण
हैं आपनोधर्मवैष्णवता धनकेलीयेंजतावें अने
कवार्त्तासिद्धांतधनकेलीयेंकरें अष्टप्रहरधन
हीमेंमनराखें तिनकेहृदयमेंभगवाननरहें ५ अ
वऔरहूकहतहैं लोककेपदार्थरसतें रहितजेनि
तोयवाजिनें लोककुलभयाकोंनेविषयध्यान
नतृपरेभयाकेअर्थी दयाकरिकेंरहितहैं अनेक
जीवनकोंहिंसाकरेंवाकूंकोदुखदेखिप्रसन्नरह
तहैं याभांतिदयारंचकुमनमेंनाहीं है तिनकेहृद
यमेंभगवाननरहें ६ तेमकरिकेंजेरहितहैंभगव
दीवैष्णवमेंजिनकोंरंचकूंस्नेहनाहींहै किंवा
भगवद्वार्तासुनेंपरंतुरंचकूंभगवद्रसकोंढूंवी
मनहृदयमेंनहो ३ ऐसेंनके हृदयमेंभगवान
नरहें ७ नित्यसंतोषकरिकेंरहितहैं वैष्णवकोस
दासंतोषकरें ऐसोंलाकहमें संतोषनाहीं ऐसे
जीवअष्टप्रहरसंतोषविनाहायहायकरतें यहकार्यन
भयो याजुनोकहूं न कमायो अबकैसेंकामचले
गो याभांतिसदासंतोषकरिरहितहैं तिनकेहृदय
मेंभगवाननरहें ८ सदासर्वदासंतोषकरिसंतोष
करिआकुलरहे स्त्रीपुत्रादिकनकेप्रीतिकेंसोक
ग्रहादिकमेंसुखअथवासोकजाकेंसेंनिर्वाहहो
ओ याभांतिबालपनतेंवृद्धपर्यंतसोकहिकरिव्या
कुलरहे हैं औरसदाभयकरिहृदयमेंकंपायमान

...जडस्त्रीन्नादिककौंकालडर वैसादिककौ
उरतानसंबंधीहेद्दसंबंधीकोडर इत्यादिलौकिके
मैदकादिहृदयमेंतत्परहैं यावेसरहैंतावे हृदयमें
भगवानकऐहलरहैं।२।यावि षयादिकेवेसाधनमेंत
त्परहैं देहसोविषयनसिद्धिहोइ।मनवध्यानहीमन
मेंश्रनेकविचारकरें।याभांतिकडकार्यहैसोकोइवेस
वजानेतोंश्राछौ।याछोषानपानहोश्राश्राछोकपड
पहरेंपरस्त्रीकेमिलिवेकोविचारकरें।याभांतिक
डकार्यकरें।उहनशामिहोइ तवदुखपावें।मनही
मेंध्यानकरें।ऐसेविषयध्यानमेंतत्परहैंताकेहृद
यमेंभगवाननरहैं।३।अवश्रोरहूकहतहैं।श्लोक।
यहंवासुतक्रूरदेशूपलैकपोथवै।।श्लोक
तःसर्वेसाम्यचिंतनभावनो।।भाषाकोअर्थ।। अहंका
रयुक्तहैं।जोमोसमान औरदूसरोकोईनाहींहैं मेंब
हुतसमर्थहों।मेरेमेंबडीवैभवताहैं।मेंसेवास्म
रणाध्यनकरतहों।मेंश्रनेक मनोरथकरतहों सो
मगारवकुटंबकोपालनकरतहूं मेरेसगरेश्रापका
रीहैं।इत्यादिमनमेंअहंकाररारखें ताकेमनमेंहृद
यमेंभगवाननरहैं।४।अवकूरहृदयहोय परायेवुरा
हृदयमेंविचारें।मनमेंकपटहोय जोमेरोलावपरो
तो।तवदुखहैहैगो।याभांतिकेरहिहैं टेढोरहैं
ताकोवोल्यो।।जैसेकूरकपटीके हृदयमेंभगवा
नरहैं।५।अवमनकुकार्यकोइकरें।चोरीअन्याईके
कोवुराकरें।ताकोपटपातककरें।वाकोसाचकारके
ठी।सवनतेश्रापवैरवांधें।याभांतिदुष्टप्रानीके
संगकरें।ताके हृदयमेंभगवाननरहैं। ज्ञानमा
नस्थितितथापुष्टिमार्गविनाकोअसो कर्मे
उपासना इत्यादिमेंवाहेते

सेवकभावनाहीहैं सर्वेगुणभगवानके स्वरूपईको
ज्ञाननाहीहैं निराकारजानतहैं ताकेहृदयमेंभ
गवाननरहैं १५ साम्प्रचिंतनदेवतात्रसामहादे
वइद्वग्नि इत्यादिकौ चिंतनकरे इनसोंफलचा
हैं याभांतिअन्याश्रयकरैंताकेहृदयमेंभगवान
नरहैं अवश्रीआचार्यजीकहतहैं अस्तो[illegible] लौकिकविमु
खहू सजनवैमुख्यसमते हलसलीलादोषपरयो तथा
कर्मजडेपिच॥ ॥ लौकिकावेशात्श्रीकृ
ष्णविमुख भ्रष्ट अहंकार मिथ्याध्यान मिथ्याक्रियामि
थ्याभाषण लौकिकमेंमग्नश्रीकृष्णतेविमुख ऐसे
केहृदयमेंभगवाननरहैं १७ तथा हस्तके अन्न अन
न्यभगवदीयतेविमुख भगवदीयकीनिंदाकरें भग
वदीयकोदुःखदेइ ऐसेकेहृदयमेंभगवाननरहैं १८
श्रीकृष्णकीध्यानसमयविरोध तेसैंभगवानश्रीकृ
ष्णआपतेसेंईसेवानिरोध तामेंदोषदृष्टिजोप्रभु
कामादिकेवसहैं परस्त्रीयाभांतिचोरीमेंदोषदृष्टि
केहृदयमेंभगवाननरहैं १९ औरकर्मजडकर्म
मार्गमेंतत्पर श्राद्धादिसंध्यासेवाप्रभुकीछोडिदेइ
कर्मड़ीवोमुख्यजानेंभगवद्धर्ममेंप्रीतिनाहीऐसे
२० अवश्रीआचार्यजीकहतहैं

भूपितेंग

हु॥

नाभयावाच्य

श्रीवल्लभाचार्य

जीतिनके चरणारविंद मलते विमुख ऐसेके हृदयमेंश्री
कृष्णनरहैं सुंदर भगवद्वार्ता चौरासी इत्यादिवार्ता इ
त्यादिकोदूषक निंदकजोयहभाषाहैं अनेकयुक्त
करिकहत है इत्यादिभगवद्वार्तामेंजाकोविश्वास
नाहीहैं निंदकहैं लौकिककार्यमेंप्रसन्नहोइ

दयमें भगवान न रहैं। यस्तु पर। रम्भ्रा विराहे
ष अविद्याके वरते हैं। सो जाके हृदयमें रहैं। ताके हृ
दयमें श्रीहस्तक वहें न आवें। भगवदावेश ववहू न हो
अतातें वैस्नवको यह दुःविशदोषातें रहित रहनो
यह होय तें डरपता रहे। और जो वैस्नवके लछनके ह
तहैं। जो इतनो गुन होइ नो वैसबके हृदयमें श्री हु
स्वविराजें। सो तकहे न हैं। पालोक॥ हीनेषु दे निःप्रपं
चेतीनां चिन्तनतत्परा। स्वाचार्य सरणानित्पसर्वेका
मविवर्जिता। याको अर्थ॥ दीनहो स्वकीय इक छुव
हैं निरावरेतो सहिते श्रुसोश्रीगुसांईजी विज्ञप्तमें
कहे हैं स्लोक॥ आचार्यचरणोसनके दैन्यत्वतेथसा
धनं। श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीसुबोधनीजीमें कहे
हैं। जो प्रभु प्रयत्न करिवेको साधन एक दैन्यताही है
नातें दीन होइ तातें हृदयमें भगवान विराजें। और प्रभु
हृदय हो शुभ मनमें कपट छल छिद्र न होइ। प्रभुभाव
तें प्रभुको भजन स्मरण करे ताके हृदयमें भगवान
विराजें। स्त्रीकोविक प्रपंचादिकतें रहित होइ। ताकाहू देह
प्रबंधीमें मन न लगावें। एक प्रभुमें मनस्वी। कछुद
यसु कवप्रपंचको वाधव नकरें। ताके हृदयमें प्रभु विरा
जें। श्रीठाकुरजीकी लीलारसरूप वाके लीला दोनकी
ता रास लीला हियमें रहें। तिनके चिंतनमें तत्पर
हैं सो निरोधलक्षण में श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहे हैं
कृष्णविरह चिंतानां सवोसुरवैरिणः भगवानके गुण
लेमें प्रविष्ट होअनवछनेक दोषहृदयमें नेसुरदैन्यप
ग्रनिनवैरीकोनासहे। अतातें लीलामें जिनको चि
त्त रहे। तिनके हृदयमें प्रभु विराजत हैं। धाम्निपत्तेपुष्टि
जीयके आचार्यश्रीवल्लभाचार्यजीके चरणके
अहर्निस चित्तमें हें। सोश्री सर्वोत्तम

है ॥ अैसेयभक्तसंप्राथे चरणाकुंजको धनायनमा याम
ति श्रीमहाप्रभुजीके चरणकमलकी रज अपनेस
र्वस्वधनजान्यो है तिनके कृष्णाधरामृत सिद्ध है ति
नके हृदयमें श्रीकृष्ण विराजें ५ औरलौकिकवैदिक
हे हसंबंधी सर्व कामना तिनमें वर्जित हें यकहूं मनकी
आसक्ति प्रभु विना नाही ऐसे भक्तनके सर्वके हृ
दयमें प्रभु विराजें ६ श्रवण्यौ राहू कहत हें सो का व्रजजी
वरणांभोजरेणु प्राप्य भितस्तुवे गुणगानपरेकलम
नामार्थे परि भावुके ७ या [illegible] ब्रजभक्त स्वामि
नीजीके चरणकमलकी रेणुके प्राप्त अभिलाष
निसदिन मनहे जो मोको ब्रजभक्तनके चरणकमल
की रज कब प्राप्ति होइगी यही मनोरथ मनमें रहत है
जैसें उद्धवजी भ्रमरगीतके अध्यायमें कहेंहे सो श्लो
आसामहो चरणरेणुजुषामहंस्यां वृंदावने किम
पि गुल्मलतौषधीनां यदुस्त्यजं स्वजनमार्यपथं
च हित्वा भेजुर्मुकुंदपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्यां १
वंदे नंदव्रजस्त्रीणां पादरेणुमभीक्ष्णशः यासां ह
रिकथोद्गीतं पुनाति भुवनत्रयं २ इत्यादि वचनके भा
वविचार ताके हृदयमें श्रीकृष्ण बिराजें ७ श्रीकृ
ष्णकी लीलासंबंधी गुनगान करे सो द्वादसस्कंध
में श्रीशुकदेवजी कहत हें श्लोक कलेर्दोषनिधे रा
जन्नस्ति ह्येको महान्गुणः कीर्तनादेव कृष्णस्य
मुक्तबंधः परं व्रजेत् इत्यादि वचनके गुनगान करे
ताके हृदयमें प्रभु विराजें ८ कीर्तन न आवें तो श्रीकृष्ण
यह नामको अर्थ विचारिके अनुभव करे अष्टाक्षर म
हामंत्रको अर्थ प्रकट कहे है अष्टमस्कंध श्रीभागवतमें
कहेहें श्लोक अज्ञानादथवा ज्ञानादुत्तमश्लोक
नाम यत् संकीर्तितमघं पुंसो दहेदेधो यथानलः

पन्नामोच्चारणमाहात्म्य है। परयत पुत्रकाः अजामि
लोपियेनैव मृत्युपाशात्प्रमुच्यते॥ ऐसो श्री अष्टमस्कंध
मेंकहे हैं॥ तैसें भागवत मनुष्य सुनतार्थानुपानिश्चितं
स्मरंती स्नात्यंती हरंतो मककोलोयुगे॥ अन्यपाठ विचन
तें श्री ठकुरानीके नाममहीके अनुभवतें भगवान हृदयमें
विराजत हैं सब और रहत हैं॥ १६॥ अनन्य
नन्यसेवैकनिष्ठानन्यपरतो भगवद्धर्मे निरतो विर
क्तोगुनसंगिनि॥ व्याख्या॥ एक श्री ठकुरानीमें अन
न्य भाव हैं श्री ठकुरानीकी सेवा करनी श्री ठकुरानीको स्म
रण श्री ठकुरानीकी कथाको श्रवण गुन गान मन वच
न करके पुष्टिमार्गके धर्ममें अनन्य हैं आसक्तिमें क
रे हैं। ह्रासितश्रुतौ अनन्यसाधारणयत्तु तथैवानन्यसाध
ना अनन्यभोगभोगाय ते तु सर्वाधिकारिणः॥ १७॥ या
भांति अनन्य होइ नान्यं देवं नमस्कुर्यात नान्यं देवं प्र
तीक्षयेत॥ नान्यप्रसादमानहे नान्यदायतनं व्रजे
त् ऐसें अनन्य होइ ताके हृदयमें श्री ठकुरानी वि
राजे॥ १८॥ तथा अनन्य होइ पुष्टिमार्गीय जे सेवैष्ण
व हैं। तिनमें पूर्ण निष्ठा करि उन भगवदीयनको संग
करि उनकी सेवा करै सो भगवदीय गायो है॥ एक भग
सो व्रजभक्तनीसौं दूजे नंदकिसोरकों॥ और भांति वर्द्धनी
में श्री आचार्यजी महाप्रभुन कहे हैं॥ अतः स्थेयं हरि
स्थाने तदीयैः सह तत्परैः प्रभुके स्थानमें तदीयके सं
ग तत्पर है ताके हृदयमें प्रभु विराजे॥ १९॥ सो ऐसें भग
वद्धर्ममें रति होइ यह पुष्टिमार्गके धर्ममें भी निश्च
य और साधनादिमें मन न लगावें और नवरत्नग्रं
थमें श्री आचार्यजी महाप्रभुन कहे हैं॥ पुष्टिमार्गस्थि
तो यस्मात्साक्षिणो भक्तवारिविला सेवाहृतिर्गु
रोराज्ञा बाधनं वा हरिइच्छया॥ २०॥ पाछें जितगुरुकी आ

प० ७ गपीप्रमानपुष्टिमार्गमेंस्थितिहोइसंसारादिमेंसालीवा
रहेजैसेंजलमेंकमलहै। याभांतिभगवद्रूसमेंरतिहोय
ताकेहृदयमेंप्रभुविराजें।१५। औरविरक्तहोयकेंजोकिक
तेसर्वप्रभुमेंसमर्पनकरिदेइ।। सोश्रीआचार्यजीमहा
प्रभुनिश्चयतेंहृदयमेंकहेहें। तस्मात्दोसर्वकार्यस
वेंवस्तुसमर्पनें याभांतिजोवैष्णवभगवानकोसम
र्पनकरिकेंऔरतेंविरक्तहोयरहेंतिनकेहृदयमें
प्रभुविराजतहें। यवऔरहूंकहतहें।।श्लोक।। तस्मात्
भावसंयुक्तैस्सर्वस्तत्परसात्तिग ग्रंथंचलहृत्स्वली
लावंचचवेश्नोनाकुले।।१।। याकोअर्थ।। श्रीकृष्णमें
आर्तिभरेंतें प्रभुकृपाकरें।। सोनिरोधलक्षणमेंश्री
आचार्यजीमहाप्रभुकहेंहें।। श्लोक।। कृष्णमाना
नुजनानंदपूर्णहरिपायुक्तोपदाभवेत्।। तदासर्वसदा
नंस्सर्वहिस्थंनिर्गतंबहि।। इतिवचनात्।। भक्तकोआ
र्तिलेंसंयुक्तभगवानदेखिकेंकृपायुक्तहोइसर्व
केंआनंददाता।। ऐसेप्रभुबाहरप्रगटहोइदरसन
देइस्वरूपनोअनुभवकरावें।। तातेंआर्तितोयहपु
ष्टिमार्गकोफलहें।। तहांप्रभुपधारें।। ५ श्रीकृष्ण
मेंभावभरेंतेंजेसेंस्त्रीकोव्याहहोइ।तवहीभा
वहोइजोयहमेरोपतिहें।।तेसेंइजवश्रीआचा
र्यजीद्वारानिवेदनहोइ।तवश्रीकृष्णमेंभावया
कोहोइ।।सर्वस्वश्रीकृष्णहीकोजानें।।यहभावहोइ
तवभगवानहृदयमेंपधारेंई।। भगवद्स्वरूप
ममेसरसहोइ।।औरअन्यमार्गीयरसतथावि
षयादिरसकरिहीनहोय।।एकपुष्टिमार्गमेंकृष्णा
धरामृतास्वादः यहीरसकीसिद्धिचाहें।।ऐसेंरसि
कवैष्णवनकेहृदयमेंप्रभुपधारें।।१७।। अथवलग
भीरबुद्धिहोइ।।अन्यमार्गीयकेसंगतेंदुष्टके

संगतें विषयादिके संगतें विषयादिकके संगतें बुद्धि च
लायमान न होय ॥ सो इह पुष्टिमार्ग में होइ ताके हृ
दय में प्रभु पधारें ॥ १८ ॥ श्री कृष्ण की लीला नाना प्र
कार की तामें चातें चंचल होय ॥ ताममें लीलारस में
मग्न होय ॥ सो सिद्धांतमुक्तावली में श्री आचार्य जी
महाप्रभु कहे हैं चेतस्तत्प्रवणं सेवा ॥ एह मानसी
जो चित्त एकरस नदी के प्रवाह की नाईं श्री हरि जो
प्रभु की लीला में रहें ॥ तहां सेवा करें या भांति जाको चि
त प्रभु की लीला में चंचल होय ताके हृदय में प्रभु प
धारें ॥ १९ ॥ श्री कृष्ण के दरसन कों मन वारंवार आ
कुल रहे ॥ सो श्री भागवत एकादस स्कंध में उद्धव जी
कहे हैं श्लोक ॥ दुर्लभो मानुषो देहो देहीनां क्षणभं
गुरः ॥ तत्रापि दुर्लभं मन्ये वैकुंठप्रियदर्शनं ॥ इत्यादि
क वचन तें जाननी ॥ जो यह मनुष्य देह परम दुर्लभ
है ॥ क्षणमें भंग होइ जाय ॥ तामें भगवान को दरसन प
रम दुर्लभ है ॥ सो एक देह सो होत है सो कुंभनदास जी
को यह भाव है ॥ एक समें श्री गोवर्द्धननाथ जी कें
अंतराय सों चि.ते दिन इत गुसांई जी देखे ॥ ऐसें दर्श
न में आर्ति होय ताके हृदय में प्रभु विराजें ॥ २० ॥ सव
श्रीरघुं रत हैं श्लोक ॥ मनोरथ सनातनं तें सब वैरा
सीन्य स्मृतें ॥ एतादृश सुहृदये हरिर्विशते तत्क्षणात्
१४ ॥ याको अर्थ ॥ जैसें व्रजभक्तन नाना प्रकार के मनोर
थ श्री ठाकुर जी के सुख के अर्थ होत हैं ॥ वा गाव स्या
भया ॥ सो प्रगीत तन मन धन सर्वात्मभाव प्रभु में है ते
सेई पुष्टिमार्ग में वल्लभकुल सर्वस्व श्री कृष्ण को विवि
ध भाव राखत हैं तैसेई तन मन धन करि के सब प्रभु
ही के कार्य में सेवा में अनेक मनोरथ
करत होइ तो मन ही तें नाना प्रकार

मानसीसेवा ताके हृदयमें प्रभु बिराजे पर श्रीआचार्यजी लौकि
क वैदिक में देह संबंधी कार्य में सब ठौर आपने मनको
उदास राखे तो विकमें साक्षीवत रहे संसार के दुख
सुख के मन उदासीन रहे तो प्रभु हृदयमें है श्रीआ
चार्य श्री हरिरायजी कहत हैं जो यह द्वाविंशगुण विचार
प्रजावे सब के हृदयमें आवे ताके हृदयमें श्रीकृष्ण प
धारें तें स्वरूपानंदको अनुभव करावें जैसें व्रजभ
क्तनको अविद्या दूरि भई विद्या सिद्धि भई तथा श्रीकृ
ष्ण हृदयमें बिराजे तेसें ई वे सब द्वाविंशद्दोष छोडि
द्वाविंशगुणको धारन करें तो श्रीकृष्ण निश्चय ताई
ताके हृदयमें पधारें १ इति श्री हरिरायजी कृत सि
क्षापत्र ना की टीका श्री गोपेश्वरजी कृत संपूर्ण ३२
अब कछु विद्या अविद्या के प्रकार कहे है सो व्रजभक्तन
के हूं प्रभु ही सिद्ध कीनी तब भये भक्त को सामर्थ्य नाही
है प्रभु ही अविद्या दूरि कीनी पाछें विद्यादान कीनी
सामर्थ्य आपनी दीनी तब रासपंचाध्यायी में प्रतिबं
धक भये ते छोडि के सगरे प्रभु पास पधारे अनुभव भये
तेसें हमारे पुष्टिमार्गमें जब प्रभु कृपा करें तब ही फल
होइ सो आगें कहत हैं लौकिक अग्निमार्गे प्रभोरि
च्छामात्रं सर्वकारणं सो वचनामृत्यावन प्रतिकू
लो फलं निजेच्छयातो अयं श्री हरिरायजी क
हत हैं जो हमारे श्रीवल्लभाचार्यजी के पुष्टिमार्गमें
हैं जो श्रीकृष्ण प्रभु की इच्छा है सब कार्य में कारन
है देवी जीव के आगे को होइ सो दुःसंगते सब होइ त
था और को ईश्वर नाही ब्राह्मणादिक वैश्य शूद्र कोई
वरण होइ ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र कोई वरन होइ त
था प्रतिकूल मार्ग को देवी व असुर होइ म्लेच्छ सं
इ चांडाल माला हत्यादिक होय सब धर्मकरि रहि

सें कों प्रभुकी इच्छा तें सरन आय। यह पुष्टिमार्गकं
कों निश्चय पावें। तातें इच्छा ही नें मुख्य है। सो वानो
च्छि है। अलीवानओं र अलीघासकी वेटी भगवद् इ
नसरन श्रीगुसांईजी की आज्ञा चाहरिवंसजी द्वारा
लेआये। तातें प्रभु की इच्छा परम कारन है। तातें भग
इच्छा परम कारन है। तातें भगवद् इच्छा ऽ परम कारन
मुख्य है यह निश्चय सिद्धांत जाननों। श्लोक॥ नरा
रननागसु दैत्याश्च रसोभूतान। सदीनेषु निजामि
प्रभु अनुकूलो करोति हि। २। याको अर्थ॥ ताके वरन
कोनास होय तब वहरि केहूत सेवामें अंगीकार होइ
काहे तें यह वरनधर्म है। लोक सेवा में प्रतिवंध है प्रभु
संवंधी नाही है देह संवंधी है। जहां जीव जाके घरस
नटे। सो ईश्वर न करावें। मैं यों छुटै वह वरनधर्म जान
पहै। फलन हो। जहां जे भले ऽ। तहां को वरनधर्म उह
आत्मा संवंधी नाही है। देह संवंधी है। जहां लों देह
तहां तांई वरनधर्म। तातें भगवद् सेवामें कामना आ
वें। प्रभु को अंगीकृत न करवावें। तातें श्री आचार्य
जी महाप्रभु प्रगट होइ कें आत्मनिवेदन करवाए
ताकरि सगरे देह संवंधी वरनको नास भयो। जो मे
फलानी जाति यह अहंता ममता छुटी। यह भाव
भयो जो मैं तो प्रभु को दास हों। यह दैन्य सिद्ध भयो
भगवान को संवंधी भयो। सव भाव वेद सवनि में अंगी
कार भयो। जैसे संवंध तें सुख भयो। सो दीनता के
दिदस्वभाव है भयो। तव प्रभु की इच्छा आपु तें भई
जो अव तो यह मेरो भयो। अव तो छांड्यो न जाय
तातें प्रभु की निज इच्छा भई। प्रभु अनु
सिद्धि भए सो कहत हैं। ३। श्लोक॥
साना किं फलं तु द्वे भमतें। कृपावजायतें

तव
दा

प. २६

कसिद्धिनस्रोनात ॥ अथ आके अथ श्री अव श्रीहरिराइजी मह
न हैं ॥ तव प्रभु श्रीहसग्र अनुसरण ॥ तव सगारोपकतासि
द्ध भयो ॥ यामें संदेह नाहीं है ॥ तातें श्रीहस की कृपावो हू
कारण ॥ कछु सैन्य नाहीं ॥ सो लोकिकमें कछू प्रसिद्धि दि
यत हैं ॥ जो के सोऊ वैरी होइ के सोऊ काम बिगाडें ॥ परंतु
आयके शरण पडें ॥ तो मैं तो तुम्हारो हों ॥ अब चाहो सो क
रो ॥ तव गृह कृपाही करें ॥ मारयो न जाय ॥ तसें अनेक जन्म
ते जीव भूल्यो है ॥ सो सब श्रीआचार्यजी द्वारा समर्पन
करिकैं दैन्य होय रहे ॥ तो मैं श्रीहस को दास हूं ॥ तव प्र
भु प्रसन्न हैं ॥ कृपा करें ॥ सो श्रीभागवत एकादश
स्कंध में पिंगला वाक्य ॥ श्लो ॥ संसारकूपे पतितं विष
येर्मुषितेक्षणं ग्रस्तं कालाहिनात्मानं कोऽन्यस्त्रातुम
धीश्वरः ॥ १ ॥ और पुरुरवाने विनति करी है ॥ श्लोक ॥ पुरु
न्या ह्रिस्तं चित्तं कोऽन्यो मोहयतुं क्षमः आत्मारामेश्व
रमृते भगवंतमधोक्षजं ॥ २ ॥ शुकदेवजी कहे हैं ॥ श्लो
॥ घोरे कलियुगे प्राप्ते सर्वधर्मविवर्जिते ॥ वासु
देवपरा मर्त्यास्ते कृतार्था न संशयः ॥ ३ ॥ पुरूरवा न्या ह्रिस्तं चित
कोऽन्यो मोहयतुं क्षमः ॥ आत्मारामेश्वरमृते भगवंतम
धोक्षजं ॥ ४ ॥ या भांति पिंगला पुरुरवा ने ॥ और हूं द्रुपदी
गजेंद्र जिनने आर्ति करि सरन आये ॥ तिन सबन को प्र
भु उद्धार करे ॥ और कलियुग यह महा कठिन काल है
सर्वधर्मकरि वर्जित है ॥ तातें एक प्रभु को आश्रय करि
दैन्यही करि कें पाप मुक्त होत हैं ॥ यह सिद्ध है ॥ ५ ॥ अव
और हू प्रकार दैन्य को कहत हैं ॥ श्लो ॥ अत्र नो दैन्यं
हि मार्गो ह्यत्र न परं साधनं मतं ॥ अभिमानो दृढ्यापि
सततं नाह्विरो ॥ ६ ॥ इति ॥ अथ [illegible] अव श्रीहरिरा
इजी कहत हैं ॥ जो हमारे श्रीवल्लभाचार्यजी के मार्ग
में परमसाधन एक दैन्य है ॥ दैन्यभावना करणार्थ

सर्वसमर्पन है तातें जाकों दैन्यता सिद्ध भई तिनकोंय
ह पुष्टिमार्ग को फल सिद्ध ही भयो। सो विवेकमें श्रीगु
साँईजी कहे हैं। यादृसी तादृसी नाथ त्वं पास्यामेक किं
करो। न दृष्ट्वा कथमाप्यासु करदृग्गोचरं न मा। यद्रूपा
हि वहन लोकू देवे कहे। जैसी तैसी तुम्हारी चरणा क
मल की पिं करी दासी हों। तातें आपनी जानि कृपा क
रि मेरे नेत्रन कों दर्शन वेगि ही करावो। और श्री आ
चार्यजी महाप्रभु श्रीसुबोधनीजी में कहे हैं। दैन्यतनो
र्व साधन। या भांति दैन्यता सर्वोपरसाधन है यह पुष्टि
मार्ग के फल में विरोधी ये कर्म अभिमान ही निरंतर
रि ही बाधक है। ताही तें श्री आचार्यजी महाप्रभु विवेक
धैर्याश्रयमें कहे हैं॥ अभिमानस्च संत्याज्यः स्वामाधीनत्व
भावनात्। विशेषतश्चेदाज्ञा स्यादन्तःकरणगोचर
ः। अभिमान तौ सर्वतें न होइ सो क्यों के दासको नाही
कर्तव्य है। काहेतें स्वामी के आधीन की भावना दास
को कर्तव्य है। काहेतें स्वामी के आधीन की भावना ही
सकों कर्तव्य है। पो अभिमान तें दासपनो जात रहें तो
तें बडो बाधक है। यह पुष्टिमार्ग के फल में विरोधी है
ध अब और हू कहत है श्लोक॥ तौ विज्ञाय प्रयत्नेन
परित्याज्यो फलार्थिभिः। रोक्ष्यां समस्त इन्द्रियाणां सा
धनैरेव नाशयेत्। पर्या को अर्थ॥ और प्रभु सों कछु
फलार्थ किं जाति कर न हीं। काहे तें लौकिक की प्रार्थना
ते लौकिक सुख तो सर्व इन्द्रियन को साधन नाही है
त है। सगरे साधन को नाश है। सो निरोधलक्षण में
आचार्यजी महाप्रभु कहे हैं। संसारावेशदुष्टानां इं
द्रियाणां हिताय वै। संसारावेश सों इन्द्रिय को
प्रिय है। तातें कछु फल न मांगनो। सो विवेक
यमें श्रीमहाप्रभुजी कहे हैं। श्लोक। प्रार्थिते

य॰ किंस्यान्स्वांमिभिःप्रार्थसंशयात्‌ प्रभुतेप्रार्थनाकरि
१० ये काहेतैं स्वामीजोश्रीकृष्ण तिनके मनमें अभिप्रायक
हाहै हे प्रभु कहा जानियैं कहादान विचार्योहै देनकू
और जीवबुद्धि तैं कहा मांगे तो प्रभु अप्रसन्न होइजा
ये तो वडो परमार्थ विना मांगे देते यह तुच्छ मांग्यो तातु
च्छ दै तो या भांति प्रार्थना करते फलसें न ताहीं होइ
लौकिक सिद्ध करें तो सगरी इंद्री विमुख होइ जाइ
तातें प्रार्थना प्रभुसों सर्वथा हीन करनी श्लोक॥ श्र
यताश्रयमात्रेणनासंपविष्यतिमत्प्रभुः निजावा
सोक्तिनानां तु होष्यवन्निस्वरूपनर्द्दिया ॥ कोऽत्र योऽकूपर
क ह्नैसें प्रार्थनातें फलको दान होइ नाहीं ना सहा
इ सो कहत हैं तो दामोदरदासने भरवारकी वातो
में है स्वामीने रंचक अन्याश्रय कीयो तो प्रभु असलछु
ट्यगयो ऐसो वाधक है श्रीगुसांईजी विज्ञप्ति में क
हे है श्लोक॥ श्रहं वरंगीहृगम्‌ी संगी मांगील तो
न्मय अन्यसंबंधगंधोपी कंधरां सुखबाधते १ अ
न्यसंबंधगंध होय तो गरो कटै प्रभु सों अन्या
श्रय न सह्योजाय नंदराइजी चंडिकापूजन गा
ये सो प्रभु को बुरी लागी तब तहां सुदरसन सर्पने
नंदराइजीको निगल गयो तब प्रभु की सरण होइ
प्रार्थना करी तब छुटे तातें अन्याश्रय महाबाधक है
और अपने श्रीवल्लभाचार्यजी के आश्रय ऐसे जो
भगवदीयजन है तिनमें जो दोषदृष्टि जो कोउ देखत
है भगवदीयको दोष देखे तिनको नास होइ निश्चय
जैसे अग्निमें पतंग जरमरत है अग्निको कछु नाहीं वि
गडत है तातें भगवदीय में दोष न विचारे जैसे अग्नि
सूर्य सर्व में है परंतु शुद्ध है जैसे महादेवजी विषपान
कीयो तो उनको कहा वाधक है ईश्वर सर्व जड चेतन्य

तो कहा बाधक है॥ तैसें ई भगवदीयमें दोषबुद्धि
नको फल नास होइ॥ श्लोक॥ संबंधमात्रतो
ग्री भवेति रागमात्रतः॥ अतः स्वाचार्यमात्रैकरा
त्तनुरागिता॥ २॥ याकौ अर्थ॥ श्री आचार्यजी के संबंधमा
त जो एकल राग जो डारे सो ई भस्म होय जाय॥ यामें
सा कहनो॥ सो प्रसिद्ध है स्त्रियन में॥ तैसें ई जो आचा
श्री वल्लभाचार्यजी के सरणमात्रतें सकल दोषभ
स्मरणकाल में होइ तौ जरूर॥ आचार्यजी के चरनक
मलकों छूट एक आश्रय करें ताके दोष भस्म होय
यामें कहा कहनो॥ उचित ही है॥ श्री महाप्रभुजी के च
रणकमल के आश्रय तें दोष दूरि होइ॥ और दैन्य
तातें सिद्ध होइ फलरूप॥ श्लोक॥ न तु यथा विबोधा
थो विहितो निष्फलत्वतः॥ दुःसंगाः वर्जितैः संगसंप्रा
प्राप्तैरपि॥ ३॥ याकौ अर्थ॥ यह पुष्टिमार्गीय ग्रं
थ श्री आचार्यजी महाप्रभु श्री गुसांईजी के आदिली
सुबोधिनीजी निबंध अनुभाष्य टिप्पनी विद्वन्मंड
न इत्यादि छोडके ग्रंथ श्री सर्वोत्तमादि इनके भाव
के बोध भये तें आश्रय सिद्ध होइ सो सर्वोत्तम ग्रंथ
में श्री आचार्यजी के पुत्र श्री गुसांईजी कहे हैं श्लोक
न दुर्लभमपि दुर्बोधं सुबोधं स्याद्यथा तथा॥ इति वचना
न॥ वे सबै पर कहे हैं॥ जो न होतो इनके ग्रंथको बोध
न होइ॥ न होतो इ प्रभुकी प्राप्ति नाहीं॥ न होतो इ प्रभुक
पान करें पो याके लिये जीवनको तो वे हदु बोध है
जान्यो नाहीं जात है॥ ताके लीये श्री गुसांईजी सर्वोत
म प्रगट कीए॥ यामें १०८ श्री आचार्यजी महाप्रभुजी
के अलौकिक नाम हैं॥ यह सर्वोत्तम के जपकौ
निश्चय वे हदु बोध होय॥ श्री
को गान करें॥ निश्चय॥

प॰ श्लोक॥ हल धयामृता स्यादू सिद्धिरत्न न संसय: या
१ भांति तातें सर्वोत्तम कौं जप वैष्णव कों आवस्यक नेम
है यह करिसवों सुबोध होइ॥ दैन्य होय आश्रय सिद्ध
होइ॥ तातें फलार्थ श्रीगुसांईजी प्रयत्न कीयो है तेस
र्वै वैष्णव को हू प्रयत्न करि सगरे पुष्टिमारगीय ग्रंथन
कौ अवलोकन करनो॥ और दुःसंग को त्याग करें
सत्संग मासके यत्न करिके आश्रय होय दैन्य होइ ताही
तें प्रथमस्कंधमें श्रीभागवत में श्रीशौनकजी कहे हैं
श्लोक॥ तुलयाम लवेनापि न स्वर्गं न पुनर्भवं भग
वत्संगीसंगस्य मर्त्यानां [illegible] शिष: १ याभांति
सत्संगवरावरि सुख न स्वर्गमें है न मोक्षहूमें है ता
तें सत्संग करें तो दैन्य और भगवदाश्रय सिद्ध होइ
टाली क॥ स्थैर्य सेवा परे रन्याश्रय त्याग विवेक
रो॥ कामलोभादिदोषैक परित्यागो हृदि स्मृत॥ दीया
को य श्री॥ अवश्रीहरिरायजी कहत हैं जो श्रीकृष्ण
की से[illegible] स्थिर होय काहेतें यह पुष्टिमारग
में परमफलरूप भगवत्सेवा ही है और श्रीभागव
त नवमस्कंधमें श्रीभगवान कहे हैं श्लोक॥ मत्से
वया प्रतीतं च सालोक्यादि चतुष्टयं नेच्छंति सेव
या पूर्णाः कुतोन्यत्कालविलुप्तं॥ २॥ इतिवचनात ए
से भगवत्सेवामें विश्वास करि है जो चतुष्टय मुक्ति
पर्यंत नाहीं चाहत हैं याभांति सेवामें पूर्ण होइ तिन
को काल नाहीं बाधक है याभांति श्रीकृष्णकी सेवामें
स्थिति होइ॥ और अन्याश्रय न करें देवतान्तरादिक
न आदिको आश्रय रंचक होइ तो फलको नास होइ
तातें अन्याश्रय न करें ऐसो विचारि करि अपने मार्ग
को टेक लीये रहे॥ और कामादि विषय और लोभ को
त्याग करें॥ काहेतें कामादि विषयन तें श्रीठाकुरजी

हृदयमेंतेंप्रधानहैं।औरलोभकोप्रसंगासक्तिहो
तहैंसोलोभकरिकेंपापपुण्यविचारतनाहींहैंअ
पनोस्वार्थहीकेवलहोय।ताकेवसहोइऐसाद्रिद्री
तथाइहस्वंवेधीकुंदेवतिनहीकीरक्षाकरतहैं।औसे
लोभीऔरकामीकेंहृदयमेंप्रभुनआवैं।तातेंकाम
लोभसदात्यागकरें।तवहैंन्यसिद्धिहोयफलरूपाहे
इतिश्रीहरिराइजीकृतसितापत्रनाकीटीकाश्रीगो
पेश्वरजीकृतसंपूर्णा।।७३।।अवकेपकहेहैंनमुख्य
हैं।सोग्रंथकेवाधतेसन्संगतेसेवातेंन्यहोयहेंसोसे
वाद्दोयप्रकारहैं।एकमुखारविंदकीभक्तिसर्वोपर
रकवेरागकसत्वकीभक्ति।सोआगेंहेकुंभक्तिकोप्र
कारकहतहैंश्लोक।।श्रीकृष्णःसर्वदासेव्यःफलप्र
मस्वतःस्तुसःमुखारविंदभजेपवसालात्सेवेवरूप
या।१।याकोअर्थ।।यवश्रीहरिराइजीकहतहैंजो
यहपुष्टिमार्गमेंतोसदासर्वदाश्रीकृष्णजीहीसे
व्यहैं।सोश्रीआचार्यजीमहाप्रभुचतुःश्लोकीमेंक
हेंहैंसर्वदासर्वभावेनभजनीयोव्रजाधिपःइतिव
चनात।सर्वदासर्वभावकरिव्रजकेअधिपतिश्री
कृष्णतिनहीकीसेवाकर्तव्यहैं।स्वस्यायमेवधर्मो
हीनान्यःक्वापिकदाचन।।महाप्रभुजीकहेहैं
सवहमारोयहधर्महैहमारेपुष्टिमार्गमेंजोकोइआश्रि
तहैंतिनकोंयहीधर्महैं।निश्चयश्रीकृष्णसेवाहीक
र्तव्यहैं।औरकोइवसाधिकोईकालमेंदूसरोसाधन
नाहींक्योंतेंयाहेनाईकरिकेंपुष्टिमार्गकेफलकीप्राप्ति
स्वतःआपुहीतेंसिद्धहोयहैं।तातेंमार्गेनाहींनहींकर्त
व्यसेवाहीकर्तव्यहैं।काहेतेंमुखारविंदकीभक्तिसों
सालात्स्वरूपसेवातेंसिद्धहोइ
तम

प. मेंसाक्षात्कारहै मुखारविंदरूपकी भक्तिकहतहैं
२ सर्वोपरहै औरश्रवचरणारविंदकी भक्तिकहतहैं
श्लो चरणात्मकभक्तातु धर्मसेवात्मरूपया धर्म
द्वारात्तद्विशिष्टे प्रभुप्राप्तो नसंशयः २ या अ
चरणात्मक भक्ति है सोधर्मसेवात्मकरूपहै जैसेंश्र
गोपेस्ला सिवनारदसनकादिकसबकरिआरोहै
ताहीभांतिमर्यादासंयुक्त धर्मवर्तनकरनो यहधर्म
द्वाराभक्ति है ताऊंतें प्रभुकीप्राप्तिहै यामेंसंसयना
हीहै तहांसंदेहकोईकरैजोऊपरमुखारविंदकीभक्ति
कहे धर्मसेवात्मकहीद्वाराप्रभुकीभक्तिवताई तब
दोऊएकहीभई तबश्रीआचार्यजीमहाप्रभुप्रगटहो
इकेंकहत अधिकारकीरी यासंदेहहोइ तहां
कहतहैं तापदमें बहुतभेदहैं पुष्टिभक्तिमेंअधरामृ
तरसकोपान औरमर्यादाभक्ति धर्मरूप तासेंमुक्ता
दिफलहैं सोआगेंनिरूपणकरतहैं फलकोप्रकार
२ श्लो तत्रसायुज्यसंबंधानलोभामृतसेवनं मु
खारविंदभक्तौतु साक्षात्सेवनमत ३ या अ
यहआचरणात्मकमर्यादाभक्तिकें सायुज्यभक्तिकी
प्राप्तिहै ताहूमेंएकभेदहै जोकोभागवतसोसेवानक
रे कछुकामनामनमेंरंचकहूनराखे जैसेंप्रह्लाद
जीभक्तिकरी पाछेंनृसिंघजीखंभमेंतेंप्रगटहोक
हतहे प्रह्लादकछुमांगि तबप्रह्लादनेकही
मेंव्योहारीनाहीहों मेरेमेंकदाचितमांगिवेकी
वासनाहोय सोप्रभुमहूरिकरिदेहु याप्रकारतें
सुकामकरें तबसायुज्यमुक्तिमेंरूपप्रभुमेंलीन
होइ औरमुखारविंदकीभक्तिहै सोतोप्रभुकी
साक्षात्सेवारूपहै भक्तियनमेंहू प्रभुकीसेवाओ
रफलप्राप्तिभयेपाछेंहू प्रभुकीसेवायामेंसाधनफल

यारो नाहीं। सदा प्रभु को साक्षात् स्वरूपानंद को अनुभव
है। तातें मुख्यार्थ विषे पुष्टिभक्ति सर्वोपरि है। और मर्यादाभ
क्ति में बड़ो तारतम्य है। तातें दोय न्यारी न्यारी भक्ति वर्णी
हैं।। श्लोक।। एतादृक् फलितभक्तिर्भवेत्केवलपुष्टि
तः।। तत्रापि मुख्यरूपोऽस्मदाचार्याश्रय। तत्र सर्वथा
कार्य सततं स्थिरं भवेत्।। याको अर्थ।। ऐसी यह मुख्य
फलरूप की पुष्टिभक्ति ताको साधन एक श्री आचार्यजी महा
प्रभु के आश्रय पर साधन है। तातें प्रथम सर्वथा यही कार्य कै
तेयो है। हमारे श्री वल्लभाचार्यजी के सरन आयनामति
वेदन करि पाछैं अपने मन में दृढ़ श्री वल्लभाचार्यजी के
चरणकमल को आश्रय करे। ऐसे ही सब स्थिर सर्व
न कार्य सिद्ध होइ यामें संशय नाहीं है। तातें मुख्यरवि
र की भक्ति में एक श्री आचार्यजी को आश्रय ही साध
न है। और कोई नाहीं।। श्लोक।। अतः परं तु न इतरत्
स्या साधनादिकं। निरूप्यते खलो याय तत्कृपातो
हृदि स्थितं।। याको अर्थ।। और मर्यादाभक्ति है। तातें
नो साधन अनेक प्रकार के हैं। पाछैं मुक्ति फल है। और
पुष्टिभक्ति में केवल श्री आचार्यजी को आश्रय।
तातें शरणात्मक भक्ति वार साधन कहे हैं। आगे
निरूपण करत हैं। अपने मन में संतोषार्थ तथा अपने
नरी पुष्टिमार्गीय भगवदीय के संतोषार्थ जो
हमको ऐसो दान श्री आचार्यजी महाप्रभु दीये हैं
या प्रकार निरूपण करत हैं लहं श्रीमहाप्रभुजी को कृ
पा तें यह पुष्टिमार्गीय भगवदीय भक्ति हृदय में स्थि
ति होइ श्री पूर्णपुरुषोत्तम लीला सहित दोऊ
भक्ति के साधन कहत हैं।। श्लोक।। यथा मर्यादाभ
क्तौ श्रवणादि साधनं। तथा सर्वोत्तम
नत्वेन बुध्यतां।। याको अर्थ।। जैसे

तें स्नेहस्वभाव है सो ईसाधन हैं सगरो स्नेहलाड स्नेहमय
है आपनपेको हू स्नेहमान नहीं यह स्नेहया भांतिसब
ओर स्नेहस्वभाव पाइ भयोहा भक्तिको साधन है तेसेंई यह
पुष्टिमार्ग रुजभक्तनके भावात्मक है तातें भावहीयहा
भावनासाधन है तातें रुजभक्तनको भावकी भावना
करे यहीसाधन बुद्धिमें निश्चय राखे ७ श्लो॰ वस्तु
तस्तु फलं चैव फलं स्यात्तः प्रवेशनं तत्स्वरूपं तु सर्वेषां
देहातः कारणात्मनो ७ या श्लोक को ऊपर मर्यादाभ
क्तिकहै तामें वस्तुतः जो अक्षरब्रह्मस्वरूप फल तामें
प्रवेश होय फेर माया के गुणमें न आवे यह मर्या
दामारगीय फल और पुष्टिमारगीयको प्रभुकी
लीलारूप फलमें प्रवेश तहा स्वरूपात्मक रसको
अनुभव है तातें सेवानें अत्तेंद्रस्तन अंतःकरणसों
प्रभुकी लीलाको अनुभव सर्वेंद्रीयनको मन औ
नसर्व प्रभुमें तत्परता जैसें ब्रजसंबंधमें गायाये मैं क
हे हैं याप्रकार मुख्यफल लीलारूप ताको अनुभ
व पुष्टिमारगीय भक्तको याप्रकार सो मर्यादापुष्टिभ
क्तिको न्यारे न्यारे फलवर्णन है तातें पुष्टिभक्ति परम
रसात्मक सर्वोपरि श्रेष्ठ है ८ श्लो॰ येन भावेन भ
गवत्यात्मभावो हि जायते तस्मात् तद्भाववान् स्वदेह
हि सकलं स्यात् तदर्थकं ८ या श्लोक को ऊपर कहे ता
भांति भाव जो भगवान में बढे आपनी आत्माको
भाव बढे प्रभुमें तो भाव हू बढे और जो आपनी आ
त्माको भाव बढे प्रभुमें तो भाव हू बढे और जो आ
पनी आत्माको भाव भगवानमें न बढे तो भावजा
मरहे तातें आपनी आत्माको भाव भगवानमें ब
हे जाप्रकार सों उपाय करत रहे तो जब आपनी आ
त्माको भाव भयो सो कैसे जानिये जब देहादि

ऊलनसवप्रभुकेअर्थलगें तनमनधनतीन्यो प्रभुमें
लगें नतु जाधिनजाइऊ प्रकारसेचूकेरी ॥ स्लो
नदेहाद्यर्थसिद्ध्यर्थं भगवान्नपेक्षते ॥ य नो देहा
स्विदेहापि प्रभुः स्त्रीलोपयोगत ॥ १० ॥ याको अर्थ
यहभावद सेवाएं देहादिसिथअर्थे नथा देहसं
वंधीकुटुंव इत्यादिइनको मनोरथ नकरे अपनो
भोगसुखकछुइनाविचारें केवल भगवानहीकी
अपेक्षारहै ॥ सो प्रभुकोनप्रकार सुखपावेगो मतिक
दुःअपराधतें प्रभुउदासीन होय याभांति प्रभुके सु
खविचारें तथा भगवानके देहसनकी स्वरूपानंद
केअनुभवकीअपेक्षाराखें देहादिकोभोगसुखन
विचारें तथा भगवानके दर्शनकी स्वरूपानंदके अनु
भवकी अपेक्षाराखें देहादिकोभोगसुखनविचारें
तहांकोइकहैं जो देहकीरक्षानकरे तो सेवाकेसें हो
य ॥ ओरतुमदेहअर्थनाहींकरोगे ॥ यहसंदेह होइ तो
हावहत हैं ॥ जो अपनी देहको भोगविचारें इंद्रियनको
सुखविचारिवें नकरें महाप्रसाद लेइ तामें यह भाव
राखे जो प्रभुकी सेवामें समर्थ होइ इंद्रियादि सिथल
नहोइजाइ याभावसों लेइ जैसें श्रीगुसांईजी परदेस
पधारत हैं नव विप्रयोग करि देह सहोत हैं ॥ ओर जब पर
हैसते श्रीजीद्वार पधारतें हैं नव सुंदरवेहन घी सहि
नमहाप्रसाद लेतें हैं ॥ सो यह भाव जो श्रीगोवर्द्धन
नाथजी हमको देखें तो उनके मनमें दुख हो
गों ॥ सो अच्छो नाहीं ॥ प्रभु हमकों देखि सुखपावें तो हम
कों याही भांति रहनो ॥ यह भावतें व्रजभक्तनकों अ
नी देहकी रक्षाकरतें हैं ॥ अपनो सुखनाहीं विचार
हैं ॥ याभांति देहादिकी रक्षाकरतें हैं ॥ या
वेचारिकें ॥ १० ॥ श्लोक ॥ नस्वार्थं

भगवानने वयत्राहि यें नभावे नाने पितामीति मे वाति
वेहे ॥ २१ ॥ याको अर्थ ॥ अव श्री हरिराइजी कहत हे जो स्वा
र्थ बुद्धिते न करें जो कछु लौकिक वैदिक फल सिद्ध हो
इगो तथा प्रभु की सेवा तें हू ताथे हेउ गो यह स्वार्थ
बुद्धि ते भगवद सेवा न करें काहेते भगवांन ते स्वार्थ
को विचारें भगवान ते स्वार्थ को विचारें भगवान
विना विचारे ही आपनी इछा ही ते सर्व कार्य सिद्ध क
रेंगे श्री आचार्यजी महाप्रभु नवरत्न ग्रंथमें कहे हे स
र्वेश्वरश्च सर्वात्मा निजेछातः करिष्यति प्रभु सर्वे
श्वर हे सर्व के आत्मा हे सर्व जानत हे सो आपनी
इछा ही ते दास के सकल मनोरथ सिद्ध करेंगे ता
ते प्रभु की सेवा ते आपनी स्वार्थ बुद्धि न करें ओर गो
रा भाव ते क्रिया वत न करें भाव सयुक्त प्रीति सो क
रें काहेते भगवान को एक प्रीति ही ते धरे पद्मनाभ
दास वे छोला प्रीति ही ते अंगीकार करे ताते प्रीति सो क
रें ॥ २१ ॥ श्लो ॥ न फलाकांक्षणं यत्र लौकिकानाय
था धने तद्भावे यथा लोके दुःखना संत्यजेत ही
२२ याको अर्थ ॥ सो प्रभु की कछु हू फलन की का
म मनोरथ न करें काहेते फलन की कामना राखवो
पुष्टिमारगीय मुख्य फल नाको नास होइ ताको का
मना भाव में वाधक हे यह जानि फलन को लालच न करें
लौकिक में धन मुख्य हे सब ही कोउ चाहत हे ते सें
इ लौकिक की नाइ धन न चाहें काहेते वो होत धन ते
महा दोष होत हे मस्त्रहु का सको कारण धन होय
हे कलियुग में हे ताते लौकिक वैदिक तथा धन की
प्रार्थना प्रभु सो न करे तथा जो मर्यादा में ज्ञान व्रत
ही सब ठोर में ही ऐसे ज्ञान हू को न चाहें भक्ति में वा
धक हें स्वामी सेवक के भाव को संबंध को नासक हे ता

नहींनभातिकोनचाहैंतथा स्वर्गलोकनेंब्रह्मलोक
येनसुखनचाहैंन इहलौकिकवैदिक देहसंबंधीयेनेव
दुखसें तिनकेनासहोइवेकी प्रार्थना सर्वथा नचाहैं स्व
येसें निष्कामहोय॥१४॥ स्लोक॥ सर्वत्यागस्तु सहजो
पत्रलौकिकवैदिको निरपेक्षस्वभावस्तु सर्वभावो नि
राधुतो १३ साफा त्रयी॥ श्रीभगवाननें सहजप्रीतिक
रसर्वत्यागसहज नहीं में करि लौकिकवैदिक कछुन
चाहैं सो यनु लोकी में श्रीआचार्यजी महाप्रभुव
हैं। यदि श्रीगोकुलाधीसो धृतः सर्वात्मना हृदि
नत्तः किमपरं ब्रूहि लौकिकैर्वैदिकैरपि॥ याभातिप्र
सेवस्यात्मा श्रीहृदये तिनको हृदयमें धारनकरें से
नाकरें ओर लौकिकवैदिक कछुन चाहें निरपेक्ष हो
श्रीरसुहभाव होइ मनमें कपट छुटि हिंदु कछुन
राखें सर्वात्मभाव करि एकप्रभुहीमें मन होइ॥१३
सोवु॥ नथा त्रैन्यमेवैकं मार्गे नित्रवर्णा हिवें
देख्यु नेवसंतुष्टः प्रादुर्भूतः फलेस्ते॥ ये धर्माचार्य ये
नथी हरिराजीविराजत हैं सो यह पुष्टिमार्गमें एक ग्रन्थ
हीसाधनहैं सो वल्लभीय पुष्टिमारगीय भगवदीय
सोमहमार्गके ग्रन्थ श्रवण करें तब दैन्य भावकी
सर्वपड़े ताइतें भाति करनी ग्रन्थमें श्री आचार्यजी म
हाप्रभुनके हैं सेवा या वा कथा या वा भगवत्सेवाय
यपालकरनी पाछें पुष्टिमारगीय ग्रन्थ भगवदीयके
खसों श्रवनो सरमें कथा हू सुननी काहेतें सेवाको
तोधनसे इस्पो जो श्रवनसो इत्पोत्पो सेवामें रुचि
हैं अभिमाना हि रोषकी निवृत्त होइ दैन्यतासि
नय न होइ दैन्यता सिद्धि भई तब सबश्रीठाकुरजीप्रग
ाइ रसमनसेंहि जे सेरासपंचाध्या
ानकरि पाछें निसाधनहो इ ई

प. नकी ए नबली तब प्रभु तत्काल पधारे ताते जहां तां
प ई साधन को बल मन में होइ न तहां ताई दैन्यता न आ
वें तब प्रभु संतुष्ट होय सो दुर्लभ होइ स्वरूपानंद कों
अनुभव करावें ॥ ४ ॥ श्लो० ॥ नदेवानुष्ठितं येन धनदे
न्य प्रसि यदैन्यनासकं बहि विरोधी सकलं मतं ॥ ५ ॥ या
को अर्थ ॥ कोई देवांतर तें होइ के न सेवे काहे तें देवता
ब्रह्मा सिवादि इंद्रादिकों यह फल के सें दे नाहीं हैं तो
देवता और कों कहा तें देहिंगे ताते देवांतर भजन न ते
अन्याश्रय होय सो फल को नास होय ताते ऐसें दै
न्य बिना फल सिद्ध न होय ॥ श्रीहरिरायजी सम
स्त पुष्टिमार्गीय वैष्णवन सों कहत हैं जो जा साधन
ते दैन्यता को नास होइ सो सब यह पुष्टिमार्ग ते विरो
धी मानना ॥ जो वेसे हू साधन होय पुष्टिमार्ग ते विरो
धी दैन्य नास करें ॥ ऐसो साधन सर्वथा हीन करनो
यह बाहि के यह जताये जो पुष्टिमार्ग बिना अन्य मा
र्ग की जितनी क्रिया साधन है तिननी सर्व पुष्टिमार्ग
के फल ते विरोधी हैं ॥ यह निश्चय मन में जानिके अन्य
मार्ग की क्रिया नाहीं करनी यह ॥ ५ ॥ श्लो० ॥ एतन्मा
र्गीयलकेनो हरिदैन्य विवर्द्धयेत् ॥ महादिजनवंदूष
नाशायनापिलो विर्न ॥ ६ ॥ या को अर्थ ॥ श्रीहरि
राइजी कहत हैं ॥ और अन्यमार्गीय पुष्टिमार्ग में जैसे
कोई श्री आचार्यजी द्वारा सरन आये हैं ऐसें अं
गीकृत जीव भक्त तिनको दैन्य बढावत है और सम
स्त अभिमान रूप ने मन सों होइ सो दुष्ट है फल में
प्रतिबंधक है ताको नास ही करत है सो रासपंचाध्या
ई में प्रसिद्ध है भगवान के नृत्य करि व्रजभक्तन को
बुलाय रास कियो तब मद भक्तन को भयो तब भगवान
न प्रगटे ते सें यह पुष्टिमार्ग में दैन्य भगवान सिद्धि

करेनहैं मरकौ नासकरत हैं। तथा जहां लौं समर्थ हैं। तहा
लौं अनुभवनाहीं करावत हैं। या भांति भगवान अपने
जनकों दैन्य कटावत हैं। सरको दूरि करत हैं। तहां जहां
लौकिक में आसक्त हैं सो सर्व छोरत हैं। कहा अथ हैं न्यारे सिद्ध
करत हैं। ११ श्लोक॥ स्वामी ह्नतोहि निर्वाहः प्रभुनैव
विधीयते। जीवा स्वभावदुष्टा हि अवलेपुफलंतथा
१२॥ याको अर्थ॥ अपने अंगीकृत जीवन को निर्वाह
प्रभु आपुही करौ तब होइ। काहे तें जीव तो स्वभाव
करि दुष्ट हैं। सो बालबोध में श्रीआचार्यजी महाप्र
भु कहे हैं। जैसें अज्ञानी बालक की रक्षा माता पित
करतु तब ही होय। नाहीं तो अग्नि जलादि में गिरै। तब
ही होय। नाहीं तो अग्नि जलादि में गिरे। सो माता पि
ता करत ही हैं। तैसें श्रीठाकुरजी अपने अंगीकृत
जीवन को निर्वाह आगेते करत आए हैं करत हैं औ
र करेंगे। जीवको तो एक क्षण में दुःसंग लगे तो ना
स करि दे। मन एक क्षण में और को और होइ जाइ। सो
प्रभुही निर्वाह करौ तब होइ ॥१७॥ श्लोक॥ अतोऽस्य प्रधा
नेन मिलवाचरितः प्रभुः दंडोऽनुरत्वेन मन्तव्यस्तु तदा
श्रिते ॥१८॥ याको अर्थ॥ अंगीकृत भक्त ते भूल परे तो प्रभु
दंड देत हैं। सो पै विग्रह का मन करें जैसें नैराऊजी अंबि
का इमन गयो। तैसेई कछु अपराध जीव स्वभावतें बने
सो प्रभु देत हैं। सो दुःख में भगवदीय अपने मन में अनु
ग्रह माने। प्रभु को आश्रय न छोड़ै। सो श्रीगुसांईजी वि
रोध मेव है हैं। श्लोक॥ दंड स्वकीयताम त्वे त्वेव चौं ॥१९॥ रि
मेव न॥ अस्मात् स्वकीयताम त्वाप क्रुत्य प्रकरा ॥२
रनिवचनात्॥ श्रीगुसांईजी कहत हैं जो हमको अ
पने जानि दंड देहु। तामें हम सुखी हैं जैसें तैसें

ते.प.
५६

ऐसे जनकों दंड देइ तव दुःखकों अनुग्रह करि जानि आ
श्रय महाप्रभुजी कौ न छांडे ॥ श्लोक ॥ दंड देन स्वकी
ये सुपरकीये सुपेक्षणं ॥ आर्तिरेवासततं भाव्य दु
ःपरोक्षत ॥ १९ ॥ या कौ अर्थ ॥ जाकौ प्रभु अपनौ करत
है तिनकौ ही दंड देत है और जो प्रवाही अहि संसा
रासक्त है तिनकी उपेक्षा करत है दंड नाही देत और
लौकिकमें ही आसक्त लौकिक स्वैकरत सौ दंड नाही
देत है ॥ रासपंचाध्याईमें आर्तिकौ लीये प्रभु अंतर्धान
भए ॥ इहां पुष्टिमार्गमें अनोसर मिटे ता ॥ सर्व आर्ति उठाइ
वे कौ अर्थ है तही या स्वरूपानंदकौ अनुभव नाही कर
वत है आर्ति देखवेनौ करावौ ता ते आर्ति पुष्टिमार्गीय
वैष्णवकौ सर्वथा ही करनी ॥ श्लोक ॥ अन्नभक्तार्ति
हृष्टेव मुदितो हि हरिर्भवेत् संगो भागवतानामेव वृद्धि
येनी भवेत् ॥ २० ॥ या कौ अर्थ ॥ ज्यो ज्यो भक्त क्लेश करत है
त्यो त्यो भगवान् उह भक्तकौ देखिके प्रसन्न होत है
ता ते सत्संग भगवदीयकौ होय तौ वेगि ही भावकी वृ
द्धि होय यह निश्चय जाननौ ॥ ता ते सत्संगकौ यत्न क
रनो ॥ २१ ॥ श्लोक ॥ व्याघ्रस्याग्रे यथा देही तथा दुःसं
गतो भवेत् दुःसंग एव भावस्य नाशकः सर्वथा मतः
॥ २१ ॥ या कौ अर्थ ॥ अब श्रीहरिरायजी कहत है जैसे वाघ
के आगे सरीरको नास ही होइ तैसेई दुःसंगाय हभग
वद्भावकौ नाश करे ॥ ता ते जैसे वाघकौ सौ डरपिके
अपने सरीरकी रक्षा करी ॥ तैसेई दुःसंगते डरपिके
अपने भगवद्भाव हु की रक्षा करी ॥ नव भाव रहे ॥ श्लो
क ॥ दुःसंगतः श्रुताः सर्वे श्रुता हि भरतादयः दुः
संगात् किं तु दोषाभ्याम दृष्टा बहिर्मुख ॥ २२ ॥ या कौ अ
र्थ ॥ भगवद्भक्त अनेक जीव दुःसंग ही करिके गिर
तहे सो श्री भागवतमें वर्णन है ॥

थकोप्राविडु:संगतेनीकिजनकोंअंतरायभयो।
।रसीक्षपितावडेभगावलीरसतो।सोदुर्योधनदुष्टको
भ्रूलघा।तातेतारोधनेभगवानकेसंगलडनठाट
।।तातेयहदु:संगलोसतेजीवनिश्चयभगवान
तवरमुखहोयजाय।तातेभगवदीयदु:संगतेभि
नहींतोजीवकोकिननीकवानहे।।१२श्लोक।।को
किका।मिनिवेरागतुमनो।निष्कासनसदा।स्थलोकि
कस्तुनप्रावहतेनापिचविनस्यति।।१२अस्याकोअर्थ।।
तातेजहांजहांलोकिकमेंमनलागिरह्योहे सोसग
गहीजाननो।तातेंलौकिकादिकेउपजहांजोव
होयजाकेसंगतेहोय।सोसर्वथात्यागकरनो।।जहांलों
स्तुमेंतोकिकानिवृत्तहोय।।तहांतेभगवद्भक्तकीली
वर्रलगात्यागमेंकीयावहों।।तवहां।।१२अस्लोक।।वैरा
ग्यपरितोषोचहृदिमाव्यानिरंतर।।तदस्यात्वतुमन
सःकदाचिन्निश्चितःस्तत।।१२अस्याको अर्थ।।अवजी
होगाजीकहतहेंजोदु:संगहोयकेनासकाथवैरा
ग्यऔरसंतोषयहदोयनिरंतरहृदयमें
तहें अपनेमनमेंवैरागपसवे ... ल्याय प्राप्त
वथीपदार्थमेंरागवोसोरसद ... अस्वभावजस्वर
ह्यातादीमेंमनकोसंतोषकरिदेयस्वभाववैराग
रवे।तवदु:संगतेवचे।श्लोक।।कामभावायभकोत
चितेचेनस्यसर्वथापरित्तोषस्तुसाभायभकोत
वेववाधकों।।१५।याकोअर्थ।।अ
हतहें।जोमनमेंदृढवैरागवे

जोमेंभगवद्भक्तकोना
यमेराखनो।

स्यं लोभपाखंडसंभव ।। क्रोधस्तु मध्यपाति
हा बाधकः स्यात् ।। २ ।। अर्थ ।। कामप्रगट
विषयादिकी रससगरी इन्द्रिय भगवानने भ
तेवहृदेस्थ होय जाने ।। इन्द्रियोंको विषयवे
नहै ।। और लोभ हृदयमें होइ ।। ताकरि पाखंडप्र
नहै सो संन्यासनिर्णयमें श्रीआचार्यजी महाप्र
हो ।। स्वयं च विषयाक्रांतः पाखंडी स्यात्तु कालतः ।। इतिव
त ।। ताते काम लोभ ये मध्य क्रोध मध्यपाती है ।। कार
को विषय न मिले तब क्रोध प्रगट होय ।। तैसेई लोभ
अर्थ न सिद्धि होइ तब क्रोध उपजे ।। ताते क्रोध प्रगट
नको कारन काम लोभ होय क्रोध करि पीछे मोह प्र
ट होइ ।। इत्यादि दोष प्रगट होइ तब लौकिक वैस
रूप हृदय लौकिको ध्यान हृदय में रहे ।। तब दैन्यता ना
होइ ।। २ ।। श्लो ।। अतो मार्गीयसर्वस्वं दैन्यभावं वि
राक ।। दैन्यं सर्वेषु कार्येषु सुहृत्सेवा कथादिषु ।। ३ ।। या
टीका ।। अब कहत हैं जो यह पुष्टिमार्गको सर्वस्व दै
न्यभाव है ताके नास करिबेको हेतु जो है काम लोभ और क्रो
ध ताते इन तीनोंनको निश्चय त्याग ही करनो और
दैन्य सब कार्य विषै राखनो ।। सो दैन्य कैसे सब कार्य वि
षै है ।। ताको उपाय यह है ।। श्रीठाकुरकी सेवा है तनुजा
वित्तजा प्रीति करिके करनी ।। और श्रीठाकुरकी सेवा
श्रीसुबोधनीजी आदि ग्रंथ सुननो ।। यह सेवा कथा
को नेम नित्यप्रति राखे तो दैन्य हृदयमें रहे ।। ३ ।।
श्लो ।। बीजं यथा मंत्रसाद्गुण्ये तन्मात्रत्वं भवे
त ।। तथा भावेन सेवादि सकलं पुष्टिसाधनं ।। ४ ।।
टीका ।। जैसे मंत्रको बीज मुख्य है यह सास्त्रमें क
हे है ।। बीज मंत्र ते अखिल साधन सिद्धि होइ यह
सास्त्रोक्त है ।। तैसेई सेवामें भाव है भाव सहित करे

नवई सिद्ध होय स्लोक॥ तस्मादृष्टैश्रय त्येन दैन्य भक्ति युता
जना है नेन गोपिकाः सिद्धाः कौण्डिन्यो पिपरो सन्तः॥ ८॥ पा
थ॥ अथ श्रीहरिरायजीकृत टीका। हे जो वैसव यत्न करि
के अपने दैन्य की रक्षा करे यह पुष्टिमार्गीय भगवदीय को
उचित है तहां को इक ई जो या मार्ग को ई को दैन्य करि सिद्ध
भई है तहां कहत हैं जो दैन्य करि गोपीजन को सिद्ध भई इ
पुष्टि के आरम्भ कर एक कौण्डिन्य ब्राह्मण अपने ने नन्द
तस्यो ताको सिद्ध भई सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु सन्या
पनि ते यामें कहो है स्लोक॥ कौण्डिन्यो गोपिका प्रोक्ता
गुरवः साधनं च तत्॥ भावो भावनया सिद्धः साधनं
नान्यदिष्यते॥ ९॥ तातें पुष्टिमार्गीय के गुरु गोपीजन श्री
रुक्मिणी को मारग में या ही मार्ग के गुरु कौण्डिन्य ब्राह्मण
प्रकार सों भाव विचारि दैन्य ताही भक्ति मार्ग के भाव में का
रण है॥ ९॥ स्लोक॥ फलमाहुर्हरे भावो विरहात्मा स
दा मतः॥ रसात्मकत्वात्तद्रूप सर्व लीला समन्विता॥ १०॥
या को अर्थ॥ अब श्रीहरिरायजी कहत हैं जो यह पुष्टि
मार्ग में हरि में भाव रहे॥ सो ई फल रूप है तातें विरह
अन्तःकरण
में रहे का है ते संयोग के अनुभव में अन्तःकरण
सो स्थिति न रहे॥ ताते विनियो
गा में प्रभुन ही ही वाहर की इन्द्री सब रहे सो ई स्त्रि नियो
ग है और विप्रयोग में अन्तःकरण मूल सिद्धि इ तातें वि
प्रयोग भाव हृदय में राखे यह मार्ग में यह सिद्धि है का
है तें संयोग में तो जस लीला रस न नहीं तो सुख और
विप्रयोग में रसात्मक पुरुषोत्तम सब लीला संयुक्त
रूप सब ठौर अनुभव होत है तातें विप्रयोग भाव सर्व
फल है जा में सब ठौर प्रभु सात्तिक रहे॥
है॥ १०॥ स्लोक॥ स्वरूप न स्मरन्ते सा
न॥ युगपत्सर्व लीला नामानुभूतिः
या को अर्थ॥ विप्रयोग में नी

५ सो लीला सहित स्वरूप निजरसालान को सर्वोत्को
र्ष्य कोनिद्दोनहै संयोग ते अधिक विप्रयोग में विशेष सु
ख है ताते युग जो दोय प्रकार की लीला संयोग विप्र
योग तामें वैष्णव अपनो मन लगाइ है ५ संयोग स
मै सो बाअनो सर में विप्रयोग की भावना तथा मन
ही करि व्रजभक्तन के संयोग को विचार करे पाछे प्रभु
गोचारन को पधारे तब विप्रयोग व्रजभक्तन को विचा
रे या भांति सो ऊ लीला में अपने मन को लगाइ है ६
७ श्लोक एवं विज्ञाय मनसा पुष्टिमार्ग विभा
वयेत् प्राप्ति श्रीवल्लभाचार्य चरणाम्बुज प्रसादतः ७
२ या श्लोक को अर्थ श्रीहरिरायजी कहत है जो रूप
विप्रयोग प्राप्ति को प्रकार जा भांति अनुभव होइ सो
कहत है सो पुष्टिमारगीय वैष्णव अपने मन में भा
वना करे मन में विचार कांहूसों कहे नाही या भां
ति भावना करत श्रीवल्लभाचार्यजी के पद
की प्राप्ति निश्चय होइगी सो सर्वोत्तम के नाम श्री
गुसांईजी पीछे यही नाम कहे है ॥ अय सब भांति श्री
ध्येय चरणाब्ज बोधनाय नमः ॥ या भांति पुष्टिमारगी
य भगवद्भक्त श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी के चरणक
मल की रज अपने बहुत साधन सर्वोपरि साधन जाने है
तिनको कृष्णाधरामृत फल सिद्धि है ताते श्रीआचा
र्यजी के चरणकमल के प्रसाद ते यह पुष्टिमारगीय भ
गवदीय को फल सिद्ध होइ ताते श्रीआचार्यजी के च
रणाब्ज भाव सर्वे न कुरनो ७२ श्लोक अनन्यत्वेन
नतं सर्वभावेन सर्वथा शुद्धिभिः कुलरासिकैः ग्र
णीक्रियतां हला ७२ या श्लोक को अर्थ श्रीहरि
रायजी कहत है जो रूपवहतेता प्रकार सतत जो नि
रंतर सर्वभाव करि सर्वथा भाव राखे श्रीआचा

व राधवमनकों आश्रय और विप्रयोगको भी
यही निरंतर सर्वभाव वपि सर्वथा कर्तव्य है ये
सो कस्विफ हुल्लयागकृष्णलीलचंद्रपर
तिनके मनमें दृढ़ हृदयमें तथा सुदृढ़ गावरी
समरसिक ताते तिनकी रागा हृदयमें
तथा श्रीकृष्णके श्रीआचार्यजी महाप्रभु तिन
नकी सरणा होइ इहिन भावके रिति:
तिनको पुष्टिमारगीय फलकी
॥ तिनको पुष्टिमारगीय सिद्धांत है ॥ २२ ॥
अथ सर्वोपरि सिद्धांत है ॥ त्रिसना
कोकला पत्र ... पर
हि
ति श्रीह ६
टीका श्रीगोपेश्वरजी कृत संपूर्ण ॥ ६ ॥ श्रीकृष्णकी भांति सर्वोपरि कहीं तो
विप्रयोगभाव मुखारविंदकी भांति सर्वोपरि कहीं तो
विप्रयोगभाव मुखारविंद लोक आनि ति: साधनके होइ सो
कि साधन है रूपाइ सो अ आनि निःप्रतिबंध तें तिनको तें
अकेसे परंतु इः सेवा टिप्पनीय जो पुष्टिमारगमें
वचैत वसिद्ध होइ सो समग्र दोष जो लोकान्तरीया नाम
बाधक है सो के हृ यो वस्तन लोकान्तरीय सजातीय
हृदुत्स विजातीय नसजन सभाव ॥ सजातीय
प्रोभावपांचन ॥ १ ॥ याके अर्थ ॥ अब श्री हरिरा
जीन हृत है तो यह पुष्टिमारगीय वैसवको एक
यह कोड दुःख है तो अन्यमारगीय विजातीको सं
गहोइ सो अपरकी मैंक हा क हो ॥ ताकूं विजातीको
संगभयो ॥ तातें सर्व नमें मनहृद दुःख होत संगजन्म
तनकूं श्रीकृष्णमें प्रतिबंधक ताे तिनको संग होइ
व्हाइ है ॥ सगरे भक्त मिले तब सुख तें संगरें मिलि
कें श्रीकृष्णकी लीलावार्ता करि ॥ परम आनंद पावें
तहां कहें गुसांईजी आबात नरसरूप वार्तारहें जा
दुःख होइ सो मोको सो तें विजातीको सं
गभयो है ॥ ताके ६ वोल

सि.प नतोसजातीवैस्नवको चहियें सोतोमोकों प्रा
१५८ नाहीं हैं अन्यजोअन्यमारगीयकुसंगतें अष्टप्रहर
संभाषनकरनोपरतहै यहमोकोंपरमदुखहैं सोदु
खदूरि नाहीकरिसकतनाही हो ॥ श्लो ॥ तदेतदु
भयंजातेमममेवाद्यसुभाग्यतहै दुखांतरंतु सानेन
भतया वापिनिवेत्तते ॥ २ ॥ या अ यहदोयमे
रभागमेंआयकेंप्राप्तभयोहै जोभगवदीयको
संगचहियेंसोतोमिलतननाही हैं विजाती अ
न्यमारगीयविजातीकोंसंग अष्टप्रहररहतहैं यहदो
यमोकोंप्राप्तिहैं सोपुष्टिमार्गमेंविरोधीहैं और ज्ञानी
कोसंग है सोअंतमेंपुष्टिमारगीयकोंदुखदाईहै काहे
तें ज्ञानीभक्तिकीनिवर्तकरतहैं सोकहतहैं जोयहभ
क्तिमार्गमेंतोस्वामीसेवकभावहीधर्महै सोमुख्यहै
सेवकधर्मयहहैं जो अष्टप्रहरस्वामीकीटहलमेंरहैं
भक्तकोयहधर्महैं यहभावकेंज्ञानीनासकहैं काहे
तेंज्ञानीतोसगरेंब्रह्मकीभावनाकरतहै औरआप
नेकोंऊब्रह्मकहतहैं अहंब्रह्मजोमैंहीब्रह्महों यहभा
वमेंवाधकहैं यहभावमेंदासभावतोछुटिजायो तब
भक्तिकोनासहोइ तातेंभक्तिमारगीयकोंसंगमहा
वाधकहैं दुखरूपहैं तातेंवैस्नवकोंज्ञानीकोऊसंग
नाहीकर्तव्यहैं ॥ श्लो ॥ लौकिकविषयप्राप्त्या
नहिदुःसंगजंश्च चित्तं दुष्टगतंदुर्लवेचावाणिमे
त्तेममेतिवद्धिषु ॥ ३ ॥ या अ अवश्रीहरिराइ
जीकहतहैं जोलौकिकविषयादिकोप्राप्तिहोय
लौकिकावेसदेहइंद्रियमेंहोतहै याभांतिलौकि
कविषयदुखदाइपरंतुनाहीदुखतोदुःसंगदुखहैं
सोवडोहैं सोश्रीभागवतमेंकहेहै जोविषयतेंवि
षईसंगीहैं तिनकोसंगमहादुखदाईहैं उनकेसंग

तें अष्टप्रहर विषयमें ध्यान रहै। विषयावेस होइ सो
श्रीहरिरायजी कहत हैं। ऐसे विषयके संगी बहिर्मु
खको संग मोकों भयो है। ताकरि मोकों महादुःख है
काहेतें दुष्टके दुर्वचनरूपी बान सो मेरी मन सरीरमें
बेधत है। ताकरिकें बडी पीडा होत है। इहां दुर्वचन
कहिवेवारे और नाहीं। अधिकारी भंडारी अनेक
बात कहत हैं जो तुम अष्टप्रहर कीर्तन बातनमें लगे
रहत हो। परदेसका हवेलीतें पधारे हो इतनो कछु
आयो नाहीं याभांति अधिकारी भंडारी भलाहि गों
र जो कोई लौकिक अभिनिवेस करावें। सो श्रीहरिराइ
जीको बुरो लागत है। भगवद्वार्ता करें सो परम हित ला
गत है। यह भावनेक है जो दुष्टनकी बानी बानरूप
मेरे मर्मस्थानमें वेधकरत है। श्लोक॥ न क्वापि
मनःस्वास्थ्य समाहितमपि स्वतः इत्यानीतु जनाप्रायो
दुःसंगपदवीं गता॥ ३॥ या॥ ते अर्थ॥ अब श्रीहरिरायजी
कहत हैं। जो ऐसे दुःसंग मोकों मिल्यो है जो रंचक मेरे
मनमें स्वास्थ्य धीरज नाहीं होत है। तातें स्वतः मोकों
अपनो हित नाहीं दीसत है। हित तो भगवदीयके
संगतें होइ। तिनको तो भाग्यतें हू संग नाहीं है। अ
न्यहित शुद्धिन हू दुःसंगतें होय। सो मोकों अष्टप्रह
र दुःसंग है। तातें मोकों अपनो हित नाहीं दीसत है
सास्त्रमें श्रीभागवतमें कहे हैं। श्रीआचार्यजी श्रीगु
साईंजी कहे हैं जो दुःसंगतें वैष्णवजन दुःख पावें ति
नय। सो दुःसंगकी पदवी मोकों आयकें मिली है सो
दुःख पाऊं। सास्त्र कहत हैं सो मैं भोगत हौं नहीं कोई
कहै जो तुम दुःखको पावत हो। अज्ञानी होइ सो दु
संगतें दु

कहत हौ तातें तुम दुःख कों पावत हौ याभांति कोई कहै तहां
कहत हैं ॥ श्लोक ॥ शुद्धं मनः कलुषितं लक्षणं नाति विचक्ष
णां ॥ ग्रहस्थितस्य व्यावृत्तियुक्तस्य न हिताहिता ॥ १ ॥ या ग्र
न्थ में श्रीहरिरायजी कहत हैं जो मैं यातें दुःख पावत हौं
जो शुद्ध मन होइ आछी सुंदर बुद्धि होय ताहू की लौकि
क चित्त पापी दुष्ट के संगतें ताहू की बुद्धि भ्रष्ट होय जा
य एक क्षण में सो दुःसंग बाधक है सो श्रीगुसांईजी
विज्ञप्ति में कहे हैं ॥ श्लोक ॥ स्वेहं कुसंगी ह्यसंगी संगीनो
गीं स्तुतस्मय ॥ अन्यसंबंधगंधोपी कंधरामेव बाध
ते ॥ २ ॥ याभांति अन्य संबंध को गंध हू रंचक होय सो
गरो काटै सो श्री आचार्यजी महाप्रभु की चोरासी
वार्ता में प्रसिद्ध है दामोदरदास संभरवारे की स्त्री को
रंचक अन्याश्रय दोष भयो ताकरिके पुत्र मलेछ
भयो श्री आचार्यजी महाप्रभु अप्रसन्न भए तातें
दुष्ट के संगतें आछी बुद्धि होत हैं सो ऊ नष्ट होइ जात
हैं तातें दुःसंगत में दुखी हौ तहां कोई कहै जो ऐसे
दुःसंग को वेगि ही त्याग करि दैहु तब सुंदर बुद्धि है
जी याभांति कहै ताभांति कहें श्री हरिरायजी कहत
हैं जो व्यावृत्ति बिना के सबन को संग मनुष्य
इनको त्याग करि पाछें मनुष्य वि
सो इन तें अधिक बहु
तातें ग्रहस्थ हैं व्यावृत्ति की रीति राख्यो चाहि
ये श्रीभगवदीयन तो नाहु रोगहि तिनको तो व्यावृत्ति न
चाहिये तब व्यावृत्त होय तब दुःसंग छूटै तहां कोई
कहै तुम ईश्वर हो सर्व सामर्थ्ययुक्त हो व्यावृत्ति छांडि दै
हु तब दुःसंग छूटि जायगो याभांति कोई कहै तहां कहत
हैं ॥ श्लोक ॥ संगो नारयतु ग्रावृत्तो व्यावृत्तिविनिरोध
ताः ॥ अव्यावृत्तो न विस्वासदार्ढ्येन तथा ...

कें अर्थ ॥ अब श्रीहरिरायजी कहत हैं जो यह दुःसंग के
निवारन में सामर्थ्य सो खोटे मनुष्य को त्याग करी । आप
ने घर में बैठ रहते तो महा दुःसंग न छूटे । जब मनुष्य चाहि
ये जहां पर स्वरूप में जैये । तहां नित्य नौ न न मनुष्य को म
नुष्य को मिलाप होय । तिनको समाधान कर्यो चाहि
ये । तब दुःसंग के छूटे । ता तें या वृत्ति विरोधी है दुःसं
ग उन में आ जो व्याप्त तिनको करिये । अपयावत निरहिये
सो तो सर्वोपरि उत्तम है । सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु
निबंधनी में कहे हैं । अव्याप्तौ भजेत् कृष्णं पूजया श्र
वणादिभिः इति वचनात् । या भांति अव्याप्त होय
तब दृढ विश्वास धीरज चाहिये । सो धीरज विश्वास दृ
ढि जात है जो रूप बिना ग्रहस्थाश्रम को कैसे निर्वा
ह होय । या पै दृढ विश्वास बिना अव्याप्त निर्भयो
जाय । ता तें वह रक्षा करिये । इति श्लोक ॥ भगवद्धर्मी तो यो
त्र सन्तुष्ट लवाव हि यथा विभावस्व वचसे रितः क्रो
धमूर्छितः ॥ ७ ॥ याको अर्थ ॥ अब श्रीहरिरायजी कह
त हैं जो भगवद्धर्मी या कालदोष ने अपने धर्म की
रक्षा करें उपरव्याप्त की रीत दुःसंगादिक है य
के कालदोष कहत हैं । जो यह काल के सो है । भगवद्
म में महा बाधक हैं । जैसे आस पास को वालक को ध
करिके परीक्षित राजा को आपदी यो । सो यह कार्य
कालदोष तें भयो । सो आगे कहत हैं ७ श्लोक ॥ अब दु
सत्संगमागत्य महाभक्त परीक्षितः । तथा दुर्वच वाक्ये
कथं प्रेरितो युक्तिनाम सः ॥ ८ ॥ याको अर्थ ॥ अब श्रीहरि

सर्प ले कें समीक रिषि के कंठ में डारि दीयो । यह वात श्रृंगी
रिषी नें सुनी सो क्रोध करि कें तत्क्षण अवे को श्राप
दीयो । सो यह सब कार्य काल दोष तें भयो । का हेतें महा
भक्त परीक्षत को यह काल दोष तें यह बुद्धि भई । तैसें इ
काल दोष तें दुर्जन के वचन सर्प रूपी ही हैं । जिन को तो
मर्म के घाव समें अन पथा बोले । सो काल दोष जाल
नो । क्रोध ना समय इ काल दोष तें हैं गयो है । तिन को
संग महा बाधक है । श्लो० । अविज्ञया दुर्वचनैरधि
क्षेपन मानमयां दुःखना भौतिको दुःख : समाश्रय : सक्रि
यो तिभिः । टीका । अर्थ । अव श्री हरिरायजी कह
त हैं । जो यह कलिकाल में जीव स्वभाव तें दुःख भरो
है । तामें तीन प्रकार के दुःख हैं । एक भौतिक । १ । अध्या
त्मिक । २ । आधिभौतिक । ३ । तामें मध्यात्मिक । अब भौ
तिक सो तो वह भगवद्धर्म में न आवे । ऐसे आधिदै
विक दुःख को संग कबहूं न करनो । श्रेष्ठ तीनों के सेव
न जाय ता की तीनों के लक्षण न्यारे न्यारे कहत
हैं । अनेक दुर्वचन कहे अपने तें बडो होइ तथा भगव
द्भक्त होइ गुरु होइ सो अपमान करि के दुर्वचन कहै दुर्व
चन सो अपने मन को विक्षेप करै और के मन को वि
क्षेप करै और सरीर तें दुःख कर के पाप वरणा करै सो
यह भौतिक दुःख है । ऐसें दुःख को जब आवे भगवदी
य को सत्संग जब होइ तब सत्क्रिया भगवदीय यादिक्रि
या करै कठिन वो क्लिवो कूट । जाइ मन को विक्षेप दू
रि जाय भगवदीय के संग ते भौतिक दुःख को संग हो
इ । अब आगे अध्यात्मक दुःख के लक्षण श्री हरिरा
इजी कहत हैं । श्लोक । अध्यात्मिको ज्ञान शून्यो धन्य
थाज्ञानवानपि कष्टसाध्य : कथं दावित्रसत लवोध
नष्ट धनी । २ । टीका । अर्थ । अव आध्यात्मक दुःख ज्ञान कारि

मृत्यु होय सगरो कार्य करोंन तें कहें ताकू को जब वो
ज्ञानवान बडो भगवदीय मिले तो वो होन दिन को स
त्संग होइ वो होत कृष्ण कारिस त्यागी भगवदीय ग्रन्थ ने
क भांति समुझाय के बोध करें तब वहुत दिन में अध्या
त्म क दुष्ट सुद्ध होइ ॥१॥ अब कहा अधिदैविक दुष्ट कहत हैं
तिन को दुष्ट सुद्ध न होइ ॥ श्लोक ॥ प्रीति सन्या महादुष्ट सन
जो कबहूं सुद्ध न होइ ॥ श्लोक ॥ प्रीति सन्या महादुष्ट सन
साध्यः कथंचन ॥ यथा क्लीबः पुमान्नैव शोषयुक्तः पुरुषो
भवेत् ॥११॥ याको अर्थ ॥ प्रीति करिके सन्यासी महादुष्ट सो
अधिदैविक दुष्ट कहत हैं जो कबहूं शुद्ध न होइ असाध्य
कोटिक ज्ञान अरु सत्संग होइ के सें हू ज्ञान वाके हृदय में न
लगे केवल प्रवाही आसुरी ताको मन भगवान में भग
वान में भगवद्धर्म में कबहू न लगे ताको लौकिक दृष्टांत
कहत हैं जैसें नपुंसक होइ और वाको कोटि औषध देइ
परंतु कोई प्रकार वह पुरुष न होइ वामें पुरुषार्थ न हो
प्रा तेसें ही आधिदैविक महादुष्ट कों भगवद्संबंधी
ज्ञान न लागे ॥११॥ श्लोक ॥ यथा त्रिदोषयस्तो न कथं
चिदपि जीवति ॥ प्रीतिश्चेन्नो निरासश्च न तथा श्रवणा
दिभिः ॥१२॥ याको अर्थ ॥ अब और हू लौकिक दृष्टांत कहें
ते हैं जैसें त्रिदोषग्रस्यो रोगी कफवान पित्त ग्रस्यो रोगी को
ई प्रकार न जीवे ताको कछु औषध न लागे ॥ तैसें ही
अन्य महादुष्ट निरास हैं ॥ सो कितनी हू भगवद्कथा
श्रवण करें ॥ परंतु रंचक हू हृदय में भगवान में मन न
इ सो प्रवाही आसुरी जीव हैं सो पुष्टि प्रवाह मर्यादा
आचार्यजी महाप्रभु कहे हैं ॥ सब संगी सत्व व्यास
सर्व सर्वेन तपसु ॥ ऐसे प्रवाही आसुर जीवन की नाई
न्म जन्म में संसारासक्ति में परयो रहें ॥ याको भगवद
अपने चरण

सोपथरकोंलेकैंइजायवर्षलोंजलमेंडारिराखैंपरंतु
पानीउहपथरकोनभेदै॥जबनिकासैंतबसूकिजाय॥ते
सेंईप्रीतिशून्यव्याघ्रिदेवकमहादुष्टयहपुष्टिमार्गको
मनाप्रदेशविषेंगुणाहूसुनै॥परंतुकबहूंरंचकहृदयमेंभ
गवद्धर्मकोलेसहूनआवै॥ऐसेंयवहमुखप्रीतिसन्यान
रसरसकरिरहितहैं॥१२॥एवंघोरहूकहतहैं॥श्लो॥
प्रायसआसुराजीवायस्मिनप्रीतिरसंभवः॥ताद्रसे
नित्यसंगोनभवेदासुरभावनात्॥१३॥या॥टी॥अथ
इकहैंएसीप्रीतिशून्यमहादुष्टहोय॥ताकोंआसुरीजी
वजाननौ॥उहजीवमेंप्रीतिकीसंभावनाहूनाहीं॥ऐसे
प्रीतिशून्यजीवसोंसंभवहमकोंसंगआयकैंमिल्यो
हैं॥तातेंताद्रसीभगवदीयकेसंगविनाआसुरभाव
नित्यहोतहैं॥जबनित्यताद्रसीकोंसंगहोयतबयह
आसुरभावनिवर्तहोउ॥सोश्रीभागवतएकादसस्कं
धमेंभगवानउद्धवजीप्रतिकहेंहैं॥श्लो॥निरोधय
तिमांयोगोनसांख्यधर्मउद्धव॥नस्वाध्यायस्तपस्त्या
गोनेष्टापूर्तंनदक्षिणा॥१॥व्रतानियज्ञश्छंदांसितीर्था
निनियमायमा॥यथावरुंधेसत्संगःसर्वसंगापहोहि
मां॥२॥सत्संगेनहिदैतेयायातुधानाखगामृगाः॥
गंधर्वाप्सरसोनागाःसिद्धाचारणगुह्यकाः॥३॥इतिव
चनात्॥भगवानकहेंहैं॥उद्धवमोकोंयोगनाहींव
सकरतहैं॥सांख्यधर्मनेस्वाध्यायध्यानतपनत्यागव्रत
नयज्ञछंदनतीर्थनियमइत्यादिकसेंवसनाहीं
होतहैं॥एकसत्संगकरिकेंमेंवसहोतहों॥सत्संग
कोप्रतापऐसोहै॥दैत्यराक्षसखगमृगगंधर्वअ
प्सराहस्तीसिद्धचारणगुह्यकइत्यादिसबमोकों
पावें॥ऐसोसत्संगहै॥तातेंश्रीहरिरायजीकहत
हैं॥जोनित्यताद्रसीकेसंगविनाआसुरभावहोत

सें दुःसंगदोषतेसो मैं कहा करूं ॥ अथ श्लोक ॥ दुष्कमोक
मेदुष्टः स्यात्तज्ञानं दुष्टेन नाद्रयी। प्रीतिश्रून्यो भक्ति दुष्ट
स्तन्मार्गमात्रत्यजेत् ॥ २४ ॥ यास्लोकमर्थ। अबश्रीहरिरायजी
कहतहैं जो दुष्कर्म हैं दुष्कर्म करत हैं। सो भौतिक दुष्ट
औरज्ञान दुष्ट है दुष्ट पुरुष नाश्रयीतानहोय। सत्संगके अ
थतें कछु भावधर्म आवे कृतार्थ होय। और प्रीतिश्रून्य जो
भक्ति दुष्ट है आसुरी ऐसे जो तो यह पुष्टिमारगीय वैष्ण
वसर्वथा ही त्याग करो तब भगवद्धर्म रहै यह निश्चय सि
द्धांत है काहे ते ऐसे आसुर के संग ते सर्व धर्म बुद्धि नाश
होय जाय अन्याश्रय होय। सो यह पुष्टिमार्ग में महा
बाधक है। ताते श्री हरिरायजी सगरे पुष्टिमारगीय वै
ष्णवको सिक्षा करत हैं। जो भक्ति दुष्टको त्याग ही कर्तव्य
है। इति श्रीहरिरायजीकृत सिक्षापत्र पंचविंसतामो ॥ टी
का श्रीगोपेश्वरजी कृत संपूर्ण ॥ २५ ॥ अब कहत हैं जो
एपे दुःसंगको छोडें तब भगवद्धर्म रहे। तैसेई लौकिक
चिंता हू छोडें तब प्रभु हृदय में पधारें। सो चिंता निवृ
त्तिको प्रकार अब कहत हैं श्लोक ॥ नैवचिंता प्रकर्त
व्या लौकिके भक्तिमार्गगैः। चिंता चिंताकुले हृत्स्थ कथं
माविशत्ते गुणो ॥ १ ॥ याकोअर्थ ॥ अब श्री हरिरायजी कहत
हैं। सगरे पुष्टिमारगीय वैष्णवको सिक्षा करत हैं जो
हे सगरे पुष्टिमारगीय वैष्णव तुम कुं यह लौकिक चिं
ता नाही कर्तव्य है काहे तें। चिंता में जाके चिंता कर आ
कुल है श्रनाके हृदय में सकल गुण संयुक्त ऐसे श्रीकृ
ष्ण वे से आय वसे काहे तें। चिंता महादोष रूप सकल
दोषन की चिंता माता है। जहां चिंता आई तहां सक
ल दोष आये। सो दोष जब हृदय में होय। तब सकल गु
हृदय में कोन प्रकार आवे। ताही तें श्रीम

कार्यानिवेदनात्मभिक्तरापि॥ सोनिवेदितात्मवैस
३ वरूपनोसमगरोपदारथ आत्मनिवेदनभगवानको
कीयो॥ पाछेंचिंता कोंकरत हे॥ सर्वथा चिंता नकरे॥ भग
वानधनी माथेपेंहे॥ सर्वकरणसामर्थ्य तातें लौकिक
चिंता कछु नाहीकर्तव्य हे॥ श्लोक॥ यथा ग्रहेयहप
तिशुद्धं समाजेनादिभिः स्वयं त्वतिहन्यथातुपरा
वर्तेत सर्वथा॥ श्लो॥ ॥ अवलौकिकदृष्टांत ते
कहत हें जैसें लौकिकमेंयह गृहको धनी गृहकोंसु
द्ध करिवेंमार्जनकरि समारो कूडा बाहिर निकारिके
शुद्ध करि घरमेंरहत हे॥ सो लौकिक ही प्रसिद्ध ही
हे तैसेंही श्रीकृष्ण जा वैष्णवको हृदय रूपी घर शुद्ध रूपी
घर देखत हे॥ चिंताको दोष जाके हृदयमें नाहीं हे त
वप्रभु वह वैष्णवनके हृदयमें पधारे हें॥ काहेते॥ चिंता
लौकिक है॥ सो श्रीकृष्णके चरणारविंदके विस्तारक है
काहेते॥ चिंता भईतव प्रभुको स्मरणभजनके सेंको
ग हृदयमें तो लौकिकावेस भरिरह्यो हें॥ तव प्रभुहृद
यमें कैसें पधारेंगे॥ तातें श्रीआचार्यजी द्वारा निवेदन
कीये॥ पाछें संसारी चिंताका मर्कोधमरूमष्ट तापह
हृदयमें कूडा मैल है॥ ताकों निकासिकें यह स्वरूपनाह
हृदय शुद्ध करिसांत चिंत करि कं श्रीकृष्ण हीकों आ
श्रय करि है॥ तव प्रभु वैष्णवको हृदय शुद्ध देखिके प्रस
न्न होय पधारे॥ आपनें स्वरूपानंदको अनुभवकृपा
करि करावें अवश्य॥ ऐसें कहत हें॥ श्लो॥ ॥ उक्तं च प्र
भुभिस्तस्मा मात्लवरलेहूपार्युभिः अतोन्यविनियो
गापी चिंताका स्वस्य सोपि चेन्न॥ श्या॥ ॥ ॥ न ह
कोइ कहेंजो अन्यविनियोग होत हे॥ यह प्रभुकी सेवा
हरहतन वनेतव तो चिंता करनी॥ तहां श्रीहरिरायजी
कहत हे॥ जो हमारे श्रीवल्लभाचार्यजी परमकृपाल हे

सो न करत ग्रंथमें निरूपण कीयो है। जो अपने तें अन्य वि
विनियोग होइ तब कछु चिंता न करै काहेतें॥ प्रभु मन
फेरिकें अपने जीवन को अपने इ विनियोग करावेगे
या भांति चिंता छोडि के प्रभु को आश्रय दृढ हृदय में
राखनो॥ ३॥ अब और हू कहत हैं। श्लोक॥ सर्वमार्गेवि
चारापि कलौ केवलिष्यतो॥ न संसर्गकृतो दोषस्त
था कलियुगे भवेत्॥ ४॥ याको अर्थ॥ अब श्री हरिरायजी
कहत हैं जो धर्ममार्ग विचारे धर्मसास्त्रादिमें यह सि
द्ध होस्या है है जो कलिमें दोष करे ताही को दोष लि
होय अन्यथा और को सर्वथा दोष न लगे यह कलि
युग की मर्यादा है। तातें संबंधी कछु भक्तिरीति छोडिकें
अन्य विनियोग अन्याश्रय करत तो हू पर चिंता करे
जाने इन कीयो है सो ईये भोग लोको के हा बाधक है
ऐसे विचारिके अपने धर्ममें सावधान रहे॥ ४॥ श्लो
क॥ युगांतरेन्नथैवायं पंचमेत्येन गतापते मघ्युगन्
निआचार्यैस्थेयं नावेहलवे सह॥ ५॥ याको अर्थ॥ यु
गांतर वीते न कलियुग आवत है॥ यह प्रथम सास्त्रवे
दकी मर्यादा है। तहां प्रथम सत्ययुग॥ १॥ त्रेता॥ २॥
द्वापुर॥ ३॥ कलियुग॥ ४॥ ये चार भये॥ सो यह अब यह
वर्तमान कलियुग है॥ सो पंचमो उत्तमतें उत्तम
गिननो॥ यह स्वरूप युगमें नाही है॥ काहेतें या युग
में श्रीवल्लभाचार्यजी पूर्णपुरुषोत्तमको प्रागट्य
है॥ तातें रासी न भई॥ सो श्रीगुसांईजी समस्तकी
मेव हे हे॥ श्लोक॥ मायावादकरीन्द्रदर्पदलनेन
स्पेंदुराजोद्गतः॥ श्रीमद्भागवताख्यदुग्धजलसुधा
वर्षणवेदोक्तिभिः राधावल्लभसेवया तनुचेतं
प्रेम्णा पद्मैरपि॥ श्रीमद्वल्लभनामधेयसदृशो
भावेन भूतोस्त्यपि॥ इति वचनात॥ श्रो खधा

में कहे हैं । ऐसी भईनकी है कब हूं जैसी अवनिधि आई
सो भावन ते ऐसो मन में जानत नो । जो ऐसो कलियुग के
न हूं नाही भयो । और न आगे होइगो । ताते अब देवी
सृष्टि के उद्धारार्थ ए श्री आचार्यजी महाप्रभु पधा
रे पुष्टिमार्ग प्रगट कीयो है ताते श्री आचार्यजी महाप्र
भु प्रगट होइ कीये है जो जीव अन्य विनियोग में स्थित न
होइ । अन्याश्रय सर्वथा न करे । यह सिद्धांत रहस्य पर
है । यह वस्तु आई कहत हैं । परलो[क] । तथा चित्तो वृसंको
व को वास्तव ग्रहर्शनै मनः स्थाप्य तन्निवृत्तौ समय
तन्निवर्तने । अथा ... अर्थ । अब श्री हरिरायजी कहत
हैं जो कोई वैष्णव को आवे तक लौकिक संबंधी संकोच दु
खादिक को आयपडे वो होत न दुख होत जाने तो उनही
कूं वस में स्थित होइ । के सबो होत न करे । तिवर्तने के से
यत्नार्थ परंतु अपने मन को स्थिर न करे । तब समय
आयपडें तब उनको छोडि देइ । जो कुलवी अपने समझा
यते पुष्टिमार्ग के धर्म में आवे तो उनकू ल्यावे जो वे
न आवे तो उनको तत्काल ही छोडि देइ । मर्यादा ले उपास
करि फेरि अपने पुष्टिमार्ग की रीति सों समान रखावसर
पा करें । धर्मलो[क] । तत्कालं तत्प्रयत्ने तु रोग सर्पवादवे
दिवनु । अंतःकार्य समानेरेव प्रतिबंधनिवर्तने । ७ । या
को अर्थ । अब श्री हरिरायजी कहत हैं । बहुत वको संकोचा
दि महा आवे सहोइ तो उनही में मिलि करें । परंतु म
हारोग समान उनको दुःखरूप जाने । उनके त्याग की
भावना मन में राखे । जैसे रोगादिक को अनेक औषधक
रि दूरि करियत है । तैसे ई तत्काल अनेक उपाइ करि
न्य संबंध करे । ताको त्याग करिये काहे ते । एह सास्त्र
में कहे हैं । जो भगवद्धर्म में अनुकूल न होइ तासूं मिलि
के भजन स्मरण करिये । जो आर कौ मनसे वा मन हार

तो आपुही करिये ताके पीछें महाप्रसाद धरि लीजिये औ
र जो प्रतिबंध करे ताको त्याग ही करिये जो एकवार त्या
ग न होइ तो सनें सनें उह प्रतिबंध को निवर्त्त करिये या भां
ति पुष्टिमार्गीय वैष्णव सेवा स्मरण करें सब और हू क
रत हैं ७ श्लोक ॥ वृथा चिंता न कर्त्तव्या स्वमनो मोहका
रणं ॥ यथा सछिद्र कलसान् जलं स्रवति सर्वतः ८ या
को अर्थ ॥ श्रीहरिरायजी कहत हैं जो वृथा चिं
ता सर्वथा ही नाही कर्त्तव्य है काहे ते मन को मोह
होइ मोह को कारन एक वृथा ही चिंता है यह निश्च
यही जाननो ताको दृष्टांत कहत हैं जैसे कलस के पें
दे में छिद्र भयो कलस ते जल सगरो जल वाहिर व
हि जात है तैसें वृथा चिंता सें मन को मोह उपजत
है भगवद्भजन नाहीं बनि आवत ॥ यह मनुष्य देह स्वा
पुपरमभगवत सन्मुख न प्रभु की सेवा योग्य है सो सगरी
आयु सब वीत जात है सो ऐसो दुर्लभ धर्म राजा जनक
ने कही है श्लोक ॥ दुर्लभो मानुषो देहो देहीनां क्ष
णभंगुरः तत्रापि दुर्लभं मन्ये वैकुंठप्रियदर्शनं ९
इति वचनात् यह मनुष्य देह ऐसो महादुर्लभ है दे
वतान को हू दुर्लभ है सो रत्न एसो भयो है परंतु भगवा
न के अनुसर्त्त दुर्लभ है सो यह देह पाय के प्रभु को स्मर
ण करे तो उनकी सिद्धि होइ अब वैकुंठनाथ श्रीठाकुर के
दरसन को वस्त है तातें वृथा करि कें यह देह को मो
ह करिकें वृथा संसार में जात है अब चौथो कहत हैं
श्लोक ॥ यथा सुमतनं यांति त्रायतेन प्रहस्थितं ए
वं हि शरीरत्या पुष्य तच्चैवं विलेवयेत् टीका को
अर्थ ॥

जानें जो कीरी एहग्र

वहस्तुस्तदुसंगीमिलेहैं।एभगवद्धर्ममेंस्वांवाधककी
करेंगे।यासोंतिप्रतिबंधरूपहोइगेतोतिनकोंजन्मकां
लतांईलुणत्यागकरिकैंभाजिजाय।एकस्तणहूं
छिलैवनकरैकाहेतेंदेहस्थूटनकोप्रमानेनाहीहै
सोश्रीभागवतमेंप्रह्लादजीबालकसोंकहेहैंकौ
मारआचरेत्प्राज्ञोधर्मान्भागवतानिह
दुर्लभंमानुषंजन्मतदप्यध्रुवमर्थदं।१।इतिवच
नातप्रह्लादजीकहतहैंहेबालकयहभगवद्ध
र्मकेंमारअवस्थाहीतेंआचरनकर्तव्यहै।काहेतें
मनुष्यदेहमहादुर्लभहैसोनिश्चयनाहीहैतोभव
एकक्षणमेंनासहोइजाइगी।तातेंयहबालककोमार
अवस्थाहींतेंप्रभुकोस्मरनकर्तव्यहै।यहविचारिकेंप्रति
बंधरूपयहसंबंधीकुटंबकोतत्कालहीत्यागकर्तव्य
है।एकक्षणहूंउनकेसंगविलंबनकरेंकांहेतेंदुःसंगदो
षतेंमनफिरिजाइसोयहसंसारासक्तिहोयजाय।
तातेंताहीक्षणउनकोसीघ्रहीत्यागकरेंअरुजोंअर
हूंयहनहीहोसकेतो।भगवच्चरणाम्भोजःस्थापणीति
विचक्षणैःशरीरंपाहतांतद्धिहृन्यंसर्वथामतं।१
याकोअर्थऊपरकहेएसेप्रतिबंधकोहोइकेकह
करैभगवानश्रीकृष्णकेचरणकमलतेंअपनेचित
कोस्थापनकरैंविचक्षणरीतिसोंनाकोयहअर्थ
है।जोपुष्टिमारगीयकीरीतिसोंकहतहैं।भगवान्के
आचरणकोस्मरणजानीहूं।मर्यादामारगीयहूंभ
लेकरतहैं।तिनतेंविचक्षणपुष्टिमार्गकीरीतिसों
निसश्रीठाकुरजीकीसेवादिकर्केसर्वेंद्रियदेहमन
सर्वभगवानकेचरणमेंलगावें।सोकहवेनें
अवअपनेसरीरकोपालनजानें।यहदेहकेपाप
नमेंदेहकोमोहनहोइ।तवमनलगाइकेंतेतुम

जासेवाकरौ तातें सरीरकौं आकृत जानौं औरजीव
नित्य सदा प्रभुकौं दासजानौं तातें यह देहलौं भांड
पशु जो नित्य है था मजलि तो पोहोचि तें सेय हजानें
यहदेह हाड़ कहिन नास होइगी यह भावना कीयो
भगवद्भक्त किरि तें इ जीवकौं सदा नित्य जानें ॥ २ ॥ अ
व्यारहू कहत हैं ॥ श्लोक ॥ न संबंधोस्ति विद्यावत्
ताहंममताभ्यां संसारस्तत्कृतः सर्वः संबंधोपि मृषा मत
नः ॥ २ ॥ याको अर्थ ॥ श्री हरिराय जीवकूं कहत हैं जो जी
वकौं थोरे देहसों संबंध को उ कालमें नाहीं है जीव
तो व्यापि चिन्तनाहीं तें है और देहको संबंधनाहीं
कलत्र योनि भुगतो होत है ताकौं सरीरसों संबंध है पंचतत्व
होत है ता देह प्राकृत पंचतत्वकौ है और जीव सद
का है तो देह प्राकृत है ताकौ रज प्राकृत है सत्व नष्ट
करि प्राकृत है ताकौं खंडित न जारावै सत्र नष्ट
एकरस अखंड है ताकौं अविद्या जो लगी है ता
ते कौं सो रहे तो नित्य है परंतु अविद्या जो अहंता ममता माया रूप
करि अपनों सरीर जानत है अहंता ममता
जीवकौं लागी है या भांति संसार सगरौ है
करि विध्यो है सो यह लौकिक संबंध सगरौ झूठो है
सहो अज्ञानकौं स्थिर ही है अहंता ममता अविद्या को
अपनौं मान्यो है यह कौं ओरहू कहत हैं ॥ २ ॥ श्लोक ॥ न
संबंध कौं देखन हि मैंतन अमुतमें प्रतिबंध लिकु
श्री हरिराय प्राकृत जन ॥ ३ ॥ याको अर्थ ॥ तातें यह
लौकिक संबंध मिथ्या है सो उन में मन लगावे
ताकौं याकौं दुख ही उपजे ॥ तातें उन सब भावही
जनम जनहीं सो यह लौकिक संबंध उनमें नाहीं
नतहैं

नहसुखदुःसंगी मिले हें ए भगवद्धर्ममें सर्वथा बाधकही
करे ताते यासों तिप्रतिबंधरूप हो तो तिनको तत्का
ल नाइलागे त्याग करिके भाजि जाय एक क्षणहू
विलंब न करे काहेते देहछूटनको प्रमान नाही है
सो श्री भागवतनमें प्रह्लादजी बालकसों कहे हें कौ
मार आचरेत्प्राज्ञो धर्मान् भागवतानिह
दुर्लभं मानुषं जन्म तदप्यध्रुवमर्थदं १ इति वच
नात् प्रह्लादजी कहत हे हे बालक यह भगवद्ध
र्मके मार अवस्था ही तें आचरन कर्तव्य है काहेते
मनुष्य देह महादुर्लभ है सो निश्चय नाही है तो अब
एक क्षणमें नास होइ जाइगो तातें यह बालक कोमार
अवस्था ही तें प्रभुको स्मरन कर्तव्य है यह विचारिकें प्रति
बंधरूप यह संबंधी कुटुंबको तत्काल ही त्याग कर्तव्य
है एक क्षणहू उनके संग विलंब न करो काहे दुःसंग
ते मन फिरि जाइ सो यह संसारासक्ति होय जाय
तातें नाइलागे उनको सीघ्रही त्याग करो अब आ
गे कहत हैं श्लोक भगवच्चरणांभोजे मनःस्थापयेति
विचक्षणः शरीरं पालयेन्नाद्धि हन्यते सर्वथा मते १
याको अर्थ ऊपर कहे एसे प्रतिबंधको छोडिके कहा
करे भगवान श्रीकृष्णके चरणकमलमें अपने चित्त
को स्थापन करे विचक्षण रीतिसों ताको यह अर्थ
है जो पुष्टिमार्गीयकी रीतिसों कहत हैं भगवानके
आचरणको स्मरण जानी हैं मर्यादामार्गीय हू भ
जन करत हैं तिनतें विचक्षण पुष्टिमार्गकी रीतिसों
नित्य श्री ठाकुरकी सेवादिक करि सर्व इन्द्रिय देह मन
सब भगवानके चरणमें लगावें सो कहत हैं ने
अब अपने शरीरको पालन जाने यह देहके पोष
नमें देहको मोह न होइ तब मन लगाइकें तनुजा

जानो सेवाक सौं तातें सरीरकों प्राकृत जानों। और जीव
नित्य सदा प्रभुकों दास जानें। तातें यह देह सो भांड
पशु जो निश्चय। मजा लिलों पो है चित्तसेय जानें
यह देह एक दिन नास होइगी।
भगवदीयकों रिते जीवकों सदा नित्य जानें। २
और हू कहत हैं। श्लोक॥ नत्संबंधोपि विद्यात्स्त
ताहंममताभ्यां संसारस्तत्कृतः सर्वः संबंधो।
न:२। याको अर्थ॥ अब श्री हरिरायजी कहत
वकों और देह सों संबंध कोउ कालमें नाही
नो आश्रित नाहिते हैं। और कोटानकोटि
लख योनि भुगती हैं तहां काऊ सरीर सों संबंध नाही
हैं। काहेतें। ए देह सब प्राकृत हैं पंचतत्व करिके हैं। पंचत
त्व प्राकृत हैं तातें काल ग्रसत है।
एक रस अखंड हैं। जाकों अवलिन जरावें।
न करे। सो दास। नित्य है परंतु अविद्या जो लगी हैं। ता
करि अपनो सरीर जानत है अहंता ममता माया
कौ जीवकों लागी है। या भांति सगरो संसार अहंता मम
ता करि बंध्यो है। सो यह लौकिक संबंध सगरो जगत
रहे हैं। अज्ञानके अर्थ अहंता ममता अविद्या के वस है
अपनो मान्यो है। यह श्लोक है। कहत हैं ॥ श्लो ॥ न
संबंध करि दुःख नहि मनतनमुनमें।
यह हरिशरण मार्ग जे तन ॥२॥ याको
लौकिक संबंध मिथ्या है। सो उनको मन न लगावें।
अर्थ। याको दुःख ही उपजे॥
जनमरन नहीं। सो यह लौकिक संबंध जनम मरन
नत है। तातें यह अहंता ममता प्रतिबंधक जा
सर्वा जाननहीं। मन हो जहां अहंता ममता
सर्व प्रभु को है। समर्पनकरि दिकी स

तब यह पति में धर्म रहिसो नहीं है सो नवम स्कंध में कहे हैं
श्लोक ॥ स्वदारागारपुत्राप्तान् प्राणान्वित्तमिमं परं ॥ हि
त्वा मां शरणं याताः कथं तांस्त्यक्तुमुत्सहे ॥ १ ॥ और एका
दश स्कंध में कहे हैं श्लोक ॥ एवं दारागारपुत्राप्तान् प्राणा
न्वित्तमिमं परं ॥ हित्वा मां शरणं याताः कथं नास्त्यक्तुमु
त्सुके ॥ १ ॥ और एकादश स्कंध में कहे हैं ॥ कायेन वाचा
मनसेन्द्रियैर्वा बुद्ध्यात्मना वानुसृतस्वभावात् ॥ करो
मि यद्यत्सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पयेत्तत् ॥ २
इष्टं दत्तं तपो जप्तं वृत्तं यच्चात्मनः प्रियं ॥ दारान्सुतान्गृहा
न्सुतान् प्राणान् यत्परस्मै निवेदनं ॥ ३ ॥ इष्टं दत्तं जपो
तप्तं वृत्तं यच्चात्मनः प्रियं ॥ इत्यादि वचनके अनुसार
पुष्टिमार्ग में श्री आचार्यजी द्वारा प्रभु कूं समर्पन करि
के प्रभु ही की सरण को आश्रय करते नहीं है ॥ अब कहे हैं
कहत हैं ॥ १३ ॥ श्लोक ॥ भक्तदुःखासहिष्णुत्वात् देवा हरि
निवर्तयेत् ॥ असत्यो हरिर्वास्ति यत्पर्वमेव प्रभोर्वचः
॥ १४ ॥ या श्लोक को अर्थ ॥ कहत है जो सर्व पदार्थ कुटुंबादि के
प्रभु में समर्पन करि भगवद् भजन हरि की सरन लीने
न वस्तु संसार के कुटुंबी दुःख देहि जाति को दुःख होय तथा ए
कलो है रोगादि दुःख होय तथा द्रव्यादि की हानि होय
तथा लोकादि अपमान कोउ भाग होय तथा राजादि दंड
देय तथा या भांति अनेक संबंधी अनेक दुःखमय है
स्वके कहे तब सहाय याकी कोन करें या भांति संदेह
होय तब श्री हरिरायजी कहत हैं जो यह भगवद् भज
न सब छोडि हरि की सरन जाय तहां कोई दुःख विना
को सहें तब श्री ठाकुरजी भक्त को दुःख नाहीं सहि सक
त हैं ताते भक्त को दुःख पावत देखि तब तत्काल दुःख
दूरि निवर्तन करें सो विवेक धैर्याश्रय में श्री आचा
र्यजी महाप्रभु कहे हैं ॥ असत्यो हरिर्वास्ति सर्वमात्म

यतोस्त्वेत तथा अस्मकैवा सुखकेवा सर्वथा सरां हरिः १
याभांति हरिकी सरन दृढ राखतो । प्रभु सर्व श्रोत रत्नाकरो
गोप्रहलादनै हरिकी सरन कीनी दुःखसहे नव भगवानसु
खसहे नव भगवान प्रतिबंध दूरि कीयो भक्तकी रक्षा ईक
री सोगीताजीमें भगवानने अर्जुन प्रतिकहे हैं श्लोक ॥ सर्व
धर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज । अहं त्वा सर्वपा
पेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥ याभांति भगवानकी सर
न जाय प्रभुदे आश्रय करे ताकी रक्षा प्रभु करत हैं यों
भांति वृहन्नीमें श्री आचार्यजी महाप्रभु कहे हैं बाध सं
भावनायां तु नैकांते वास इष्यते । हरिस्तु सर्वतो रक्षां क
रिष्यति न संशयः ॥ इति हरिस्मरणात्सोई अपने मनको एकां
तमें वास करि हरिस्मरण करे यतो प्रभु रक्षा सर्व प्रकारसों क
रेगे यामें संशय नाहीं है तातें सर्व प्रकार हरि ही को आ
श्रय करे एक आश्रयको रहें वृह नहीं श्लोक ॥ यावद्धि
प्रकृतेवा घुपायस्तु निष्पत्तेः प्रतिकूले तु न त्यागः पर्यं
ते विहितं पुनः ॥ १५ ॥ याको अर्थ ॥ याभांति येस्वरूप
हमें प्रभुकी सरनके उपायमें सों प्रतिबंधरूप घरको त्या
गमें मन राखे ॥ जो कोई कुटुंबी प्रतिकूल होय स्त्रीपु
त्रादि माता पिता तिनको त्याग करै जो अनुकूल हूं
होय तो अपनो धर्म अवलोई सेवा करे साधु जनको
भगवत्प्रसाद प्रसादी वस्तु दे पोषन करे तो विकल प्र
तिबंधरूप भगवद्धर्ममें नहि हे पराये तो उनको त्याग क
रे क्योंके भगवान आत्मसंबंधी जन्म जन्मके प्रभु
हैं श्री रये देह संबंधी हैं जहां मरन देह न हां लों संबं
ध है ता ही ते देह संबंधी के लीये आत्मसंबंध न छ
डनो ॥ याभांति प्रतिकूलको त्याग करे नव हित है
अवश्य रहकरन है ॥ १४ ॥ श्लोक ॥ स्वेया स्वमत्यार
तो सहिरे वाहि इलवा ॥ स्वकीयचिंतासु लोके नसक

रिष्यति॥१॥ याकोअर्थ॥ श्रीहरिरायजीकहतहैं जोस
र्वथायहजीवअपनेप्रभुश्रीकृष्णचंद्रकेचरणकम
लमेंआसक्तहोइ ताकेलौकिकसर्वदुःखनकौअपने
कीनिजभक्तनकीचिंताआगेतेंकीएआएहैंऔरक
रतहैंऔरकरेंगेतीनोंकालमेंकरतहैं भक्तनकीना
हीभूलतहैंसोसंन्यासनिर्णयमेंश्रीआचार्यजीम
हाप्रभुकहेहैंश्लोक॥ अन्यथामातरोबालान्स्तने
पुपुषुःक्वचित्॥ माताअपनेबालकपुत्रनकोंस्तनप्री
तिसोंप्यावतहीहैंनप्यावेसोएसोमातनहूंकब
हूंबालककीरक्षाहीलिएदूरकरतहैं नेसेंभगवा
नभक्तकीचिंतासर्वथानकरैंजाभांतिभक्तकोंदुःख
होइसोप्रभुकरतेहैंयहलि॥ अथजाननों अवश्री
रहैंकहतहैं॥१॥ श्लोक॥ स्वयंहिमधुकरतेवापितरौ
भृत्विरस्थिते ननूतितकृपापूर्णसेवकंसर्वदापिहि
ते॥१६॥ याकोअर्थ॥ अवश्रीहरिरायजीकहतहैंजोज
नपुष्टिमार्गीयवैष्णवकोंचिंताकरनेंकहाहैकाहे
तेंश्रीआचार्यजीश्रीकृष्णकेसाथरतवैठेहैंतिन
कोंकाहेकीचिंताहैकाहतेंयहलौकिकमेंबालकके
मायपितावैठेहोयसोबालककोंकहाचिंताहेय
हतोलौकिकऔरश्रीकृष्णतोईश्वरहैंसर्व
सामर्थयुक्तहैंएसेवैष्णवकेमाथेयहपुष्टिमार्गमें
विराजतहैंसदाअपनेसजिनकीकृपादृष्टिभक्तनप
रहैंएसेवैष्णवकोंकछूकीचिंतानकरनीतातेंप्रभु
नित्यविराजतहैंएसेप्रभुकेसेवककोंमनवचनसोंश्र
रिकेआश्रयहीकरैपरस्पिर्देतनसबोपरहे॥ अवश्री
रहैंकहतहैं॥१॥ श्लो॥ आचार्यचरणांतस्यचिंता
लेशोपिनेवहीतस्माछ्रीवल्लभाचार्यचरणाज्वंद
यामिते॥१७॥ याकोअर्थ॥ अवश्रीहरिरायजीकहत

जो श्री आचार्यजी महाप्रभुन सें स्वरूप सें नाम मात्र
है तिनको चिंता को लेस हू नाहीं
सो श्री आचार्यजी महाप्रभु विज्ञप्ति में कहे हैं
श्लोक ॥ यदुक्तं तातचरणैः श्रीकृष्णः शरणं मम: नत: एत
स्मिन्नैश्वर्ये मे ह्यैहिके पारलौकिके ॥ १६ ॥ इत्यादि वचनक
रि चिंता सर्वथा पुष्टिमार्गीय वैष्णवको नाहीं करनी
है अब आगे पर कहत हैं श्लोक ॥ न कापि चिंता कर्तव्या
कृष्णसेवां विना पुनः । निवेदनानुसंधाने चिंतामात्रं वि
धीयते ॥ १८ ॥ याको अर्थ ॥ कृष्णके जो चिंता कोई प्रकार
नाहीं कर्तव्य है नहीं कोऊ कृष्ण जो कछु चिंता नाहीं
करनक है तब जीव भगवद्धर्म की चिंता नाहीं करनो
है तब जीव भगवद्धर्म की चिंता क्यों न करनो आसरा
व धर्म हू न करनो प्रथम जीव को भगवद्धर्ममें मन हू नाहीं
हो आलु मद्धि की कहा
त हत है
क यहै तो
कि वैदिक फल की तो अनेक प्रकार की नों चिंता नाहीं
कर्तव्य है ॥ श्री कृष्ण की सेवा विना तो यह पुष्टिमार्ग स
वोपर फल है सो यह चिंता को आवश्यक ही कर्तव्य है
तातें श्री कृष्ण की सेवा करें निवेदन को अनुसंधान
अहर्निश राखे जो मैं कितने काल को प्रभुसों भूल्यो हू
तो अब श्री आचार्यजी महाप्रभुनजी की कृपा तें संबंध
भयो है मेरा सहो मोको अब कहा कर्तव्य है सर्वसमर्प
ण कीयो है ॥ यामें आपनी सत्ता सर्वथा ही न करनी सर्व
प्रभु को है या भांति निवेदन को अनुसंधान राखे सर्व
चिंता मात्र मन में कछु न लावे अब आगे कहत हैं श्लो
क ॥ लोके स्वास्थ्यं तथा वेदे हरिस्तु न करिष्यति ॥ श्रीमत्प्रभोर्वचः ॥ सेत
सीघ्र हृदयस्यासा निवनेसेवनार्थि भी ॥ १९ ॥ याको अर्थ

अब श्री हरिरायजी कहत हैं जो हमारे प्रभु श्री वल्लभा
चार्यजी श्री नवरत्न ग्रंथ में कहे हैं श्लोक लोके स्वा
स्थ्यं तथा देहे हरिस्तु न करिष्यति १ इति वचनात् श्री
ठाकुर ऐसे हैं अपने जन को लौकिक वैदिक संस्थिति
न करे जो अज्ञान करि कोई लौकिक में वैदिक में स्थि
ति नै करे होय तो श्री स्वरूप लौकिक वैदिक कार्य
सिद्धि नाही करत हैं याभांति प्रभु को गुण माने म
न में चिंता दुःख न पावे जो मैं अब कहा करूं मेरो लौ
कीक वैसे होयगो लौकिक तो सिद्धि नाही होत यह
चिंता रंचक हू न करे शीघ्र ही प्रभु को चिंतन करे जो मे
रे ऊपर प्रभु प्रसन्न हो ही हैं जैसे सेतदासजी श्री आचार्यजी
के सेवक प्रथम बहुत प्रसन्न रहते सो द्रव्य गयो वीस २०
हजार को श्रीजी ने अढाई पैसा में निर्वाह करते पाछे ना
रायनदास ने १०० मोहोर पठाई सो न राखे प्रभु के अ
नुसार चले याभांति वैष्णव प्रभु को गुन ही माने १९
[illegible] श्री [illegible] रि [illegible] जी [illegible] त [illegible] ला [illegible] त्र [illegible] व [illegible] सो [illegible] की [illegible] का
श्री [illegible] पे [illegible] र [illegible] ष्ट [illegible] सं [illegible] २१ अब ऊपर कहे जो चि
तान करनी और निःसाधन होय तब फल प्राप्ति होय सो
निःसाधन की भावना कौन प्रकार करे सो आगे कहत हैं
श्लोक [illegible] न शुद्धभावो नैवास्ति सर्वभावेन दीयते नाश्रा
परं विश्वासो नवास्ति परमादरः १ या [illegible] अ [illegible] अब
श्री हरिरायजी कहत हैं जो याभांति निःसाधन जीव हो
य तो प्रभु क्रिया फलदान करें सो मेरे में निःसाधन
ता नाही है प्रथम तो शुद्ध भाव होय तब प्रभु कृपा करें
सो शुद्ध भाव मेरे में तो नाही है मन में कपट छल इर्ष्या
इत्यादिक भरि रह्यो है ताते श्री कुल में एक शुद्ध निर्म
ल भावना ही है और सर्व भाव हु प्रभु में नाही है
ते चतुःश्लोकी में श्री आचार्यजी महाप्रभु कहे हैं

दा सर्वभावेन भजनीयो व्रजाधिपः ॥ स्वस्यै टेग नके अ
धिपति श्री कृष्ण तिनको भजन सेवा सर्वदा सर्वभाव
रूपिके करते रहे ॥ सो मोसो नाही बनत है इनते करत हो
इ ही मन नाही आत्मन मे विचार हो ॥ नव रत्न
कनन मन वचन सर्व सर्वभाव है प्रभु मे नाही है
वै तव दैन्यता ही केरो ॥ नव
रमे तो रंचक हू दैन्यता नाही है
विज्ञप्तमेव कहे हो ॥ श्लोक ॥ श्री वल्लभ
[illegible] न्यत्व तो ष साधनं ॥ हमारे आचार्य वर
नश्री सु नीजी में कहे हैं जो प्रभु प्रसन्न करिवे को
साधन एक दैन्य ही सर्वोपरि है ॥ सो मेरे में दैन्यता नाही है
और जो प्रकार श्री आचार्य जी महाप्रभु की आज्ञा है
सो ग्रंथ में सब कहे हैं सो लने तो कऊ प्रसन्न होइ सो पुष्टि
मार्ग की रीति है ॥ ता अनुसार आचरण पालन ऊ मो में ना
ही है ॥ ४ ॥ और एह पुष्टिमार्ग में चातक पक्षी की नाई वि
श्वास राखे ॥ यह सर्वोपरि है ॥ विश्वास विना कछु सिद्धि
नाही है सो मेरे में विश्वास हू नाही है ॥ ५ ॥ और प्रभु में स्व
रूप नाही है ॥ परम प्रीति आसक्ति होय तो प्रभु दिना ॥ चोर
हो रसमन न लगावे ॥ सो प्रभु में स्नेह हू नाही है ॥ ६ ॥ सब
और हू कहत हैं ॥ श्लोक ॥ न सत्संगो तिवस्थ्वो न निर्वेद
न स्मृति ॥ नो श्रेयो न विवेको रे धैर्य न स्मरण स्थितिः
याको अर्थ ॥ श्री हरिराय जी कहत हैं जो और सा
धन होय न सत्संग होय न सत्संग पुष्टिमार्ग को फल
रु और अनुभव होय ॥ सो मोको पुष्टिमार्गीय को सं
ग नाही है ॥ ७ ॥ सत्संग होय तो भगवत्सेवा में अत्यंत प्र
हरसमन होइ उत्तम मानसी फलरूप होय ॥ सो मेरे में तो तनु
जा वित्तजा यह ही सेवा नाही बनत है ॥ सो मानसी पर
म दुर्लभ है ॥ पुष्टिमार्ग में तो सेवा विना वैष्णव नाही जाय

प.
९८

ने सेंव्रा सनगाय श्रीनजपेनो प्रस्तावनाय ने सेई वैस
वसेवा नकरैतौ वैसवनाजाइ सोमेरमें सेवा हूं नाही है
प और निवेदनको अनुसंधान यह पुष्टिमार्गमें सवथा
चहिये सो नवरत्नमें श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहेहें नि
वेदनंतु स्मर्तव्यं सर्वथा तादृशैरपि सोमेको नतादृ
सीको संग है और निवेदन की स्मृति हू नाही है ९ एक आ
श्रयो आश्रय यह मनमें यह हूं समसा भूत है सो विवेक
धैर्याश्रयमें कहेहें श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहेहें सो
अ सर्वो हरिरेवात्र सर्वमाश्रयनो भवेन् या भांति
सो एक श्रीकृष्णहीको आश्रय हू नाही है १० निवेदनकै
एसो विवेक चहिये सो विवेकस्तु हरिः सर्वं निजेच्छातः क
रिष्यति इत्यादिकमनमें विचार है यसो प्रभु आपनी इ
च्छाते सर्व करत है जीवको कीयो कछु हू नाही होत है इ
त्यादि भाव वेसवको चहिये सो विवेक हू नाही है ११
वेसवको दुखसुखमें धैर्य चहिये सो श्रीआचार्यजी
कहे हैं त्रिदुःखसहनं धैर्यमामृतेः सर्वतः सदा तक्रवद्दे
हवद्भाव्यं जडवद्गोपभार्यवत् इत्यादि आधिदैवि
क सुख आध्यात्मिक भौतिक तीनो प्रकारको दुःखको
सहन जैसे जन्म पर्यंत तैसे नरसीह दुखसहत हैं तव मार्ग
नालिक सन है जैसे गोपभार्या दुखसह्यो यह प्रकार दु
खसह्यो नवधा देखि प्रभु प्रसन्न होत हैं प्रह्लादकी
नाई टेक चहिये सो मेरेमें धैर्य हू नाही है १२ तथा हरि
की सरणमें स्थित नहीं है या भांति लौकिके परलोके
च सर्वथा सरणं हरिः दुःखहानौ तथा पापे भये का
मा पूरणे भक्तद्रोहे भक्त्यभावे भक्तैश्चातिक्रमे कृते
अशक्ये वा सुशक्ये वा सर्वथा सरणं हरिः या भांति
सरण है और कलाश्रयमें कहे है शरणस्थ समुद्धा
रं खलु विरां प्ययामपहं ताते श्रीकृष्णकी सरण है इ

तो प्रभु उद्धार करें। सो गीता में भगवान कहे हैं सर्वधर्मान्
परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्ष
यिष्यामि मा शुचः॥१॥ या भांति प्रभु की शरन होइ तो हू प
सो मैं सरण मार्ग में हू स्थिति नाहीं है॥१३॥ अन्य स्तो
कहत हैं। भक्ति के ज्ञान माहात्म्य परिस्फूर्ती से हस्तु
त्रचित्त आसक्ति व्यसनादी नाकथापि वस्तु दु
र्लभा को मम॥ श्रीकृष्ण को माहात्म्य स्फुर्ति हृदय
होइ तो उं प्रीति होइ जो है अपने अभिमे यकतने गा
यो तो पर्ाोपी एसे निःसाधन को फल सिद्ध भयो हैं अ
ना मिलाहि पुत्र भाव के नाम ते नाऱ्यो है। विद्या रूप
पूतना को एक क्षण में नाश कियें भक्तन की अविद्या दूरि
कीनी हैं यह पुष्टिमार्ग में श्री सूरदासादिकन को उद्धार
श्री महाप्रभुजी कीये हैं स्वरूपानन्द ते भक्तन को सर्व
कार्य सिद्ध होत है सो मोको ब्रह्मादि सें या भांति माहा
त्म्य की स्फुर्ति नाहीं है॥१४॥ चित्त में स्नेह होइ यह वडी
प्रभु प्रसन्नता की सी वो साधन है। का है तें प्रथम स्नेह प्र
होइ पीछे आसक्ति होइ पीछे व्यसन होइ तब अ
नुभव होय ता तें हमसों श्री कृष्णचन्द्र के चरणकमल में
प्रेम सो ई नाहीं है। सो तो आसक्ति व्यसनादिक तीनां क
था कहन को दुर्लभ है। सो प्रेम आसक्ति व्यसन कैसे
होइ सो त्रिविध नामावली में श्री आचार्यजी महा
प्रभु कहे हैं बाललीला नामपठात् श्रीकृष्ण प्रेम जा
यते आसक्तिः प्रौढलीलायां नाम्ना पाठाद्भवेष्यति
व्यसनं कृष्णचरणे राजलीलाभिधानतः तस्मात्त्रि
मन्त्रैयं जाप्यं भक्तिप्राप्तिर्भवेत्सदा॥ या भांति बा
ललीला की नामावली पाठ ते प्रेम होय। पाछे राज
लीला की नामावली पाठ ते व्यसन होय। ता पाछे
पुष्टि भक्ति होइ सो तीन पाठ मन लगाइ कें करें

नपुष्टिभक्तिनिश्चयहोय श्रीरभक्तिवर्द्धनीमेंश्रीआ
चार्यजीकहेहैं ततश्रेमनथासक्तिर्व्यसनंचयदाभवेत
सोमेंयेसेव्यसनरूपनाहीहै १५ ताकरिकेंश्रीकृष्णमेंचा
ननमेंश्रासक्तिनाहीहै १६ औरव्यसनादिककीकथा
हूदूरहै १७ अबश्रोरहूकहतहैं मर्यादा भक्ति
मार्गप्रवेशेननलोकधर्मनवस्थितिः इत्यादि भावे
नकालदोषनलगे इत्यादि १ ऋ अबश्रीहरि
रजीकहतहैं जोयहपुष्टिमार्गसर्वोपरताशेंमेप्रवे
शहूनाहीहै कारहते श्रीवल्लभाचार्यजीको भक्तिवें
मार्गहैताशेंब्रह्मादिशिवादिकोप्रवेशनाहीहै गोपी
पालसहस्रनाममेंगायेहैं यहमार्गकठिनभ
वरेंमोहूनहीप्रवेशविधिरनो एसोमार्गशुद्ध
ताकेमेरमें एकोसाधननाही ताके ये
नमें जानतहो जोयहसर्वोपरभक्ति
फोप्रवेशनाहीहै १८ श्रीरलोक
नाहीहै तातेंयहमनमेंजानतहैं
रभक्तिमार्गतोभलोहैं यकोकि मेंना
हीहै सोलौकिकमेंतो स्थितिहोय सोभी ग्र
हादिकधर्ममेंहू स्थितिनाहीहै १९ देशादि
कको आलय नाहीं कितनेजीवनेंसुद्धस्थानतीर्थको
सेवनकरतहैं काशीप्रयागतथा बृजहेंसलोकएसे
हैसकोआश्रयनाहीहै २० वैदिकधर्मकाहूकाल
दोषतेंसिद्धिनाहीहैं तामेंमार्ग
मेंकहेहैं सोकालदोषतें वैदिकधर्मसिद्धिनाहीं
कर्ममार्गतेंऊहगोहिपरलसास्त्रमेंकहेहैं
दोषतेवैदिकधर्मसिद्धिना सोसंन्यास
मेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुकहे कर्ममा
र्गमेंसुनरोकलिकालतेंना

है।नानावारविनष्टेषु सर्वमार्गेरुतादिषु याभां
तैकलिकालपायकै मर्यादामार्गके साधनसवन
ष्टभयेसोमवैदिककार्यमेंहूनाहीहै।अबऔरहूक
हतहैं।श्लोक॥ नचमावर्तिराहित्यंव्यावर्तनोनइ
तोमनः।नत्यागःश्रापिसेवाथो॥स्वतंत्रस्यतुकाक
स्या।भाषाकोअर्थ॥अबश्रीहरिरायजीकहतहैं
जोमेंअव्यावृतहूनाहीहों।श्रीआचार्यजीमहाप्रभु
कहैं।अव्यावृत्तोभजेत्कृष्णंपूजयाश्रवणादिभिः
याभांतिअव्यावृतभगवद्धर्मसेवाकरिकथासुने
सोअव्यावृतनाहीहें।रमनतथाव्यावर्तिकरमेंहू
येमेंचितचाहियें।सोऊकहेहें व्यावर्तोपिहरौचित्तश्रवणा
दौयतेत्सदा॥याप्रकारव्यावर्तनकरनभगवानमेंहूमेरो
मननाहीहै।जैसेसंतदासजीकोडीवे।वनेः।काऊनेवो
लतेनाहीर।अरुऔरभगवत्सेवाथेहरइडीमनतेनोलि
कवैदिकत्यागनाहीहैं।सोसेवाफलमेंश्रीआचार्य
।महाप्रभुकहेहैजोत्यागनहोयतोसेवानबनेउ
गप्रतिबंधोवाभोगोवास्यात्तुबाधकं॥बाधकानां
परित्यागोभोगेप्येकंतथापरं॥उद्वेगप्रतिबंधभोगको
हूलूएकविषयवासनपानआछादनहैसोभगवत्से
वार्थत्यागहूनाहीहै।रधास्वतंत्रनाहीहै।इहियादि
रहसंबंधीकोसबहोय।काहेतेंविषयादिभोगको
त्यागनाहीहै।ताकोस्वतंत्रस्वीकियाकहीहै।याभां
तिमनसबदोरलौकिकवैदिकतैस्वतंत्रहोयप्रभु
सरननाहीहें।रुपा।अबआगेंकहतहैं।श्लोक॥न
ष्टस्वविरहस्फूर्तिसंयमोनवचोगतो।नोदासीन्य
ममतेषुनानारात्रिषुगृहादिषु॥इयाकोअर्थ॥श्रो

काहेतें विरहतें दैन्य होय जैसें रासपंचाध्याई में प्रभुन
न ध्यान भये । हा नाथ रमण प्रेष्ठ क्वासि क्वासि महाभु
ज । हा मत्तेल्लपणा या मैं स्वस्वरूप संनिधौ । न या को
रहूं कहत हें । कुरदुःसुखंराजनकलसद्रयेनलाक्त
मा तासमाविस्मृष्टौ । या भांति विप्रयोग विरह
ते प्रभु प्रगटे । सो वह पुष्टिमार्ग में के भक्त विप्रयोग
ई फलरूप हैं । सो श्रीठाकुर के विरह की स्फूर्ति होनाही है
२ धैर्य और वानी को नेत्रन को संयम नाहीं है । श्रीभाग
वत में कहे हैं । जो वानी भगवद्नाम गुण नाहिं लेत
सो असत्य है खेन रटत हैं । नानेत्र सो प्रभु को दरसन ना
हीं करत । सोगान के होय देखत हैं । सो मोरकी चंद्रका
वत् । काहेतें यह होय बहुत बाधक है । एक तो मुख्य
होय १ और नेत्र न सो होय देखने । हृदय दोषरूप दो
त हें । ताते वानी नेत्र न को आवश्य निग्रह चाहिये । सो
मेरे में नाही है । २ ॥ और भगवदीय भक्त सो उदासीन है
और पुष्टिमार्ग में भगवदीय के संग ते यह पुष्टिमा
र्ग को फल सिद्ध होत हैं । यह हानि श्रय सिद्धांत है । सो मो
में भगवदीय सो स्नेह नाहीं है । उलटी उदासीनता है ।
सो मो को यह मार्ग में के संग्राव समह्वाइंगो । २५ । और
ग्रहादिक कार्य में मन की आसक्ति होय यह महाबा
धक है । काहे तें ग्रहादि लौकिक संसारासक्ति भगवद्
र्म में बाधक हें । सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु ठाकुर
मूर्छनक हे ही सब ठोर प्रसिद्ध हैं जो ग्रहादिकार्य
लौकिक में आसक्त हों तिन को भगवान के धर्म दुर्ल
भ हैं । सो मैं ग्रहासक्त हों । २६ । और वको रहे कहत हैं
श्लो० । नाहं कोप्यहि राहित्यं न स्वधर्म परिग्रह ना
न्य धर्म निवृत्य श्रृंकि कर्म व्यानि मत्प्रभु: ७ या ॥ श्री

थे॥ अहंकार भक्तिमार्ग में बाधक हैं॥ सो विवेकधैर्या
श्रयमें श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहे हैं॥ अभिमानस्य
संत्याज्यः स्वाम्यधीनत्वभावनात॥ अभिमान अहंकार
सो स्वामी को बाधक हैं॥ स्वतंत्र होइ सो करे॥ और दास
को धर्म नाहीं है॥ सो दास होइ के अहंकार अभिमान करे तो
दासधर्म नात है॥ ताते दास को तो अपने स्वामी श्रीहल
तिनके आधीनत्व की भावना करनी है॥ ताते यह अ
हंकार बाधक हैं॥ ताते यह अहंकार बाधक है॥ सो में अ
हंकार करि हित नाहीं हों॥ ४॥ और पुष्टिमार्गीय
वैष्णव को अपने स्वधर्म को परिग्रह न चहियें इन्ती
अनन्यता जैसे वीरवल ने करी॥ छीतस्वामी सो जो तु
म परसें श्रीगुसांईजी को ठाकुरजी को रूप करिके गावत
हो॥ सो ऐसा हि पतिसुनेगो तो कहा कहेगो॥ इतनो सु
नतहीं छीतस्वामी कहे जो मेरे भाग्य तो तुम ही मलेछ
हो॥ जो आजु पाछें तेरो मुख न देखोंगो॥ वरसोदीइछा
उठि चले याते याभांति अपने स्वधर्म की रक्षा करें :स
गाहिते रक्षा करें काम क्रोध मद मत्सर नाइ
तें अपनी रक्षा करें सो में तो कोई प्रकार अपने स्वध
परिग्रह नाहीं करत हो॥ ५॥ और यह पु
ष्टिमार्गीय वैष्णव
अन्यधर्म जितने हैं सो सर्वथा पुष्टिमार्गीय अन्यधर्म
को बाधक ही है॥ एवं पर सिद्ध ही होइ॥ ताते अन्यधर्म ३४
ही बाधक है सो में अन्यधर्म तें निवर्तनो नाहीं
एवं इति सदोष संयुक्त मैं हों॥ सो
मी हों जो मेरो कहा करोगे॥ त्याग करोगे के अंगीकार करोगे
ऐसो समको जानि नाहीं पडत है॥ कहत हैं
॥ श्लोक॥ मयि दोषनिधाने तु सर्वस
साधने त्वमेव ही स्वरूप नित्यं विभाव
॥ सो श्रीहरिरायजी कहत हैं॥ श्री

ऊपर बत्तीस लक्षण बत्तीस दोष मुख्य कहे हैं सो इनते
ही मति जानियो अपार दोष हैं मैं मो दोषको निधा
न हौं जाको पार गिनत नाहीं है और सुंदर गुण क
रि हीन हौं एक हू गुण मेरे में नाहीं है या भांति में निसा
धनकी भावना निष्फल कर्तव्य है या भांति निसाधन
होय तिनके हृदयमें प्रभु पधारि अनुभव करावें ॥
इति श्री हरिरायजीकृत शिक्षापत्र सप्तत्रिंशत ताकी टी
का श्री पत्र टीका संपूर्णं ॥ ३७ ॥ अब कहत हैं जो
अपने दोषकी भावना करिके निःसाधन होय रहे हैं त
करें तो आगे उत्कर्ष सबको कहा फल होइ यह ब्रजमें
भावात्मक रसात्मक पूर्ण पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण सदा भक्त
नके संग लीला करत हैं ऐसे श्रीकृष्ण वो पर तिनको
अनुभव होय सो श्रीकृष्ण ब्रजमें सदा विराजत हैं सो
कैसे हैं सो आगे सब वर्णन करत हैं श्लोक कृष्णो रसात्म
क नित्य गोपिका मंडलस्थितो यमुना पुलिनांतस्थ
वृंदावन विराजितः ॥ १ ॥ याको अर्थ अब श्री हरिरायजी
यह श्रीवल्लभाचार्यजीके पुष्टिमार्गमें सेव्य ऐसे श्री
कृष्ण रसात्मक सो कौन प्रकार ब्रजमें विराजत हैं सो क
हत हैं जो गोपीजन ब्रजभक्त स्वामिनीके मंडलमें स्थि
त हैं श्रीकृष्ण रसात्मक या भांति नित्य स्वामिनी संग
रासादिक लीला करत हैं सो लीला कौनसी ठौर करत
हैं सो कहत हैं जो श्री यमुनाजीकी पुलिनके मध्य
श्री वृंदावनमें विराजत हैं सो जैसे श्रीकृष्ण रसा
त्मक हैं तैसे श्री यमुनाजी रसात्मक हैं तैसे श्री यमु
नाजीकी पुलिन रसात्मक हैं तहां भक्तन सहित श्री
कृष्ण विराजत हैं सो श्री आचार्यजी महाप्रभु यमुना
ष्टकमें कहे हैं श्री यमुनाजीके तट श्री
तटस्थ नवकाननप्र.

पूजितः इति वचनात्॥ या भांति श्री यमुनाजी के तटपुलि
नमध्य वृंदावनमें प्रभु विराजि के दोय प्रकार की लील
करत हैं॥ प्रथम स्थल क्रीडा में श्रम भये तें जल क्रीडा या भां
ति सदा सर्वदा विराजत हैं॥ यह स्मरण करतव्य हैं॥ स्मृ
ते गोपिका वृंदै क्रीडन् वृंदावने स्थितः श्री वृंदावन में
स्थिति गोपीजनके वृंद तिनके संग श्री कृष्ण क्रीडा कर
त हैं कौन भांति॥ सो आगे जा प्रकार लीला करत हैं सो क
हत हैं॥ श्लोक॥ नित्यं गानरसाविष्ट विशिष्टरतिरतू
ह भावैकगम्य सर्वत्र प्रसिद्ध पुरुषोत्तम॥ १॥ टीका॥ श्री
श्रीयमुनाजी के तीर नित्य गानरासादि लीला ... भक्त
नके आत्मनंतन रसाविष्ट होय करत हैं॥ ... नित्य
लीला के दोय प्रकार हैं॥ एक अवतार लीला॥ एक मूल
लीला॥ अवतार लीला में अनहीं प्रमान प्रमेय साधन
फल सो श्री भागवत में निरूपण कीये हैं॥ प्रथम श्री प्र
भुजी के प्रागट्य पहले तें तपस्या प्रमान रीति सों जे संसा
र में रहे हुता पाछें प्रभु प्रगट होय वरदीयो॥ प्रमेय जत
ा पाछें वसुदेव देवकी जी के इहां व्यूह सहित संयोग
त्मक स्वरूप प्रगटे॥ सो श्री नंदरायजी श्री यसोदाजी
के इहां विप्रयोगात्मक भाव प्रगटे॥ सो प्रमेय बल प्रग
ट करि अनेक लीला करि सुख दीयो॥ माखन चोरी रिंग
लीला पाछें कात्यायनी कौ व्रत चीनादिक प्रभु में प्रेम प्र
लि वेदकी कामना यह साधन पाछें पंचाध्याई में फल
अवतार रसामें मूल लीला में सदा नित्य लीला सो ल
इहां दिपवत व्यलरात जय प्रभु को अंस इतने सो कौन ते
पुरुषोत्तम अंश॥ सो श्री गीता में भागवत में लक्षण र
मेष्ट॥ सो श्री गीता में प्रसिद्ध पुरुषोत्तम कहे हैं सो भ
क्तजिन ने जानत हैं॥ और साधन बल तें नाहीं॥ सो अ
यस्यावतार पुरुषस्य आद्यो दिव्य विग्रह नस्याकारा

ऊपरबत्तीसलक्षणबत्तीसदोषमुख्यकहेसोइतने
हीमतिजानियोअपारदोषहैंमैंतोदोषकोनिधा
नहोंजाकोपारगिनतनाहींहैऔरसुंदरगुणक
रिरहितहोंएकहूगुणमेरेमेंनाहींहैयाभांतिमेंनिसा
धनकीभावनानित्यहीकर्तव्यहैयाभांतिनिसाधन
होयतिनकेहृदयमेंप्रभुपधारिकेअनुभवकरावें ३
श्री [illegible] त्रि [illegible] ता [illegible] ही
श्री [illegible] ३७ अबकहतहैंजो
अपनेदोषकीभावनाकरिकेनिःसाधनहोयरहेदैन्य
करेंतोआगेकहेहैंसबकोकहाफलहोइयहरसके
भावात्मकरसात्मकपुरुषोत्तमश्रीकृष्णसदाभक्त
नकेसंगलीलाकरतहैंऐसेश्रीकृष्णसोपरतिनको
अनुभवहोयसोश्रीकृष्णव्रजमेंसदाविराजतहैंसो
कैसेहैंसोआगेसबैवर्ननकरतहैंश्लो [illegible] कृष्णस्तुरसात्म
केनित्यगोपिकामंडलस्थितेयमुनापुलिनांतस्थ
वृंदावनविराजिते १ या [illegible] र्थश्रीहरिरायजी
यहश्रीवल्लभाचार्यजीकेपुष्टिमार्गमेंसेव्यऐसेश्री
कृष्णरसात्मकसोकौनप्रकारव्रजमेंविराजतहैंसोक
हतहैंजोगोपीजनव्रजभक्तस्वामिनीकेमंडलमेंस्थि
तहैंश्रीकृष्णरसात्मकयाभांतिनित्यस्वामिनीसंग
रासादिलीलाकरतहैंसोलीला [illegible] नसोठौरकरत
हैंसोकहतहैंजोश्रीयमुनाजीकीपुलिनकेमध्य
श्रीवृंदावनमेंविराजतहैंसोजैसेश्रीकृष्णऔररसा
त्मकहैंतैसेश्रीयमुनाजीरसात्मकहैंतैसेहीश्रीयमु
नाजीकीपुलिनरसात्मकहैतहांभक्तनसहितश्री
कृष्णविराजतहैंसोश्रीआचार्यजीमहाप्रभुयमुना
ष्टकमेंकहेहैंश्रीयमुनाजीकेतटश्रीवृंदावनहैं
तटस्थनवकाननप्रकटमोदपुष्पांबुनासुरासुर

रूजितः इतिवचनात्॥ याभांतिश्रीयमुनाजीकेतटपुलि
नमध्यवृंदावनमेंप्रभुविराजिकेदोयप्रकारकीलीला
करतहैं॥प्रथमस्थलक्रीडामेंश्रमभयेतेंजलक्रीडायाभां
तिसदासर्वदाविराजतहैं॥यहस्मरणकरतव्यहै॥स्म
र्तव्योगोपिकावृंदैःक्रीडन्वृंदावनेस्थितः श्रीवृंदावनमें
स्थितिगोपीजनकेवृंदतिनकेसंगश्रीकृष्णक्रीडाकर
तहैंकौनभांति॥सोआगेजाप्रकारलीलाकरतहैं सोक
हतहैं॥रासलीलाकं॥नित्यंगानरसाविष्टैर्विशिष्टैःस्वरनैःसूरा
द्भावैकगम्यैःसर्वत्रप्रसिद्धपुरुषोत्तमो॥राधा॥[illegible]॥अथ
श्रीयमुनाजीकेतीरनित्यगानरासादिली[illegible]जनभक
नकेसंगआनंदरसाविष्टहोयकरतहैं॥[illegible]नित्य
लीलाकेदोयप्रकारहैं॥एकअवतारलीला॥एकमूल
लीलाअवतारलीलामेंत्रमहैं॥प्रमाणप्रमेयसाधन
फल सोश्रीभागवतमेंनिरूपणकीयोहै॥प्रथमश्रीप्र
भुजीकेप्रागट्यपहलेंतपस्याप्रमाणरीतिसोंजेसेंसा
धनकरेहैं॥तापाछेंप्रभुप्रागट्यहोयवरदीयो॥प्रमेयजन्म
ग पाछेंवसुदेवदेवकीजीकेइहांव्यूहसहितसंयोगा
त्मकस्वरूपप्रगटे॥सोश्रीनंदरायजीश्रीयसोदाजी
केइहांविप्रयोगात्मकभावप्रगटे॥सोप्रमेयबलप्रग
टकरिअनेकलीलाकरिसुखदीयो॥माखनचोरीरिंग
लीलापाछेंकात्यायनीकोअर्चनादिकप्रभुमेंप्रेमम
लिवेकीकामनायहसाधनपाछेंपंचाध्याइमेंफल
अवतारदसामेंमूललीलामेंसदानित्यलीलासोरू
हैं॥हासिपंचतत्वलयहोतजयप्रभुकोअंसइनसोंऊनते
पुरुषोत्तमश्रेष्ठ॥सोश्रीगीतामेंभागवतमेंतुअक्षर
तेंश्रेष्ठ॥सोश्रीगीतामेंप्रसिद्धपुरुषोत्तमकहेहैं॥सोभ
क्तरिजानेजानतहैं॥औरसाधनवलतेंनाहीं॥

वये भ्रमो मत्साद्या गतिखुध्यतां ॥ अथा के ॥ य ॥ ऐसे
रसात्मक पुरुषोत्तमकों एक अवतार वैराटस्वरूप है
जाकौं श्रीभागवतगीतामें पुरुष कहत हैं ॥ यह ब्रह्मा
ड रूप विग्रह श्री अंग है ॥ अपार मस्तक ॥ और अपार भुजा
अपार चरन तथा आकास मस्तक और पाताल चरन
रहा ॥ लोमावली समस्त ब्रह्मांड में ॥ यह प्रभु कों
आद्य अवतार है ॥ नो अर्जुन कों सब दिखायो ॥ तब युद्ध
कीयो ॥ ऐसे वैराटस्वरूप के अंसावतार मत्स्यादि कूर्म
वतार कारन कारज रूप हैं ॥ जितनो कारज होय ॥ तितनों
कारज करि कें माहात्म्य जतावे ॥ जैसें समुद्र मथन समु
द्र में छिरा वल्लभ दून लागे ॥ तव कछ रूप होइ धारन कीं
रा ॥ औरपे चार अवतार भक्तो द्धारक कीरो ॥ वामनजी
१ नृसिंघजी २ श्रीरामचंद्रजी ३ और चतुर्व्यूह संयुक्त
वसुदेवदेवकीजी कि रहीं ना तें ये चारन मयंनीकी भक्तजन
मानत हैं ॥ औरन अवतारन कों नाहीं या प्रकार पृथ्वी पर अ
नेक अवतार ले प्रभु लीला करी ॥ अपनो माहात्म्य प्रग
ट करत हैं भक्तन के अर्थ ॥ अब और ह कहत हैं ॥ स्लो
क ॥ परं धाम वैकुंठ व्यापि वैकुंठ संज्ञित ॥ अस्तानंदस्त
त्र लक्ष्मी पूर्णानंदो हरिः स्वयं ॥ ४ ॥ रमा वैकुंठ वासी तु वि
भूती येस्य वैभवी रमानुपालिका तत्र शक्तिरूप वग
मयतां ॥ प ॥ या के अ ॥ और अक्षर धाम है सो उ वैकुंठ
है ॥ भीतर प्रभु विराजत हैं ॥ सो ताका लोक पवित्र तें
परे न हां अ जे नकों ले गये हैं ॥ सो सर्व वेद सबन को म
ल है ॥ सो व्यापि वैकुंठ कोस गी हैं ॥ तैसें व्यापि वैकुंठ स
वमें व्यापक है ॥ जहाँ पुछिमारगीय रीति सों विराजे
ज हां व्यापि वैकुंठ सोई ली जा कों अनुभव सोई सो भि
पर है और सब ते न्यारो है ॥ तैसें इ अक्षर सबमें व्याप
क है सबतें न्यारो है ॥ श्री गोवर्धन कीनाई तासी तैं ज्ञानी

अक्षरधाम वैकुंठ व्यापि वैकुंठ कहत हैं। और भक्तन के मन
में व्यापि वैकुंठ वारे हैं। न्यारे हैं। रगनी सब ठौर व्यापक मा
नत हैं। तातें दास भाव छूटि जात हैं। भगवान है सो प्रभु को दे
खित हूं मानत हैं। अपने को दास मानत हैं। ऐसे अक्षरधा
म वैकुंठ में ब्रह्मानंद रूप लक्ष्मी जी हैं। तातें अक्षर ब्रह्म
के उपासना वारे लक्ष्मी आदि में सबेन सं ब्रह्मानंद रूप
और पूर्णानंद श्री भगवान विराजत हैं। तहां के अधि
कारी ब्रह्मानंद रूप लक्ष्मी हैं। तातें अक्षर ब्रह्म के उपा
सना वारे को ब्रह्मानंद में मोक्ष ही मर्यादा भक्त को होत
है। धाम और एक रमा वैकुंठ रूप है। तहां सनकादिक में
आप जय विजय को दीने हैं। यह वैकुंठ अक्षर धाम की
विभूति है। तहां के वासी जो वैष्णव वी मूर्ति सो विष्णु पार्ष
न्य तो सेय है श्री भागवत में कहे हैं। तातें तहां की ल
क्ष्मी पालिका सक्ति है। और द्वारका में सति पुरुषोत्तम की है
ता में यह पालिका सक्ति है। सो अति गंभीर है। या प्रका
र सो जहां जैसे प्रभु विराजत हैं। तहां तिन के सेवार्थ
तैसेई लक्ष्मी विराजत हैं।

अब श्री कृष्णावतार सब को
मूल भूत है सो प्रकार आगे कहत हैं। श्लोक ॥ मू
ल भूतस्यावतारो मूर्तिव्यूहो विधीयते। प्रद्युम्नो
वासुदेवश्चानिरुद्धो ऽनंत एव वा ॥ याको अर्थ ॥ अ
ब श्री वसुदेव जी के इहां प्रगटे हैं। सो कहत हैं। सब अ
वतार को मूल भूत यह है। मूर्तिरूप मूर्ति तो ए
ओर चतुर्व्यूह प्रगट भए सो नाम कहत हैं। वपु
स्वरूप प्रद्युम्न। वासुदेव अनिरुद्ध और अनंत जो सं
कर्षन एक कहे। पीछें चक्र धारी तैसें यह जानने
खिन वेस और स्याम केर हन ही सहित षट प्रकार
स्वरूप प्रगट भए। २५

पृ. र्थं वें सम्प्रयार्थं भक्तन की रक्षा करनार्थ इत्यादि अनेक
६५ कारन हैं सो इन चारि व्यूहन के भीतर पुरुषोत्तम हैं ति
नको जन्म अवतार नाहीं है सो श्रीमद्भागवत में क
हे हैं यथा तिजन निवासो देवकी जन्मवादो यदुवरप
रिषत्स्वैर्दोर्भिरस्यन्नधर्मं: स्थिरचरवृजिनघ्नः सुस्मि
त श्रीमुखेन व्रजपुरवनितानां वर्धयन्कामदेवं ॥ इति
वचनात् ॥ या प्रकार देवकी के उदर तें जन्म बात् जैसे
रवेदिसा तें चंद्रमा प्रगटे ॥ ध्यावेच्चोरस्थं कहत हैं
श्लो॰ ॥ वृहद्विग्रनात् यस्तत्र स्थाप्यते प्राप्यते नमः
तथैते राववेनः कृष्णो नवतारे वगम्यते ॥ अथ या को अ
र्थ ॥ या प्रकार चतुर्व्यूह कौ राधिके आपु श्रीकृष्ण उन
के भीतर स्थापित विराजत है नहीं कोई कहें जो रा
से श्रीकृष्ण संयुक्त व्यूह हैं सो चतुर्व्यूह को पूजन करि
ये इतने श्रीकृष्ण ही कौ भयो ॥ या प्रकार कोई संदेह करे
तहां कहत हैं जो जद्यपि व्यूह करि आवृत श्रीकृष्ण मि
ले हैं तऊ इन चारि व्यूहस्थ व न्यारे की उपासना पूजन
श्रीकृष्ण स्वरूप गाई न जाय काहे तें ॥ श्री पुरुषोत्तम
कृष्ण न वेम हैं ॥ और सब तें न्यारे हैं तातें व्यूह हैं सो पु
रुषोत्तम के आगपाकारी हैं जिननी प्रभु की आग्या हैत
नो काय वे दास्ति फेरि अपने धाम में पधारेगे ॥ और श्री
कृष्ण तो नित्य लीला विनोद करत हैं तातें व्यूह की उपा
सना करि स्वर्ग लोक तथा मुक्ति फल मोक्ष सो हि चार प्रका
र की मिले सारूप्य सामीप्य सायुज्य सालोक्य ॥ और भ
क्ति रस की प्राप्ति नाहीं तातें सर्वोपरि श्रीकृष्ण ही तिन ही
की न्यारी भक्ति करें ॥ मिलम भक्ति के फल को न्यूनता
प्राप्त होत है या प्रकार जगत में जो कृष्ण संग विना श्री
कृष्ण के माहात्म्य को जानत नाहीं है सो कहत हैं
७ ॥ यतन्ववजेनामदः प्राकृतनेवदंतिहीं अथ या कार्य

मूलरूपे कल्पयंति स्तोत्रनाम्नायाको अर्थ। अब श्रीह
रिरायजी कहत हैं जो या प्रकार अंस जो चतुर्व्यूह सो अ
नेक प्रकार प्रकार की लीला जगत में करत हैं। प्रथम
ने भाजि फेरि ईसो द्व करतें। काहूकी रहै न करत हैं। अ
नेक प्रकार के विचार करत हैं। मिलि कै परस्पर लीला देखि
वे। कितने जन जीव जो अपनी हैं सो मदमोह के वस
ते माहात्म्य की गानि श्रीकृष्ण को जानत हैं। पोषवव
लिके जीव की कहा है अवतार दिसा में वे। इक भग
वदीय प्रभु को जानत हैं और जगत में कोई न जानत
काहे तें भूतावनार की लीला कार्य देखि सब को ईय
प्रकट नो जो श्रीकृष्ण जे यह कार्य कीयो सो मूलरूप
श्रीकृष्ण को नाम मिथ्या कल्पना करि अज्ञानी लोक
कहत हैं ताही तें अवन को नाम भयो। जनक जू जी भक्त
हते सो आपने पूछे तातें भक्ति श्रीकृष्ण की हानी अ
ति दुःख भयें श्रीकृष्ण को केवल ज्ञान दृष्टि करि ताम
क लीला कनो जानें। चोरठो रजे सो कार्य नें सें व्यूह
की लीला जाने यह भाव दूर हैं तब श्रीकृष्ण में भाव
उपजें सो श्रीकृष्ण के सहा। सो अब आगे वरनन करत हैं
श्लोक॥ कृष्ण स्तु केवलं लीलां करोति स्वरूपिणी
भूभारहरण चक्रे कलाभ्यां स्वसर्वथा॥ टीका॥ अ
थ॥ श्रीहरिरायजी कहत हैं। जो श्रीकृष्ण तो सदा सर्वदा
व्रजभक्तन के संग लीला करत हैं। स्वरूप सो लीला प्र
थिवी में नाहीं आवत हैं। जो निज जन श्रीआचार्य
जी महाप्रभु के हैं। अंतरंगी तिनके मन में अनुभव क
रिवे के योग्य है। तातें स्वरूप लीला के समान। इ विहा
रादिया भांति श्रीकृष्ण तो सदा सर्वदा वृंदावन में वि
राजत हैं। और पृथ्वी पर दैत्य पाल सर्व की पाय होत
सो भूभार हरनार्थ कलावतार श्रीकृष्ण

ोमादिक तानकी प्रभु होकरतहैं याभांति व्रजमें नि
ाकरसलीलाहैं कलाय श्रीकृष्णकोंकार्यकरतहैं ३
ाय परमानंदरानतुस्वरूपेणेति निश्चय व्रजस्थ एव स
ेपुरस्यो वाक्यपर ॥ १ ॥ याको अर्थ ॥ अब श्रीमहाराजजी
ाहतहैं सो परमानंदको दानतो सदा व्रजमें लीला क
तो रासश्रीकृष्णहीतें सो ॥ ओर व्यूह अवतारादि अनेक ला
के अात्मयतें निश्चय परो ॥ तु श्रीकृष्ण व्रजस्थ यदी
स्वरूप सो हो ॥ यदा सिद्धांत सर्वोपर निश्चय जो ननो
तासें श्रीकृष्ण सदा व्रजहीमें रतनेतें निरंतर स्थिति है
ओर जो पुरी मथुपुरी तथा द्वारिकामें स्थिति सो स्व
पहै तिनको हू पावेको फल सो द्वारहिं पुष्टिमार्गको फ
ल नाहीं है ताते जो जीव मथुरास्थ श्रीकृष्णको आश्र
करतहैं तिनको ही श्रीकृष्ण अपनो आनंददान नाहीं
देतहैं उनपुरीके स्वरूपद्वारा वे सोई फल मर्यादामार्गी
यरसदान करतहैं सो भगवदीनामें कहेहैं ते यथाभा
वपर्यंत रसात्मक व्रजास्य है तास्वरूपको जो भाव सो
जीव प्रभुको आश्रय करें तिनको जे सोई फलसिद्धि
होतहै प्रभुई नाहीं भावसों ताजीवको भजनहै तेसोई
फलप्राप्ति होतहै ॥ अब आगे कहतहैं ॥ २० ॥ श्लो ॥ तत्रा
पि रूपभेदेन वैदुनिष्ठनथा रस ॥ धर्ममात्रत्वमर्यादा
रहितं केवलं व्रजे ॥ ११ ॥ याको अर्थ ॥ याभांति श्रीकृष्ण
अपनें अनेक स्वरूप धरिके जगतमें होरवरत
है जहां जैसो स्थल है तहां तैसोई स्वरूप है तहां ते सो
ई रस है ताते व्रजमें धर्मी स्वरूप श्रीराव्रजाधिनाथमें
रूपमर्यादा रहितहै ताको मर्यादारसको दानहै श्री
व्रजमें धर्मी स्वरूप केवल पुष्टिपुष्टिमर्यादा सहित
अमर्यादा लीलाको दानकवेदातीत रासो रसात्मक
स्वरूप सदा सर्वदा व्रजमें विहार करतहैं ॥ अब आगे कह

हत हैं ११ श्लोक ॥ सर्वधर्मविशिष्टं तु मर्यादपुरुसत्तं
तु छं रसात्मनो यास्तीलावेषु लेनयु जेह्नता ॥ १२ ॥ याको
अर्थ ॥ सर्वधर्मसहित मर्यादापुरुषोत्तम ॥ मथुराद्वारि
कापुरीमें विराजमान हैं और रसस्वरूप लीलायुक्त तित
रसरासे वेष्ठल पुष्टिपुष्टिपुरुषोत्तम सो व्रजमें लीलायु-
क्त हैं ॥ तातें मधुपुरीद्वारिकापुरी के स्वरूपमें और व्रजमें
के स्वरूपमें बहुत ही फेर हैं इनके फलमें हू फेर है तातें व्र-
जस्थ स्वरूपकी भावना करनी योग्य है अब आगे कहत हैं श्लो
क ॥ परमानन्दरूपासा वाल्लीलाद्भिर्भेदतः सर्वत्र रसली
लात्वेगाढ भावेन वर्णिना ॥ १३ ॥ याको अर्थ ॥ अब श्रीह
रिरायजी व्रजस्थ स्वरूपकी लीला वर्णत हैं जो व्रजमें श्री
यसोदोत्संगलालित श्रीकृष्ण है सो हैं परमानंदरूप हैं
बाललीलात्रादिपौगंड किशोर पर्यंत सगरी लीला सर्व
तें रसरूप ही है सो श्री गुसांईजी पुरुषोत्तमग्रंथमें कहे हैं ॥
ता भावसों सगरी लीला रसरूप ही जाननी ॥ सो गाढस्नेह
भाव अपनमें न आवे और तांगी भक्तनके मनमें अनुभव
करनमें योग्य है ॥ ऐसो स्वरूप सदा व्रजमें विराजत हैं अ
ब आगे कहत हैं ॥ श्लोक ॥ कामरूपतपाद्यैश्च नयानरि
नियानकें एतादृशो मूलरूपे मूललीला समन्वित ॥ १४ ॥
याको अर्थ ॥ व्रजमें श्रीकृष्ण ऐसे हैं को टिकामसुन्दर ज भ
क्तनको सुखदानार्थ प्रगटे हैं सो लाखनमथनमोय स्या
भांति रासपंचाध्याईमें कहे हैं ऐसे कोटिकामरूप तहां
वय अवस्थाके नियम नाही है जो किसोर है सो तरस
सान करेंगे यह नियम नाही है जन्मनही रसदानकी
ए सो श्रीभागवतमें कहे हैं ॥ जयति जननिवासो देव

तिनकौं कामकी वृद्धि करत हैं और श्रीगुसांईजी पाल
नाकी रीत है ना सें कहे हैं मानसी मान हरणी श्रीयसोदा
जीके श्रीगोपाल नाम करत हैं और श्री स्वामिनीको मा
न हू मनावत है मान हरत याभांति वाललीलाही में
गलकालावच्छिन्न समस्त लीला करत हैं यह विरुद्ध
र्माश्रय स्वरूप व्रजमें हैं सो गुप्तरहस्यमें श्रीगुसांईजी क
हत हैं एतादृश स्वरूप श्रीकृष्ण सकल लीला समन्वि
त व्रजमें हैं जैसें श्रीपुरुषोत्तम मूलरूप सदा एकरस व्रजमें
लीला करत हैं तैसें ई मूलरूप सदा लीला ई करत हैं
तास यह कहिवे पर जनतारे जैसें श्रीकृष्ण नित्य हैं तै
सें श्रीकृष्णकी लीला हू मूलरूप एकरस हैं याभांति सर्व
लीलासंयुत व्रजमें विराजत हैं अब और हू कहत हैं
१४ श्लो॥ चित्ते निरंतरं स्थाप्यं सेव सेवा स्वमार्गगा त
त्सिद्ध्यर्थं सर्वथापि चिंते नापि विधीयतां १४ याको अ
र्थ श्रीहरिरायजी आपने भाई श्रीगोपेश्वरजीसों कहत हैं
जो कपर सदा सें श्रीकृष्णके सर्वदे मूलरूपालंब
इनकौं आपने चित्तमें निरंतर स्थापन करत हैं और
सोरसालस श्रीकृष्णकी सेवा आपने स्वमार्गमें हैं ता
तो चित्तमें निरंतरता से प्रभुकी लीलासंयुक्त अनुभव
करावें सो मानसी सेवाके सिद्ध्यर्थ सर्वथा चिंता न
तनुवित्तजा सेवा नित्य नेमपूर्वक करनी यह सो सि
द्धांतमुक्तावलीमें श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहे हैं
लसेवा सदा कार्या मानसी सा परा मता चेतस्तत्प्रवणं से
वा तत्सिद्ध्यै तनुवित्तजा इति वचनात् श्रीकृष्णकी से
वा तनुजा वित्तजा सदा नित्य नेम सों करत तब मान
सी सिद्धि होय यह पुष्टिमार्गकी रीति है अब और हू कहत
हैं १५ श्लो॥ निवेदनानुसंधानं विधेयं नाहमे सह
मत्संगात्वकतेभ्यो विश्वासः स्थाप्यतां दृढः १६ या

ऐसें जो रासें श्रीकृष्णसों भाव प्रगट होइ ताको स्थैर्यता इस
वैलक्षण्यसों लिखिकें निवेदनको अनुसंधान करें तातें
सत्संग करें नित्य नेमसों करें और भगवदीयनके संग इनको
वचननको अपने मनमें दृढ विश्वास राखें वार्त्ता कथा
वचन तब रासें श्रीकृष्ण स्वरूपानंदको अनुभव होइ अ
वश्य और हृदयनसों होत लोक कृष्ण कृपापराधीनो दीना
नास्तु पलके: स्वकीयानां मन्यभावात् करिष्यति वनस्व
ता॥१९॥ याको अर्थ श्रीकृष्ण वे सर्व हें कृपा करिकें अपने दा
सके आधीन हैं भगवदीय गारे हें भक्त विश्वास न करु
णामय डोलत पाछें लागे रासें श्रीकृष्ण हैं प्रसिद्ध ही हें
अर्जुनको रथ हांकन हेस पांडवनके आज्ञाकारी भए औ
र कुन भक्तनसों तो राकलोगन बिना रह्यो नाहीं जाने
हैं या भांति श्रीहरि स्वकृपा करिकें अपने भक्तनके आधी
न हें तातें जो यह पुष्टिमार्गमें श्रीआचार्यजी शरणसर
न होय तिसाधन होय दैन्य करि रहे हें ऐसे भक्तकी उ
पेक्षा कबहूं श्रीकृष्ण नाहीं करत हें और जे संसारासक्त
जीव तो लौकिक वैदिक में सदा दुःख पावत हें तिनकी
उपेक्षा ही प्रभुकी रहे काहेतें संसारमें लोय फल है
सुख और दुःख सो पापको फल है दुःख और पुन्यको
फल है सुख तो लौकिक तिनकी उपेक्षा है और अपने
स्वकीय निजभक्तको अन्यथा भावको ई कालमें क
बहूं श्रीकृष्ण नाहीं करत हें सम्भावकी रक्षा ही क
रत हैं आपे ही और रक्षा करत हें और रक्षा ही हो
करावेगे स्वत प्रभु भक्तनकी रक्षा करत हें ऐसे को
पालन श्रीलक्ष्मण हें स्व वश्य और हृदय कष्ट न होत तो धर्म
श्री प्रवृत्ति सुचित न सुआ स्याद्‌रो मानिस्याले व पा
न दर्थे स्वार्थे व्यनो॥१०॥ याको अर्थ जे सें धर्म मा
वति भये ते चित न सुदृढ होत न हें निश्चय

भगवानके भावरूपविवेकैं भावकीरक्षाकरनहै धर्ममार्गतें
चित्तकीशुद्धभावतें प्रभुवश तें सेवाखंडकीयतें मति
जो बुद्धिको नाससर्वथा होइहै ॥ अव औरहू कहत हैं रखोलि
॥ मार्गप्रवर्तकाचार्य चरणांबुजनिरंतर ॥ विश्वासः सुदृ
ढ कार्यस्तत्त सर्वफलिष्यति ॥ ६ ॥ याकौ अर्थ ॥ विसेषप
वैराग्यवर्द्धनदासके पत्रतें जानीयो ॥ किमधिकं यह पुष्टि
मार्गीयके प्रवर्तक तौ श्रीवल्लभाचार्यजी हैं तिनके श्री
चरणकमलको दृढ आश्रय करनो ॥ मनमें दृढ आ
श्रय दृढ विश्वास जा वैष्णवको होइगो ॥ सो सदा निरं
तर तांकरि सगरो फल तिनको निश्चय सौं सिद्ध होइ
गो यामें संदेह नाहीं है ॥ तातें सर्वोपरि सिद्धांत यह है जो
श्रीआचार्यजीके चरणकमलको दृढ विश्वास करनो
विशेष समाचार गोवर्द्धनदासके पत्रतें जानियो ॥ १८ ॥
इति श्रीहरिरायजी कृत श्री शिक्षापत्र ताकी
टीका श्रीगोपेश्वरजी कृत संपूर्ण ॥ ३९ ॥ अब पुष्टि
मार्गमें सेव्यप्रभु श्रीकृष्ण स्वात्मक स्वरूपको वर्नन कीनो
तिनकी सेवा करनी ॥ भगवदीयको संग करनो ॥ सो प्र
कार चारों कहत हैं ॥ श्लोक ॥ सत्संगेन प्रभोश्चित्ते स्था
पनीयं निरंतरं ॥ पूर्वेषु नामार्थो नामनुसंधानमाद
रात् ॥ १ ॥ याकौ अर्थ ॥ अब श्रीहरिरायजी कहत हैं जो
सत्संगकरि प्रभु जो श्रीकृष्ण तिनको अपने चित्तमें स्था
पन करो निरंतर सो नवरत्न ग्रंथमें श्रीआचार्यजी महा
प्रभु कहे हैं ॥ निवेदनं तु स्मर्तव्यं सर्वथा तादृसैरपि ॥ सामा
ति निवेदनको स्मरण नाइसी पुष्टिमार्गीय भगवदीय
के संग मिलिकै करै ॥ न वा चित्तमें निरंतर भगवान निरंत
र स्थिति होय निश्चय ॥ सो एक दसम स्कंधमें भगवान
निरंतर स्त्रीपुत्रपने श्रीमुखसौं कहे हैं ॥ उद्धवजी प्रति
कहे हैं ॥ श्लोक ॥ निरोधयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव

नस्वाध्यायतपत्यागादिनेमपूर्वेन्हैं ना।।१।।हरनानियमचं
द्रासितीर्थोनिनियमायमा।।यथावहुदेसतसंगमर्यसंगाप
हो हिंसा।।स्फतिवहनाने।।अपवोनकहैंतहैंजोमेडनेनव
सतते नाहीवसहोतहें।।योगतथासांख्यनस्वाध्यायतप
त्यागनेश्वरवृतादिपरस्तुद्रतीर्थेनियमइत्यादिश्वा
नेकसाधनतेमोकोनिरोधनाहींकरतहेंजैसेंयतं।।ग
मोकोरोकरहेनहेंतोकेंवसहोइज्ञानहेंतातेंसतसंग
वडोवडोपदार्थहें।।तातेंयुधिष्ठिरयैंसबकोसतसं
गनितरखकहेंतेहें।।औरपर्वतेंभुरुवहुलभपुक [illegible]
नामनिकेतनसुन्योहें।।यथाल [illegible] फलतार्थनोप
कोअर्थसहितमनुसंधान [illegible] पूर्वकवराणोनोप
ष्मी [illegible] कोसोसारवेस्वा [illegible] वेसोपरमगंत्य
कहैं ऐसे श्री [illegible] सनहें।।पद्मनाम [illegible]
[illegible] याभांतिभक्ति [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

पु. १२

भगवान्के भावरूपहै के भावकी रक्षा करनहे धर्ममार्गमें
चित्तकी शुद्धभावते प्रभुवश तसें पाखंडकीयतें मति
जो बुद्धिको नास सर्वथा होइ हे॥ अब और हु कहत हे॥ श्लो
क॥ मार्गप्रवर्तकाचार्य चरणेषु निरंतरं॥ विश्वासः सुदृ
ढ कार्यस्तत्त सर्वं फलिष्यति॥ १८॥ याको अर्थ॥ विसेष प
वे गोवर्द्धनदासके पत्रतें जानीयो॥ विमर्षि वं यह पुष्टि
मारगीयके प्रवर्तकत्तो श्रीवल्लभाचार्यजी है॥ तिनके श्री
चरणकमलको दृढ आश्रय करनो॥ मनमें दृढ आ
श्रय दृढ विस्वास जो वैष्णवको होय तो॥ सो सदा निरं
तर ताकर सिगरो फल तिनको निश्चय यही सिद्ध होइ
गो यामें संदेह नाही है॥ तातें सर्वोपरि सिद्धांत यह है जो
श्रीआचार्यजीके चरणकमलको दृढ विश्वास करनो
विशेष समाचार गोवर्द्धनदासके पत्रतें जानियो॥ १८॥
इति श्री हरिरायजी कृत अष्टादश शिक्षापत्र ताकी
टीका श्री गोपेश्वरजी कृत संपूर्ण॥ ३८॥ अब एक पत्र पुष्टि
मार्गमें सेव्य प्रभु श्रीकृष्ण रसात्मक स्वरूपको वर्ननकीनो
तिनकी सेवा करनी भगवदीयको संग करनो सो प्र
कार चारों कहत हैं॥ श्लो॥ सत्संगेन प्रभोश्चित्ते स्था
पनीयं निरंतरं॥ पूर्वेषुनानामथो नामनुसंधानमाद
रात्॥ १॥ याको अर्थ॥ अब श्री हरिरायजी कहत हैं जो
सत्संग करि प्रभु जो श्रीकृष्ण तिनको अपने चित्तमें स्था
पन करो निरंतर सो नवरत्न ग्रंथमें श्रीआचार्यजी महा
प्रभु कहे हैं॥ निवेदनं तु स्मर्तव्यं सर्वथा ताद्रसै रपि॥ या भा
ति निवेदनको स्मरण ताद्रसी पुष्टिमारगीय भगवदीय
के संग मिलिके करे॥ तब चित्तमें निरंतर भगवान निरंत
र स्थिति होय निश्चय॥ सो एकादस स्कंधमें भगवान
निरंतर आपुनें अपने श्रीमुखसों कहे हैं उद्धवजी प्रति
कहे हैं श्लो॥ निरोधयति मा योगो न सांख्यं धर्म उद्धव

हि हिंसा॥१॥ इति वचनात् भगवान् कहत हैं जो मेरे भक्तनेस
कनते नाहीं वस होत हो योग तथा सांख्य न स्वाध्याय तप
त्यागने श्रवतनादि पराङ्कु इतीये नियम इत्यादि और अ
नेक साधनते मोकों निरोध नाहीं करत हैं जैसे भक्तसंग
मोकों रोक रहत हैं ताके वश होइ जात हैं ताते सत्संग
बडो बडो पदार्थ है ताते पुष्टिमार्गीय वैष्णवकों सत्सं
गनि निरन्तर करने हैं और एक श्री गुरु वल्लभकुल द्वारा म
नाम निवेदन सुन्यो है अष्टाक्षर महामंत्र ताके नाम
को अर्थ सहित अनुसंधान आदरपूर्वक करो जो नाम
है श्रीकृष्णको सो सारे वेदसास्त्र को सार परम रहस्य
कहै ऐसे श्रीकृष्ण को स्मरन है॥ महता मनी श्री आचा
र्यजी द्वारा प्राप्त भयो है या भांति भावना करिके नाम में पर
म आदर राखे अष्टप्रहर लीयो करें अब और एक कहत हैं
श्लोक॥ भगवत्सेवनं सम्यग्विधेयमिति निश्चयः ते वै
श्रवणादि समाधानेन्तत्सेवैव सर्वथा॥२॥ याको अर्थ॥ भ
गवत्सेवा करें सम्यक् प्रकार तन्मय आत्मप्रीतिपूर्वक और जा
प्रकार पुष्टिमार्ग की रीति है ता रीति पूर्वक भगवत्सेवा
करें इति निश्चय यह पुष्टिमार्गीय भगवदीयनकों निश्च
य सेवा ही परम साधन है सो नवमस्कंध में भगवान् क
हत हैं मत्सेवया प्रतीतं च सालोक्यादि चतुष्टयं नेच्छंति
सेवया पूर्णाः कुतोन्यत्कालविप्लुतं॥२॥ तृतीयस्कंध में
कहे हैं अहो बकी यं स्तनकालकूटं जिघांसया पाययद
प्यसाध्वी लेभे गतिं धात्र्युचितां ततोन्यं कं वा दयालुं
शरणं व्रजेम॥२॥ अब समस्त कथसारवानीं नतरां मूलतावसे च
ना एवमाराधने विलो सर्वथामात्मनः स्वहि॥२॥ इत्या
दि वचनको नाम विचार भगवत्सेवा सर्वोपर मुख्य

धर्मेनानि प्रीतिपूर्वक नित्य नेम सों करै और महाप्रसाद
हू प्रसादी वस्त्रादि सों यह नेति नन्तो वैष्णवको समाधा
न करै जैसे प्रीतिपूर्वक वैष्णव की सेवा करै तैसे ही प्री
तिपूर्वक ताहूसी भगवदीयको प्रसादादि वस्तुसों समा
धान करै या प्रकार पुष्टिमार्ग में वैष्णव करै तो प्रभु कृपा
करैं अब और हू कहत हैं श्लोक ॥ अतः परं मम प्रतिदि
वसं नैकार्थकरणात् सेवयैव हि संतुष्टः सुखसंश्रयः प्र
भुर्भवेत् ॥ ३ ॥ व्याख्या ॥ प्रभु प्राप्ति करै प्रार्थना दैन्य होय
वीनती करि प्रभु कों रिझावें भक्ति की वृद्धि होय सो
श्री गुसांईंजी विज्ञप्ति में कहे हैं श्लोक ॥ यद्दैन्यं त्वत्कृपाहे
तुर्न तदत्रास्ति ममाण्वपि तां कृपां कुरु राधेश यया ते दैन्य
माप्नुयात् ॥ १ ॥ प्रीतिसंगमराहित्यात् सर्वमनोरथाः नि
ष्फलत्वं यतासि [illegible] जीवामि सहि सार्थम् ॥ २ ॥ चित्तेन दुष्टः
वचसापि दुष्टः कायेन दुष्टः क्रियया च दुष्टः ज्ञानेन दुष्टो
भजनेन दुष्टः ममापराधः कतिधा विचार्य ॥ ३ ॥ विज्ञप्तौ
नापराधेवा पाखंडे वामयं दुःखं यः पयेवस्येति कुत्र
चिन्न जाने हे विमदधी ॥ ४ ॥ वलिष्ठा चापि मद्दोषात्वं नहि
प्राप्नोति दुर्बला तस्मादुष्टकर्मत्वाद्दयान जीवधर्मेन
प लब्धा न विद्धि नास्य त्वदीय स्पृतु नी वितं यथैव य
था नाथ दुर्भगायान वेक्य [illegible] भांति अनेक भावसों
प्रार्थना करै मैं दुष्ट हों तुम मेरे प्रभु हो श्रीआचार्यजी
द्वारा संबंध भयो है सो मोपर कृपा करो या भांति दैन्यता
तें प्रभु कों रिझावें भावकी वृद्धि होय कादेतें भाव वृ
द्धि को कारन एक दैन्यता प्राप्ति ही है याभांति दैन्य है
के श्रीकृष्ण की सेवा करै तब श्रीकृष्ण संतुष्ट होय याभां
ति [illegible] सेवा करै प्रभु संतुष्ट होय जाय तो वैष्णव को
प्रभु सुख संपादै कबहू सेवा में प्रतिबंध न करै व कबहू रो
गादि बाधा न करै जन्मभरि प्रभु की सेवा निरविघ्न तो

सो होय सो श्रीगुसांईजी के हृदै सुख सेव्यो ॥ ऐसे वैष्णवन को मह
प्रभुजी सुख सेव्य ही हैं ॥ अथ अब चौरासी वैष्णवन कहत हैं स्लोक ॥ दुराराध्य
समसेवैव श्रीकरणमथन ॥ कृष्णसेवा सदा भाग्यवंतो ज
नामता ॥ याको अर्थ ॥ श्रीकृष्ण के सेवै अनंत दुराराध्य है
ब्रह्मा शिव नारदादिको उ ऐसे कौन के ॥ स्विरयमें च नेच साध
नसमाधमें कछु वहूं कादिव होत हैं ऐसे जीव तो अनेक हो
यकरि भयो दुष्ट होय याको है तिन को दुराराध्य हैं तिनको
दुराराध्य सें वडे हैं श्री अपने हृदय में सवा अपना करत हैं
श्वासान करत हैं मुनी जन अयत्न कृत हैं तिन को दु
राध्य हैं प्रभु हैं तो जीव का करि सकत है तउ तो ऐसेई भी श्रीव
श्रीआचार्यजी महाप्रभु सरणागत [illegible] श्रीमुखभा
की रीति अनुसार भाव सें सेवा करत हैं ते हाय पदा
साधन करि श्रीदुराराध्य श्रीकृष्ण सो भक्त लक्षु वयदी
नहैं सो श्रीहरिरायजी कहत हैं जो पुष्टिमार्ग में श्रीआ
चार्यजी द्वारा सरन वायके मार्ग की रीति अनुसार भाव
सें सेवा करत हैं सो परम भाग्य के भाव [illegible] जनने परमव
डभागी हैं उनकी जन्म सुफल है सो दूसरे के अपनी
सुख देन जीव हैं ॥ श्लोक ॥ देवेशं मनुष्याणां वा प्रभो
वे च भगवत्सुखस्य [illegible] सात्म्या स्यात्वयं ॥ भ
वरेऽ द्वावस्तु नारायणपरास्तेन [illegible] विभूतिश्च
गोपकान्त रवि स्वपितु न्याय सुरिनि [illegible] मनुष्य
मनुष्य साधवो दिको [illegible] प्रभु [illegible] भाव तन [illegible]
म न की सेवा करे [illegible] गावे ता [illegible] कोउ नाही [illegible]
श्रीनारायण श्रीकृष्ण की कीर्ति स्वर्गापवर्ग [illegible]
स्वर्ग जो मोक्ष न या नर्क कुंभ पर्यन्त [illegible]
समान को ऽ नाही है [illegible] ॥ [illegible]
श्वहिस्यतां [illegible] [illegible] [illegible]
॥ याको अर्थ [illegible] श्रीहरिरायजी [illegible] ॥

नकरतहें नो दृढमनकरिकें सर्वोपर श्रीकृष्ण तिनकी
वाही प्रीतिपूर्वक कर्तव्य है सो श्रीभागवतमें कहेहे
ह्लादवाक्य न दानं न तपो नेज्या न सौचं न व्रतानि च
ीयते मलया भक्त्या हरिरन्यद्विडंवनं ।१। उद्धवजी कहे
दान व्रत तपो होम जप स्वाध्याय संयमैः श्रेयोभिर्विवि
धैश्चान्यैः कृष्णे भक्तिर्हि साध्यते ।२। एकादशस्कंधमें श्रीकृ
ष्णवाक्य सर्वं मद्भक्तियोगेन मद्भक्तो लभतेंजसा स्वर्गा
पवर्गं मद्धाम कथंचिद्यदि वांछति ।३। या भांति श्रीकृष्णकी
भक्ति सर्वोपर है दान तप सौच जो क्रिया हुत होम जप
स्वाध्याय संयमः इत्यादिक सवकी भक्ति विना विडंवना है
सगरे तातें निःपक्ष हो श्रीकृष्णचंद्रकी भांति सुवारी
मन लगाइकें कर्तव्य है चोरासी हमारे आगे वर्तमान
है जो जो हमको जीते हैं अखिल कार्य सो इस प्रकार हूस
रे पत्रमें लिखे हैं सो वाचिकें जानोगे पालो श्रीविठ्ठल
प्रमोदो स्यामदास सहस्थितः तत्रत्य वृत्तांतो लिखो वि
न ... लेख विशेष विधि के पा ... श्रीगोकुलनाथ
नि विपुत्र श्रीविठ्ठलरायजी तिनको दास स्यामदास सहि
ताहि समस्त सेवक वैष्णव यह समाचार जानोगे प्रति
न विचार सहित लिखोगे अखिल समाचार कहाके हो
य सो सब लिखोगे किमधिकं ... श्री ... कु
रा ... न ... लीला ... कीर्ति का श्री ... पे ...
श्रीकृ ... सं ... अवकृपाकरि है जो यह पुष्टिमार्गमें
कृष्णकी सेवा सर्वोपर है सो मन लगाय ही कर्तव्य है सो
सकरत हो परम भाग्य है सो आगे कहत हैं श्री ... फ
रा प्रकार तो हे स्वदुर्बुद्धि निवेदन महतराख्यो चाहिते श्री
गोकुल वस्तु ।१। या ... श्री हरिरायजी अप
हे मा श्री गोपेश्वरजी सो कहत हैं जो में अपनो इस्व
ह्वा निवेदन करत रहो काहे तें तुम सब लायक है

प्रियभ्रातहों। तातें दुखसुख तुमबिना ओरदूसरोकिनसें
कहों। ओरतुम हरिहों जो पास होते तो दुखमें सहायहीकरते
ओरमोको दुख दीन होतो तुमारे संगते तातें यह पत्र द्वारा मे
रो दुख जानोगे महातर एसी है आयाजाकी एसे भगव
दीय मेरे पासतें अपने कार्यार्थ चले। सो इगाये मोको
छोडिके अबउनके मिलनकी आसा मोको नाहीं है ओर
तुम हूं इहातें दूरिहों तातें पत्रद्वारा आपनो दुख लिखेहों
सो वांचिकें समाचार जानोगे जी। राजस्थाय। जानामिति
निजमार्गस्थ धर्म किंचित् क्रियाकलाप नहीं सिद्धि। जहां के
तांको सेहरिव। प्रिय तिरस्यासों अपने श्री हरिरायजी
करतें हैं जो श्री आचार्यजी श्रीगुसांईजीकी कृपा बल
ते किंचित् थोडो सो अपने यह निजमार्ग पुष्टिमार्ग
कोधर्म सिद्धि न भयो काहेतें परम भगवदीयसो तो अप
ने कार्यार्थ परदेस गए। ओर आपहू दूर देसमें बैठे
यह पुष्टिमार्गीय धर्म सर्वोपरि सो सिद्ध भयो ताके
एकलेस मेरे हृदयमें अत्यन्त दुखलेस भयो है सो यह
क्लेसमेरे हृदयसें रोग सो मोकों जानि नाहीं पड
तु काहेतें मैं सब कर्म अन्यधर्म कार्य रहित हों
ओर अपने दोष भयो हो तातें मेरे दुखहरिवेको मे
रे दुखको सको इप्रिव रोग तातें मेरे धीरज हृदयमें
नाहीं रहत है अपनो कृपा लिखें सो सको पावत हों
श्री अपने वैसा हों सो आपको कहत हों सो श्री प्राय
पार इमुख्य है हरिराय हृदि चित्त नाहीं कृपा तुम पे
कृपा मेरु करी नवलसखी याको अथ श्रीहरिराय
जी स्नेहपात्र होयके कहत है अपने सेवकनको पुष्टि
अपने सुख
सो कहा कहें।

कोपाखंडीयाकोसुखियाजाननहैं काहेतें हरिनो
सर्वदुखहर्त्तापरमदयालदीनवत्सलहैं तऊमेरीउपे
क्षाकीनीहैं तातेंमेंजाननहीं जोमोकोमहापाखंडी
जानिकेंमेरीउपेक्षाकीनी मेरोत्यागकीयोहै सोसब
मेंबाधककरे याभांतिदैन्यकर्तव्यहैं सोश्रीगुसांईजी
कहेहैं चित्तेनदुष्टोवचसापिदुष्टः कायेनदुष्टःक्रिया
वदुष्टः ज्ञानेनदुष्टोभजनेनदुष्टो मम्मापराधः किंतधा
विचार्यो १ सोनाम्निमेंदभागपोर्हृद्यैथेगोकुलेश्वरः
नत्वेवशास्त्रहिस्वुर्वस्वभावंकुरुतेत्पथा २ श्रीगुसां
ईजीश्रीगोवर्द्धननाथजीसोंकहतहैं जोमेंचित्तकरि
कें दुष्टहों वाणीकरिकेंदुष्टहों कायासोंरकरिदुष्टहों
क्रियाकरिदुष्टहों पाखंडीतिसोदुष्टना साहनकरत
हों एसोमेरोअपराधकहांताईविचारोगे तातेंअपरा
धमतिविचारो औरमेरोपरमदभाग्यहै सोमैंयातें जा
न्योहै गोकुलेश्वरयहसंधानजो आपतो गायगोपगो
पीसमेत व्रजकीरक्षाकरीहै तुमहीगोकुलकेरक्षक
प्रभुहो एसोपरमदयालतुमारोस्वभावहै सोछोडि
दीयाकहांऐसे जोभक्तनकोअसत्यसहनलागे
सोतुमईश्वरहो केतुमकर्तुमन्यथाकर्तुंसर्वसामर्थ्यपुरु
ष तुमचाहोसोकरो तातेंतुमकोकहाकहियेमेंमंदभा
गीहों जोकृपातोअबतुमकोभया अपनोदयाल
स्वभावफेरिमेरोतोतुमकोकठिन होनोपरयोभक्त
केदुखकोसहनलागे याभांतिदैन्यपुष्टिमार्गमेंसाध
नहैं भगवदी [illegible] एगारहैं हौंपतितनकोराजा
हौंपतितनकोईस हौंपतितनकोनायकइत्यादिहैं
न्यकरिजीवनकोस्वरूपशरणकरि सोभगवान्का
न्याइरपडेनवदप्रभुरा तातेंश्रीआचार्यजीमहा
प्रभुकहेहैं जीवोस्वभावतोदुष्टइतिवचनात्

याभांतिश्रीहरिरायजीश्री आचार्यजीश्रीगुसांईजीवि
भाव अनुसारकरतहैं जोमेंपाखंडीमेंसुख्यहों औ
सोमोको प्रभु अपने चित्तमें चिंतनकरिकें जद्यपिश्री
हृस्त्र यालहैं कृपालहैं दीनवत्सलहैं तऊमेरीउ
पेक्षाकीनीहै नहींकोइकहैजो प्रभुजोश्रीलक्ष्मतो
भक्तकीउपेक्षानाहीकरतहैं यहसास्त्रपुराणश्री
भगवद्गीतामेंप्रसिद्धहै औरतुमनेंकेसेंजानीजो
मेरीउपेक्षा याभांतिकोउप्रतिउत्तरकरेतहांकहतहैं
श्लोक ॥ उपेक्षितश्चहरिणा नदीयेरप्युपेक्ष्यते अंत
कयाभिसरणं वनस्थस्य विस्मृता ॥४॥ या अर्थ । औ
श्रीहरिरायजीकहतहैं जोमेंयातेंजान्यो जोहरिभगवा
नमेरीउपेक्षाकीनीहै जोमोकोंपुष्टिमार्गीयलीयमोको
छांडिदीए सोमें आगेंवडेनके श्रीमुखद्वारा शास्त्रवार्ता
सुनीहै जोभगवांनप्रसन्नभएं तब जानियें जबभग

अबवेकिनकीसरनकरूं

येहें तुमप्रभुकोदोषकहाये

प. कौ पाखंडी याकौ सुखिया जानत हैं का हेतें हरि तौ
१७ सर्व दुःख हर्त्ता परमदयाल दीनवत्सल हैं तऊ मेरी उपे
क्षा कीनी है तातें मैं जानत हौं जो मोकों महापाखंडी
जानि कें मेरी उपेक्षा कीनी मेरौ त्याग कीयो है सो सब
मैं सहन करूं या भांति दैन्य कर्तव्य है सो श्रीगुसांईजी
कहे हैं चित्तेन दुष्टो वचसापि दुष्टः कायेन दुष्टः क्रिया
वद्दष ज्ञानेन दुष्टो भजनेन दुष्टो क्षमापराधदि नधा
विचार्य १ श्री नाथ मिलद भाग्यो हृदयैर्थ गोकुलेश्वरः
न त्वेवे त्यास्त्व हि सुदे स्वभावं कुरु नेतथा २ श्रीगुसां
ईजी श्री गोवर्द्धननाथजी सों कहत हैं जो मैं चित करि
कें दुष्ट हौं वानी करिकें दुष्ट हौं काया सरीर करि दुष्ट हौं
क्रिया करि दुष्ट हौं पाखंडी तिसौं दुष्ट ना सौं हृ न कसन
हों ऐसो मेरो अपराध कहा ताइ विचारोगे तातें अपरा
ध मति विचारौ और मेरे पर समर्थ भाग्य है सो मैं या तुम
न्यो है गोकुलेश्वर यह सुधा न्त जो आपने गाय गोप गो
पीसा समब्रज की रक्षा करी है तुम ही तें सुकबू रलक
न भूत हो ऐसो परमदयाल तुमारो स्वभाव है सो छोडि
दीयो कृपा भरि जो भक्तन को क्लेस अब सहन न लागो
मातुम ईष्वर हो वेषु पवहु अन्यथा कर्तु समर्थे प्रभु
हो तुम चाहो सो करो तातें तुमको कहा कहिये मेमैत्र्या
गी है जो ऐसो असमर्थ तुमको भयो अपनो उपदेस्याल
स्वभाव पर सौं स्वीरो तुमको कठिन हो नाप ही भक्त
के दुःख कों सहन लागे या भांति दैन्य पुष्टिमार्ग में साध
न है भगवदी दैन्य करि गोपी है हो पतितन को राजा
हों पतितन को ईस हों पतितन कों नायक इत्यादि दै
न्य करि जीवन को स्वरूप पर गट्यौ पि सो भगवान स्या
न्यारे पडें न वहु कमारे नाही तें श्री आचार्यजी महा
प्रभु कहे हैं जीवो स्वभाव तो दुष्टा इति वचनात्

इनीश्री आचार्यजी श्रीगुसांईजीके
अनुसार कहत हैं जो से पारवंडी में मुख्य हैं औ
नेमें चिंतन करिके जद्यपि श्री
यालहैं कृपालहैं दीनवत्सलहैं तऊ मेरी उ
पेक्षा कीनी है न हां कोई कहै जो प्रभु जो श्री वत्सल तो
की उपेक्षा नाही करत हैं यह सास्त्र पुराण श्री
भगवत गीता में प्रसिद्ध है औ एतु मनैके सजानी जो
मेरी उपेक्षा या भांति किउ भक्ति उनकारे न हां कहत हैं
श्लोक ॥ उपेक्षितस्त्रिवैद्वृणा नदीयेरत्युपेक्ष्यतो अन
कं यामि सरणं वनस्थ इव विह्वला ॥ १ ॥ याको अर्थ । श्री
श्री हरिरायजी कहत हैं जो मैं थानै जान्यो जो हरि भगवा
न मेरी उपेक्षा कीनी है जो मोको पुष्टिमार्गीय नदीय मोको
छोडि दीए सो मैं आगे कहूं मनके श्री मुखद्वारा शास्त्र वानी
सुनी है जो भगवान प्रसन्न भये का व जानिये जब भग
वदीय मिलाप होइ और भगवान उदासीन भये के व जा
निये जब भगवदीय छोडि जाइ ना तें मैं जानत हों जो मो
की भगवान उपेक्षा करि मोको छोडि गये हैं तो अब मैं क
हा करूं किनकी सरन जाऊं यह चिंता मोको बडी है द्रष्ट
ष्टांत है जो भगवान भगवदीय द्वारा मेरी उपेक्षा की
है अब किनकी सरन करूं सो जैसे कोई गाम ी वन में
नपडे तब विनकौ औ जाइ कहूं गैल सूझे नाही
तब बडी चिंता होइ तैसे ही मोको चिंता बहुत भई है तें
हां कोई कहै जो प्रभुन उपेक्षा करी तब भगवदीय हू उपे
क्षा करि छोडि गये तो यह दोष तुम प्रभु ही को तुम मैं त
न नहीं सो यह भक्ति मार्ग की रीति कहा है प्रभु तो निर्दो
ष हैं तुम प्रभु को दोष ठहराये या भांति कोई कहै ता
कहत हैं ॥ श्लोक ॥ प्रभोरपि न्वं दोषो गुण
नो मपि विमूढत्वं दोष निश्चयं ग्र

७१ ॥ श्री हरिरायजी कहत हैं जो प्रभु को दोष तो र
चक हू नाहीं है यह सगरो दोष मेरो है जो मेरे में गुण को ले
स हू नाहीं है और दोषन ते नख सिखा पर्यंत मेरे में भरयो है
सो आपनो दोष में विसरि गयो हों और गुन नाहीं हैं सो
आपने को महागुणवंत जानत हों यह अपराध मे
रे मे हैं सो मेरो ही सगरो दोष है और प्रभु तो सदा गुणरू
प हैं सो मैं अज्ञान करि भ्रमायो हैं अब और कहा कह
त हैं ॥ ५ ॥ श्लोक ॥ अब श्री हरिरायजी कहत हैं जो जैसे सु
दर भेष आभूषण वस्त्र पुरुष को पहरावे और वस्तु
को अभिमान तो नाहीं है तब वृथा भूषण वस्त्र भेष
वृथा है सो स्वास बिना प्रेत समान है सुन्दरता वृथा
है तैसे ही भाव बिना सेवा कथादिक भाव कहा सो
जो भाव नाहीं है तातें सो को सेवादिक कथा कहा जे
से पुरुष को प्राण स्वास होय तो भेष सर्व सोहै सो
स्वास बिना वृथा है तातें भाव होय ताकों कथादिक सेवा
दिक रस को अनुभव होय भाव बिना क्रिया व्रत
सो फल सो ताही मे भाव नाहीं है अब ॥ श्लोक ॥ अथ लघु
करत हैं तातें भाव को कछु कदापि नाहि है कछु ना
ही तातें भाव को दुःख होत नहीं है अब आगे कहत हैं श्लो
क ॥ आयक यौवने षाक्षियते निवृत्ति नो हरि नवानुभाव
कुरुते निजं मार्गाभिधं मपि ७ या ॥ श्लोक ॥ तातें जी
व श्री कृष्ण की कथा सेवादिक में यह जीव नाहीं थि
ति है तब भाव हृदय में कहा तें ति होयगो भगवदीय द
रस्पर्शन करे तब हृदय में भाव सिद्ध होय सो श्री भाग
वत द्वितीय स्कंध में श्री शुकदेव जी कहे हैं श्लोक प्रवि
ष्टः कर्णरंध्रेण स्वानां भाव सरोरुहं धुनोति शमलं कृष्ण
सलिलस्य यथा शरत् १ सप्तम स्कंध में शुक वाक्य त
स्मादिदं माहात्म्य भाव रस सुंदर श्रवणयात्म की

तैसे नित्यं पठ्यो नसंशयः ।२। इति वचनात् भग
वानकी कथा कैसी निर्मल है जैसें गंगाजल ताके
सेय आसपासके सर्व पवित्र होइ ऐसें ही कहे कहावे
और जो सुने पाछें अनमोदन करें सो सब सुद्ध होइ मता
तें श्री हरिरायजी कृत है तथा श्रवन विना हृदयमें
भाव वेसें तिष्टे सर्वथा नातिष्टे और जहां तक लौकि
क संबंधी कार्यमें तें मनको त्याग न होइ तहां ताइं श्री
कृष्णके स्वरूपको अनुभव कहां तें होइ सु कहे हैं मनकू
स्थिरवे भाव सिद्ध होइ है सो मन जो लौकिक संसारादिमें
आवेस भयो अनुभव कहां तें सिद्ध होइ सो संन्यासनि
र्णयमें श्री आचार्यजी महाप्रभु कहे हैं विषयाक्रांत दे
हानां नावेशः सर्वथा हरेः जाकी देह हृदयमें विषयादि
कौ भाव नां कामना भरी हैं ताके हृदयमें भगवदावेस
कहां तें होइ सर्वथा ही न होइ सो मेरे मैं मन नो कछु लौ
किक वैदिक त्याग नाही हैं ताकूं अनुभव कहां तें होय
अब ओर हू कहत हैं ७ श्लो ॥ सेवानुप्रतिबंधो वा भोग
हूं मादिनाधके गेह विनादिका शांति कथं सामानसी
सेवा तष्याके श्र ॥ और भगवद्सेवा न तु जाकि जग
हीमें अनेक प्रतिबंध हैं सरीर इंद्रियके विषयकी काम
ना उठे तब सेवा करतमें उद्वेग होइ जो तब सेवा व प्रभु
कौं पीछें षानपान करूं याभांति प्रथम विषयादिक वि
भोगकी कामना होइ तब मनमें उद्वेग होइ सेवामें म
न न लागै तब प्रभुको बुरो लागे तब प्रतिबंध होइ
जामें सेवा हीन बनि आवे तब ग्रहादिकार्य वित्त हू
भादिकमें आसक्ति होइ तब मानसी कहां तें सिद्ध हो
यी सो स्वापकमें श्री आचार्यजी महाप्रभु कहे हैं
उद्वेगः प्रतिबंधो वा भोगो वा स्यात्तु बाधकं इति वचना
त् ॥ देह संबंधी षानपान विषय भोगासें साथ सक्ति प

ऐसे वामें बाधक हैं उद्धार करावत हैं तब तनुजा वित्तजा
सेवा न भई लौकिक संसारासक्त भयो तब मानसी वा
को कहा ते सिद्ध होइगी सो या प्रकार में लौकिक भोग
में आसक्त है तिनको मानसी तो परम दुर्लभ है तनु
जा वित्तजा सेवा नाहीं सिद्ध है या प्रसंग और हू कहत हैं श्लो
श्लो॰ नात पारे सुखं ते दुःख भोगस्य परायत्ता तत्सुखं वै
सुख्याते षु इसोहं समहं स्थितः ॥ ६ ॥ या श्लो॰ श्री हरिरा
यजी कहत हैं जो मेरी यह अवस्था है ताते श्री आचार्य
जी श्री गुसांईजी तथा श्री गोकुलनाथजी तथा श्री क
ल्याणराइजी ये हमारे पितृ समान हैं श्री आचार्यजी
मार्ग प्रगट कर्ता श्री गुसांईजी यह पुष्टिमार्ग के प्रकाश
कर्ता ऐसे सगरे वल्लभकुल तथा हमारे पुष्टिमार्गीय वै
ष्णव पिता ही हैं यह भाव श्री गोकुलनाथजी द्वारा नाम
निवेदन भयो है सो मेरे गुरुचरण पिता ही हैं और क
ल्याणरायजी हमारे तात चरण जगत प्रसिद्ध हैं ताते
मैं तात चरण जगत प्रसिद्ध हैं ताते मैं तात चरण तें न्या
रो दूरि पर्यो मोको परो दहै सो या समय में या दुःख में मेरी
कौन सहाय करेगो ताते मैं बडो दुर्भागी हों मेरे भाग्य न
ष्ट भये हैं और सत जो तुम सगरी वस्तु के जानन वारे हो
तथा पुष्टिमार्गीय भगवदीय सर्व गुण युक्त तिन द्
ते मैं दूरि पर्यो हों तुम ते दूरि स्थित हों भगवदीय हो
ते दूरि स्थित हैं सो अब मैं कहा करूं ताते यह जानत हों
जो दुर्भागी हों या दुःख में मेरे पास सत्पुरुष कोई नाही
है जो मेरो संच कछु समाधान करे ताते मैं कहा करूं दुख
पावत हौ अब और हू कहत हैं श्लो॰ श्रीभागव
त चितानुं नविनाश्मातः सतो मनस्थात्मन विले
पाल्लवा सरणा भावनं ॥ १० ॥ या श्लो॰ को कोई क
हैं जो तुम तो बडे सज्जन हो सत्संग नाहीं हैं तो कहा

भयो। श्रीभागवतको अवलोकन करे। ताईकरिकें स
कल चिंतादुःखक्लेस दूरि होइगो। या भांति कोईक है नहीं
श्रीहरिरायजी कहत हैं जो याको यह चित्त होय तब श्री
भागवतकी खबरि पडै मन तामें चिंता क्लेस करिकें दु
खित हृदय होय रह्यो है ताकुं श्रीभागवतको भाव
मोको कहां तें दीसैगो। और ताकुं सी भाव ही सतपुरुष
होय वे श्रीभागवतको भाव कृपा करिकें खवावे तब
जान्यो जाय। ऐसें जो मैं दुःसि हृदय चित्त तुम श्रीभागव
तमें कैसें होइगो। संतोष नहीं कोईक है जो हरिकी सर
नकी भावना करे। श्रीआचार्यजी महाप्रभु विवेकधै
र्य में कहे हैं। ऐसे कों वा सुखपे वा सर्वथा सरण हरि।
तथा भगवद्गीता में भगवान् अर्जुन प्रति कहे हैं सर्व
धर्मान् परित्यज्य मामेकं सरणं व्रज। अहं त्वा सर्व पा
पेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः। या भांति सरनकी भाव
ना तें सगरो कार्य सिद्ध होइगो। या भांति कोईक है नहीं श्री
हरिरायजी कहत हैं जो मेरे मन में अन्यन विक्षेप होय
रह्यो है ताकुं रिकें सरनकी भावना कहां तें होइ १४ अब और
हूं कहत हैं श्लोक ॥ व्रातनांतर रतिर्प्रेमणा अथ हृस्य
नो जेयः महत्वमन्यान्तो कानां प्रपत्या सेन्य नासन
२१। या [illegible] नहीं कोईक है जो और नकूं तो अथवा

५ दैन्योआश्रयालरकोउपजनाहीवनततोदैन्यभाव
१३ करोनोनाहीकरिप्रभुप्रसन्नहोहुगो सोश्रीआचा
र्यजीकहेहै दैन्यतेहरितोषयां दैन्यदर्शयते भगवानसे
वपालैयाभांतिकोउकहैनहोकहतहैजोलोकिकमें
लोगानमेंआपनीमहत्वदेवडाईहै तामेंपदमहसता
जोमेंबहुतसमझतहैं मेरेमेंवहुतश्रमहैं ताकोलिवेदैन्य
ताकोनासहैं सोलोकनकीवडाईपदमहत्वतामेंउन्म
तफूल्योफिरतहैं ताकोलिवेदैन्यतानासहैं मेलोक
नकीवडाईपदमहत्वपूल्योफिरतहैं ताकोलिवेदैन्यता
नासहै तातेमेंवहायकरु अवश्याहुवकहतसोंश्री [illegible] ति
वेदनानुसंधानंमद्गिनकप्यमेकथ्यं केवलेत्यागांसर्व
त्यागाभावात्रुद्दसेमें १२ या [illegible] अवकहेजोनि
वेदनकोअनुसंधानराखें ताहीकरिसर्वसिद्धहैं
तहांश्रीहरिरायजीकहतहैं सदाभांतिपुष्टिमार्गीय
भगवदीयतिनकोपेंनेजिदीयो अवनिवेदनकोअ
नुसंधानकेसेंकरें निवेदनकोअनुसंधानकेसें
करें निवेदनकोअनुसंधान [illegible] भगवदीयमें
मिलिवेकर्तव्यहैं सोश्रीआचार्यजीमहाप्रभुनवर
लग्रंथमेंकहेहैं निवेदनतुस्मर्तव्यंसर्वथाताडूसैर
पिः इत्यादिवचनकरि भगवदीयविनाअवलोमें
कैसेंरहें तहांकोउकहैजोकेवलप्रभुकीसेवाकरी
श्रीकृस्नाश्रयमेंश्रीआचार्यजीमहाप्रभुसर्वमार्ग
सहेत्वकरिसरनसिद्धकीनीहै सोइकरोयाभांतिकी
ईकहैं तहांश्रीहरिरायजीकहतहैं केवलसरन
तासवलौकिकवैदिकधर्मनीथयनकर्म इत्यादि
सर्वत्यागमनमेंहोई नवसरनहृदहोइ सोमेरोमनतोलौ
किकवैदिककार्यमेंलगिरह्योहैं सर्वत्यागकोअभावहैं
तातेसरनकहातेहोइ याकोतोकेवलश्रीकृस्नकीरक्षा

नपरमदुर्लभ है तातें सेवक हा करत। अत्र व्यर्था। ...
हैं। श्लोक॥ चेतो चेतत्चिंतनः सुच दुष्कर न परात्मयः
विवेक धैर्य न हेतु मरवाधीरस्य मे। श्लो ११ अर्था। कृष्णाश्रय भ
हत हैं जो मेरो चित्त लौकिक सैं दूषित वैधा
प्रति चंचल होय रह्यो है ताकरिकें श्री कृष्णके प
लमें आश्रय दृढ नाहीं है सो आश्रयनो वो धात
म है आश्रय को साधन विवेक धैर्य सो उ सिद्धि
नाहीं है तो आश्रय की कहा वार्त्ता श्री आचार्य जी महा
प्रभु विवेक धैर्य सो उ सिद्धि नाहीं है तो आश्रय की कहा
कहीं श्री आचार्य जी महाप्रभु विवेक धैर्याश्रय में तीनो
कारक है हैं सो साधन में एक हा विवेक धैर्य सततं
तथाश्रयः इति वचनात विवेक धैर्य की सि
द्धि ताकरिकें श्री कृष्ण को आश्रय दृढ होय
धीरमें रागा होय एसो असो
नैं सिद्ध होय ताकरिकें आश्रय
क्यों रहे कहत हैं श्लोक॥ भावो वस्तु भाव
सि स्थितिनः कृष्णो व्रजभुव रस चरणो
रसालस्ता॥१४॥ याको अर्थ। यव श्री हरिराइजी कहत
अब को ईक है जो कछु नाहीं बनें तो व्रज लीला की
ताकरि अनुभव होयगो। या भांति को ईव
तहां श्री हरिराइजी कहत हैं जो भाव को चैनुभवे को
लीला सामग्री रूप सब थी देखते होय
होते पै तिनका सिकैं बाहिर पर रूप में स्थित होय हृदा
वै भाव उत्पन्न होय या भांति अपन पैवो निसो
ताकरि तत्कर तें रूप भयो है न्पते
यो सो हैं दानुसं
की लीला तन्मय होय कें कहत हैं ततः वह
नमिक हा है तहां श्री हरसमारी लीला

पं. के संगकरीहै एसी व्रजभूमिकहाहै व्रजभूमिके ठोरठो
७४ र चरणारविंदकहाहैं ध्वजावज्राद्यंकोडसचिन्ह गोप
दे रेखा २ मत्स्य ३ धनुष ४ त्रिकोण ५ अर्द्धचंद्र ६ च
क्र ७ एकपाद वामचरणकेचिन्ह हैं ध्वज १ अंकुश २ कम
ल ३ वज्र ४ स्वस्तिक ५ अष्टकोण ६ जव ७ ऊर्द्धरेखा
८ कलश ९ ऐसे चरणारविंदके षोडशचिन्हसंयुत
व्रजभूमिकहाहै १४ अब श्रीआचार्यजी कहतहैं श्लो० कृतो
त्क्षत्रलक्ष्यायो पुलिंदीभावपोषकः हरेर्मे श्रीयमुना
देव्या लीलासंगिनायिका १५ या० अ० उत्सोलव
कहाहैं कमलासनके नाम एसे गिरराजजी पर सदृश्य
नजो पुलिंदिनी सारिखीको भावको पनकीये गिरि
राजके संगतें पुलिंदीको भावउत्पन्न भयो ऐसे गिरि
राजजी सर्वांगतें प्रभुकी सेवाकरतहैं सबरितुमें प्रभु
कोसुखदेतहैं आपसुखपावतहैं एसो गिरराजजीकहा
हैं भावकोपोषक श्रीयमुनाजी कहाहैं कुमारी
केमनोरथपूरनकर्त्ता श्रीयमुनाजी नहांविराजतहैं ए
सेकहाहैं यमुनाजी कहाहैं सोकहेहैं लीलासंगि
नायिकाहैं इनके आश्रयतें श्रीकृष्णकी लीलाकोअ
नुभवहोइ एसी श्रीयमुनाजी कहाहैं अबआगेकह
तहैं १५ श्लो० हृतवेणुरवायैवो समाकृष्टाव्रजस्थि
तः व्रजनाथकरांभोजप्रोछिताङ्कगवांगणः १६ या०
अ० अब श्रीहरिरायजी कहतहैं जो यह वेणुको
रव श्रीकृष्णको वेणुनादकरि समस्तव्रजभक्तनकोआ
व श्रीकृष्णको वेणुनादकरि समस्तव्रजभक्तनकोआ
कर्षणकरतहैं स्थावरजंगमसंबंधरससेपूरितहैं
जनसब व्रजवासी कहाहैं सर्वोपरि श्रीकृष्णव्रजकेनाथ
आपनेकरांबुजसें पोछतहैं सगरीगाइनकोसुख
देके पालनकरतहैं एसीगाय कहाहैं अनेकगाय

केगुणसमूहश्रीहरिसहितसोवरनहैं अब और क
२ तहैं।श्लोक।अनंतलीलाधारास्तेगुना:धाविपिन
।विनुनादपरायसभुजादग्धमहितेण।।७
अनंतजीलाजहांभक्तनकेसगश्रीहरिसकरतहैं
वृंदावनकेकुसमसुंदरनामेतवेनुनादमुनिमधुकी
राश्रवतहैं ऐसेवृंदकहाहै और वेणुनादके
रनमेंपरायणपंछीव्रजादिकीसाखाभुजारूप
परस्यारूढहोइवैठेहैं अपनीचंचलस्वभावत्यागके
नकीनाईवैठेहैं।ऐसेपक्षीकहाहैसोगुगलगी
जस्थस्जेभक्तश्रुतिरूपाकुमारिकोस्वगरोहिन
तेगुगलगीतगायगायकेनिर्वाहकरतहैं।।
तोगविहगापुन्योवानेस्मिनक्षणेलणतदुरि
कलवेणुगीतोआरुघयेदुमभुजानरुचिरप्रवार
एवंतिमिलितहरशोविगतान्यबन्धा।धिया
तेगावतहैं ताईभावमैंश्रीहरिसाइजीमग्नहोय
भावनाकरतहैं अवश्रीओरहूकहतहैंश्लोक
चरणाभोजरेणुधन्य:व्रजस्थिता हृधिनि
श्रवणमंगलाया।थियाकोअर्थ। २
इजीकहतहैं।जोव्रजस्त्रीकेचरणा
व्रजमेंस्थितिहैसोमोकोवहा।जैसेउद्धवजी
।श्यामामहो चरणरेणुजुषामहं स्यात् वृंदा
गुल्मलतौषधीनां याहुत्यजं
त्याभेजेमुकुंदपदवीश्रुतिभिर्विमृग्यां।
होयकहैंऔरप्रातःकालउद्धिमथन
नेकीपरमभ्रातृरूपसोकहहैं
७
श्लोक।गोपीसमुत्थायमनि
न्यच्च्यदधिन्यमंखानात
गुरुजोविकसद्दुजंकेका

व वल्लनहारकुंडलत्तियल्क पो [illegible] कुमायनो उ
५ श्रीयतीनामराध्वैहैं सोद नेरजागनादि वनसपच्चा
धनिमहाप्रिमग्न निमेषमाद्रमित्रतो निरख्यतेपे
नदी साममंगलेयभाव मैंमग्नहै सो श्रीहरिरायजी
कहत हैं [illegible] यद्यपि कहत है सो [illegible] यमुनाबा
लुकादेहसंबंध: कनकलसत्सि: व्रजसुखलसात्तम
तदीयत्वे चमहत: ९ [illegible] श्री यद्यपि श्री हरिराय
जीकहत हैं जो श्री यमुनाजी की बालुका कहा होय
सो बालुका के संबंध ते कहा जो [illegible] कदेह होय तथा
श्रीयमुनाजीको जल परम लीलारस रूप मकरंद रूप
जल ता तेजल और बालुका के संबंध ते स्थल
के देह सिद्ध होय सो जल और बालुका कहा सो
श्री गुसांईजी यमुनाष्टक पदी में कहत है नवनद
नवालुकासेकवानि जोगागागत मुक्त करियेरोय
श्री लीला अनुसार भाव सिद्ध भये है या भांति श्री जी की ली
ला को अनुभव विप्रयोग भाव सो करिये है एवं रत
है जो मैं निरंतर व्रजसुख दीहो ताही ते श्री को पुष्टिमार
गीय भगवदीय को मिलाप सो कहा य दरत [illegible] है सो भा
व तदीय के संग ते सिद्ध होय सो तदीयनो जहां यह
भाव की जो अवस्था होय तिनके संग सिद्धि होत है मैं
संतत व्रजसुख दीनो ताते मोकों भगवदीय को मिलाप
कहा [illegible] यद्यपि श्री हरि कहत है सो [illegible] परमानंद रूप
सो [illegible] विरह दु:ख संयुक्तो [illegible] भावनो नवदृष्टी
चाये सम्प्रय: [illegible] याको [illegible] परमानंद श्रीगोवर्द्धननाथ
जी सात स्वरूप श्रीविठ्ठलनाथजी पुष्टिमार्ग में
परमानंद रूप श्रीकृष्ण रसात्मक सेवा है [illegible] श्रीकृष्ण
ने हृदय हो [illegible] मेरे चित्त में निरंतर दु:ख रहित है
दृष्टी सौ [illegible] नाके सें होय एक मेरम भाव

नाहीहै औरइसकोकछु भगवदीयके भावदेपोषनकौ
तोइनाहीहै औरश्रीवल्लभाचार्यजीकेचरणकमलको
दृढआश्रयमेंसेंनाहीहै ताकरिकें मेंनिरंतरदुःखलोंप
वतहो ऐसेंआगें कहतहैं ॥१०॥ श्लोक ॥ विषयाभिनिवेशे
नपेहाणविशतिप्रभो ज्ञातो अभिशापतसर्वसाधनाभ
ववाहनं ॥२१॥ याको अर्थ ॥ श्रीहरिरायजी कहतहैं मेंके
मोहो विषयावेश करिकें भयोहूं सो प्रभु मोको विषया
वेसदेखिकें मेरे हृदयमें नाही वास करतहैं सो श्रीआचा
र्यजी महाप्रभु संन्यासनिर्णय ग्रंथमें कहेहैं विषया
क्रांतदेहानां नावेशः सर्वथा हरेः याको अर्थ विषय करि
आवेश देखिकें प्रभु हृदयमें नाही स्थित होतहैं औ
र विषयके आवेश होतें दर्शनकी इच्छा भ्रांति नाही
होतहै तो प्रभु हृदयमें कैसें आवेंगो याभांति सर्वसाध
नके अभाव करिकें तुमारे सन्मुखमें नाही आयस
कत ताकरिकें भावके होते सिद्धहोय तातेंमें क्रिया
वैरी साधन न करि रहित सो हों भगवद्रूपको लेसहू मे
र्मेंनाहीहों ऐसें आगें कहतहैं ॥२२॥ श्लोक ॥ निःसाधनत्वे
भावेनु विद्यमाने प्रयोजकं । तद्भावकेवलं ऐसोयायेव
न चान्यथा ॥२२॥ याको अर्थ ॥ मेंकैसोहूं श्रीहरिरायजीक
हतहैं भावविना निःसाधन होय वैगुण्य तासरस्याकार्य भ
गवद्धर्मसेंहूं छोडिदीयोहैं सो ऐसो निःसाधन अप्रयोज
कहैं जो कछु सामर्थ्य नाहीहै सो प्रसिद्धही जगतमें दि
खमानहें भगवद्धर्म संसारी नाहीकरतहैं सो कहा निःसा
धनहें तैसेंई और संसारीकी नाई लौकिक सिद्धि निःसाध
नमेंहूं हों ताकरिकें कछु सिद्धि नाहीहें कहांहें जगतमें
कोई स्वतंत्र कर्मसें वा स्मरण प्रभुकी नाही करत तातें
यानिःसाधनहें तातें भगवान में तद्रूपतः भाव भगवद्वि
नासत्कार्यहोहों सो केवल दोषरूपही हों सो ऐसेंमेंहूं

नाथा वितायके नाहींकरतहो तसो हि येकसमें ही
हेमेंमेभावहू नाहींहे ... कयोरहूकहतहो लो
... सरीरेना ... क्रियाको ... जसें ... यथा
... विरक्त ... ना ... या ...
सरीरमेंसामर्थ ... क्रियाको ... लौकिक
वने तेसेभावविना ... सकलसाधनजो हें ताको दृष्टा
तकहतहें ... तेसें ... हें ... प्रकारहें ... ओरव
कहाकुने ... कहावो ... ओरहूविनाक
क्रियाकरें ... विनाकेसें चले तेसेंही तनमत
जो हें ... भाव ... लौकिक ... क्रियाभा
वकारपावें ... ओरभावविं
यफलकोसिद्धिनाहीहें सोभाबही पगारो हें
... भजिसा ... भावभावि ... कोटिसाध
कोउ ... ससेव ... मार्गमारगमो कोन
मारगमोति पुरुषने ... भावु ... सहें ... टीरी
तिः ... भावसों ... उल
... मुद्रा ... विधिकोने
मनारीश्रीति ... जनसकोमो हन
सूर ... यापकरभावहीने सबसिद्धिहे
सो ... भावहू ... हे ताते मा को कहूहू ...
नाहीं हें ... मेरेमेंभावहू को ... नाहीं हे
... हूसिद्धिनाहीं हें ... क्राम भविलासो
... पेल ... भवें ... सहस्त्रकाम ...
... भगवद्का
मना ... प्रभुसेवा सब धीनाक ... हो प्रभुकी
... मन ... नाहीं लागत हे ... लौकिक
मना विषय ... भगवपोषण ... सब
धीभगवपोषनमें ... ताकरिय ... ताकरि

रिजो श्री कृष्ण सो मेरी उपेक्षा कीए हैं सो मेरी बुद्धि नाही केन
है मैं महा दोषके समुद्र हों। ताते मेरो त्याग कीए है और
प्रवेश्य महामे ऐसे हैं सर्वोपर भारी हैं। तातें प्रभु मोको छो
ड़ि सो सत जनने भगवदीय हैं सो सदाई रखवा भाव करि
के रहित हैं जैसें विभीषण को रामचन्द्रने परसो प्रहार की
यो तऊ विभीषण विनती कीयो। भली बात कही और लक्ष्म
णने श्री गुसांईजी के दर्शन वंदन कीयो परंतु श्री गुसांई
जी हरिदास को भलो ई कीए वह रीति सो भगवदीय रहे
तो प्रभु प्रसन्न होइ। सो मैं भगवदीय की सेवा में तत्पर होत
मेरो त्याग प्रभु कीए हैं सो अब मैं कहा जाऊं और कहा
करुं अब मैं कोन गति होन हार है। यह बडो दुःख मो मे है
अब और हू कहत हैं॥ १॥ श्लोक॥ विस्तवैषिणा स्माद
मधिकारस्ततः पुनः। ततेयुवति वशेपन कायेमक मन
हर्यो। रहैयाको ग्र्थ॥ भगवद्धर्म संबंधी दुःख नो मेरे हृद
यमें वी होत हतो। और लोकिक वैराग्य कहु रख त्रायवे प्रा
भयो है सो कहत हैं। जो हमारो अधिकारी विरक्त वेराग
तामें ताकी बहुत बडाई है। और मैं अब हुत हू पापात्र तो
निवें वाको संग कीयो अपने पास राख्यो सो विरक्त अधि
कारी कामनी जो परस्त्री को देखिके मोहित होत भयो
सो परस्त्रीके लिये युवती महामोहनी सें काहू को धीरज
ज्ञान विवेक राखत नाही हैं। ताते युवती वस अधिका
री होत भयो अथवा विरक्त होइ कें अधिकार लीयो तो
करि कें युवती के वस भयो। काम हृदय में बढत भयो। अ
व और हू कहत हैं सोई। श्लोक। विस्तर नियाम विष
वायस्व सामूर्त दुःखस्थापिनो गमः पतितस्थन
थो यहां तारहै याको अर्थ यापकार युवती के वस हो
इ कोई काल में समय पाय संबंध करत भयो सो वो
ई यह बात को जानत नाही। सो वह विधवा स्त्री के
संग विषय होत भयो सो वह स्त्री को गर्भ रहि गयो

प· नाकरिकैंवहस्त्री ओरमेरो अधिकारीमहामनमेंदुखी
७ भयो जो अवकेसी है तुरीपाछैं ओरअधिनकरिहो
सिखिकैंगाममेंगिरावन भये सोयहवातसबठोरप्रसिद्ध
नाहिकैं ओसबको आवनभये अववोरहूकहतहैंसो
मरणचोभयोमध्येकस्यचिन्स्यान्तसेगुयो मुले
नप्रेमजीनाम्ना महीपतिर्निवारिता ११ या अब श्री
सददैकैंगाममेंगिरायो सोमनकुरहेउकैंगिरयो नाकरि
कैंरसमेंहाविसको रखवारिभई सोमनुसमानदुखहो
नभयो यासूंसमयनाही ओरकहांनोंमेंलिखो सोप्रेम
जीविसवमेंसगरहेतो सोअनेकयत्नकरिकैंमेरीआप
तदुखनिवारनकरतभयो राजद्वारको समाधानकी
यो ओरमेरेअशानकरिसाधनकीयो सोजानोगे अव
ओरहूकहतहैंसो विश्वासःकस्यकर्तव्यइतिखिन्न
मनोममःयहकार्येनवर्ततिमनुष्याणामभावतः२४
या अब नातेंमेंसीवातोरिखिकेंअववाविस्वासको
नकोकरिये तोविकदुखसंवंधकेंतीरगयस्थकोह्वो
इविरह्मसमानीवविसवकोंसंगरहीयें ताहीतेंयहहा
तिहोतभई अवकौनको आपनेपासराखियें अवको
नको विस्वासकरियें सोमनुष्यमिलतनाहीहैं सोय
हवडोईदुखहैं परहृसमेंजान्योमनुष्यचहियें सो
मिलतनाही ओरविश्वासकाहूकेऊपरआवतनाही
ओरविश्वासबिनासुखनाही होतहैं २५ अवओर
हूकहतहैंसो अतःस्निग्धोपिकार्ये नु
स्मेतःसदा प्रायपरःप्रेमजीनाम्ना
वत रहीया
ओनिहीमि प्रे
रसमोहिओय
सीहोतहे हमारी
रिवकेसवे ओरतेमनमें

है। ऐसो भगवदीय मेरे संग में एक प्रेमजी ही हैं सो मेंव
न विरक्त की नाहीं रहत हैं जितनी वनत है तितनी ह
मारी टहल करी लौकिक तें न्यारो रहत है। हे अहस्थप
तु विलक्षण जैसे विरक्त के धर्म सांख्य में कहे हैं तैस्व
रहत हैं ऐसी इनकी दिसा है इनके संग तें कछुक म
नकी तो ने रहन हैं तद्वत आवत हैं सो अब ए मेरे पास
तें चलिवेको विचार कीयो है सो मोको महादुःख भयो है
सो याकें कहत हैं या श्लोक। अलिंगं यू मेतस्मात्
मेष्या वहुसमाहितः। सो नापराधसर्वोपि मृषा औ
ध वृतात मः॥१॥ श्याको अर्थ। याप्रकार प्रेमजी ह मेरे प
मतें चले अव में कोन प्रकार सों निर्वाह करोगो ता
तें याप्रकार समाधान कछुक अपनो दुःख तुमको लि
ख्यो है सो वो होन धारिवे को जानियो। कहां तांई लिख
हैं सो वो होन कारिवे को जानियो। कहां तांई लिखें। ए
वात तो लिखवे में नाही आवें। तातें लिख्यो। सो मेरो
अपराध क्षमा करियो। और अधिकारी विरक्त जु तु
मारे पास आवत हैं सो याउको अपराध क्षमा क
रियो काहेतें जीव हैं सो दोष निधान हैं। तातें क्षो
भमति करियो काहेतें तुम परम वतुला हूसी है
तातें याक्रोधके लछन ताहू सीहोयत याये ऊ वडे
दोष हैं। तातें तुमको धव सम तिहूं जियो यह कोद
हसो कवाडाल को स्वरूप है भगवद्धर्म में वाधक
है क्रोध तें भगवद्भाव सर्व दूरि होइ जात है लव और
स्लक्षित है। श्लोक। इहानि तुर्जा पूर्व सतिर
तिसुलवेया भवव्हिः स्वर्गलोके
ऐसो ॥१॥ याको अर्थ।

उ.प. तैं हम परहे सामें आनें कभांतिकें दुखपावत है मेरो चि
१८ त्तिकाकेंनारी हैं नातें कछुमेरीबातों आपनें मनमें
भांति न्याईयो और तुम मम सुखके साधनि थके हो ताको
ममसुखसंबंधी तुमको कार्य न हो तातें तुम चित
कोठिकानैं राखियो प्रसन्नमनराखियो और य
ह विरक्त अधिकारीके ऊपर जैसे पूर्वरूप राखत
हो ताईभांति याऊपर स्नेह राखियो मनमें कछु दू
षण यामें मति बिचारियो एकरस आपने मनकी
वृत्ति सर्वथा आछे राखियो और हृदयजने आप
ने घरमें तथा सेवक स्त्री पुत्र वा सबसों मिलिकें स
बकों न्यारेन्यारे समाचार सबकों गाहीपत्र लिखिकें
पठायो अब और श्लोक हेत हैं २० श्लोक अत्र प्रस
न्नया चिन्तया तस्य स्थिरं भवेन्न मुखेरापि सम्मीची
नो मुखदोषविवर्जितं २१ याको अर्थ और यह वि
रक्त अधिकारीको समाधान भली भांति सों करियो अ
त्यंत प्रसन्नता सों याकी प्रसंसा करि याके चित्तको
समाधान करियो अत्यंत प्रसन्नता सों याकी प्रसंसा
करि याके चित्तको प्रसन्न करियो काहेतें इहांतें दुख
पाइकें गयो है सो तुम कछु उदासीन कहेंगे तो मनमें म
हा दुखपावेगो सो मन वचन कर्म तें कछु भाव मत ना
हीं बनिआवत हैं तातें एसी भांति राखियो जो चि
त्तमें प्रसन्न होय तब याको चित्त स्थिर होयगो और
तुम कछु कहोगे तो यह दुःख पावेगो और तुमको मुख
ऊ नाहीं अछो होयगो और कछु देत तुम्हारे हाथ कछु मि
लेगो नाहीं और यह मुखरता दोष है सो सब दोषन
में मुख्य है तातें एकदासमें घनश्री आचार्यजी पै यहाँ
भागे तो मुखरता दोष जाय तातें मुखरता दोषन है
दूर कहीयत सर्वथा करियो सो किंकवानी वो त्तन

कोंनिरोधहीमनसोंकरनौंउचितहें। अब सब ओरसें
रतहीं सो ८॥ वैष्णवन प्रदेसाकें विशेषपरितोषणतें
भावत्सिगा त्वदुत्वसन्निनः पुनरुत्थितः॥१२॥ याको अर्थ
श्रीगोपर विरक्त अधिकारी हैं सो अपने घरसें वे घरहैं सु
गरी श्रीप्रधरसकी जानत हैं तातें अपने घरके कामकुं
हैं तातें विषयभलीभांतिसों याको परितोष कर्यो। श्री
र्याले दोष मनमें मति विचारो यों कहेतें सो अब
रागमें कहे हैं। जा जीवको जैसी मति होय जैसे संग
तैसेही कार्यमें जीव तत्पर होइ जाइ जैसें संगकरि
कें दुष्ट जो गोरस ऊपर को चढे पाछें गिरे तैसें जीव भग
वद्धर्ममें सत्संग करिकें तत्पर होय। संग बिना दुःसं
ग होय तें फिर तिरें तातें जीवको कहा होय सें प्रभुकी प्र
ज्ञा जैसी होत है तैसें तातें सो दुःसंग ते सोई साधन
व निश्चावत है। तातें तुम अपने हृदयमें वढ होयमतिं
करियो सर्वप्राणीमात्र को भलो मनमें धारन करियो
या प्रकार सिक्षा जीव अपने मनमें धरें ताको कल्यान
होय। इति श्रीहरिरायजी कृत सिक्षापत्र चालीसमो
संपूर्ण॥ अथ याको प्रकार
ताकी टीका श्रीगोपेश्वरजी रचित
ऊपरके सिक्षापत्रमें अपनो दुःख तुमको पत्र द्वारा निवेद
न कियो तातें तुम मारे मनमें दुःख आयो होइगो कारतें
तुम मेरे संबंधी परम हितकारी हो। तातें या वय हृदयमें
अपनो पुष्टिमार्गीय सिद्धांत वर्णन करत हों सो वाचि
मन में धारन करियो और जे पुष्टिमार्गीय भ
क्त अपने मनमें धारन करिवे योग्य है सो ८॥ जो वि
चारकीयहैं तिनके धारन करिवे योग्य है
सकल कार्य प्रभुसेवोपयोगी जनात पांसच्च पूर्वोक्त
कि पुनलो किक वार्ता स्यागे अथ॥ श्रीहरिरायजी
पुष्टिमार्गीय धर्म सर्वोपरि करत हैं सो भाव होय तें स
जितनो लौकिक कार्य है सो प्रभुकी सेवामें विनियोग

नरै यह सब तो पर मुख्य धर्म है घरउ भावह सेवा
ह सो बंधी बहै व इंद्रिय यह सब भगव
तथा कारज में सब ह सो
स भांति पुत्र होइ यह भाव सो करै जैसे निरोध ल
श्री आचार्य जी कहे हैं भगवद्धर्म सेवा में प्रतिबं
ताको त्याग करै अनुवृत्त होय तावो संग्रह करै जहां
नहां मन की वृत्ति रहै जो प्रभु ने जो दियो सो प्रभु की ली
ताही की आज्ञा जानै अपने प्रभु को ही चिंतन करे
सब छोड़ि कैं जैसे पर्व ऊपर वाहि आरत है [illegible]
व मन में न विचारै तब प्रभु प्रसन्न होय [illegible]
ह सब जो लौकिक तो अनंत प्रकार है और लौकिक
र विनावन्न है ताही है ताते लौकिक समय तो विक
र भाव सेवा को प्रतिबंध करै तो निर्वाह होय सो तो
वि कसर कछु है सो कहा प्रयोजन है प्रभु ने कृपा ल
ह थोड़े सो वचन बहुत मानो गोपी [illegible]
रै लौकिक में लाग्यो न ह मन हन है लौ [illegible] न रोव न तेह
रै या नो लौकिक सात प्रन: न दे पला व ज्ञान प्रन
सिद्धि पैलौकिक [illegible] अन श्री हरिराइजी
कहत है अपने स्वकीय भक्त है सो लौकिक करै तो प्रभु
को नाही सुहाय तब प्रभु उपेक्षा करै उदासीन होइ
नाइ तब सेवा में मन के संग होइ अनेक कार्य में मन
रै तब प्रभु प्रतिबंधक है जो भगवद् सेवा न बनि आ
तो सेवा फल श्री आचार्य जी महाप्रभु कहे हैं उद्वेग
ति बंधो भोगो [illegible] अनुबाधक बाधक ता परि
गो भोगो अर्थक तथा पर यह सब के मन ह सेवा
गहै खान पान विषय इंद्रिय न को सुख देह को सु
यह न करै तब भगवद् सेवा भली भांति सो न बनै
रै सो सेवा अथ भोग पै मन न राखै तथा देह सबंधी
म मन को राखे तो सेवा में उद्वेग होइ पावे [illegible]

१ प्रतिबंध करै सो सेवा उन्ह नै। और प्रभु को ले
नौ किक्ले यासति हेय। कार्य करै सो कार्य
सो नाना प्रकार के दुःख कहे को पावै। ना
कौ सर्वथा दीन करै। प्रभु की से
करै। ५। यन्निश्चयासिद्धांत स्य
सुभाव: प्रभो स्यात्यान चा
श्र तिमा
उ याको प्र वे भाव को स्या
ए ति काहू को दिखाय के
नाहिन अनेक
गारव रैन पपाट श्री ठाकुर आई बाना
यह सब जत चतुराई जानत नौ। नाहिन कोई न होइ
धारन करै तो श्री गुसांई जी श्री आगरे पधारे
तब एक वैष्णव पठायो। अपने घर सेवा चतुराई सो करि
तहां श्री गुसांई जी चित्र आवन वंदन करे। तातें चतुराई है
सो सब अप्रयोजक मिथ्या है। तासें कछु फल सिद्धि न
हीं है तासें कछु फल सिद्धि नाहीं है केवल प्रतिष्ठा मात्र
है सो लोक प्रतिष्ठा भगवद्भाव की नाशक ता ईं प्रभु स
के हृदय की जानत हैं अंतर्यामी है तहां मन को क
पट कछु चलत नाहीं है सो विवेकधैर्याश्रय ग्रंथ में
श्री आचार्य जी महाप्रभु कहे हैं सर्वज्ञ सर्वनस्य हि
सर्व सामर्थ्य मेव च। इति वचनात प्रभु सर्व रस साम
र्थ्य युक्त है या भाव सो करै सो जानिके वे सोई फल देइ
तातें जो भाय पतिष्ठा कवके वप्रत्ययुक्त न करनो
जितनी रीति बधी है तितनी पुष्टिमार्ग की मर्यादा
रीति सो करनो। लौकिक वैदिक कछु काम ता मन में
न राखनी। अनन्यो रहेवनो सो ५। सुद्भाव ने
तदीय तुल्यो विनेसाधयेत्स्वयं। न त्साधितम विन्ने
न स्वेसिद्धत्तिनामन्यथा। ५ याको अर्थ। तहां कोई क

है जो शुद्धभाव प्रभुमें राखि सर्व प्रभुमें निवेदन करै
पाछे लौकिक दुःख होय तौ वाको न प्रकार करै
यह संदेह होइ तहां कहत हैं जो पहले शुद्धभा
वते प्रभुमें मन लगाइ तत्पर होइ जो कोऊ सेवा कर
न होय तासों शुद्धभाव प्रभुमें राखिके लौकिक वैदिक स
बल कार्य सिद्ध करत हैं सो संतदासकी वार्तामें प्रसि
द्धही वर्णन है जो चोवीस रुकाकी पूंजीमें प्रभु सर्व कार्य
सिद्ध करते पद्मनाभदासके हु लोपे सकल पदार्थ सिद्ध
करते तातें शुद्धभाव सौ करैं तहां कोऊ कहै जो लौकिक
वैदिक वारे लोक विघ्न करै तहां कहे ऐसे करै यह संदेह
होय तहां कहत हैं जो श्रीआचार्यजी भक्तिवर्द्धिनीमें क
हे हैं सेवायां वा कथायां वा यस्यासक्तिर्दृढा भवेत् याव
जीवं न तस्यनाशो न क्षयोपि मतिर्मम १ बाधसंभावना
यां तु नैकांते वास इष्यते हरिस्तु सर्वतो रक्षां करिष्यति
न संशयः २ प्रभुके कार्यमें सेवादिमें दृढभाव है यस
वैहारते अपनो मन राखें तब कहै न काहूकी भली
बुरी न देखें ऐसे भक्तकी निश्चय प्रभु सर्व ओरतें रक्षा क
रें जैसें अंबरीषको दुर्वासाके शापतें रक्षा करी तातें
निर्विघ्न सौं मन लगाइ प्रभुके धर्ममें तत्पर होइ अन्य
था ओर कार्य जो लौकिक तामें लगेगो तो प्रभु दीयह
लोकमें पायो है वही ता न राखें तब आप कहत हैं
४ लौकिक आवश्यक है कर्तव्य सती बेलौकिक व्यय
अनायास करतो लौकिक तु वद्धैन तब बाधते ५ या श्लोकको अ
र्थ श्री हरिरायजी कहत हैं जो मुख्य तौ यही है जो लौ
किक वैदिक न करै तौ छूटै आवश्यक होय तो लौकि
क करै तामें आसक्ति न होय आसक्ति मनकी होय
यही बाधक है आसक्त विना अनेक लौकिक वैदिक
द्वन्द्व सो बाधक सर्वथा ही न करै सो श्रीआचार्यजी
कहे हैं गृहस्थको मन ना त्याज्यं तद्धि त्यक्तुं न शक्यते ऐसा

सुनीतिकस्तुः संसारमोचकः । १
हैं। अव्यावृतो भजेत्कृष्णं पूजया श्रवणादिभिः व्यावृतोपि
श्रवणादौ यतेत्सदा २ ॥ इति वचनात् ॥ जो तो गृह
न भक्त हो यतो सर्वत्याग पूर्वक प्रभुकौ भजन जो त्याग न हो
इसकै तो सगरो घर श्रीकृष्ण की सेवा में विनियोग करें ॥
आवृत्त ऐसी वार्ता में हरि में निरंतर चित्त रहै या प्रकार
हैं तो बाधक न होइ नाही तो बाधक करें याही कहत हैं
श्लोक ॥ अन्यथा बद्धमाप्येत तद्बाधते न इपेक्षया ॥ हृस्मम
कैके विषयेसु स्वं चैनो निभीयतां ई ॥ याको ग्रंथ ॥ लौकि
क वैदिक में जो चित्त बहुत नही बढै सो प्रभु तो अंतःकरन
में विराजत है ॥ तब लौकिक में उद्वेग आसक्ति देखें तब
उपेक्षा करि उदासीन होय जाय ॥ सो संन्यास निर्णय में
श्री आचार्यजी महाप्रभु कहे हैं ॥ विषयाक्रान्तदेहानां
नावेशः सर्वथा हरेः ॥ तब लौकिक विषय में आसक्ति मन
की इंद्रिय की देहादि प्रभु देखें ॥ तब अपने भगवद्भाव
रूपस्लकों आवेस स्वामिने पै चित्ते ॥ ताकों सर्वथा प्रभु
की लीला को स्वरूप को भगवद्धर्म को आवेस कबहू न व
हैं भावद्धर्म करने उद्वेग मन में रहैं याते प्रतिबंध होइ
तब बहुत छूटि जाय केवल लौकिक की सक्ति होय तब प्रभु
वाकों उपेक्षा करि त्याग करि देइ ॥ ताते अन्यथा लौकि
विषय ते आसक्ति मन न करै प्रभु की सेवा संबंधी कार्य
लौकिक प्रभु संबंधी विषय धारणा करें ॥ जो फल लेउ छ
कौंय देव दियें ॥ ता अर्थ यत्न करें ॥ फल तो नी सामग्री
भु आरोगे तो आछो ॥ फल तो या गा वस्त्र आभूष
वस्त्र प्रभु में विनियोग हो यतो भली ॥ या भांति हरि
पृथक रागा होय ॥ जा प्रकार सोई वातो मन में धरै
किया हृदय एसी सुने ॥ जावे सुनै ते लौकिक में वैराग्य
होइ ॥ और प्रभु संबंध में अनुराग दृढ होइ ॥ ता तें

[illegible] रहे जो भगवदीयको संग होइ तो संसार भावरूप
नाहै [illegible] जाको लौकिक संग होइ सो जलवत्
[illegible] होत है तिनके साथ ते भगवत्स्वरूप
[illegible] तत्व होय ताते भगवदीयको संग नित्य
[illegible] और यह पुष्टिमार्ग में आरत है सोई
है ताते प्रभु के दरसन की आर्ति होय मन में लेसरा
सो निरोध लक्षण में कहे है लोक [illegible] स्यमानानन्द
[illegible] कृपायुक्तो यदा भवेत् तदा सर्वेश्वरानंद हृदिस्थ
[illegible] सर्वानंदमयस्यापि कृपानंद सुदुर्लभः [illegible]
[illegible] जैसे काष्ठ के भीतर अग्नि है मथन ते वा
[illegible] प्रभु [illegible] नाथ [illegible] करत बाहर प्रगट
[illegible] प्रभु सर्व ठौर है और कृपानंद सुदुर्लभः
[illegible] करत है ताते दरसन की आ
[illegible] है सो [illegible] स्वास्थ्य तो दि
[illegible] करुणानिधि [illegible] ;स्वित्व कृतेपि
धरि १. [illegible] नैमननि
[illegible] लौकिक आर्ति [illegible] दुरवस [illegible] लक
[illegible] तव प्रभु तो करुणानिधि
[illegible] अनुभव सदा करावेंगे त
[illegible] सो भगवान उद्धवजी प्रति कहे है त्वं तु
त्यज्य स्नेहं स्वजन बंधुषु मय्यावेश्य मनः
[illegible] चरस्व गां । हे उद्धव तो सब त्याग करि स्व
जन बंधु को स्नेह सरा आवेश करु स्यमे राखि सब [illegible]
[illegible] विचारे तुम को कछु भय नाही है ताते
हरि [illegible] जो तदीय को अपनी चिंता नथ
संबंधी यह लोक परलोक की कछु चिंता नाही क
[illegible] काहे ते तुम जैसे पिता पुत्र को पालन की चिंता
पुत्र को कछु भय नाही या प्रकार प्रभु अपने भक्त

[illegible] हरि [illegible]
[illegible] होय तन
[illegible] कोऊ ऐसो
[illegible]
[illegible] श्रीवल्लभ
[illegible] सो पुष्टि [illegible]
[illegible] तिनहू [illegible]
[illegible] समात्म [illegible]
[illegible] पुष्टिमार्गीय स्वरू
[illegible] सेवा प्रभु सनातन [illegible]
[illegible] श्रीहरि
जी करत हैं जो पुष्टिमार्गीय जनके धर्म हैं विधि
[illegible] करिके [illegible] प्रभु [illegible] तातें प्रभु [illegible]
[illegible] पुष्टि प्रभु की सेवा है तातें य
[illegible] सेवा बिना तुरत फल [illegible]
[illegible] तातें यह [illegible] जानने जो [illegible]
जो सेवा करत हैं तिनको सदा ही कल्यान होय
[illegible] पुष्टिमार्गीय को फल इहै [illegible]
है [illegible] भयो । [illegible] श्रीगो
[illegible] श्रीहरिजी [illegible] तातें [illegible]
[illegible] श्रीहरिरायजी आइ [illegible]
[illegible] पत्र कोटिका [illegible] जानियो
[illegible] श्री हरिरायजी की रीति है तातें
श्रीहरिरायजी [illegible] श्री आचार्यजी श्री गुसां
ईजी तिन [illegible] है । तातें यह भाव प्रगट भयो
है सो तुम [illegible] रहो । [illegible] प्रकार
[illegible] नाहीं है ॥ २२ ॥